卐 भूमिका 卐

आध्यात्मिक भूख सबको रहती है और सभी उसे मिटाना चाहते हैं। किन्तु भौतिक पदार्थ और देहासक्ति के बाह्य सौन्दर्य की तरफ मन के आकर्षित होने के कारण वे अपना निजी स्वरूप भूल जाते हैं। इसलिए उन व्यक्तियों को निजत्व-भान कराने के लिए आगमों में चौबन्द चार प्रकार के अनुयोग कहे हैं। जिसमें चरितानुयोग (कथानुयोग) भी एक है, इसे भी महर्षियोंने आत्म-संशोधन का निमित्त बताया है।

इसलिए गच्छ के मूल जैनाचार्य योगमुद्रा-प्रधान पूज्य श्री धर्मदासजी म. की सम्प्रदाय के वर्तमान प्रवर्तक श्री पूज्यपाद ताराचन्दजी म. के आज्ञानुसारी श्रीमान् सूर्यमुनिजी म. ने उक्त अभिप्राय से ही यह "जैन-रामायण" सरल सुन्दर और संगीतमय भाषा में रची है। जिससे आबाल वृद्ध पढ़ सकें और समझ सकें। अतः व्याकरण शब्दों की काट-छांट में इसकी भाषा दुरूह नहीं बनाई गई है। इस चरित्र को भाषा और शुद्ध साहित्यिक दृष्टि से देखने के बजाय जन हित की दृष्टि से ही देखना ठीक होगा।

रामायण लौकिक और धार्मिक-नीति का महान् कोषागार है। इसके हर पात्र के चरित्र से कुछ न कुछ शिक्षा मिलती है। राम, रावण, सीता, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, विभीषण, हनुमानादि के जीवन-चरित्र को पढ़ने से सत्यता, वचन-निभाना, व्यभिचार-त्याग, साहसिकता आदि की शिक्षाएँ मिलती हैं। मातृ-प्रेम की दिव्य झलक का, भ्रातृ-वात्सल्य की अपूर्व भावना का, जन-सेवा का—सतीत्व का और त्याग का दर्शन इसमें अद्वितीय है। यह कथा प्राचीन समय से ही कितनी जन-प्रिय रही है, वह इससे भली-भाँति सिद्ध हो जाता है कि इसको भारत में प्रचलित होनेवाले सभी धर्मों ने अपनाकर अपने-अपने ढंग से लिखा है।

किसी ने इस रामायण के विषय में यह कहा था कि— "इसमें अन्य मतावलम्बियों की रामायण के भाव भी कवि को प्रक्षेप कर देना चाहिए था" उनके इस कथन को मैं ठीक नहीं समझता। क्योंकि सभी कथाओं को मिश्रित करने से प्रत्येक मत की कथा के मूल रूप को जानना दुर्लभ हो जाता और फिर जो वस्तु अपने यहाँ है उसको दूसरे से उधार लेना "वसुधैव कुटुम्बकम्" सिद्धान्त का सिर्फ दुरुपयोग ही है। अतः कवि श्री ने जो रचना की है वह ठीक ही है।

उक्त रामायण के प्रयोजक पं. रत्न श्री अम्बामुनिजी म. और प्रसिद्धवक्ता पं. श्री सौभाग्यमलजी म. इसमें मुख्य सहायक बने हैं। इस ग्रन्थ को बनाने में पं. श्री छुगनचन्द्रजी म. श्री केशरजी म. आदि के ग्रन्थों से सहायता ली गई है। अतः समिति उन सभी महापुरुषों को सादर धन्यवाद देती है॥

पाठकगण! आप इस चरित्र की लम्बे अर्से से प्रतीक्षा कर रहे हैं। किन्तु कागज की मँहगाई, प्रेसादि की असुविधाओं और द्रव्य की कमी के कारण विलम्ब हो जाना स्वाभाविक ही है। फिर भी हम अपनी ओर से विलम्ब के लिए पाठकों से क्षमा माँगते हैं।

सब सज्जन गुण-ग्राहकता की दृष्टि से इसे देखेंगे। और आत्म-कल्याण के पथ-पर अग्रसर होंगे। यदि इससे पाठकों को कुछ भी लाभ हुआ तो कवि श्री अपने श्रम को सार्थक समझेंगे। अन्य कई कारणों से त्रुटियें रह जाना स्वाभाविक है। पाठकगण उन्हें स्वयं सुधारकर पढ़ें। कष्ट के लिए क्षमा। इत्यलम्।

वैशाख शुक्ला ७, सं २००६

व्यवस्थापक—श्री पूनमचन्द जैन

साहित्य समिति जावरा (मालवा)

जैन रामायण

भाग १

॥ तर्ज रसिया ॥

पावन पुरुषोत्तम भगवान राम की कथा सुनाते हैं।
कथा सुनाते हैं, रामगुण गौरव गाते हैं ॥ टेर ॥

वीतराग पद पंकज ध्याऊ, चतुर्विंश भगवान।
गुण गरिमा श्री गौतम गणधर, प्रणमूं धर सज्ज्ञान ॥ १ ॥
त्रिशलानंदण तिहुँ जग वंदण, गुण रत्नाकर स्वाम।
नगर राजगृह आए भगवन, जग जनके हित काम ॥ २ ॥
शिष्य सुशोभित गौतम गुणमणि, सब मुनिमें सिरदार।
सेवा निश दिन करे विनय युत, अमित ज्ञान भण्डार ॥ ३ ॥
वीरप्रभु से पूछे गौतम, सीता राम चरित्र।
भगवन् ! उनका चरित सुनाओ, सुनता मैं दत्तचित्त ॥ ४ ॥
कैसा अनुपम काम किया है, बने जगत आदर्श।
प्रेम परस्पर भ्रात भ्रात में, कैसा था उत्कर्ष ॥ ५ ॥
वचन निभाया पितु का कैसे, पुत्र विनम्र गुणवान।
पति सुपरायण सीता कैसी, पाला शील निधान ॥ ६ ॥
सासु ससुर का विनय निभाया, पाला पतिव्रत धर्म।
विपत समय में साथ कंथके, रही छोड़ सब शर्म ॥ ७ ॥
रहे धर्म वेदीपे निश्चय, धरा सीस बेखौफ।
शरणागत का पालन करते, धरा दीर्घ नहिं कोप ॥ ८ ॥
विनय श्रवण कर गणि गौतम को, कहते कथा जिनेश।
सुने सभासद सभी जहाँ पे, भव्य वीर उपदेश ॥ ९ ॥

रावण के पूर्वजों का वर्णन

जंबुद्वीप लघु सभी दीपमें, तिनमें भरत सु क्षेत्र।
जहाँ देश बत्तीस सहस्र हैं, सब विधि सुख के हेत ॥ १० ॥
दीप जहाँ राक्षस था उनमें, दो नगरी सुखकार।
लंक और पाताल लंकसे, गौरव जगत मझार ॥ ११ ॥
दोनों नगरी का था अधिपति, घनवाहन भूपाल।
वंश परम था राक्षस सोभित, अरिजन के वे काल ॥ १२ ॥
अजितनाथ के समय हुए ये, घनवाहन अधिकाय।
निज सुत राक्षस को पट देकर, मन वैराग्य रमाय ॥ १३ ॥

श्री पूज्य नन्दलाल सूरीश्वरेभ्यो नमः

श्री पूज्यनन्द गुलाब पुष्प प्रथम १,

ॐ

॥ श्री जैन रामायण ॥

रचयिता

श्रीमान् जगमयुग प्रधान जैनाचार्य श्री पूज्य नन्दलालजी म. के सुशिष्य कविवर्य श्री सूर्यमुनिजी म.

पूज्यनन्दाब्द २७ विक्रम २००६ मूल्य रु. ३) प्रथम संस्करण १०००

卐 भूमिका 卐

आध्यात्मिक भूख सबको रहती है और सभी उसे मिटाना चाहते हैं। किन्तु भौतिक पदार्थ और दैहिक के बाह्य सौन्दर्य की तरफ मन के आकर्षित होने के कारण वे अपना निजी स्वरूप भूल जाते हैं। इसलिए उन भव्यों को निजात्म-भान कराने के लिए आगमों में शोधकर चार प्रकार के अनुयोग कहे हैं। जिसमें चरितानुयोग (कथानुयोग) भी एक है; इसे भी मुनियोंने आत्म-संशोधन का निमित्त बताया है।

इतिहास ग्रन्थ के मूल जैनाचार्य जंगमयुग-प्रधान पूज्य श्री धर्मदासजी म० के सम्प्रदाय के वर्तमान प्रवर्तक श्री पूज्यपाद ताराचन्द्रजी म० के आज्ञानुवर्ती श्रीमान् शुक्लमुनिजी म० ने उक्त अभिप्राय से ही यह "जैन-रामायण" सरल सुन्दर और संगीतमय भाषा में रची है। जिसको आबाल वृद्ध पढ़ सकें और समझ सकें। अतः जान-बूझकर शब्दों की काट-छांट में इसकी भाषा दुरूह नहीं बनाई गई है। इस चरित्र को भाषा और शुद्ध साहित्यिक दृष्टि से देखने के बजाय जन हित की दृष्टि से ही देखना ठीक होगा।

रामायण सांसारिक और धार्मिक-नीति का महान् कोषागार है। इसके हर पात्र के चरित्र से कुछ न कुछ शिक्षा मिलती है। राम, रावण, सीता, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, विभीषण, हनुमानादि के जीवन-चरित्र को पढ़ने से सत्यता, वचन-निभाना, व्यभिचार त्यागना, साहसिकता आदि की शिक्षाएँ मिलती हैं। मातृ-प्रेम की दिव्य झलक का, प्रजा-वात्सल्य की अपूर्व भावना का, जन-सेवा का—सतीत्व का और त्याग का वर्णन इसमें अद्वितीय है। यह कथा प्राचीन समय से ही कितनी जन-प्रिय रही है, यह इससे भली-भाँति सिद्ध हो जाता है कि इसको भारत में पल्लवित होनेवाले सभी धर्मों ने अपनाकर अपने-अपने रंग से लिखा है।

किसी ने इस रामायण के विषय में यह कहा था कि—"इसमें अन्य मतावलम्बिय की रामायण के भाव भी कवि को प्रक्षेप कर देना चाहिए था" उनके इस कथन को मैं ठीक नहीं समझता। क्योंकि सभी कथाओं को मिश्रित करने से प्रत्येक मत की कथा के मूल रूप का जानना दुर्गम्य हो जाता और फिर जो वस्तु अपने यहाँ है उसको दूसरे से उधार लेना "वसुधैव कुटुम्बकम्" सिद्धान्त का सिर्फ दुरुपयोग ही है। अतः कवि श्री ने जो रचना की है वह ठीक ही है।

उक्त रामायण के प्रयोजक पं० रत्न श्री कृष्णमुनिजी म० और प्रसिद्धवक्ता पं० श्री सौभाग्यमलजी म० इसमें मुख्य सहायक बने हैं। इस ग्रन्थ को बनाने में पं० श्री छगनचन्द्रजी म० श्री केशरजी म० आदि के ग्रन्थों से सहायता ली गई है। अतः समिति उन सभी महापुरुषों को सादर धन्यवाद देती है।

पाठकगण! आप इस चरित्र की लम्बे अर्से से प्रतीक्षा कर रहे हैं। किन्तु कागज की मँहगाई में साधि की असुविधाओं और द्रव्य की कमी के कारण विलम्ब हो जाना स्वाभाविक ही है। फिर भी हम अपनी ओर से विलम्ब के लिए पाठकों से क्षमा माँगते हैं।

सब सज्जन गुण-ग्राहकता की दृष्टि से इसे देखेंगे। और आत्म-कल्याण के पथ-पर अग्रसर होंगे। यदि इससे पाठकों को कुछ भी लाभ हुआ तो कवि श्री अपने श्रम को सार्थक समझेंगे। अन्य कई कारणों से त्रुटियें रह जाना स्वाभाविक है पाठकगण उन्हें क्षमा सुधारकर पढ़ें। कष्ट के लिए क्षमा। इत्यलम्।

वैशाख शुक्ला ७, सं० २००६

व्यवस्थापक—श्री पूनमचन्द जैन

साहित्य समिति बाग्दड़ा (मालवा)

पूज्यमन्द गुलाब पुष्प १ श्रीमन् नन्दलाल सूरीश्वरेभ्यो नम

जैन रामायण

भाग १

॥ तर्ज रसिया ॥

पावन पुरुषोत्तम भगवान राम की कथा सुनाते हैं।
कथा सुनाते हैं, रामगुण गौरव गाते हैं॥ टेर ॥

वीतराग पद पङ्कज ध्याऊं, चतुर्विंश भगवान।
गुण गरिमा श्री गौतम गणधर, प्रणमूं वर सज्ज्ञान ॥ १ ॥

त्रिशलानन्दन तिहुं जग वन्दन, गुण रत्नाकर स्वाम।
नगर राजगृह आए भगवन, जग जनके हित काम ॥ २ ॥

शिष्य सुशोभित गौतम गुणमणि, सब मुनिमें सिरदार।
सेवा निश दिन करे विनय युत, अमित ज्ञान भण्डार ॥ ३ ॥

वीरप्रभु से पूछे गौतम, सीता राम चरित्र।
भगवन्! उनका चरित सुनाओ, सुनता मैं दत्तचित्त ॥ ४ ॥

कैसा अनुपम काम किया है, बने जगत आदर्श।
प्रेम परस्पर भ्रात भ्रात में, कैसा था उत्कर्ष ॥ ५ ॥

वचन निभाया पितु का कैसे, पुत्र विनय गुणवान।
पति सुपरायण सीता कैसी, पाला शील निधान ॥ ६ ॥

सासु ससुर का विनय निभाया, पाला पतिव्रत धर्म।
विपत समय में साथ कथके, रही छोड़ सब शर्म ॥ ७ ॥

रहें धर्म वेदीपे निश्चय, धरा सोस बेखौफ।
शरणागत का पालन करते, धरा दीर्घ नहिं कोप ॥ ८ ॥

विनय श्रवण कर गणि गौतम को, कहते कथा जिनेश।
सुने सभासद सभी जहाँ पे, भव्य वीर उपदेश ॥ ९ ॥

रावण के पूर्वजों का वर्णन

जंबुदीप लघु सभी दीपमें, तिनमें भरत सु क्षेत्र।
जहाँ देश बत्तीस सहस हैं, सब विधि सुख के हेत ॥ १० ॥

दीप जहाँ राक्षस था उनमें, दो नगरी सुखकार।
लंक और, पाताल लंकसे, गौरव जगत मझार ॥ ११ ॥

दोनों नगरी का था अधिपति, घनवाहन भूपाल।
वंश परम था राक्षस सोभित, अरिजन के वे काल ॥ १२ ॥

अजितनाथ के समय हुए ये, घनवाहन अधिकाय।
निज सुत राक्षस को पट देकर, मन वैराग्य रमाय ॥ १३ ॥

नृप अतीन्द्र है मघापुर के, उनका सुतम खास।
मेरा है श्रीकंठ नाम लो, खड़ा आपके पास ॥ ४४ ॥
देवी मेरी बहिन उसे थी, याची तुम पितु खास।
मेरे पितु ने एक न मानी, आशा हुई निराश ॥ ४५ ॥
उस दिन से तुम पिता हमीं पे, धरते हैं अति रोष।
कभी नहीं तुमको मुज देगा, कैसे हो संतोष ॥ ४६ ॥
कन्या कहती सुनिये प्रियवर, कैसे हो संयोग।
बने न भोगा भूप परस्पर, लीजे आप विलोक ॥ ४७ ॥
वायुयान है कहँ कंवर ये, बैठो इसके मांय।
फिर क्या होगा फिकर करो मत, मार्य लंकपति राय ॥ ४८ ॥
प्रेम निकल कन्या होकर के, आई जहाँ था यान।
बैठ उसी में उड़ते दोनों, जाते इच्छित स्थान ॥ ४९ ॥
पुष्पोत्तर राजा ने पाया, सुता हरण का भेद।
क्रोध विकट छाया तन मंठ में, हुआ पूर्ण मन खेद ॥ ५० ॥
अस्त्र शस्त्र से सज सुभटों को, चले युद्ध के काज।
सुणा यान से सूर्य गगन में, करते सिंह आवाज ॥ ५१ ॥
सावधान श्रीकंठ चलाया, अपना शीघ्र विमान
शरण लेवें जाय किसी का, जो होवे बलवान ॥ ५२ ॥
लंकेश्वर था निज बहनोई, वीर विकट बलवान।
गया शरण श्रीकंठ उन्हीं के, अपना कहा बयान ॥ ५३ ॥

कष्ट पड़ा आकर अब मुझपे, होवो आप सहाय।
शक्ति नहीं मुज पुष्पोत्तर से, जीत सकूं मैं जाय ॥ ५४ ॥
लंकेश्वर ने दिया सहारा, निज शरणागत जान।
पुष्पोत्तर को पास बुला के, बोला मिष्ट जबान ॥ ५५ ॥
किया क्रोध से शांत भूप को, मत कीजे तकरार।
करो परस्पर संधी मिलके, इसमें सच्चा सार ॥ ५६ ।
पक्ष बड़ा था लंकेश्वर का, यह था छोटा भूप।
विना भाव से वचन मान के, सधी करी अनूप ॥ ५७ ॥
लाठी जिसकी भैंस कहावत, साची हो गई आज।
निज पुत्री श्रीकंठ साथ में, ब्याही कर सब साज ॥ ५८ ॥
सुनो कवर श्रीकंठ हमारी, कहैं लंकपति खास।
अपर स्थान मत जाओ अब तुम, कीजे यहां निवास ॥ ५९ ॥
क्योंकि तुम्हारे शत्रु अधिक हैं, बड़ा वैर चहुं ओर।
तुम हो अब नादान ज्ञान बिन, जग की विकट हिलोर ॥ ६० ॥
अधिक प्रेम है इस कारण से, शिक्षा दी सुखकार।
वचन हमारा मानो जिनसे, होगा सुख संसार ॥ ६१ ॥
यहाँ से जोजन रहा तीन सो, वानर दीप रसाल।
मैं दीना वह राज आपको, राज करो भय टाल ॥ ६२ ॥
बहनोई का कहना माना, जाते वानर द्वीप।
किष्किन्धा शुभ पुरी बसाई, जहाँ तरु सघन समीप ॥ ६३ ॥

परम सुशोभित महिल नगर छवि, देखत मन विकसाय।
रहैं सदा आनन्द परम से, पूरव-पुण्य सवाय ॥ ६४ ॥
करे सदा मुनि भक्ति प्रेम से, देव धर्म गुरु धार।
मिथ्या भर्म निवारा मनका, एक धर्म से प्यार ॥ ६५ ॥
वहाँ अधिक वानर होते से, वानर द्वीप कहाय।
कपि गण लख नृप मुदित भया है, सबको कहा सुनाय ॥ ६६ ॥
मत हनना वानर को कोई, सख्त दिया फरमान।
जैसे अपने प्राण पियारे, ऐसे सबके जान ॥ ६७ ॥
खान पान वानर को देवे, खोल दिया भण्डार।
सभी स्थान कपि चिह्न लिखे हैं, शोभित अपने द्वार ॥ ६८ ॥
पुत्र हुआ पद्मारानी के, पाया नृप आराम।
दिया दान दुखियों को अति ही, वज्रकंठ दे नाम ॥ ६९ ॥
प्रतिदिन जाता समय सौख्य में, उदय पूर्व के पुण्य।
सिंहासन स्थित हुक्म सुनाता, सुनें वृद्ध तारुण्य ॥ ७० ॥
दर्पण में निज केस एक सिर, श्वेत वर्णमय पाय।
जाना जम को दूत अभी से, मेरे सिर पे आय ॥ ७१ ॥
हो वैरागी सब जग तज के, मुनि व्रत धरे महान।
वज्रकंठ को गादी देकर, किया आत्म कल्याण ॥ ७२ ॥
हुए बहुत यों राजा ऐसे, किष्किन्धा के माय।
मुनिसुव्रत जिन समय हुए हैं, घनोदधी वर राय ॥ ७३ ॥

हुए अश्वनीवेग भूपके, पुत्र युगल बलवान।
विजयसिंह विद्युतवेग से, न्याय निपुण विद्वान॥ २ ॥
उस गिरिपे आदित्य नगर था, मंदिरमालि नृपाल।
तस कन्या वनमाला सोहे, यौवन रूप रसाल॥ ३ ॥
रचा स्वयम्वर मंदिरमाली, वनमाला के काज।
देश देश के भूपति आए, अस्त्र शस्त्र सज साज॥ ४ ॥
वनमाला मंडप में आई, ले माला निज हाथ।
संग सहेली है अलबेली, इन्द्राणी साक्षात॥ ५ ॥
सबको तज किष्किंधा नृपको, माला दी पहिनाय।
विजयसिंह को क्रोध हुआ अति, क्यों कर ये ले जाय॥ ६ ॥
बोला ये वरमाला रखदे, जो चाहे तुज नूर।
धोखा खाया है कन्या ने, मतकर मन मगरूर॥ ७ ॥
मुज सन्मुख तुज बल क्या? चलता, आजा ले तलवार।
समय मिला बदला लेने का, तू है निपट गिंवार॥ ८ ॥
मेरे कर तलवार खास ये, करदेगी इन्साफ।
भला चहै तो माला रखदे, वचन कहूं ये साफ॥ ९ ॥
सुनके यों किष्किंधी भूपति, बोला भाल चढाय।
सदा जमाई बनते आए, तुमके हमीं सवाय॥ १० ॥
हमतो हैं दामाद आपके, कहते शर्म न आय।
बात बना गीदड डरपाते, मिला न सिंह सवाय॥ ११ ॥

मालाका में रक्षक सच्चा, रही जान के साथ।
हमी लडेंगे रण में तुमसे, करके लम्बे हाथ॥ १२ ॥
हुए इकट्ठे किष्किंधी को, लिया सभी ने घेर।
चलती है तलवार तेजसे, लडे सुभट धर वैर॥ १३ ॥
सुना सुकेशी लंकेश्वरने, किष्किंधीका हाल।
तुरंत चढाई करके आया, नैन लाल विकराल॥ १४ ॥
मित्र परिक्षा होय विपतमें, भीड पडे टल जाय।
ऐसे कपटी कुटिल मित्रका, मुँह काला होजाय॥ १५ ॥
हुआ संग्राम महा विकट से, बडे सुभट बलवान।
चपल विद्युवत् तेग चले हैं, नभमें लडे विमान॥ १६ ॥
किष्किंधीका छोटाभाई, अंधक था तस नाम।
एक बाणमें विजयसिंह का, कीना काम तमाम॥ १७ ॥
हाल अश्वनीवेग देख के, आया मनमें रोष।
बाण खेंच अंधक को मारा, विकट कसमका दोष॥ १८ ॥
लंक और किष्किंधी नृप की, होती जबही हार।
प्राण बचाकर भगे युद्धसे, अपना समय विचार॥ १९ ॥
लंकेश्वर किष्किंधी भूपति, जाते लंक पयाल।
रहते दोनों समय गुजारे, अजब कर्म का ख्याल॥ २० ॥
इधर अश्वनीवेग भूपने, किष्किंधा अरु लंक।
दोनों पे अधिकार जमाया, होके आप निशंक॥ २१ ॥

था जोद्धा निर्घात गामका, दिया उसीको ताज।
सब वीरोंको जैसा समझा, वैसा दीना राज॥ २२ ॥
बाद अश्वनीवेग भूपने, निज सुत था सहसार।
उसको राज-काज देकर के, लेते संजमभार॥ २३ ॥

॥ पाताल लंकाका वर्णन ॥

हुए सुकेशी नृपके नंदण, तीन अधिक बलवान।
मालि-सुमाली-माल्यवान यों, क्रमसे नाम पिछान॥ २४ ॥
किष्किंधी के श्रीमाला थी, राणी अति सुकमाल।
रक्ष और आदित्य नामसे, हुए वीर दो लाल॥ २५ ॥
मधु पर्वत पे जाय बसाया, किष्किधापुर गाम।
अस्त्र-शस्त्र फौजें सामग्री, संचित किया तमाम॥ २६ ॥
इन्द्र नाम सहसारभूपका, लडका था बलधार।
सभी भूप आनन्द प्रेमसे, धरे प्रजापे प्यार॥ २७ ॥
भूप सुकेशीके पुत्रोंको, याद पूर्वकी आये।
राज हमारा लिया शत्रुने, धिग् जीनो जगमाय॥ २८ ॥
राज हमारा फिर हम लेंगे, लडे दिखा दो हाथ।
यों सुविचारी तुरत फुरतसे, लिये सुभट निज साथ॥ २९ ॥
सुभट देख घबराया अति ही, लंकेश्वर निर्घात।
हार मान के भगा तुरंतसे, समय विकट दरसात॥ ३० ॥

मंगलपुर के व्योम बिंदु की, राज दुलारी खास।
मेरे पति होनेका निर्णय, पण्डित किया प्रकाश ॥ ६० ॥
पुष्पोद्यानमें वीर पुरुष अब, बैठा धरके ध्यान।
तेरा पति वह होगा निश्चय, मेरी अचल ज़बान ॥ ६१ ॥
यों सुनकर मैं तुरत वहांसे, आई बैठ विमान।
चरण सेविका कीजे मुजको, दीजे यह वरदान ॥ ६२ ॥
सोचे मनमें कँवर वचन सुन, लख बालाका रूप।
किये पूर्वमें पुण्य इसीसे, कन्या मिली अनूप ॥ ६३ ॥
ऐसा सुन्दर रूप कहाँपे, देखा मैंने नाय।
ऐसी बालापे नर कामी, देते सीस कटाय ॥ ६४ ॥
ऐसी सुंदर खुद मेरे से, करे याचना आय।
हां नां का क्या? कहना इसको, विकट पथ दरसाय ॥ ६५ ॥
बड़ी कौशिका बहिन इसीकी, व्याही विश्रवणराय।
वही हमारा पूरण वेरी, जिसकी साली आय ॥ ६६ ॥
विद्या सिद्धि बाद तुरत ही, लच्मी सन्मुख आय।
इसे छोडना नीति विरुद्ध है, करना कौन उपाय ॥ ६७ ॥
यदि वैरी मुज यह सुनले तो, नहिं होने दे काम।
क्योंकि उसकी प्रबल शक्ति है, लडे सुनत मुज नाम ॥ ६८ ॥
हिम्मत धरके सोचे मनमें, मुश्किल है ये काम।
सरल बनाकर परणे इसको, तो रहे जगमें नाम ॥ ६९ ॥

हे सुभगे! यह मुश्किल तो भी, तेरा सुणो त्यार।
इस कारण मंजूर सुनो, है रमना था इन्कार ॥ ७० ॥
यही कार्य करने में मैं हूं, इसी स्थान स्वाधीन।
घर जाने पर नहिं वन पड़ता, रहितो पर आधीन ॥ ७१ ॥
इसका उत्तर जो कुछ देना, जल्दी हमें उचार।
मुझको जाना मेरे घरपे, तुमको अपने द्वार ॥ ७२ ॥
कहै केकसी सुनिये स्वामिन्! मुझको सब मंजूर।
एक पहिर तक ठहरो यहाँ पे, इतना कष्ट जरूर ॥ ७३ ॥
कार्य सिद्ध करने को जाती, मात पिताके पास।
उनसे निश्चय करके सारा, कहती हाल प्रकाश ॥ ७४ ॥
यों कहके तब सुन्दर चलती, आई अपने द्वार।
मात-पिता को हाल सुनाया, वीतक बात उचार ॥ ७५ ॥
ज्योतीविद्का कथन सांचलख, होती मन परतीत।
तुरत बुलाया कँवर रत्नश्रव, मनमें धर अति प्रीत ॥ ७६ ॥
किया सुमहोत्सव भूप खुशी हो, परणाई निज बाल।
बना लिया जामात कँवर को, दिया अधिक धनमाल ॥ ७७ ॥
नूतन तब कुसुमोत्तर नामक, नगर बसाया एक।
रहें सदा आनन्द मोद से, पुण्य पूर्व के टेक ॥ ७८ ॥
जायें कहीं पै पुण्यवन्त जो, पाते सब जग मित्र।
रहैं केकसी पुण्यवृक्ष तल इच्छित होते सिद्ध ॥ ७९ ॥

रहैं प्रेमसे आपसमें दोनों, सुख पूर्वक दिन रैन।
उदय आसनकी खबर न होवे, रागरंग सुख चैन ॥ ८० ॥

॥ रावण जन्माधिकार ॥

सोती थी सुख शय्या रानी, पुष्प सेज सुकुमाल।
चलता मंद समीर सुगंधित, मणी जले उजियाल ॥ ८१ ॥
आस पास थी दासी सहेली, [illegible]।
व्याधि रहित तन परम सुशोभित, सुख के मध्य अचेत ॥ ८२ ॥
हुई केकसी रानी निद्रित, अब निशा है दूर।
रैन पीछली स्वप्न निहारे, अद्भुत सुन्दर [illegible] ॥ ८३ ॥
महोन्मत्त गजकुंभ भाल को, करता प्रबल विदार।
नभ से नीचे उतरा सिंह, एक सिंह बल धार ॥ ८४ ॥
किया प्रवेश रानी के मुखमें, पाई परम प्रमोद।
खुली नींद रानी की तबही, मनमें हर्ष विनोद ॥ ८५ ॥
स्वप्न अर्थ को पूछन कारण, पति के पास सतिमान।
जो आया था स्वप्न उसीका, किया यथार्थ बखान ॥ ८६ ॥
नाथ श्रवणकर पतिवर बोले, प्यारी स्वप्न महान।
पुत्र रत्न हो गुण प्रभाविक, पावे जग सन्मान ॥ ८७ ॥
कुल भूषण कुल मान स्थिरकार, तीन खंड का भूप।
होगा निश्चय सुत का दाता, शोभित हो नर रूप ॥ ८८ ॥

मगलपुर के व्योम विंदु की, राज दुलारी खास।
मेरे पति होनेका निर्णय, पण्डित किया प्रकाश ॥ ६० ॥
पुष्पोद्यानमें वीर पुरुष ग्रव, बैठा धरके ध्यान।
तेरा पति वह होगा निश्चय, मेरी अचल ज़बान ॥ ६१ ॥
यों सुनकर मैं तुरत वहांसे, आई बैठ विमान।
चरण सेविका कीजे मुजको, दीजे यह वरदान ॥ ६२ ॥
सोचे मनमें कँवर वचन सुन, लख बालाका रूप।
किये पूर्वमें पुण्य इसीसे, कन्या मिली अनूप ॥ ६३ ॥
ऐसा सुन्दर रूप कहाँपे, देखा मैंने नाथ।
ऐसी बालापे नर कामी, देते सीस कटाय ॥ ६४ ॥
ऐसी सुदर खुद मेरे से, करे याचना आय।
हां ना का क्या? कहना इसको, विकट पथ दरसाय ॥ ६५ ॥
वही कौशिका बहिन इसीकी, व्याही विश्रवणराय।
वही हमारा पूरण वेरी, जिसकी साली आय ॥ ६६ ॥
विद्या सिद्धि बाद तुरत ही, लक्ष्मी सन्मुख आय।
इसे छोडना नीति-विरुध है, करना कौन उपाय ॥ ६७ ॥
यदि वैरी मुज-यह सुनले तो, नहिं होने दे काम।
क्योंकि उसकी प्रबल शक्ति हे, लडे सुनत मुज नाम ॥ ६८ ॥
हिम्मत धरके सोचे मनमें, मुश्किल है ये काम।
सरल बनाकर परणे इसको, तो रहे जगमें नाम ॥ ६९ ॥

हे सुभगे! यह मुश्किल तो भी, तेरा मुजपे प्यार।
इस कारण मजूर मुजे है परना ना इन्कार ॥ ७० ॥
यही कार्य करने मे मन है इसी स्थान स्वाधीन।
घर जाने पर नहिं बन पडता, फिरतो पर आधीन ॥ ७१ ॥
इसका उत्तर जो कुछ देना, जल्दी हमे उचार।
मुजको जाना मेरे घरपे, तुमरो अपन द्वार ॥ ७२ ॥
कहे कैकसी सुनिये स्वामिन्! मुझको सब मजूर।
एक पहिर तक ठहरो यहां पे, इतना कष्ट जरूर ॥ ७३ ॥
कार्य सिद्ध करने को जाती, मात पिताके पास।
उनसे निश्चय करके सारा, कहती हाल प्रकाश ॥ ७४ ॥
यों कहके तब सुन्दर चलती, आई अपने द्वार।
मात पिता को हाल सुनाया, बीतक बात उचार ॥ ७५ ॥
ज्योतीविद्का कथन सांच लख, होती मन परतीत।
तुरत बुलाया कँवर रत्नश्रव, मनमे धर अति प्रीत ॥ ७६ ॥
किया सुमहोत्सव भूप खुशी हो, परणाई निज बाल।
बना लिया जामात कवर को, दिया अधिक धनमाल ॥ ७७ ॥
नूतन तब कुसुमोत्तर नामक, नगर बसाया एक।
रहे सदा आनन्द मोद मे, पुण्य पूर्व के देख ॥ ७८ ॥
जायें कहीं पे पुण्यवंत जो पाते सब मन सिद्ध।
रहे कैकसी पुण्यवृक्ष तल इच्छित होने सिद्ध ॥ ७९ ॥

रहे प्रसन्न दम्पति दोनों, सुख पूरत दिन [illegible]।
[illegible] स्वपर नहीं है, राग रंग सुख चैन ॥ ८० ॥

॥ रावण जन्माधिकार ॥

सोती थी सुख सेज्या राणी, पुष्प सेज सुकुमाल।
चलता [illegible] समीर सुगंधित, पास गई [illegible] ॥ ८१ ॥
[illegible] पास थी रम्य महलकी, चीजे चारु [illegible]।
व्याधि रहित तन परम सुशोभित, सुख के साथ रहेन ॥ ८२ ॥
हुई पछली रात्री निद्रित, सब चिंता से दूर।
इन पीछली स्वप्न निहारे, अतुल पुण्य अंकुर ॥ ८३ ॥
महोन्मत्त गजकुंभ [illegible], करता प्रबल विदार।
नभ से नीचे उतरा जल्दी, [illegible] ॥ ८४ ॥
किया प्रवेश राणी के मुखमें, पाई परम प्रमोद।
खुली आंख राणी की तबही, [illegible] विनोद ॥ ८५ ॥
स्वप्न अर्थ का पूछन कारण, पति के [illegible]।
जो आया था स्वप्न उचारा, किया यथार्थ बयान ॥ ८६ ॥
हाल श्रवणकर पति[illegible] बोले, आया स्वप्न महान।
पुण्यवंत हो पुत्र प्रतापिक, पाई [illegible] ॥ ८७ ॥
कुल-भूषण कुल [illegible] उजियारा, तीन [illegible] भूप।
होगा निश्चय सुत का दाता, शोभित हो वर रूप ॥ ८८ ॥

मगलपुर के व्योम विंदु की, राज दुलारी खाम।
मेरे पति होनेका निर्णय, पण्डित किया प्रकाश ॥ ६० ॥
पुष्पोद्यानमें वीर पुरुष अब, बैठा धरके ध्यान।
तेरा पति वह होगा निश्चय, मेरी अचल जुबान ॥ ६१ ॥
यों सुनकर मैं तुरत वहांसे, आई बैठ विमान।
चरण सेविका कीजे मुजको, दीजे यह वरदान ॥ ६२ ॥
सोचे मनमें कँवर वचन सुन, लख बालाका रूप।
किये पूर्वमें पुण्य इसीसे, कन्या मिली अनूप ॥ ६३ ॥
ऐसा सुन्दर रूप कहाँपे, देखा मैंने नाथ।
ऐसी बालापे नर कामी, देते सीस कटाय ॥ ६४ ॥
ऐसी सुंदर खुद मेरेसे, करे याचना आय।
हां नां का क्या? कहना इसको, विकट पथ दरसाय ॥ ६५ ॥
बडी कौशिका बहिन इसीकी, व्याही विश्रवाराय।
वही हमारा पूरण वैरी, जिसकी साली आय ॥ ६६ ॥
विद्या सिद्धि बाद तुरत ही, लक्ष्मी सन्मुख आय।
इसे छोडना नीति विरुद्ध है, करना कौन उपाय ॥ ६७ ॥
यदि वैरी मुज यह सुनले तो, नहिं होने दे काम।
क्योंकि उसकी प्रबल शक्ति है, लडे सुनत मुज नाम ॥ ६८ ॥
हिम्मत धरके सोचे मनमें, मुश्किल है ये काम।
सरल बनाकर परणे इसको, तो रहे जगमें नाम ॥ ६९ ॥

हे सुभगे! यह मुश्किल तो भी, तेरा मुजपे प्यार।
इस कारण मजूर मुजे है, वरना था इन्कार ॥ ७० ॥
यही कार्य करनेमें मैं हूं, इसी स्थान स्वाधीन।
घर जाने पर नहिं बन पडता, फिरतो पर आधीन ॥ ७१ ॥
इसका उत्तर जो कुछ देना, जल्दी हमें उचार।
मुजको जाना मेरे घरपे, तुमको अपने द्वार ॥ ७२ ॥
कहै कैकसी सुनिये स्वामिन्! मुझको सब मजूर।
एक पहिर तक ठहरो यहाँ पे, इतना कष्ट जरूर ॥ ७३ ॥
कार्य सिद्ध करने को जाती, मात-पिताके पास।
उनसे निश्चय करके सारा, कहती हाल प्रकाश ॥ ७४ ॥
यों कहके तब सुन्दर चलती, आई अपने द्वार।
मात-पिता को हाल सुनाया, बीतक बात उचार ॥ ७५ ॥
ज्योतीविद्का कथन सांच लख, होती मन परतीत।
तुरत बुलाया कँवर रत्नश्रव, मनमें धर अति प्रीत ॥ ७६ ॥
किया सुमहोत्सव भूप खुशी हो, परणाई निज बाल।
बना लिया जामात कँवर को, दिया अधिक धनमाल ॥ ७७ ॥
नूतन तब कुसुमोत्तर नामक, नगर बसाया एक।
रहैं सदा आनन्द मोद से, पुण्य पूर्व के देख ॥ ७८ ॥
जायँ कहीं पै पुण्यवंत जो, पाते सब नव निद्ध।
रहैं कैकसी पुण्यवृक्ष तल, इच्छित होते सिद्ध ॥ ७९ ॥

रहै प्रेममे दम्पति दोनों, सुख पूर्वक दिन रेन।
उदय अस्तकी खबर नहीं है, राग रंग सुख चैन ॥ ८० ॥

॥ रावण जन्माधिकार ॥

सोती थी सुख शय्या राणी, पुष्प सेज सुकुमाल।
चलता मन्द समीर सुगंधित, पड़ी गले वरमाल ॥ ८१ ॥
आस पास थी सखी सहेली, वीजे चामर श्वेत।
व्याधि रहित तन परम सुखोचित, सुख के सब संकेत ॥ ८२ ॥
हुई कैकसी राणी निद्रित, सब चिंता से दूर।
रैन पीछली स्वप्न निहारे, अतुल पुण्य अंकूर ॥ ८३ ॥
महोन्मत्त गज कुंभ स्थल को, करता प्रबल विदार।
नभ से नीचे उतरा जलदी, एक सिंह बल धार ॥ ८४ ॥
किया प्रवेश राणी के मुखमें, पाई परम प्रमोद।
खुली नींद राणी की तबही, धरती हृदय विनोद ॥ ८५ ॥
स्वप्न अर्थ को पूछन कारण, पतिसे जा सतिमान।
जो आया था स्वप्न उसीका, किया यथार्थ बयान ॥ ८६ ॥
हाल श्रवणकर पतिवर बोले, आया स्वप्न महान।
पुण्यवत हो पुत्र प्रभाविक, पावें जग सन्मान ॥ ८७ ॥
कुल भूषण कुल चन्द दिवाकर, तीन खंड का भूप।
होगा निश्चय सुख का दाता, शोभित हो वर रूप ॥ ८८ ॥

वीर वैश्रमण नाम इसी का, करे लकका राज।
तुम्हीं पितामह मार इन्द्र ने, दिया इसी को राज ॥२१८॥
लंक और पाताल लंक थी, अपने सब स्वाधीन।
राज करें वह अपन सामने, क्यों नहिं हो मन क्षीण ॥२१९॥
धनवाहन राजा से अब तक, किया सभीने राज।
अबतो अपने हैं साधारण, कहतें आवे लाज ॥२२०॥
जिसका राज पुनि भूमि छूटी, सो है मृतक समान।
प्रथम धनी फिर निर्धन होता, उसका हो अपमान ॥२२१॥
धन-रक्षक का क्षेत्र उसीको, हर कोई खाजाय।
रक्षक होते हुए लूटते, सो दुख सहा न जाय ॥२२२॥
सो दिन शुभ देखू नजरों से, लकागढ़ मे जाय।
स्वयं पिता के आसन बैठो, वनके भूप सवाय ॥२२३॥
तुम वैरी को कारागृह में, देखू जब निज नैन।
तब समझूगा पुत्रवती मैं, दिलमें होगा चैन ॥२२४॥
यह इच्छा है मेरी पुत्रों, नभमें पुष्प समान।
मरुभूमि मे वृष्टि जैसे, उदय रात्रि में भान ॥२२५॥
हृदय भेदनी तीनों भ्राता, सुनकर माता वात।
हृदय उछलने लगा जोशसे, पूर्व बैर प्रकटात ॥२२६॥
कहै विभीषण सुन अय ? माता, हम क्षत्री के लाल।
तेरे चरणों शीश झुकाते, मत हो मन बेहाल ॥२२७॥

पिया दूध सिंहनी का हमने, होंगे नहीं सियाल।
दशकंधर मुझ भ्रात वीर है, कुंभकर्ण अरि काल ॥२२८॥
नहीं लजावे दूध मात का, रखिये मन विश्वास।
अष्टापद को लख पञ्चानन, मनमे पाता त्रास ॥२२९॥
हाथजोड़ माता से रावण, करे ऐक अरदास।
विद्यासाधन करले पहले, फले तुरत मन आस ॥२३०॥
आज्ञा ले तीनों जन जाते, विद्या साधन काज।
मन वच काया थिर रखनेसे, मिलता सब विधी साज ॥२३१॥
विद्या साधन बैठे तीनों, देखा गुप्तस्थान।
इक हजार साधी रावण ने, कुछ ही दिन दरम्यान ॥२३२॥
चार विभिषण विद्यासाधी, कुंभकर्ण ने पांच।
क्षेम कुशल से निज घर आए, विद्या होती साँच ॥२३३॥
चन्द्रहास असिको साधा है, करके षट् उपवास।
कहीं ग्रन्थ मे विधि साधनकी, यह संक्षेप प्रकाश ॥२३४॥
दशकंधर का दिन २ चढ़ता, अधिका तेज प्रताप।
पुण्योदय होने से मिटता, पाप तिमिर संताप ॥२३५॥

॥ मंदोदरी से व्याह ॥

सुरसङ्गित पुर दक्षिण श्रेणी, गिरि वैताढ्य महान।
मति भूपति केतूमति राणी, सब विधि कला निधान ॥२३६॥
कन्या मंदोदरी उन्हीके, शचि के सम अति रूप।
सन्मुख ला रावण को व्याही, खुश होकर के भूप ॥२३७॥
पुण्योदय से मिलता आकर, अनुकुल सब सयोग।
रहैं कुशल से निर्भय होके, भोगे सब सुख भोग ॥२३८॥

॥ छह हजार कन्याके साथ रावणकाव्याह ॥

गया एक दिन रावण वनमें, मंदोदरी ले साथ।
षट् हजार कन्याको देखे केल करे गहि हाथ ॥२३९॥
पास आयके प्रेम भावसे, पूछे सारा हाल।
गिरिमेघरथ खेचरकी कन्या, हम हैं सुनो कृपाल ॥२४०॥
छहों हजार मिल आई कन्या, क्रीड़ा करने काज।
सुरसुन्दरनृप की यह कन्या, पद्मावति सिरताज ॥२४१॥
दोनों नृप की कन्या हम हैं, आवे प्रतिदिन बाग।
फिर निज २ हम स्थान सिधावे, आपस मे अनुराग ॥२४२॥
लगा काम का बाण उन्हीको, देती सुख बिसराय।
रावण रूप निधान समझके, गई सभी ललचाय ॥२४३॥
शर्म धर्म अरु मात पिताका, प्रेम दिया विसराय।
करे व्याह गधर्व सर्व मिल, एक मता हो जाय ॥२४४॥
सुरसुन्दर पुनि मेघरथ नृपको, मिली खबर यह आय।
सज सेना आए लड़नेको, विकट क्रोध बन छाय ॥२४५॥

बाद आप भी गया युद्ध में, भगा तभी यमराय।
सूर्यराज पुनि ऋक्षराज को, दिये तुरत छुड़वाय ॥२७३॥
प्रेम महत्व पुरुषों का ऐसा, देते समय निभाय।
दोनों भ्राता छूट गये है, रावण प्रेम बढ़ाय ॥२७४॥
पुनि विद्याधर इन्द्र भूप को, दी यह खबर सुनाय।
किष्किधा अरु लंका लीनी, दशकधर वर राय ॥२७५॥
भगा इधर यमभूप तुरत से, इन्द्र भूप पे आय।
बीती अपनी कही हकीकत, वही विपत सिर छाय ॥२७६॥
इन्द्रभूप सुन यह कथनी को, क्रोधानल तन छाय।
कहे कोप कर गर्ज गर्ज से, मुजसे कौन सवाय ॥२७७॥
घाणी में पिलवा दूं रावण, नहिं मैं शक्ति विहीन।
उसकी चलती पास न मेरे, वही विचारा दीन ॥२७८॥
इन्द्र नाम में होय हीनता, यदि नहिं हो स्वाधीन।
अभी से चले उसे जीतलू, मुझको पूर्ण यकीन ॥२७९॥
इन्द्र भूपको मिलके मंत्री, समझाते हित बात।
सोच समझके कारज कीजे, पड़े न वज्राघात ॥२८०॥
लंका पुनि किष्कधा लीनी, सुरसुन्दर को जीत।
जो लड़ने को जाता उससे, उसकी होय फजीत ॥२८१॥
ये रावण इस समय चढ़ा है, सब राजोंका ताज।
उससे युद्ध कियो दुख पाओ, कहूं सांच महाराज ॥२८२॥

यह सलाह सबके मन भाई, सबने किया विचार।
सुरसगित पुर यमको देना, रहना चुप मन धार ॥२८३॥
यमराजा को पुरसगित दे, दीनी बात दबाय।
श्रेष्ठ मन्त्रि जिस नृपके होवे, विपत कभी नहिं आय ॥२८४॥
वशमें रावण किए सभी को, सफल हुए सब काज।
ऋक्षनगर दे ऋक्षराज को, किष्किधा सुरराज ॥२८५॥
सभी संपती ले के रावण, आए लंका माय।
लख देख शुभ पुरमें जाते, ललना मंगल गाय ॥२८६॥
पुर नारी मिल आय बधावे, होता रंग विनोद।
दान अमित दे दुखी जनों को, मनमें होय प्रमोद ॥२८७॥
जिनकी जैसी लखी योग्यता, उनको दे जागीर।
करे रंगसे राज लंकका, रावण बड़ा अमीर ॥२८८॥

॥ वाली को राज प्राप्त ॥

सुरराजा के राणीस्याणी, इन्दुमालिनी नाम।
वाली नंदण हुआ जिन्होके, शूरवीर गुण धाम ॥२८९॥
ऋक्षराजकी हरिकन्ता थी, राणी रूप निधान।
नील और नल दो सुत जाए, विद्यामें विद्वान ॥२९०॥
सुर राजाने किष्किधा का, दे वालीको राज।
मन्त्री पद सुग्रीव कँवरको, योग्य समज दे काज ॥२९१॥

आप विरागी हुए जगतसे, तप जप संजम साथ।
किया आत्म कल्याण मुनीश्वर, पाए मुक्ति समाध ॥२९२॥

खरदूषण द्वारा शूर्पनखा का अपहरण और विराध का जन्म

एक दिवस लंकेश्वर जाते, उपवन क्रीड़ा काज।
मंदिर गिरीपे गए साथ ले, अपना सकल समाज ॥२९३॥
रावण जाने बाद लंकमें, बना विकट अहवाल।
सूर्पनखा दशकधर भगनी, कीना बड़ा कमाल ॥२९४॥
बालपने से है अति चंचल, पीहर अरु सुसराल।
दोनों कुलकी नाशक कहिये, मन था कठिन कराल ॥२९५॥
कुछ ही जागीरीका मालिक, खरदूषण था भूप।
होय महा विषयग्राध भमे है, पड़ा कामके कूप ॥२९६॥
लंकामें आया वह भमता, शूर्पनखाको देख।
तुरत उठाके भगा उसीको, लिखा टले नहिं लेख ॥२९७॥
गिरी एक पाताल लंक तट, लिया वहा विश्राम।
अस्त्र शस्त्र अति किये इकट्ठे, करने को संग्राम ॥२९८॥
भूप वहा पाताल लंकका, सूर्यरायका नंद।
चन्द्रोदरथा नाम भूपका, न्याय, नीति कुल चंद ॥२९९॥

सुनी घात राणी की रावण, जची समज में ठीक।
श्रेष्ठ हुआ इसने समझाया, राणी ये निर्भीक ॥३२९॥
प्रेम पूर्ण कर खरदूषण से, व्याही अपनी बेन।
दिया राज पाताल लंक का, बना लिया निज सेन ॥३३०॥

॥ वालीसे रावणकी पराजय ॥

वर्णन कहते किष्किधा का, मोटावालीभूप।
द्वादशव्रत पाले श्रावक का, ज्ञाता जीव स्वरूप ॥३३१॥
देव विरागी सिवा किसी को, नहीं नमाता सीस।
सेव बजाता नहिं रावण की, बना श्रंक छत्तीस ॥३३२॥
सभा भराई दशकधर की, मिल जुल करें विचार।
क्यों नहिं वाली आन मानता, करता दुर्व्यवहार ॥३३३॥
किस कारण प्रतिकूल बना वह, आज्ञा में इन्कार।
क्या करना? अब युद्ध उसीसे, कहिये सोच विचार ॥३३४॥
तोडे उसने नियम राज के, छाया मन अभिमान।
करना मर्दन मान मानिका, फिर आवेगी स्यान ॥३३५॥
दूत पठा पहले समझाना, यह है उत्तम काम।
नहिं समझे तो उसे हरावें, करें विकट सग्राम ॥३३६॥
कहें एक नर जोश खाय के, वाली नृप बदमास।
महा कृतघ्नी नीच अधम वह, रहा सदासे दास ॥३३७॥
आज हुआ अभिमानी परको, समझे तुच्छ महान।
भूल गया जब कैद पडा था, बधन में नादान ॥३३८॥
बध छुडा के किष्किधा का, उसे दिलाया राज।
वह दिन अपना भूल गया है, उलट रहा सिर गाज ॥३३९॥
उसका पडा पसीना वहाँ पर, निज तन खून बहाय।
ऐसे अभिमानी का निश्चय, देना मूल मिटाय ॥३४०॥
कहें विभीषण सुनो सभासद, तुच्छ न वाली भूप।
दीर्घदर्शि वह बुद्धिमान है, समझे सकल स्वरूप ॥३४१॥
दूत भेज के गुप्त बात का, पता लगाना खास।
फिर तो जो होगा सो होगा, करें छिनक में नाश ॥३४२॥
सभी हुए मजूर इसीमें, सुनी विभीषण बात।
तुरत पत्र लिख दूत पठाया, चला दूत हर्षात ॥३४३॥
वाली नृपपे दूत गया जब, किया विनय गुणगान।
बाद पत्र मालिक का दीना, दशकधर फरमान ॥३४४॥
पढा पत्र यह भाव उसीमें, सुनिये वाली राय।
प्रेम भाव से पहले कहते, न्याय नीति दरसाय ॥३४५॥
परंपरा से तुममें हममें, प्रेम भाव वर्ताव।
अब क्यों? तोडो जरा बात पे, समझो धर सद्भाव ॥३४६॥
जोजन बानर दीप तीनसो, हमका हे अधिकार।
हमने तुमको काराग्रह से, छुडवाया उस बार ॥३४७॥
बात पूर्व की याद करो अब, धरिये नहिं अहंकार।
हुए कृतघ्नी क्यों कर बेतुक, उलटा ये अपकार ॥३४८॥
या तो आज्ञा धरो हमारी, नहिं तो करिये युद्ध।
वाली पत्र पढ कहै दूत से, गई दशानन बुद्ध ॥३४९॥
कहदे तुज राजा को, हम हैं, युद्ध करन को त्यार।
देव विरागी सिवा किसीको, नमता नहिं किस वार ॥३५०॥
गया बडों के साथ सनातन, प्रेम भाव अब नाय।
सवा सेर रावण से वाली, किससे नहिं घबराय ॥३५१॥
परभव जाना होतो आना, रणभूमी के माय।
क्यों करता वह देर युद्ध में, कहूँ सत्य दरसाय ॥३५२॥
दूत बात जा कहि रावण से, जल के होता खाक।
तुरत सजाए सुभट वीर दल, फल अपने ले चाख ॥३५३॥
दोनों बाजू वीर युद्ध के, कूद पडे मैदान।
गर्ज रहे हैं वीर मुछाले, छुपता रजसे भान ॥३५४॥
बजे नाद रणतूर जोरसे देय नकारे चोट।
वीरों के पगकी श्रेणी से, हिलते पुरके कोट ॥३५५॥
आज प्रलयका मानों दिन है, गई प्रजा घबराय।
बुद्धिमान मिल दोय तर्फ के, निर्णयमें कुछ आय ॥३५६॥
बिना गुन्हे वध होते लाखों, निर्णय करो अनूप।
बुद्धिद्वारा सोचें कुछ भी, होवेगा फल रूप ॥३५७॥

सिला तोक डालें सिर ऊपर, जाय छिनकमें प्राण।
ध्यान खुला मुनिवरका तबही, लखें लगाकर ज्ञान ॥३८५॥
रावण आया मुझे मारणको, जगा पूर्व का वैर।
अब भी है अरमान घंडामन, छोड़ें मदकी लेर ॥३८६॥
रखा सिलापे पैर तर्जिकसे, ठंडी सिला वह जाय।
लगी आय रावण के सिरपे, रावण दिया दबाय ॥३८७॥
लगा जोर से रोने तब तो, विकट समस्या पाये।
मुझे छोड़दो दया दिखाके, रक्षक तुम मुनिराय ॥३८८॥
कभी अयोग्य करूं नां एसा, शिक्षा मिलती आज।
तुरंत हटाई सिला दयालू, समझ दयाका काज ॥३८९॥
चरण शरण में आय गिरा है, नम्र भाव दरसाय।
कभी करूं अपराध न एसा, आप बड़े मुनिराय ॥३९०॥
मुनि कहते अब रावण कायर, दिया छिनकमें रोय।
क्या तू धर्म वेदोंके ऊपर, जीवन देगा खोय ॥३९१॥
अमित मान उपकार साधुका, बार २ गुण गाय।
आया तब धरणेन्द्र स्वर्गसे, मुनिवरको सिरनाय ॥३९२॥
रावण की सेवा लख मोहित, होता तब धरणेन्द्र।
भेट अमोघा विजय शक्ती दे, सभी शक्तिका केन्द्र ॥३९३॥
खुश होता शक्ति पा करके, मनमें हर्ष बढाय।
तीन खण्डके साधन कारण, होगा परम सहाय ॥३९४॥

रावण मुनि धरणेन्द्र सिधाया, मुनि चरणों सिरनाय।
वालीमुनि सब कर्म काटके, अजर अमर पद पाय ॥३९५॥

॥ सुग्रीवसे तारा का व्याह ॥

गिरिवैताढ्यमें ज्योतीपुर था, विद्याधरका धाम।
ज्वलनसिंह था भूप जहां का, श्रीमति राणी नाम ॥३९६॥
तास सुता थी तारा नामक, पढी गुणी विद्वान।
उसी रूपके आगे अबला, पाती थी अपमान ॥३९७॥
एक भूप चक्रांक नामके, साहसगति सुत एक।
बैठ विमान चला फिरनेको, तारा कन्या देख ॥३९८॥
मोहित होकर कहता यह क्या? अमरी कवरी खास।
लगा प्रेमका तीर कलेजे, कुमति किया उर वास ॥३९९॥
चित्त चुराकर लिया चचला, रवि दया जिन प्रकाश।
करूं परिश्रम यदि मिल जावें, पूर्ण बने मन आश ॥४००॥
मित्र साथ यह राह ठानके, आए भूपति पास।
हाल मित्रने सभी सुनाया, जो मनकी थी आश ॥४०१॥
कवर रूप लख राजा सोचे, यह बुधवंत कुमार।
कन्या देना उचित समझके, एक किया सुविचार ॥४०२॥
बुला ज्योतषी लग्न पूछते, कहें ज्योतषी देख।
अल्पायू यह कंवर गणितसे, इसमें मीन न मेख ॥४०३॥

ब्याह किया सुग्रीव भूपसे, ताराका उसवार।
उत्सव करके दिया दायचा, अमित द्रव्य भंडार ॥४०४॥
सुन साहसगति ने ताराका, हो सुग्रीव से व्याह।
क्या कर मनता परवशता से, उठी तनमें दाह ॥४०५॥
इधर उधर से छान बीनके, सोचा एक उपाय।
रूप परावर्तनकी विद्या, साधें स्थिर मन लाय ॥४०६॥
तारा रमणीने जाये है, शूर वीर युग नंद।
जयानंद अरु अगद कहिये, शुभ लक्षण गुणवंद ॥४०७॥

॥ दिग्विजयको रावणका जाना ॥

तीन खण्डके साधन कारण, हुआ दशानन त्यार।
लीना साथ विमान अनेको, शूर वीर सरदार ॥४०८॥
चला साथ सुग्रीव हर्षसे, लिए सुभट बलवान।
दिग्विजयके कारण रावण, तुरत किया प्रस्थान ॥४०९॥
आए जब पाताल लंकसे, खरदूषण था राय।
लगा पता लेनेको आया, धरता प्रेम सवाय ॥४१०॥
आगे आई नदी नर्मदा, लिया वहां विश्राम।
रावण बैठा पार्श्व शान्ति से, बना अचानक काम ॥४११॥
बहता तब आया ऊपरसे, पाणी पूर अपार।
दृश्य देख रावण घबराया, यह क्या विस्मयकार ॥४१२॥

सिला तोक डाले सिर ऊपर, जाय छिनकमें प्राण।
ध्यान खुला मुनिवरका तबही, लखें लगाकर ज्ञान ॥३८५॥
रावण आया मुझे मारणको, जगा पूर्व का बैर।
अब भी है अरमान वेढामन, छाई मदकी लेर ॥३८६॥
रखा सिलापे पैर तनिकसा, उड़ी सिला वह जाय।
लगी आय रावण के सिरपे, रावण दिया दबाय ॥३८७॥
लगा जोर से रोने तब तो, विकट समस्या पाय।
मुझे छोडदो दया दिखाके, रक्षक तुम मुनिराय ॥३८८॥
कभी अयोग्य करूं नीं एसा, शिक्षा मिलती आज।
तुरत हटाई सिला दयालु, समझ दयाका काज ॥३८९॥
चरण शरण में आय गिरा है, नम्र भाव दरसाय।
कभी करूं अपराध न ऐसा, आप वडे मुनिराय ॥३९०॥
मुनि कहते अय रावण ? कायर, दिया छिनकमें रोय।
क्या तूं धर्म वेदीक ऊपर, जीवन देगा खोय ॥३९१॥
अमित मान उपकार साधुका, वार २ गुण गाय।
आया तब धरणेन्द्र स्वर्गसे, मुनिवरको सिरनाय ॥३९२॥
रावण की सेवा लख मोहित, होता तब धरणेन्द्र।
भेट अमोघा विजय शक्तीद, सभी शक्तिका केन्द्र ॥३९३॥
खुश होता शक्ति पा करके, मनमें हर्ष बढाय।
तीन खंडके साधन कारण, होगा परम सहाय ॥३९४॥
रावण पुनि धरणेन्द्र सिधाया, मुनि चरणे सिरनाय।
वालीमुनि सब कर्म काटके, अजर अमर पद पाय ॥३९५॥

॥ सुग्रीवसे तारा का व्याह ॥

गिरिवैताढ्यमें ज्योतीपुर था, विद्याधरका धाम।
ज्वलनसिंह था भूप जहां का, श्रीमति राणी नाम ॥३९६॥
तास सुता थी तारा नामक, पढी गुणी विद्वान।
उसी रूपके आगे अबला, पाती थी अपमान ॥३९७॥
एक भूप चक्राक नामके, साहसगति सुत एक।
बैठ विमान चला फिरनेको, तारा कन्या देख ॥३९८॥
मोहित होकर कहता यह क्या ? अमरी कवरी खास।
लगा प्रेमका तीर कलेजे, कुमति किया उर वास ॥३९९॥
चित्त चुराकर लिया चचला, रवि ज्यों तेज प्रकाश।
करें परिश्रम यदि मिल जावे, पूर्ण बने मन आश ॥४००॥
मित्र साथ यह राह ठानके, आए भूपति पास।
हाल मित्रने सभी सुनाया, जो मनकी थी आश ॥४०१॥
कंवर रूप लख राजा सोचे, यह कुघात व वार।
कन्या देना उचित समझके, एक किया सुविचार ॥४०२॥
बुला ज्योतषी लग्न पूछते, कहे ज्योतषी देख।
अल्पायू यह कंवर गणितसे, इनमें मीन न मेख ॥४०३॥
ब्याह किया सुग्रीव भूपसे, ताराका उस बार।
उत्सव करके दिया दायचा, अमित द्रव्य भंडार ॥४०४॥
सुन साहसगति ने ताराका, हो सुग्रीव से ब्याह।
क्या कर सकता परवशता में, उठी तनमें दाह ॥४०५॥
इधर उधर से ज्ञान चीनके, सोचा एक उपाय।
रूप परावर्तनकी विद्या, साधे स्थिर मन लाय ॥४०६॥
तारा रानीने जाये हैं, शूर और गुणवंद।
जयानंद अरु अगद कहिये, शुभ लक्षण गुणकंद ॥४०७॥

॥ दिग्विजयको रावणका जाना ॥

तीन खंडके साधन कारण, हुआ दशानन त्यार।
लीना साथ विमान अनेको, शूर वीर सरदार ॥४०८॥
चला साथ सुग्रीव हर्षसे, लिए सुभट बलवान।
दिग्विजयके कारण रावण, तुरत किया प्रस्थान ॥४०९॥
आए जब पाताल लंकमें, खरदूषण था राय।
लगा पता लेनेको आया, धरता प्रेम सवाय ॥४१०॥
आगे आई नदी नर्मदा, लिया वहीं विश्राम।
रावण बैठा जभी शान्ति से, बना अचानक काम ॥४११॥
बहता तब आया ऊपरसे, पाणी पूर अपार।
दृश्य देख रावण घबराया, यह क्या विस्मयकार ॥४१२॥

गुह्य बात दी खोल मित्रसे, सुनके तव भूपाल।
हँस करके यों कहें मित्रसे, क्या ? ये काम कराल ॥२००॥
तुच्छ बातके कारण इतने, मनमें हुए उदास।
मित्र लिए हैं प्राण समर्पण, रखो पूर्ण विश्वास ॥२०१॥
दिया हुक्म राणीको जाओ, अभी मित्रके द्वार।
पति आज्ञा सुन राणी दिलमें, पाई हर्ष अपार ॥२०२॥
मित्रद्वारपे गई तुरतसे, पति आज्ञा सिर धार।
भूप छिपा आकरके वहाँ पे, सुने होय हुशियार ॥२०३॥
कहे प्रमत्तसे राणी ऐसी, सुनिये आप सुजान।
जो कुछ आज्ञा सो फरमाओ, खड़ी चरनमें आन ॥२०४।
पति मेरा तुम प्रेम निभावे, सिर देनेको त्यार।
नारी मांगी तुच्छ वस्तु क्या ? आप बड़े दिलदार ॥२०५॥
मित्र हृदय जब पलट गया है, सुन राणीकी बात।
धन्य २ प्रिय मित्र हमारा, धन्य २ तू मात ॥२०६॥
चरण पड़ा राणीके ततछिन, मैं पापी मति हीन।
करी याचना नहिं याचनकी, होता हृदय मलीन ॥२०७॥
मैं अपराधी हूं राजाका, द्रोही मित्र करूर।
बड़ा वज्र में पाप कमाया, पापी नीच जरूर ॥२०८॥
शस्त्र हाथ ले सिरको छेदे, करता मरण प्रयास।
देख हाल यों भूप झपट से, गया मित्रके पास ॥२०९॥

तुरत छुड़ाता शस्त्र हाथसे, यह क्या करो अकाज।
मित्र परिक्षा करनेके हित, सोचा यही इलाज ॥२१०॥
करे प्रशंसा मित्र मित्रकी, दोनों हर्ष महान।
सुमित्र नृप ले संजम पहुँचे, दूजा स्वर्ग इशान ॥२११॥
वहाँ से चल मैं मधुनृप होता, पाया सुख भन्डार।
मित्र प्रभव नर कई भवधारे, विन समकित हो ख्वार ॥२१२॥
जन्म लिया ज्योतिर्मति घरपे, उत्तम कुल आगार।
मिला साधु सयोग उसीसे, बना तुरत अनगार ॥२१३॥
दुष्कर तपकर काया शोषी, तपका किया निदान।
वहाँ से मरके भवन देव में, हो चमरेन्द्र महान ॥२१४॥
पूर्व स्नेहके बन्धन कारण, मुजपे धरता प्रेम।
आया मिलने खुश होकर के, पूछे साता क्षेम ॥२१५॥
दिया एक त्रिशूल प्रेमसे, शस्त्र बड़ा श्रेयकार।
काम करे मेरा यह जाके, जोजन दोय हजार ॥२१६॥
तुरत कामकर पीछा आता, आतम रख हमेश।
पास किसीके नहिं जा सकता, साधे काम विशेष ॥२१७॥
मुजको देव त्रिशूल सिधाय, देव बड़ा चमरेन्द्र।
यही त्रिशूलकी महिमा सारी, सुनिये लक्नरेन्द्र ॥२१८॥
रावण सुन मन हर्षित होता, मधुनृप लख रतिवान।
मनोरमा निज कन्या व्याही, प्रेम रहे हरआन ॥२१९॥

॥ फूट से नलकुबेर का राज्य जाना ॥

वर्ष अठारह होगए ऐसे, साधे देश अनेक।
जहाँ जात वहाँ सिद्ध कामना, पुण्य पूर्व फल पेख ॥२२०॥
करी चढ़ाई आगे चलते, महि मण्डल लंकेश।
आए पुर दुर्लंघ्य जहाँ का, नलकूबेर नरेश ॥२२१॥
आशाली विद्या थी साधी, शत जोजन तक जान।
बना अग्निका कोट चौर सब, विपुल अग्नि मंडाण ॥२२२॥
भूप हृदय अभिमान वहाँ था, मेरा तेज प्रचंड।
मुझे जगतमें जीत न सकता, मेरा मान अखंड ॥२२३॥
कुंभकर्ण आए सज सेना, देखी अग्नि ज्वाल।
आशाली विद्याको लखके, होते हाल विहाल ॥२२४॥
फिर आए रावणसे बोले, काम विकट है घोर।
सुभटादिक पीछे पग भागे, चले न मेरा जोर ॥२२५॥
गया दशानन भी घबराया, आया उलटा भाग।
उतरा मुखसे नूर सभी का, यह तो विषधर नाग ॥२२६॥
मिला नहीं रास्ता नगरीका, आए पलट विमान।
चित चिंता छाई सब जनके, लज्जा रख भगवान ॥२२७॥
दाव तभी सुग्रीव सोचते, सुधरे सघले काज।
बनी रहे सब बात हमारी, रहे अखंडित लाज ॥२२८॥

अपने पतिको निभा सकी नां, कैसे अन्य निभाय।
घर झगड़े में नीति बिगाड़ी, भाव नीच मनलाय ॥२५९॥
सत्य बातकी रक्षाके हित, उत्तम देते प्राण।
सिंह भूखमें घास न खाता, रखता कुल की आन ॥२६०॥
चल जा दासी! अपने स्थानक, नहीं है तुज से काम।
करते दासीको अपमानित, चहैं नहीं बदनाम ॥२६१॥
कहैं विभिषण तब दासीको, मत हो हृदय उदास।
आशा राणी की हो पूरी, रखो पूर्ण विश्वास ॥२६२॥
नहिं जल्दीसे कामबने हैं, रखो धैर्य हो काम।
निर्भय लाओ अब राणी को, बनता काम तमाम ॥२६३॥
लघुबन्धवकी सुन यों कथनी, रावण बना अधीर।
वंश कुठारा बना गले धर, अपयशकी जंजीर ॥२६४॥
यश अपयशका ख्याल न तुजको, चहो नीचसे साज।
निज ताक़त से काम चलेगा, पर शक्ति क्या काज ॥२६५॥
कहैं विभीषण भ्रात आपका, उलटा बना विचार।
इच्छा नहिं है बुरी हमारी, मन हैं स्वच्छ उदार ॥२६६॥
रक्षा करना शरणागत की, दुख हरना दे साज।
उसमें होता लाभ अपन को, मिले सहज में राज ॥२६७॥
चक्र और विद्या आशाली, इसकी हमें जरूर।
नलकुबेर जीते विन जगमें, कैसे रहे सनूर ॥२६८॥

समय गए फिर बात न मिलती, रहते मल २ हाथ।
समय देखके बात कहीमें, अन्य भाव नहिं नाथ ॥२६९॥
फिर समझा के नृपराणीको, करवां दूंगे प्रेम।
अपना ऊंचा नाम बढ़ाले, मिले सभी सुख क्षेम ॥२७०॥
विन व्यापार किए नहिं मरते, मरते जो विष खाय।
पुण्योदयसे सिद्ध सकलहो, अपना काज सवाय ॥२७१॥
सुन दशकंधर चुपहो बैठा, होता होवन हार।
दासी जा राणीसे सारा, हाल कहा विस्तार ॥२७२॥
फूली नहीं समाई मनमें, आई जल्दी चाल।
आशाली विद्याका साधन, बता दिया तत्काल ॥२७३॥
विधियुत विद्या साधी छिन में, मिटा हृदय उत्पात।
चक्र सुदर्शन मिला हाथ में, करे शत्रु की घात ॥२७४॥
नलकुबेर का घर जब फूटा, बिगड़ा काम तमाम।
रावण और विभीषण दोनों, पाया अति आराम ॥२७५॥
विद्या पाकर रावण जाता, युद्ध करन के काज।
नल कुबेर को जीत लिया झट, करके सिंह आवाज ॥२७६॥
बांधा दृढ़ बंधन से नृप को, छोड़ दिया तत्काल।
कहे देख फल फूट घरों को, जिनसे बुरा हवाल ॥२७७॥
समझाए राजा रानी को, हुआ परस्पर मेल।
नलकुबेर को ताज दिया फिर, करें सदा सुख केल ॥२७८॥

सब समय में किसकी ताक़त, ले सकता था राज।
कहैं सूर्यमुनि फूट तजे तो, सुधरे सारे काज ॥२७९॥

॥ रावण द्वारा इन्द्रकंवर की हार ॥

रथनूपुर पर करी चढ़ाई, रावण सैन्य सजाय।
सारे पुर को घेर लिया है, देते दूत पठाय ॥२८०॥
नृप सहस्रार ने इन्द्र नंद को, समझाते धर प्यार।
बेटा अपना समय सोच लो, तजदो सब तकरार ॥२८१॥
महाबली सुग्रीव सदा ही, रहै चरण का दास।
सूर्य तेज सम दिन दिन चढ़ता, जिनका आज प्रकाश ॥२८२॥
नलकुबेर अरु सहस्रांशुने, सुरसुन्दर वर राज।
मान सभी का हारा उनमें बड़े बड़े सिरताज ॥२८३॥
नहीं ठिकाना होगा तेरा, करता यदि संग्राम।
पड जाओगे महाविपत में, फेर नहीं आराम ॥२८४॥
प्रेम बढ़ाओ देकर जिनको, तुम भगनी परणाय।
बनी रहेगा बात सब ही, होगा मान सवाय ॥२८५॥
श्रवण किया पितु वचन इन्द्र के, लगा कलेजे तीर।
वाह पिता जी! राह बताई, छूंद आप अक्सीर ॥२८६॥
तुम कायर बल हीन हुए हो, सभी गवाई लाज।
लंका अरु किष्किंधा का हा! खोया तुमने राज ॥२८७॥

मत समझो की निकट गाँव है, पहुँचे जलदी चाल।
चलता होतो चलो गुप्त से, नहीं वाल का ख्याल ॥६६८॥
बदला वेष दोनों ने निज का लिए शस्त्र कर माय।
बैठे झट से यान उडाया, महिन्द्रपुरी चल आय ॥६६९॥
पहुँचे गुपचुप स्थान अंजना, बैठी सखियों साथ।
रंगविरंगी वातें होती, रंग भवन साक्षात ॥६७०॥
पड़ी पवन की नजर नार पे, छवि विद्युत सम देख।
अनमिख नैन पसारे निहारे, अमरी कवरी एक ॥६७१॥
लगा नैन ज्यों चमक लोह से, हटे दृष्टि नहिं दूर।
चन्द्र वदन मनमोहन सूरत, वडी पुण्य अकूर ॥६७२॥
अजव छटा है रूप तेज की, गुण गौरव भंडार।
मन मराल वश कीना इसने, शुभ लच्छन आगार ॥६७३॥
रोम रोम में वसी सु ललना, नहीं खुशी का पार।
मुझे मिलेगी ऐसी दारा, प्रवल पुण्य भण्डार ॥६७४॥
लघुवय अङ्गी सब मिल सङ्गी, सखियाँ करे किलोल।
एक सहीखी मिलती तवतो, देती वातें खोल ॥६७५॥
ललना गणमें लाज किसीकी, कहदे मन की बात।
उसी रङ्ग में भङ्ग होन का, बना ऐक उत्पात ॥६७६॥

॥ अविवाहित अंजना पे पवनका कोप ॥

ऐक सखी कहैं सुनरी वाई, तेरा भाग्य अपार।
पूर्व पुण्य से पाई पतिवर, पवन श्रेष्ट भरतार ॥६७७॥
नलकुवेर सा रूप उन्हीं का, सकल कला भण्डार।
अचल रहो जोडी यह तुमकी, वनो जगत हितकार ॥६७८॥
अपर सखी तव कहे सखीसे, कैसा किया सवाल।
कहाँ सिंह सम मेघकँवरजी, कहाँ पवनजी स्याल ॥६७९॥
वसंतमाला बोली तवतो, तुम नहिं जाना छन्द।
अल्पायू है मेघ जिसीसे, जुड़ता नहीं सम्बन्ध ॥६८०॥
कहाँ रत्नमणि काच कहाँ है, कहाँ सुधा अरु खेर।
कहाँ कस्तूरी कहाँ लशुन है, ऐसा समझो फेर ॥६८१॥
हेम लोहमें अन्तर जैसे, मेघ पवनमें जान।
पुण्य अल्पसे मिले पवनजी, अधिक मेघ गुणवान ॥६८२॥
जहाँ अधिक हो कौन कामका, किंचित् अमृत श्रेष्ट।
मिले निगुण पति कोन कामका, काम होय सव नेष्ट ॥६८३॥
पवनकँवर सुन गुप्त वात ये, सोचे मनधर क्रोध।
प्रेम अंजना का है अधिका, प्यारा मेघ प्रमोद ॥६८४॥
अप्रिय होती वात इसीको, कर देती झट वध।
लगा सुधापन वात सर्व ही, विकल वनी मति अन्ध ॥६८५॥
क्रोध विवश आये हा राता, भूल गए निज भान।
कुलटा नारी है व्यभिचारी, तजदी कुलकी कान ॥६८६॥
करे प्रशंसा पर पुरुषोंकी, कहाँ शील मत धर्म।
विना शीलके रूप सपदा, निष्फल हैं सत्कर्म ॥६८७॥
क्या समझा था क्या निकली ये, खुली आज सब पोल।
ताम्बे पे हैं झोल हेमका, वनी वात वेडोल ॥६८८॥
अजव निराला चरित नारका, कौन लहे जल पार।
मेन ऐनमें वात वनावे, मारे नैन कटार ॥६८९॥
हरि हर ब्रह्मा देव मनुज भी, गए त्रियासे हार।
पटे इसीके नैन पासमें, वनते वही गमार ॥६९०॥
पती मार कर सती कहाती, ऐसी ललना चाल।
खबर नहीं थी मुझको ऐसी, होगा नार छिनाल ॥६९१॥
होय अन्ध इस कुलटा कारण, झुरता था दिनरात।
देखन कारण आया जिनसे, मिलती सारी वात ॥६९२॥
लगे दूरसे डूगर आछे, हुई कहावत साच।
ऐसी परणे इज्जत जाती, समझ लहे कुन कोच ॥६९३॥
ऐसी कुलटा को नहिं रखना, करना अव संहार।
मारण कारण तुरत म्यानसे, खेंची है तलवार ॥६९४॥
लिया हाथ झट पकड मित्रने, करो गजव क्या? आप।
अवलाओं का वध करनेमें, कहा शास्त्रमें पाप ॥६९५॥

नाटक नृत वाजित्र बाजते, मखो मखमल वेश ।
चपलाक्षी गोखे चढ देखे, अनुपम छटा विशेष ॥७२५॥
मधुर नारियाँ पवन सवारी, देखन होती त्यार ।
घर का सारा काम छोड के, चाली सज सिनगार ॥७२६॥
चालो सखियाँ केसो बनडो, आयो सज सिनगार ।
धन्य भाग है पुण्य अजना, पाई प्रिय भरतार ॥७२७॥
महिन्द्र रायने पुरी सजाई, स्थान स्थान सगीत ।
मोती माला घर घर सोहे, सुरपुर हो लज्जीत ॥७२८॥
सखी साथ ले चली अजना, सज धज गोखे आय ।
पति निरखण की हृदय पिपासा, चातक चंद्र चहाय ॥७२९॥
पवन पुरुष का परम पौरसा, सुंदर अदभुत रूप ।
सुनो अजना ? कहती सखिया, पाए कंथ अनूप ।७३०॥
परम भाग्य है बाई तेरा, कीने पुण्य अपार ।
उत्तम जोडी मिली आपकी, वासव सम भरतार ॥७३१॥
क अजना अधिक न बोलो, लग जावे टोंकार ।
मैं से भावसे र प्रेम जिनका, सुदर रूप अपार ॥७३२॥
पति ... या ? क्योंकर, शल्य पडे हैं तीन ।
मुख ... ज्वाला, मन क्यों हुआ मलीन ॥७३३॥
सभी लोक आनंद मनाते, प्रति चित चिन्ता खास ।
क्या ? पतिके हैं पीड अंग में, जिनमे हुए उदास ॥७३४॥

पति दुखसे मैं भी दुख पाती, फरके दक्षिण अंग ।
रुष्टमान हो पति मुजसे तो, बने रंग में भग ॥७३५॥
पवन अंजना मोड बांध के, बैठे चॅवरी माय ।
इन्द्र और इन्द्राणी के सम, जोडी रही सुहाय ॥७३६॥
पति आकृति लख सती सोचती, नहीं प्रेम सचार ।
मिली मक्षिका प्रथम कवल मे, फिर क्या ? होवन हार ॥७३७॥
हाथ मिलाया विना प्रेमसे, तिरछा करके नैन ।
मेरे पर है रोष कंथका, देख लिया सब चैन ॥७३८॥
दिया दायचा जामातृको, मनकी होस निकाल ।
सखी पानसो वसतमाला—आदिक दिए विशाल ॥७३९॥
चली सासरे सती अजना, माता, दे आशीष ।
पति परमेश्वर वत पद प्रणमो, नित्य झुकाओ सीस ॥७४०॥
धर्म अहिंसा जैन धर्म को, तन मन से अपनाय ।
प्राण जाय पर धर्म न जावे, लेना परम निभाय ॥७४१॥
हुक्म उठाना पति का सिरपे, दुख में देना साथ ।
यदि कटु वैन कहे तो उनका, सहना जोडी हाथ ॥७४२ ।
सास सुसर की भक्ति बजाना, आलस रखना दूर ।
मिल जुल करके रहना सबसे, रखिये नहीं गरूर ॥७४३॥
दोनों कुल की लाज बढाओ, धार सभी कुल रीत ।
कहैं अंजना मात बात सुन, मधुर वचन धर प्रीत ॥७४४॥

हेमाता ? तुम सीख सोमपे, धरती अमृत जान ।
सुख दुख में पति साथ रहूँगी, सदाचार उर आन ।७४५॥
विरह पडेगा आज आपसे, सहा न मुजसे जाय ।
माता जलदी मुजे बुलाना, घर के प्रेम सवाय ।७४६॥
पहुँचाने को राजा राणी, शत भ्राता का साथ ।
विरह व्यथा में गिरा नैनसे, करते आंशू पात ॥७४७॥
पहुँचा के निज घर सब आए, आगे चली बरात ।
नृप प्रहलाद बधाकर लाया, सब सेना के साथ ॥७४८॥
पांव सासुके लगी अजना, प्रेम विनय दरसाय ।
सासु देत आशीष वधुको, जोडी रहो सवाय ॥७४९॥
कुल में भूषण श्रेष्ट सती मैं, समझ अजना नार ।
गांव पानसो दिया सती को, जर जेवर भडार ॥७५०॥
सात मालका महिल सतीको, देते रहने काज ।
सखी साथमें रही पानसो, सुंदर सब विधि साज ॥७५१॥
रखे प्रेमसे सासू आदिक, करे सदा सभाल ।
मानी जन अपमान आपका, भूले नहि तिहु काल ॥७५२॥
अहि वृश्चिक होवे जिस घरमें, रहै उसीसे दूर ।
द्वार अजना ज्योंहि पवनजी, छोड दिया मन क्रूर ॥७५३॥
सर्प कचुकी छोडे जैसे, रहते पवन कॅवार ।
विना प्रेमसे श्रेष्ट वस्तु भी, गलती है बदकार ॥७५४॥

नाटक नट वाजित्र वाजते, सभी अनूमल वेश ।
चपल भी गोखे चढ देखे, अनुपम छटा विशेष ॥७२५॥
भगर नारियां पवन सवारी, देखन होती त्यार ।
घर का सारा काम छोड के, चाली सज सिनगार ॥७२६॥
चालो सखियां केसो घनटो, आयो सज सिनगार ।
धन्य भाग ए पुण्य अंजना, पाई प्रिय भरतार ॥७२७॥
महिन्द्र रायने पुरी सजाई, स्थान स्थान सुगीत ।
मोती माला घर घर सोहे, सुरपुर हो लज्जीत ॥७२८॥
सखी साथ ले चली अंजना, सज धज गोखे आय ।
पति निरखण की हृदय पिपासा, चातक चंद चहाय ॥७२९॥
पवन पुण्य का परम पारसा, सुंदर अदभुत रूप ।
सुनो अंजना ? कहती सखिया, पाए कंथ अनूप ।७३०॥
परम भाग्य है बाई तेरा, कीने पुण्य अपार ।
उत्तम जोडी मिली आपकी, वासव सम भरतार ॥७३१॥
क. अंजना अधिक न घोलो, लग जावे टोंकार ।
मैं [illegible] भावसे [illegible]म जिनका, सुंदर रूप अपार ॥७३२॥
पति [illegible] या ? क्योंकर, शल्य पडे हैं तीन ।
सुख [illegible] ज्वाला, मन क्यों हुआ मलीन ॥७३३॥
सभी लोक आनंद मनाते, पति चित चिन्ता खास ।
क्या ? पतिके हैं पोढ अग में, जिनसे हुए उदास ॥७३४॥

पति दुखमे मैं भी दुख पाती, फरके दक्षिण अंग ।
रुष्टमान हो पति मुजसे तो, चने रग मे भग ॥७३५॥
पवन अंजना मोड बांध के, बैठे चँवरी माय ।
इन्द्र और इन्द्राणी के सम, जोडी रही सुहाय ॥७३६॥
पति आकृति लख सती सोचती, नहीं प्रेम संचार ।
मिली मक्षिका प्रथम कवल में, फिर क्या ? होवन हार ॥७३७॥
हाथ मिलाया विना प्रेमसे, तिरछा करके नैन ।
मेरे पर है रोप कंथका, देख लिया सब चैन ॥७३८॥
दिया हायचा जामातृको, मनकी होस निकाल ।
सखी पानसो वसंतमाला—आदिक दिए विशाल ॥७३९॥
चली सासरे सती अंजना, माता, दे आशीप ।
पति परमेश्वर वत पद प्रणमो, नित्य झुकाओ सीस ॥७४०॥
धर्म अहिंसा जैन धर्म को, तन- मन से अपनाय ।
प्राण जाय पर धर्म न जावे, लेना परम निभाय ॥७४१॥
हुक्म उठाना पति का सिरपे, दुख में देना साथ ।
यदि कटु बैन कहे तो उनका, सहना जोडी हाथ ॥७४२।
सास सुसर की भक्ति बजाना, आलस रखना दूर ।
मिल जुल करके रहना सबसे, रखिये नहीं गरूर ॥७४३॥
दोनों कुल की लाज बढाओ, धार सभी कुल रीत ।
कहैं अंजना मात बात सुन, मधुर बचन धर प्रीत ॥७४४॥

हेमाता ? तुम सीख सीसपे, धरती अमृत जान ।
सुख दुख में पति साथ रहूँगी, सदाचार उर आन ॥७४५॥
विरह पडेगा आज आपसे, सहा न मुजसे जाय ।
माता जलदी मुजे बुलाना, घर के प्रेम सवाय ॥७४६॥
पहुँचाने को राजा राणी, शत भ्राता का साथ ।
विरह व्यथा में गिरा नैनसे, करते आंशू पात ॥७४७॥
पहुँचा के निज घर सब आए, आगे चली बरात ।
नृप प्रहलाद वधाकर लाया, सब सेना के साथ ॥७४८॥
पाव सासुके लगी अंजना, प्रेम विनय दरसाय ।
सासु देत आशीश वधुको, जोडी रहो सवाय ॥७४९॥
कुल में भूषण श्रेष्ट सती मैं, समझ अंजना नार ।
गांव पानसो दिया सती को, जर जेवर भडार ॥७५०॥
सात मालका महिल सतीको, देते रहने काज ।
सखी साथमें रही पानसो, सुंदर सब विधि साज ॥७५१॥
रखे प्रेमसे सासू आदिक, करे सदा सभाल ।
मानी जन अपमान आपका, भूले नहि तिहुँ काल ॥७५२॥
अहि वृश्चिक होवे जिस घरमें, रहै उसीसे दूर ।
द्वार अंजना ज्योंहि पवनजी, छोड दिया मन क्रूर ॥७५३॥
सर्प कचुकी छोडे जैसे, रहते पवन कँवार ।
विना प्रेमसे श्रेष्ट वस्तु भी, गलती है बदकार ॥७५४॥

ससुरालकी भेटको ठुकराना

महिंद रायने पवनकँवर हित, भेजी भेट सवाय।
वस्त्र रेशमी साल अनोपम, मोती लाल लगाय ॥७८५॥
हीरा पन्ना माणक मोती, भूषण विविध प्रकार।
वस्तु देख तब सती मुदित हो, अजब पिता का प्यार ॥७८६॥
मेरे हित ये कौन काम के, विना एक भरतार।
भेट किए से पतिवर-मुजपे, अधिक धरेगा प्यार ॥७८७॥
कहे सखी से झटपट जाकर, दीजे पति को भेंट।
निज दासी की विनय विचारो, अतर आरति मेट ॥७८८॥
दीर्घ रोप तज के अवलापे, प्रेम नीर वर्षाय।
अवतो दुख का सिर पे बोझा, मुजसे सहा न जाय ॥७८९॥
वसतमाला चाली डाली, लेकर सखियाँ साथ।
पूर्ण भरोसा दिलमे हे की, खुश होवेगा नाथ ॥७९०॥
पवन भवन में नाटक होते, गायन गीत रसाल।
देख सख्यों को पवन-प्रकोपित, होता तभी कराल ॥७९१॥
विनय भावसे सखी भेटणा, धरती मन हर्षाय।
पवन करेगा प्रेम सतीपे, इसमें सशय नाय ॥७९२॥
वस्त्राभूपण देख पवनजी, क्रोध विकट मन छाय।
वस्त्र दिए सब बाँट भाटको, टूक २ दिखलाय ॥७९३॥
दृश्य देख सखियों के मनमें, आया क्रोध महान।
कद्र करी नहि जर जेवर की, वडा निपट नादान ॥७९४॥
आय अजना तटपे सखियाँ, कहे हाल बदकार।
जान लिया तुमके पतिवरको, मुर्खों का सिरदार ॥७९५॥
सती कहे अलवेली सेली, भोली बोली तोल।
मुखसे तुम अपशब्द कहो ना, मेरे कथ अमोल ॥७९६॥
मेरे प्यारे प्राणाधारे, प्रियवर अति विद्वान।
विना विचारे बात कहो तो, विगड़ जायगी शान ॥७९७॥
सती अजना को बुलवाते, मात पिता धर प्यार।
भेजा भाई आया तबतो, बहिन पास उसवार ॥७९८॥
सती कहे पतिकी इच्छा मे, सब मेरे त्योहार।
कथ प्रेम विन फीके मेरे, जगके सब व्यवहार ॥७९९॥
बहिन बुलाने कारण आते, भ्राता वारवार।
आखिर आए वडे भ्रात तब, मन मे निश्चय धार ॥८००॥
भगनी हालत देख भ्रात तब, मन में हुआ उदास।
चिंताकी हालत सब पूछे, बहनी कहो प्रकाश ॥८०१॥
तुम कारण मे आया बहनी, सुख दुख पुछन बात।
सास सुसर तुज रूठ गए है, या रूठे प्रिय नाथ ॥८०२॥
कैसे वदन कमल मुरझाया, पिंजर सारा अग।
कह दे साँची हालत सारी, बना रग में भग ॥८०३॥
सती कहे रूठा नहि कोई, रूठ गए तकदीर।
हालत कहु तुमको मै कैसे, हृदय धरे नहि धीर ॥८०४॥
पति प्रिय मेरे रूठ गए है, कारण नहि समझाय।
कठिन हमारा पीहर आना, जो पति आज्ञा पाय ॥८०५॥
जाओ भाई ? अपने घरपे, नहि रहने मे सार।
मातपिता को वदन कहना, हिल मिल रखसे प्यार ॥८०६॥
दुख सागर मे डूबा भाई, सुनके भगनी हाल।
बहिन कहे मत करिये चिंता, अजब कर्मकी चाल ॥८०७॥
भाई चल निज नगरी आया, चिन्ता चित में छाय।
मात पिताको आदि अत से, हाल कहा दरसाय ॥८०८॥
मातपिता दुख पाए सुनकर, कैसा बना बनाव।
बेटी दी सुख स्थान जान के, उलट पड़ा ये दाव ॥८०९॥
सती सोच तज धर्म नियममे, धरती अधिका प्यार।
बनता एक बनाव सुनो सब, अचरज मय अधिकार ॥८१०॥

घोड़ा फिराने पवन का जाना

प्रतिदिन घोड़ा पवन फिरावे, मित्र साथ मे जाय।
महिल अजना नीचे जाने, पलट पंथ वहि आय ॥८११॥
लखे अजना रान मार्ग को, पति का दर्श दिखाय।
सती विचारे भाग्य सवाया, पति दर्शन मैं पाय ॥८१२॥

हुए युद्ध में विजय आपकी, यह इच्छा दिन रैन।
दर्शन देना फिर दासी को, रहै सदा सुख चैन ॥८४१॥
प्रबल हुआ है कोप पवन को, देख अंजना नार।
यह व्यभिचारण सन्मुख आई, अशकुन हुए अपार ॥८४२॥
होना चाहे सती जगत में, ऊपर प्रेम दिखाय।
सती होय यह कथ मारके, एसी बुरी बलाय ॥८४३॥
पवन रोष में होकर तियपे, दीनी लात प्रहार।
गश खाकर के पड़ी धरण पे, देख रहैं नरनार ॥८४४॥
बसन्तमाला उठा सती को, करके पवन प्रचार।
निजी भवन में लाई जलदी, विह्वल हृदय अपार ॥८४५॥
हुआ सती को कष्ट भयंकर, अपमानित हरहाल।
अच्छा इससे विष खा मरना, मिटे सकल जंजाल ॥८४६॥
आल दिया सिर पति ने झूठा, रूठा बेहद आज।
क्षमा याचने गई कंथ पे, उलट हुआ ये काज ॥८४७॥
पति दर्शन कर शकुन देऊंगा, आई थी यह आश।
पड़े भरम में पतिवर मेरे, सुनी नहीं अरदास ॥८४८॥
क्रोध विकल हो कहे वसंती, मैं कीनी अति छान।
मूर्ख शिरोमणि तुज पति निश्चय, है न हिताहित भान ॥८४९॥
सोना झोल चढ़ा पीतलपे, जैसे फूटा ढोल।
दूध दूध को एक समझता, निकला निपट निटोल ॥८५०॥

तभी सती सुन सखी बैन को, बोली वचन कठोर।
मेरे प्यारे प्राणपती को, शब्द कहा क्यों घोर ॥८५१॥
मेरे पति परमेश्वर जैसे, सिर के शोभित श्याम।
इन्हें कभी अपशब्द न कहना, जो चाहो आराम ॥८५२॥
दासी डरती सती वचन सुन, बोली नहि कछु बोल।
धर्म नियम में सती बिताती, अपना समय अमोल ॥८५३॥

॥ अंजना पे प्रेम का निमित्त ॥

उधर पवन जी चले जंग में, साथ सैन्य अभिराम।
मानसरोवर तट पे आते, करते प्रथम मुकाम ॥८५४॥
डेरातम्बू लगते विध विध, निज निज के चहुँ ओर।
शय्या सुन्दर कोमल जिसपे, बैठे पवन किशोर ॥८५५॥
अजब छटा चहुँ ओर बाग की, देखे दृष्टि पसार।
मित्र सु सज्जन साथ कँवर के, करते बात विचार ॥८५६॥
एक वृक्षपे चकवा चकवी, बैठे शोर मचाय।
रहैं एक क्षण चुप चुप नाही, चित्त अधिक घबराय ॥८५७॥
पवन देख सुविचारे मन में, बड़ा अनोखा ढंग।
कहैं मित्र से चकवा चकवी, विकल हुए मतिभंग ॥८५८॥
क्यों ? चहचावे कहिये इसका, भेद हमें समझाय।
आरति कारण एक न पावे, ऋतु सब हैं सुखदाय ॥८५९॥

मित्र सोचता समय ठीक है, समझाने का आज।
धरें सतीपे प्रेम पवनजी, करना यही इलाज ॥८६०॥
मित्र कहैं अब रात समय में, चकवा चकवी माय।
विरह पड़ेगा इस कारण से, बोलें शोर मचाय ॥८६१॥
प्रेम विछोहा रात समय का, इन्हें सहा नहि जाय।
इन में इतना प्रेम परस्पर, जोकि पशु कहलाय ॥८६२॥
नर होकर नहि प्रेम धरे हैं, वह हैं पशुसे हीन।
मित्र वचन सुन पवन उचारे, होता पूर्ण यकीन ॥८६३॥
पशुओं में भी पति पत्नी में, कैसा प्रेम सवाय।
मैंने नारी कुलटा पाई, कैसे प्रेम बढ़ाय ॥८६४॥
हृदय धड़कता उसे देखके, कुलमें हुई कुठार।
कहैं मित्र क्या ? कहते ऐसे, मदमें हो मतवार ॥८६५॥
महासती तुम नार अंजना, सतियों में सिरदार।
झूठा उसपे आल चढ़ाया, कहते बिना विचार ॥८६६॥
बड़ा सती गुण गौरव जगमें, देते सब सन्मान।
चहतो प्रतिदिन चहैं आपको, आप हुए बेभान ॥८६७॥
इतना सुनके तभी पवनका, उतर गया मद जोस।
शुभ कर्मों के कारण सबही, मिटा हृदय का रोष ॥८६८॥
वृथा सतीपे द्वेष भाव में, धरा होय बेभान।
जैसे सारा काम बिगाड़े, कर नर मदिरा पान ॥८६९॥

हुए युद्ध मे विजय आपकी, यह इच्छा दिन रैन।
दर्शन देना फिर दासी को, रहैं सदा सुख चैन ॥८४१॥
प्रबल हुआ है कोप पवन को, देख अंजना नार।
यह व्यभिचारण सन्मुख आई, अशकुन हुए अपार ॥८४२॥
होना चाहे सती जगत मे, ऊपर प्रेम दिखाय।
सती होय यह कंथ मारके, एसी बुरी बलाय ॥८४३॥
पवन रोष में होकर तियपे, दीनी लात प्रहार।
राम खाकर के पड़ी धरण पे, देख रहैं नरनार ॥८४४॥
वसतमाला उठा सती को, करके पवन प्रचार।
निजी भवन मे लाई जलदी, विह्वल हृदय अपार ॥८४५॥
हुआ सती को कष्ट भयकर, अपमानित हरहाल।
अच्छा इससे विष खा मरना, मिटे सकल जंजाल ॥८४६॥
आल दिया सिर पति ने झूठा, रूठा वेहद आज।
क्षमा याचने गई कंथपे, उलट हुआ ये काज ॥८४७॥
पति दर्शन कर शकुन देऊगा, आई थी यह आश।
पड़े भरम में पतिवर मेरे, सुनी नहीं अरदास ॥८४८॥
क्रोध विकल हो कहे समती, मैं कीनी अति छान।
मूर्ख शिरोमणि तुझ पति निश्चय, है न हिताहित भान ॥८४९॥
सोना झोल चढ़ा पीतलपे, जैसे फूटा ढोल।
दूध दूध को एक समझता, निकला निपट निटोल ॥८५०॥

तभी सती सुन सखी बैन को, बोली वचन कठोर।
मेरे प्यारे प्राणपती को, शब्द कहा क्यों घोर ॥८५१॥
मेरे पति परमेश्वर जैसे, सिर के शोभित श्याम।
उन्हें कभी अपशब्द न कहना, जो चाहो आराम ॥८५२॥
दासी डरती सती वचन सुन, बोली नहि कछु बोल।
धर्म नियम में सती बिताती, अपना समय अमोल ॥८५३॥

॥ अंजना पे प्रेम का निमित्त ॥

उधर पवन जी चले जंग में, साथ सैन्य अभिराम।
मानसरोवर तट पे आते, करते प्रथम मुकाम ॥८५४॥
डेरातम्बू लगते विध विध, निज निज के चहुँ ओर।
शय्या सुन्दर कोमल जिसपे, बैठे पवन किशोर ॥८५५॥
अजब छटा चहुँ ओर बाग की, देखे दृष्टि पसार।
मित्र सु सज्जन साथ कँवर के, करते बात विचार ॥८५६॥
एक वृक्षपे चकवा चकवी, बैठे शोर मचाय।
रहैं एक क्षण चुप चुप नाही, चित्त अधिक घबराय ॥८५७॥
पवन देख सुविचारे मन में, बड़ा अनोखा ढंग।
कहैं मित्र से चकवा चकवी, विकल हुए मतिभंग ॥८५८॥
क्यों ! चहचावे कहिये इसका, भेद हमें समझाय।
आरति कारण एक न पावे, ऋतु सब हैं सुखदाय ॥८५९॥

मित्र सोचता समय ठीक है, समझाने का आज।
धरें सतीपे प्रेम पवनजी, करना यही इलाज ॥८६०॥
मित्र कहैं अब रात समय में, चकवा चकवी माय।
विरह पड़ेगा इस कारण से, बोले शोर मचाय ॥८६१॥
प्रेम विछोहा रात समय का, इन्हें सहा नहि जाय।
इन में इतना प्रेम परस्पर, जोकि पशु कहलाय ॥८६२॥
नर होकर नहि प्रेम धरे हैं, वह हैं पशुसे हीन।
मित्र वचन सुन पवन उचारे, होता पूर्ण यकीन ॥८६३॥
पशुओं में भी पति पत्नी में, कैसा प्रेम सवाय।
मैंने नारी कुलटा पाई, कैसे प्रेम बढाय ॥८६४॥
हृदय धड़कता उसे देखके, कुलमें हुई कुठार।
कहैं मित्र क्या ? कहते ऐसे, मदमें हो मतवार ॥८६५॥
महासती तुम नार अंजना, सतियों में सिरदार।
झूठा उसपे आल चढाया, कहते बिना विचार ॥८६६॥
बड़ा सती गुण गौरव जगमें, देते सब सन्मान।
वहतो प्रतिदिन चहैं आपको, आप हुए वेभान ॥८६७॥
इतना सुनके तभी पवनका, उतर गया मद जोस।
शुभ कर्मों के कारण सबही, मिटा हृदय का रोष ॥८६८॥
वृथा सतीपे द्वेष भाव में, धरा होय वेभान।
जैसे सारा काम बिगाड़े, कर नर मदिरा पान ॥८६९॥

हर्ष हृदय में नहीं समाता, रत्न रंक ज्यों पाय।
तुरत फुरत से द्वार उघाड़े, चन्द्र वदन विकसाय॥८६६॥
हाथ जोड़ यों वचन उचारे, भले पधारे नाथ।
बार बार बलिहारी मुज को, कीनी आज सनाथ॥६००॥
कल्पवृक्ष चिन्तामणी पाई, मिटा हृदय का ताप।
धन्य घड़ी धन भाग्य हमारे, आज पधारे आप॥६०१॥
बिठा सुखासन सीस झुकाया, निज कृत माफी मांग।
देख सरलता पवन सती की, बढ़ा अधिक अनुराग॥६०२॥
परम पवित्रा प्यारी म्हारी, सत्य शील की वेल।
शील अखंडित अचल निभाया, विकट दुख सिर झेल॥६०३॥
तुम कुलवती औगुन तज के, गुण को लिया बढ़ाय।
दिल में संशय लाकर मैंने, कष्ट दिया अधिकाय॥६०४॥
खमो सभी अपराध हमारा, जोकि किया अपमान।
तुम निकले गुणवान कुलीनी, संकट सहा महान॥६०५॥
दोष तुम्हारा नहिं है इसमें, मेरा अधिक कसूर।
किया काम मैं बिना विचारा, पड़ी समझमें धूर॥६०६॥
सागर सम गंभीर तुम्हीं हो, मैं हूँ छिल्लर ताल।
विष सम मेरे कटुक वचन है, मन था कठिन कराल॥६०७॥
चरण चचरी दासी तुमको, ऐसे कहो न बोल।
कर्म रंग ये खेल दिखावे, चलती नहीं कितोल॥६०८॥

इतने दिन था विरह परस्पर, होता आज मिलाप।
मैं तो तनकी छायावत् हूँ, एक सहारा आप॥६०६॥
प्रेम रंग यों बर्ष गया है, आपस में दिन रैन।
ऐसे रहते तीन दिवस यों, बीतगए सुखदैन॥६१०॥
चौथे दिन के प्रात समय में, कहता पवनकवार।
जाने का है सैन्य जहां पे, तज आया निर्धार॥६११॥
किन्तु दिल नहिं जाना चाहैं, एक पैर भी दूर।
तुम को कैसे छोड़ू प्यारी, तुम गुण गौरव पूर॥६१२॥
भूल गया सब शुद्ध प्रेम में, लिया चित्त तुम चोर।
जाना जलदी अभी युद्ध में, बंधा प्रेम की डोर॥६१३॥
रहो खुशी से चिन्ता तज के, सजो शील शृङ्गार।
दान पुण्य से जन्म सुधारो, सदा करो उपकार॥६१४॥
पति वाणी सुन सती एकदम, घबराई बेतोल।
नाथ? प्रथम मन तोल बातको, फिर दो बाहिर खोल॥६१५॥
मनमोहन हो प्राण पियारे, चिन्तामणि साक्षात।
मुझे छोड़ के कैसे? जाओ, एक प्राण दो गात॥६१६॥
पड़े चरण में मिष्ट वचन से, कहै अतुल धर प्रेम।
नाम न लेना अब जाने का, जो चाहो मुज क्षेम॥६१७॥
आप साथ ले चलो मुझे पर, यहां न रखना ठीक।
प्रेम पास का बन्ध सताता, नाथ करो निर्भीक॥६१८॥

पवन कहै आऊंगा जलदी, मत हो चित्त उदास।
पहले जैसा अब नहिं होगा, पूर्ण रखो विश्वास॥६१६॥
समझाते थक गई सती तब, कहती आखिर बात।
मात पिता से मिलो जाय के, सभी कहो अवदात॥६२०॥
वृद्धि गर्भ की होगा मेरे, यह तो नहीं छिपाय।
पूछेगा जब सासू ससुरा, कैसे कहूँ सुनाय॥६२१॥
प्रेम अंजना और पवन में, दिखता था नहिं लेश।
गर्भ अंजना कैसे धारा, कुलटा यही विशेष॥६२२॥
सब जन के मन शंका निश्चय, मुजपे होय जरूर।
धिक्कारेगा सब जन मिलके, कैसे राखूं नूर॥६२३॥
मात पिता से मिलो जाय के, कहदो सारा हाल।
जो चाहो मुज रखना सुख में, तज दो धुर जंजाल॥६२४॥
सबकी शंका मिट जावेगी, मुझे मिलेगा मान।
कहै पवन सुन नम्र वचन से, तेरा साच बयान॥६२५॥
कैसे अब मैं मात पिता को, मुंह दिखलाऊं जाय।
क्यों? आया यों पितु पूछेगा, शर्म रही दिल छाय॥६२६॥
मुज आने का पता किसीको, पड़ा नहीं इसबार।
मात पिता जन सब देखेंगे, देंगे लख धिक्कार॥६२७॥
तीन चीझ तुमको मैं देता, जो है प्राण समान।
वस्त्र मुद्रिका जेवर ले लो, फिर क्या? संशय स्थान॥६२८॥

तुमके कंथ नहीं चहै स्वप्नमें, बीते बारह साल।
कैसे ? आए पास तेरे वह, रचा झूठ जंजाल ॥६५८॥
गाँव पानसो छीने तेरे, आके करी दिवाल।
युद्ध गए जब लात लगाई, हाल किया बेहाल ॥६५९॥
अरिघुहेलन ? चन्दा तेरा, नहीं चरित का पार।
काला मुँह कर निकल डायनी, निलज्जा बेकार ॥६६०॥
रोम रोम दुख हुआ सतीके, सुनके वचन कठोर।
अय सासुजी ! झूठा मेरा, करते आप बकोर ॥६६१॥
पुत्र तुम्हारा घर आए थे, इसमें संशय नाय।
बता सबूती क्या ? है तुजपे, मुज संशय मिटजाय ॥६६२॥
नामांकित तव धरी मुद्रिका, और गले की माल।
देखो निर्णय करो सासुजी, मत दो खोटा आल ॥६६३॥
सासु कहे चोरी कर लाई, छल बल माया धार।
घट फूटेगा तुज पापों का, जोकि भरा अनपार ॥६६४॥
तू तो मेरे नहीं काम की, साँची यदि सब बात।
कौन मूर्ख सो कनक कटारी, खाय करे अपघात ॥६६५॥
करो न इतनी रीस सासुजी, मैं हूँ पग की धूल।
जो जो बातें बनी वहीं मैं, कीनी सभी कबूल ॥६६६॥
सासु सासु क्या करती है, सास क्रोध चण्डाल।
बड़ी जोर से लात सीस पे, देती सासु कराल ॥६६७॥

तेरे जैसी सती जगत में, देखी कई हजार।
सती ऊठके चरण सास का, प्रणमें बारंबार ॥६६८॥
चोरी करके साँची बनती, बिल्ली से मृदु बैन।
सौ सौ चूहा मार बनी अब, किया साधवी चैन ॥६६९॥
बोल वसन्ती सच्ची कहदे, बहता कैसे पेट।
रात दिना तू रहे संघ में, होती किनसे भेट ॥६७०॥
बता चोर का पता खता मैं, कर दू गी सब माफ।
ऐसी क्रोधित आखिर होकर, बोली सासू साफ ॥६७१॥
सची कहती नहिं तू सारी, दूंगी फल बतलाय।
दोनों कर डोरी से बाँधे, ऊंची दी लटकाय ॥६७२॥
लगी मारने उसे जोर से, बही रक्त की धार।
कौन चोर जेवर का कहदे, सच्चा नाम उचार ॥६७३॥
कहे वसंती पुत्र तुम्हारा, सच्चा घर का चोर।
उसी चोर के सिवा कोई भी, नहिं आया इस ठौर ॥६७४॥
जबतक तू ही रहे यहाँ पे, होंगे हम बदनाम।
काला वेश बनाकर तेरा, भेजूं तेरे गाम ॥६७५॥
सखी सती मिल अरज गुजारे, आखिर होय हताश।
कंथ युद्ध से आवें जबतक, रखिये अपने पास ॥६७६॥
झूठा भोजन खाय रहूंगी, सेवा में दिन रात।
कुछ अनुकंपा लाकर मुजपे, धरो कान पे बात ॥६७७॥

दोष युक्त यों पीहर जावे, आवे लाज अपार।
आप चरण में मस्तक रखती, कुछ भी सुनो पुकार ॥६७८॥
सास कहे लज्जा यदि होती, करती क्यों व्यभिचार।
लाख बहाना ले ले तेरी, सुनता कौन पुकार ॥६७९॥
पियु आने पर सुनो सासुजी, दुख पाओगे घोर।
देंगे लख धिक्कार आपको, दो निज हट को छोर ॥६८०॥
दिया न कुछभी ध्यान बात पे, अनुचर लिया बुलाय।
हुक्म हमारा तुरत अंजना, ले जाओ वनमाय ॥६८१॥
कृष्ण वेष काला रथ सज के, उसमें दो बिठलाय।
मध्य विपिन में छोड़ तुरत से, आओ हुक्म बजाय ॥६८२॥
आज्ञा भंग करी तो समझो, आया तेरा काल।
इसके कहने में मत आना, यह है बड़ी छिनाल ॥६८३॥
पहनाया है सखी सती को, सबही काला वेश।
जेवर सबही छीन लिया है, खोल दिया सिर केश ॥६८४॥
दोनों को रथ में बिठलाके, लाया जंगल बीच।
सेवक विनय वचन से बोला, अति पापी मैं नीच ॥६८५॥
राणी आज्ञा से मैं लाया, तुमको जंगल घोर।
इसमें नहीं अपराध हमारा, राणी बड़ी कठोर ॥६८६॥
इसी पेट पापी के कारण, करना पड़ता पाप।
गया सारथी स्थान आपके, मन में धर संताप ॥६८७॥

तुझे कंथ नहीं चहें स्वप्नमें, बीते बारह साल।
कैसे ? आए पास तेरे वह, रचा झूठ जंजाल ॥६५८॥
गाँव पानसो छीने तेरे, आडे करी दिवाल।
युद्ध गए जब लात लगाई, हाल किया बेहाल ॥६५९॥
अरिखुदेलन ! चन्द्रा तेरा, नहीं चरित का पार।
काला मुंह कर निकल डायनी, निर्लज्जा बेकार ॥६६०॥
रोम रोम दुख हुआ सतीके, सुनके वचन कठोर।
अय सासूजी ? झूठा मेरा, करते आप बकोर ॥६६१॥
पुत्र तुम्हारा घर आए थे, इसमें संशय नाय।
यता सबूती क्या ? है तुजपे, मुज संशय मिटजाय ॥६६२॥
नामांकित तब धरी मुद्रिका, और गले की माल।
देखो निर्णय करो सासुजी, मत दो खोटा आल ॥६६३॥
सासु कहे चोरी कर लाई, छल बल माया धार।
घट फूटेगा तुज पापों का, जोकि भरा अनपार ॥६६४॥
तू तो मेरे नहीं काम की, साँची यदि सब बात।
कौन मूर्ख सो कनक कटारी, खाय करे अपघात ॥६६५॥
करो न इतनी रीस सासुजी, मैं हूँ पग की धूल।
जो जो बातें बनी बड़ी मैं, कीनी सभी कबूल ॥६६६॥
सासु सासु क्या करती है, सास क्रोध चण्डाल।
बड़ी जोर से लात सीस पे, देती सासु कराल ॥६६७॥
तेरे जैसी सती जगत में, देखी कई हजार।
सती ऊठके चरण सास का, प्रणमें वारंवार ॥६६८॥
चोरी करके साँची बनती, बिल्ली से मृदु बैन।
सौ सौ चूहा मार बनी अब, किया साधवी चैन ॥६६९॥
बोल वसन्ती सच्ची कहदे, बढ़ता कैसे पेट।
रात दिना तू रहे सघ में, होती किनसे भेट ॥६७०॥
बता चोर का पता खता में, कर दू गी सब माफ।
ऐसी क्रोधित आखिर होकर, बोली सासू साफ ॥६७१॥
सची कहती नहि तू सारी, दू गी फल बतलाय।
दोनों कर डोरी से बाँधे, ऊंची दी लटकाय ॥६७२॥
लगी मारने उसे जोर से, बही रक्त की धार।
कौन चोर जेवर का कहदे, सच्चा नाम उचार ॥६७३॥
कहे वसती पुत्र तुम्हारा, सच्चा घर का चोर।
उसी चोर के सिवा कोई भी, नहि आया इस ठौर ॥६७४॥
जबतक तू भी रहे यहाँ पे, होंगे हम बदनाम।
काला वेश बनाकर तेरा, भेजूं तेरे गाम ॥६७५॥
सखी सती मिल अरज गुजारे, आखिर होय हताश।
कथ युद्ध से आवें जबतक, रखिये अपने पास ॥६७६॥
झूठा भोजन खाय रहूँगी, सेवा में दिन रात।
कुछ अनुकंपा लाकर मुजपे, धरो काम पे बात ॥६७७॥
दोष युक्त यों पीहर जावे, आवे लाज अपार।
आप चरण में मस्तक रखती, कुछ भी सुनो पुकार ॥६७८॥
सास कहे लज्जा यदि होती, करती क्यों व्यभिचार।
लाख बहाना ले ले तेरी, सुनता कौन पुकार ॥६७९॥
पियु आने पर सुनी सासुजी, दुख पाओगे घोर।
देंगे लख धिक्कार आपको, दो निज हट को छोर ॥६८०॥
दिया न कुछभी ध्यान बात पे, अनुचर लिया बुलाय।
हुक्म हमारा तुरत अंजना, ले जाओ बनमाय ॥६८१॥
कृष्ण वेष काला रथ सज के, उसमें दो बिठलाय।
मध्य विपिन में छोड़ तुरत से, आओ हुक्म बजाय ॥६८२॥
आज्ञा भंग करी तो समझो, आया तेरा काल।
इसके कहने में मत आना, यह है बड़ी छिनाल ॥६८३॥
पहनाया है सखी सती को, सबही काला वेश।
जेवर सबही छीन लिया है, खोल दिया सिर केश ॥६८४॥
दोनों को रथ में बिठलाके, लाया जंगल बीच।
सेवक विनय वचन से बोला, अति पापी मैं नीच ॥६८५॥
राणी आज्ञा से मैं लाया, तुमको जंगल घोर।
इसमें नहीं अपराध हमारा, राणी बड़ी कठोर ॥६८६॥
इसी पेट पापी के कारण, करना पड़ता पाप।
गया सारथी स्थान आपके, मन में धर संताप ॥६८७॥

लाड़ चाव से पालो थी हाँ, दुष्टा को हरहाल।
मेरे कुलमें हुई कुल्हाड़ी, कर्म किया चण्डाल ॥१०१७॥
हुई दीप से काजल जैसी, अमृत से विष वेल।
अष्ट वशमें हो यह कुलटा, सद्गुण दीना ठेल ॥१०१८॥
सदाअग्र रखने से बढ़ता, उलटा तनमें झेर।
इसी तरह इसको रखने से, अपयश होय सुमेर ॥१०१९॥
नृपको क्रोधातुर लख मंत्री कहता मधुर सवाल।
राजन्! काम सोचकर करिये, बाद न हो बेहाल ॥१०२०॥
इसे धैर्य दो रखो महिल में, पूछो सारा हाल।
दोषित है कि अदोषित है ये, निर्णय करो नृपाल ॥१०२१॥
दोष न जाना मैंने इसमें, है ये सती उदार।
किस कारणसे इसको सासू, दोष दिया सिर डार ॥१०२२॥
पीहर का है परम सहारा, यदि रूठे सुसराल।
आप सहारे आई इसका, करिये अब सम्भाल ॥१०२३॥
खबर नहीं मन्त्री? कुछ तुमको, जभी गई सुसराल।
पति पवन तब से नहिं बोला, अबतक कोप कराल ॥१०२४॥
घृणा दृष्टि थी पति की इसपे, कुछ भी ऐब विचार।
मैंने निर्णय निश्चय कीना, है व्यभिचारण नार ॥१०२५॥
अनुचर आकर कहा सती से, दीजे सुता निकाल।
यह आज्ञा नृप ने फरमाई, करके क्रोध कराल ॥१०२६॥

वृक्ष डालवत् पड़ी बात सुन, हृदय कमल मुरझाय।
सीत समीर कर सखी सचेतन, कहती प्रेम जताय ॥१०२७॥
कुछ भी जाँच करी नहिं मेरी, लख के काला वेप।
बिना सोच के हुक्म निकाला, अधिक धरा मन द्वेष ॥१०२८॥
दर्शन करती पितु का उनसे, कहती सुख दुख बात।
फिर जो इच्छा होती उनकी, करते सो साक्षात ॥१०२९॥

॥ माता से अंजना की पुकार ॥

प्रेम मात का पूर्ण मेरे पे, उन्हें कहूं सब हाल।
बात सुनेगा निश्चय माता, होगा पूर्ण सवाल ॥१०३०॥
मात महिल के निकट आय के, बोली मधुर उचार।
अय माताजी? मेरी सुनिये, करुणा दीन पुकार ॥१०३१॥
माता हींचे स्वर्ण हिंडोले, है सखियों का वृन्द।
नाटक नाचे गावे स्वर से, सब विधि से आनन्द ॥१०३२॥
पुनः अंजना बोली माता, सुनियो मेरी टेर।
चरण सेविका आन खड़ी है, हुई बहुत ही देर ॥१०३३॥
आल देय के सास निकाली, पट पहिनाया श्याम।
आखिर फिरके आई माता! निश्चय तेरे धाम ॥१०३४॥
हुक्म दिया वनका मुझ पितुने, बुन्द न पाया नीर।
आई अबमें शरण मातके, जरा बँधा दे धीर ॥१०३५॥

बड़ी प्यारसे पाली मुझको, तेने घर अति प्रेम।
मात कानमें शब्द पड़े यह, कंटक चुव् अक्षेम ॥१०३६॥
शब्द अंजना जैसा यह है, सुनके कोपे मात।
आई दुष्टा बिना बुलाई, दिया हृदय आघात ॥१०३७॥
दोष मढ़ी सिर फिरती इत उत, आती नहि कुछ लाज।
ऐसी कुलटा जन्म न देती, भली कहाती बांझ ॥१०३८॥
जा दासी! कहदे कन्या को, तुझे न चाहे मात।
दासी बोली जाकर ऐसी, क्यूं करे तू आघात ॥१०३९॥
घर २ फिरती शर्म न आवे, किये बुरे सब काम।
काला मुँह अपना दिखलाती, करे हमें बदनाम ॥१०४०॥
निकल यहाँ से डायन झटपट, मुँह काला कर जाय।
माता का यह कहना तुझको, क्यों न मरे विषखाय ॥१०४१॥
बात बसंती सुनकर कहती, कहो सोच कुछ बोल।
होगा फिर पस्तावा पूरण, अभी करो मन रोल ॥१०४२॥
दया नहीं भूखे प्यासे पे, अच्छे दिन मुझ आय।
उसी समय घबराओगे तुम, नीचे सीस झुकाय ॥१०४३॥
पति आने पर पछताओगे, दृगसे पाणी डाल।
दुश्मन भी ऐसा नहिं करता, जैसा की हम हाल ॥१०४४॥
मातपिताने हमसे कीनी, पाया बून्द न नीर।
सती कहे हैं दोष कर्मका, किसकी नहिं तकसीर ॥१०४५।

लाड़ चाव से पालो थी हाँ, दुष्टा को हरहाल।
मेरे कुलमें हुई कुल्हाड़ी, कर्म किया चंडाल ॥१०१७॥
हुई दीप से काजल जैसी, अमृत से विष बेल।
अब वशमें हो यह कुलटा, सद्गुण दीना ठेल ॥१०१८॥
सदाग्रह रखने से बढ़ता, उलटा तनमें भेर।
इसी तरह इसको रखने से, अपयश होय सुमेर ॥१०१९॥
नृपको क्रोधातुर लख मन्त्री कहता मधुर सवाल।
राजन् ! काम सोचकर करिये, बाद न हो बेहाल ॥१०२०॥
इसे धैर्य दो रखो महिल में, पूछो सारा हाल।
दोषित है कि अदोषित है ये, निर्णय करो नृपाल ॥१०२१॥
दोष न जाना मैंने इसमें, है ये सती उदार।
किस कारणसे इसको सासू, दोष दिया सिर डार ॥१०२२॥
पीहर का है परम सहारा, यदि रूठे सुसराल।
आप सहारे आई इसका, करिये अब सभाल ॥१०२३॥
खबर नहीं मन्त्री ? कुछ तुमको, जभी गई सुसराल।
पति पवन तब से नहिं बोला, अबतक कोप कराल ॥१०२४॥
घृणा दृष्टि थी पति की इसपे, कुछ भी ऐब विचार।
मैंने निर्णय निश्चय कीना, है व्यभिचारण नार ॥१०२५॥
अनुचर आकर कहा सती से, दीजे सुता निकाल।
यह आज्ञा नृप ने फरमाई, 'करके क्रोध कराल ॥१०२६॥

वृक्ष डालवत् पड़ी बात सुन, हृदय कमल मुरझाय।
सीत समीर कर सखी सचेतन, कहती प्रेम जताय ॥१०२७॥
कुछ भी जांच करी नहिं मेरी, लख के काला वेष।
बिना सोच के हुक्म निकाला, अधिक धरा मन द्वेष ॥१०२८॥
दर्शन करती पितु का उनसे, कहती सुख दुख बात।
फिर जो इच्छा होवी उनकी, करते सो साक्षात ॥१०२९॥

॥ माता से अंजना की पुकार ॥

प्रेम मात का पूर्ण मेरे पे, उन्हें कहूं सब हाल।
बात सुनेगा निश्चय माता, होगा पूर्ण सवाल ॥१०३०॥
मात महिल के निकट आय के, बोली मधुर उचार।
अय माताजी ? मेरी सुनिये, करुणा दीन पुकार ॥१०३१॥
माता हींचे स्वर्ण हिंडोले, है सखियों का वृन्द।
नाटक नाचे गावे स्वर से, सब विधि से आनन्द ॥१०३२॥
पुन अजना बोली माता, सुनियो मेरी टेर।
चरण सेविका आन खड़ी है, हुई बहुत ही देर ॥१०३३॥
आल देय के सास निकाली, पट पहिनाया श्याम।
आखिर फिरके आई माता ! निश्चय तेरे धाम ॥१०३४॥
हुक्म दिया वनका मुज पितुने, बुन्द न पाया नीर।
आई अबमें शरण मातके, जरा बँधा दे धीर ॥१०३५॥

बड़ा प्यार स पाला तुजका, [illegible]
मात कानमें शब्द पड़े यह, कंटक वत् अप्रेस ॥१०३६॥
शब्द अंजना जैसा यह है, सुनके कोपे मात।
आई दुष्टा बिना बुलाई, दिया हृदय आघात ॥१०३७॥
दोष मढी सिर फिरती इत उत, आती नहिं कुछ लाज।
ऐसी कुलटा जन्म न देवी, भली कहाती वांज ॥१०३८॥
जा दासी ! कहदे कन्या को, तुझे न चाहे मात।
दासी बोली जाकर ऐसी, करले तूं आघात ॥१०३९॥
घर २ फिरती शर्म न आवे, किये बुरे सब काम।
काला मुँह अपना दिखलाती, करे हमें बदनाम ॥१०४०॥
निकल यहाँ से डायन झटपट, मुँह काला कर जाय।
माता का यह कहना तुजको, क्यों न मरे विषखाय ॥१०४१॥
बात वसंती सुनकर कहती, कहो सोच कुछ बोल।
होगा फिर पस्तावा पूरण, अभी करो मन रोल ॥१०४२॥
दया नहीं भूखे प्यासे पे, अच्छे दिन मुज आय।
उसी समय घबराओगे तुम, नीचे सीस झुकाय ॥१०४३॥
पति आने पर पछताओगे, हगसे पाणी ढाल।
दुश्मन भी ऐसा नहिं करता, जैसा की हम हाल ॥१०४४॥
मातपिताने हमसे कीनी, पाया बून्द न नीर।
सती कहे हैं दोष कर्मका, किसकी नहिं तकसीर ॥१०४५॥

जब रहते थे महिलों अन्दर, अब जंगल का वास ।
गया सुकोमल शय्या सोना, रहा बिछोना घास ॥१०७४॥
करें परस्पर दुख सुख बातें, बैठे तरु तल छाय ।
नृप महिन्द्र का जिकर सुनाते, समय गया पछताय ॥१०७५॥

पुर में कोलाहल और राजा को चिंता

सती सती जाने से पुरमें, कोलाहल अति छाय ।
शोक सभी राजा राणी को, धिक धिक दिया सवाय ॥१०७६॥
नीर न पायो आया फिराई, कीनी नहिं सभाल ।
कुछ भी सुनना सती वाक्य था, निर्णय कर भूपाल ॥१०७७॥
करें सती का गुण नरनारी, औगुन नृप का गाय ।
राजा राणी भी अब मनमें, अधिक रई पछताय ॥१०७८।
पानी तक नहिं पाया हमने, पूछी नहिं कुछ बात ।
सुनी न हमने बात उसीकी, उलट दिया दुख गात ॥१०७९॥
किया सती को दुःख काम यह, किया नहीं मैं ठीक ।
मुखतक उसका नहिं देखा मैं, आई मुज नजदीक ॥१०८०॥
बुद्धि नष्ट हो गई हमारी, नहिं पूछी कुछ सार ।
अब तो राणी जोर जोर से, रोती बारम्बार ॥१०८१॥
पड़ी पृथ्वी पे मूर्छा खाके, खान पान बिसराय ।
दिया खिण खटके हृदय शल्य सम, बात न भूली जाय ॥१०८२॥
राजा आकर के समझावे, क्यों चिंता चित छाय ।
कहती राणी बुद्धि आपकी, क्यों कर गई नशाय ॥१०८३॥
जाय समय पे बुद्धि विलाई, पाछल बुद्धि नार ।
आप होय मतिवान लिया क्यों, अपयश का सिर भार ॥१०८४॥
मेरी प्यारी प्राण पुत्रि को, नहिं पायो जल बुन्द ।
आश्वासन नहिं दिया जरा भी, आँखे लीनी मून्द ॥१०८५॥
लिया मन्त्रि को भूप बुलाई, दिया तुरत आदेश ।
मुज तनया को लाओ ढूढो, पाती होगी क्लेश ॥१०८६॥
गर्भवती थी सती अंजना, घरके पूरण आश ।
बारह वर्षों में आई थी, पीहर घर विश्वास ॥१०८७॥
अकल निकल गई विकल होय मैं, दीनी सती निकाल ।
जल मत पाओ हुकम निकाला, कीना बुरा हवाल ॥१०८८॥
बिन कन्या के अब तो मेरा, हृदय रहा घबराय ।
लाओ जलदी धीर बँधाओ, खिण लाखेणी जाय ॥१०८९॥
मन्त्री जाकर वन २ ढूंढा, पता न किंचित् पाय ।
कही भूपसे मिली न कन्या, सोधी वन वन जाय ॥१०९०॥
खूब रही चिंता चित छाई, गई भूख ने प्यास ।
रात दिना खटके उर कन्या, रहते सदा उदास ॥१०९१॥

वनमें मुनिदर्शन, और अंजना का पूर्वभव

इधर अंजना फिरती वनमें, सहे भूख अरु प्यास ।
सभी दुखों का करे सामना, धर्म ध्यान विश्वास ॥१०९२॥
बसंतमाला कहै सती से, मात पिता तुम भ्रात ।
निर्दय होते सभी कुटम्बी, सुनी एक नहिं बात ॥१०९३॥
अरी सखी! मुज मात पिता की, मत निंदा तू बोल।
सभी प्रकट से पुण्यवत हैं, कर्म दोष मुज तोल ॥१०९४॥
मन बहलाती सुख दुख बाते, करती वन में जाय ।
एक बडे पर्वत पे जाती, धारी धैर्य सवाय ॥१०९५॥
खडे एक मुनि ज्ञानी ध्यानी, समता रस में लीन ।
सम दम खम बैरागी पूरण, जगसे रहैं अदीन ॥१०९६॥
देख सती हर्षाई मनमें, खुले पूर्ण मुज भाग ।
सच्चे सतगुरु मिले करो अब, दर्शन धर अनुराग ॥१०९७॥
अति हर्षित हो सती सखी मिल, मुनिवरके ढिग आय ।
विनय सहित सानन्द प्रेमसे, बदे शीश नमाय ॥१०९८॥
चारण मुनिसे सती पूछती, सुनिये श्री भगवंत ।
कर्म कथा मेरी पूरवकी, कहो आदि से अन्त ॥१०९९॥
ध्यान खोल मुनि कहैं सतीसे, पूर्व कथा विरतंत ।
किंचित् में सब हाल सुनाऊं, कर्म कथा मतिवन्त ॥११००॥

सिंहनी जैसे सिंह जन्म दे, सती अंजना नार।
वज्रांकुश सम चिह्न चरण में, प्रसवे श्रेष्ठ कँवार ॥११२८॥
किया प्रसूती कर्म सखीने, सब विधि जोग मिलाय।
पुत्र सुलाया केल पत्रपे, सुंदर तन सुखदाय ॥११२९॥
अनमिष नैन पसार निहारे, रूप तृप्ति नहिं पाय।
लिया गोदमें पुत्र मातने, कहे नैन जल लाय ॥११३०॥
हे बेटा ! तू भीम भयानक, वनमें जन्मा आय।
बिना पुण्यकी मैं दुखियारी, कुछ भी साधन नाय ॥११३१॥
कैसे करती जन्म महोत्सव, पतिवर युद्ध मझार।
इस प्रकार गद गद वाणीसे, रही है सती उचार ॥११३२॥

॥ मामा का आना ॥

खेचर एक प्रतिसूर्य उधरसे, निकला अपने काज।
सती अंजना चिंता युत लख, उपनो दिलमें दाज ॥११३३॥
पास आयके मधुर गिरासे, पूछे सारा हाल।
दृग जल लाके सखी आदिसे, अपना कहा हवाल ॥११३४॥
सुनो आंखसे आंसू आए, कहें प्रेम प्रकटात।
हे बाला ! मैं नृप हनुपुर का तुज माताका भ्रात ॥११३५॥
मिली प्रेमसे भाग्य सवाया, मिटा सकल संताप।
सती सोचती ये मुज मामा, आए चल यह आप ॥ ११३६ ।
मामा कहता नगर चलो मुज, गया सकल दुख दूर।
चिंता चितकी दूर हटाओ, मिलते सौख्यसनूर ॥११३७॥
सती सखी अरु सुत मामाजी, बैठे आय विमान।
मिटा सभीका सोच हृदयसे, हनुपुर किया प्रयाण ॥११३८॥

॥ बजरंगका गिरना ॥

उसी यानपे रहा लटकता, रत्न झूमका तेज।
उसे देखके उछल बालने, हो लेनेकी हेज ॥११३९॥
हाथ पसारे लेने उछले, गिरे जमीं पे आय।
पड़े वज्रवत् एक शिला पे, शिला चूर्ण हो जाय ॥११४०॥
पुत्र विरह से तभी अंजना, रोती हृदय पछाड़।
मैं भी मरती पुत्र विरह में, गया कलेजा फाड़ ॥११४१॥
प्राण पियारा लाल हमारा, जीवन का आधार।
मैं भी मरती तेरे कारण, जीवन मुज बेकार ॥११४२॥
जबतक तुजको नहिं देखूंगा, तबतक दुख हो घोर।
अरे कर्म ! ते विपदा अन्दर, विपदा दई कठोर ॥११४३॥
मामा कहता धीरज धारो, तज दो चिन्ता दूर।
पुत्र परम है पुण्य पौरुष, सब विधि आयू पूर ॥११४४॥
जीवित जानो पुत्र तुम्हारा, जग में भान समान।
तुरत उतर के लिया बालको, जैसे मिला निधान ॥११४५॥
दिया मात को मामा कहता, पुत्र महा बलवीर।
चोट लगी नहिं जरा अंग पे, हंसे पुत्र गम्भीर ॥११४६॥
नाम दिया वज्रांग कंवर का, माता ले तत्काल।
हृदय लगाया प्राण पुत्र को, मिला लाल सा लाल ॥११४७॥

॥ अंजना का हनुपुर में प्रवेश ॥

चला यान तब शीघ्र गती से, आए निज मोसाल।
कुलदेवी सी मान अंजना, घरघर मंगल माल ॥११४८।
दिया महिल रहने के कारण, उत्सव किया अपार।
खोली शाला एक दान की, करे सदा उपकार ॥११४९।
जन्म लेय हनुपुर में आए, दिया नाम हनुमान।
राजहंस चंपक वेली सम, क्रीड़ा करे महान ॥११५०॥
रहें अंजना सुख में निशिदिन, शल्य एक खटकाय।
कब उतरेगा आल सीसका, चित ये चिन्ता छाय ॥११५१॥
अन्य मिटे दुख सारे मेरे, मिटा न सिर का आल।
सत्य शील से मिटता संकट, पाऊं मंगल माल ॥११५२॥

॥ पवन की युद्ध में जीत ॥

पवन कंवर का हाल सुनाते, गए युद्ध के माय।
खरदूषण को वरुण भूप से, संधी कर छुड़वाय ॥११५३॥

आण लेने आया ऐसा, पवन दिया आदेश।
पिता चितम नृपके आई, लज्जा रख परमेश ॥११८२॥
जब थाई थी कन्या मेरी, जो जो कहा सुनाय।
सो सो बातें मिली आज सब, सच्ची सती कहाय ॥११८३॥
पवनकुंवर को कैसे देना, कन्या ला इसवार।
हाय! मरूं मैं विष खाकरके, जलता आग मझार ॥११८४॥
कैसे मुँह दिखलाऊ जाके, बिगड़ी मेरी बात।
सोच समझके काम किया तो, क्यों? होता उत्पात ॥११८५॥
पुत्रि घात मत कहना कोई, भूप दिया आदेश।
पवन पास में जाता भूपति, दे सत्कार विशेष ॥११८६॥
भले पधारे पावन कीने, आज हमें जामात।
करे तभी भोजनकी त्यारी, मीठी मीठी बात ॥११८७॥
बैठ खाने काज थालपे, नारी नजर न आय।
पवन विचारे सारे विषमय, भोजन ये दरसाय ॥११८८॥
नहीं किसी ने पता अभीतक, दिया सतीका आय।
वसंतमाला सखी न दिखती, कोई कपट दिखाय ॥११८९॥
निज सालाकी छोटी कन्या, फिरती तब यह आय।
गोद बिठाके उसे पूछते, प्रेम धरी बतलाय ॥११९०॥
कहा! आई भोजाई तेरी, किसी समय वह चाल।
सुनके भोली भाली बाला, कहती सारा हाल ॥११९१॥

हा! आई थी भुआ हमारी, धरके काला वेष।
अधिक अर्ज पितुपास गुजारी, पिता किया अति द्वेष ॥११९२॥
मात और भोजाई तटपे, फिर फिर करी पुकार।
पाया पानी नहिं प्यासी को, निकलाई पुर बार ॥११९३॥
सारे पुरमें आन फिराई मती पिलाओ नीर।
जो पावेगा उसके पगमें, पडे लोह जंजीर ॥११९४॥
आखिर जाती फिर फिर कर के, वनजंगल के बीच।
सुनी हाल कहे पवन सभीने, किया काम ये नीच ॥११९५॥
ज्वाला ऊठी तनके अन्दर, सुनके सारा हाल।
लात लगाके थाल फेंकदी, जो थे मिष्ट रसाल ॥११९६॥
हराम खाना द्वार तुम्हारे, चले ऊठ उसवार।
कहा मित्रसे चलिये जलदी, हो घोडे असवार ॥११९७॥
पता लगाने चलें सतीका, जंगल भीम पहाड़।
जीती है या मरती प्यारी, रहती विकट उजाड़ ॥११९८॥
भोजन भाता नहीं जरा भी, पता न जबतक पाय।
जबतक नहिं खाऊंगा भोजन, मरजाऊं विषखाय ॥११९९॥
मित्र कहे क्यों? फिकर करो तुम, मिलती सती जरूर।
बैठ अश्वपे वनमें जाते, दोनों मिलके शूर ॥१२००॥
महिंद्र राय आ पवनकँवरसे, अर्ज करे करजोड़।
सभी गुन्हाकी माफी देओ, आप बड़े सिरमोड़ ॥१२०१॥

मुजको तुम मत रोको जाते, जाता ढूंढन काज।
अब पछताते क्या! होता है, करता प्रथम इलाज ॥१२०२।
बेटी प्यासी उसे निकाली, दया न दिलमें धार।
पानी पीना भी तुम घरका, आज हुआ बेकार ॥१२०३॥
राजाने फौजें भिजवाई, ढूंढे वन वन जाय।
पता न पाया कहां उसीका, गए सभी घबराय ॥१२०४॥

॥ अंजना के विरहमें पवनकी चिंता ॥

पवन पवनवत् ढूंढे वन वन, मिलता नहीं निशान।
बोला तबतो पवन मित्रसे, अब त्यागूंगा प्राण ॥१२०५॥
चितारची उस वनमें जलदी, दीनी आग लगाय।
होती ज्वाला चारों दिशिमें, पडे पवन मूर्छाय ॥१२०६॥
मात पिता सासू सुसरादिक, सबही आए चाल।
करे मना पर एक न माने, मात हुई बेहाल ॥१२०७॥
बड़ी अभागिन अधम पापनी, दिया सतीपे आल।
वधु मरने पर मरे पुत्र यह, मैं हूं अति चंडाल ॥१२०८॥
राज सभी गारत होवेगा, यह दुख नहीं सहाय।
दिया अंजना को दुख मैंने, अब यह मुजे सताय ॥१२०९॥
कँवर मित्रसे माता बोले, बेटा? तू समझाव।
रहो सदा ही साथ लालके, कुछ भी करो उपाव ॥१२१०॥

॥ अंजना पवन मिलाप ॥

यान सतीका आते देखा, पवन मित्र ततकाल।
यह आई है सती अंजना, बोला हो खुशहाल ॥१२३९॥
अनमिख नैन पसार निहारे, सभी ऊर्ध्व आकाश।
सती अंजना अब आती है, होगा लील विलास ॥१२४०॥
अमृत वर्षा हुई हमारे, उदय कनक मय भान।
श्रेष्ट बधाई मिली सतीकी, अब आवें इस स्थान ॥१२४१॥
आए तुरत विमान निकट में, उतरे नीचे आय॥
तभी अंजना सुसरादिकको, नमती विनय जताय ॥१२४२॥
पवन पिता प्रतिसूर्य भूपको, कहैं हर्ष मन लाय।
दुख दरियामें सब जन डूबत, तुम्हें उधारा आय ॥१२४३॥
पुत्र वधूको तजी दोष बिन, तुमने करी सहाय।
जीवन दान दिया उपकारी, यह नहिं भूला जाय ॥१२४४॥
उधर प्रियाको देख पवनजी, शोकानल हो शान्त।
भूले अपना कष्ट सर्वही, चित्त हुआ उपशान्त ॥१२४५॥
सती आनके सीस नमाया, करे कथ गुण गान।
देव हमारे सच्चे तुमहो, देखा सब जग छान ॥१२४६॥
पवन कहे तू धन्य सती है, लाख लाख साबास।
धर्म निभाया पतिव्रत पूरा, दृढ़ धारा विश्वाश ॥१२४७॥

तुमे दिया दुख अगणित मैंने, फिर पाए सिर आल।
वन वन फिरके कष्ट उठाया, रखा धर्म में ख्याल ॥१२४८॥
सखी सयानी वसतमाला, रही विपतमें साथ।
दिया सतीको परम सहारा, खूब बटाया हाथ ॥१२४९॥
सती कहै तुम पति परमेश्वर, बिन पति सूना साज।
आप बिना में कोटी विपदा, सहन किया रख लाज ॥१२५०॥
आज दशसे विपद विलाई मिले सभी सुख साज।
हुए अचानक दर्श आपके, सुधर गए सब काज ॥१२५१॥
लख बालक को पवन मुदित हो, लेते गोद बिठाय।
कठ लगाया हर्ष हर्षसे नयन तृप्ति नहिं पाय ॥१२५२॥
पुण्य प्रबल वर रूप देखके, मोहित हो नरनार।
अधिक प्रेमसे सभी उठाते, प्रकटा सब मन प्यार ॥१२५३॥
सासू आई आशू लाई, सती अंजना पास।
माफ करो सब श्रोगुन म्हारो, दीनी अधिकी त्राश ॥१२५४॥
धन्य २ तुम दोनों कुलको, दीना आज उजाल।
वर्ष द्वादश अचल शीलको, तीन योग धर पाल ॥१२५५॥
इतना दुख पडने पर तुमने, किया न किसपे रोष।
मैंने मूठा आल चढाया, अधिक धरा सिर दोष ॥१२५६॥
माफी दो बहुचरजी तुमतो, अधिक गुणोंकी धार।
मेरे दुर्गुणपे तुम कुछ भी, करना नहीं विचार ॥१२५७॥

सुन सासूकी मती अंजना, बोली बेकर जोड़।
क्या ? कहते सासूजी मुजको, तुम मुज सिरके मोड़ ॥१२५८॥
मान बढ़ाया मेरा जगमें, भोगा मैं निज आप।
यदि किया दुख में नहिं भोगा, अब दुख दीजे आप ॥१२५९॥
सास सतीकी सुनके वाणी, मनमें होती दग।
बडी सुशीला महामती ये, पतिव्रता गुण रग ॥१२६०॥
दादीजी हनुमान देखके, होती बडी खुशाल।
गोद लेय निज पौत्र रमाती, कुल दीपक ये लाल ॥१२६१॥
केतुमति माता तव आई, पिता महेन्द्र नृपाल।
हे बेटी ? अपराध हमारा, माफ करो हरहाल ॥१२६२॥
गुन्हा मढा सिर अधिक तुमारे, करी नहीं संभाल।
जब आती यह बात ध्यान में, उठती तनमें भाल ॥१२६३॥
सभी भ्रात भोजाई मिलके, नमें सती के पाय।
याची सबने क्षमा सतीसे, बार बार गुण गाय ॥१२६४॥
सती कहैं नहि दोष किसीका, अधिक कर्म बलवान।
बिन भुगते नहि हो छुटकारा, मिले मान अपमान ॥१२६५॥
सब विद्याधर विद्या द्वारा, ओत्सव किया विशेष।
सती अंजनाका गुण गाते, हार हुई हृदयेश ॥१२६६॥
मामाजी को सब सत्कारे, माना उरका हार।
हनुपुरमें सब जनको लाए, मामाकर मनुहार ॥१२६७॥

॥ अंजना पवन मिलाप ॥

यान सतीका आते देखा, पवन मित्र ततकाल ।
यह आई है सती अजना, बोला हो खुशहाल ॥१२३९॥
अनमिख नैन पसार निहारे, सभी उर्ध्व आकाश ।
सती अजना अब आती है, होगा लील विलास ॥१२४०॥
अमृत वर्षा हुई हमारे, उदय कनक मय भान ।
श्रेष्ट बधाई मिली सतीकी, अब आवें इस स्थान ॥१२४१॥
आग्र सुरत विमान निकट में, उतरे नीचे आय ।
तभी अंजना सुसरादिकको, नमती विनय जताय ॥१२४२॥
पवन पिता प्रतिसूर्य भूपको, कहे हर्ष मन लाय ।
दुख दरियामें सब जन डूबत, तुम्हें उधारा आय ॥१२४३॥
पुत्र वधूको तजी दोष विन, तुमने करी सहाय ।
जीवन दान दिया उपकारी, यह नहिं भूला जाय ॥१२४४॥
उधर प्रियाको देख पवनजी, शोकानल हो शान्त ।
भूले अपना कष्ट सर्वही, चित्त हुआ उपरान्त ॥१२४५॥
सती आनके सीस नमाया, करे कथ गुण गान ।
देव हमारे सच्चे तुमहो, देखा सव जग छान ॥१२४६॥
पवन कहे तू धन्य सती है, लाख लाख सावास ।
धर्म निभाया पतिव्रत पूरा, दृढ धारा विश्वाश ॥१२४७॥
तुमे दिया दुख अगणित मैंने, फिर पाए सिर आल ।
वन घन फिरके कष्ट उठाया, रखा धर्म में ख्याल ॥१२४८॥
सखी सयानी वसंतमाला, रही विपतमे साथ ।
दिया सतीको परम सहारा, खूब बटाया हाथ ॥१२४९॥
सती कहे तुम पति परमेश्वर, विन पति सूना साज ।
आप विना में कोटी विपदा, सहन किया रख लाज ॥१२५०॥
आज दर्शसे विपद विलाई मिले सभी सुख साज।
हुए अचानक दर्श आपके, सुधर गए सब काज ॥१२५१॥
लख बालक को पवन मुदित हो, लेते गोद विठाय ।
कठ लगाया हर्ष हर्षसे नयन तृप्ति नहिं पाय ॥१२५२॥
पुण्य प्रवल वर रूप देखके, मोहित हो नरनार ।
अधिक प्रेमसे सभी उठाते, प्रकटा सव मन प्यार ॥१२५३॥
सासू आई श्वाशू लाई, सती अजना पास ।
माफ करो सव ओगुन म्हारो, दीनी अधिकी त्राश ॥१२५४॥
धन्य २ तुम दोनों कुलको, दीना आज उजाल ।
वर्ष द्वादश अचल शीलको, तीन योग धर पाल ॥१२५५॥
इतना दुख पडने पर तुमने, किया न किसपे रोष ।
मैंने भूठा आल चढाया, अधिक धरा सिर दोष ॥१२५६॥
माफी दो बहुवरजी तुमतो, अधिक गुणोंकी धार ।
मेरे दुर्गुणपे तुम कुछ भी, करना नहीं विचार ॥१२५७॥
सुन सासूकी सती अंजना, बोली बेकर जोड़ ।
क्या ? कहते सासूजी मुजको, तुम मुज सिरके मोड़ ॥१२५८॥
मान बढ़ाया मेरा जगमे, भोगा मैं निज आप ।
यदि किया दुख में नहिं भोगा, अब दुख दीजे आप ॥१२५९॥
सास सतीकी सुनके वाणी, मनमें होती दग ।
बड़ी सुशीला महामती ये, पतिव्रता गुण रग ॥१२६०॥
दादीजी हनुमान देखके, होती बड़ी खुशाल ।
गोद लेय निज पौत्र रमाती, कुल दीपक ये लाल ॥१२६१॥
केतुमति माता तव आई, पिता महेन्द्र नृपाल ।
हे बेटी ! अपराध हमारा, माफ करो हरहाल ॥१२६२॥
गुन्हा मढा सिर अधिक तुमारे, करी नहीं संभाल ।
जब आती यह वात ध्यान में, उठती तनमें झाल ॥१२६३ ।
सभी भ्रात भोजाई मिलके, नमें सती के पाय ।
याची सबने क्षमा सतीसे, वार वार गुण गाय ॥१२६४॥
सती कहैं नहि दोष किसीका, अधिक कर्म वलवान ।
विन भुगते नहि हो छुटकारा, मिले मान अपमान । १२६५॥
सव विद्याधर विद्या द्वारा, ओत्सव किया विशेष ।
सती अजनाका गुण गाते, हार हुई हृदयेश ॥१२६६॥
मामाजी को सव सत्कारे, माना उरका हार ।
हनुपुरमें सव जनको लाए, मामाश्र मनुहार ॥१२६७॥

आए हनु तब रावणके ढिग, रावण लख उसवार ।
हर्ष युक्त निज गोद विठाया, करके प्रेम अपार ॥१२९६॥
सुग्रीवादिक खेचर सब मिल, हनू दशानन राय ।
वरुण रायसे युद्ध करन को, चले हर्ष मन लाय ॥१२९७॥
रावण हनुको देख वरुण नृप, आया खाकर जोश ।
धनुर खेंचके वाण चलाते, प्रकटा दिलमें रोष ॥१२९८॥
अप्रिय है तू तेरे पितुसे, माता वैरण होय ।
वह आता है मेरे सन्मुख, अपनी मृत्यु विलोय ॥१२९९॥
हनू कहे कायर नर ऐसे, बोले वचन अनेक ।
कह यही सांचा बतलावे, उसकी जगमें टेक ॥१३००॥
रणमें खबर पड़े वीरोंकी, देखें जब तलवार ।
विद्या द्वारा करे अनेकों, वानर रूप हजार ॥१३०१॥
हूक लगाई बारह योजन, पसरा शब्द अगाढ़ ।
सेना सवही धूजन लगती, गिरते झाड़ पहाड़ ॥१३०२॥
पूंछ फेर शत सुतको बांधे, लख यों वरुण नरेश ।
सजधजके हनुमतपे आया, प्रकटा मनमें द्वेष ॥१३०३॥
वरुण भूपरे टूट पड़ा है, हनुमत ज्यों यमराज ।
सिरकी चोटी पकड़ी करमें, रहा मेघ ज्यों गाज ॥१३०४॥
बैठा छातीपे पग देकर, बांधा दृढ़ मज़बूत ।
रथमें बांधा वरुणराय को, भोगो निज करतूत ॥१३०५ ।

मानी अपनी हार वरुणने, आया दशानन धार ।
छोड़ दिया जब वरुण भूपको, आया अपने द्वार ॥१३०६॥
वीर विवेकी देख हनूको, रावण अचरज पाय ।
शूर्पनखाकी अनगकुसुमा, कन्या दी परणाय ॥१३०७।
वरुण अगजा सत्यवती थी, परणाई हनुमत ।
वरुणभूप ले दीक्षा आखिर, पहुँचे मोक्ष महंत ॥१३०८॥
सुग्रीवादिक अपनी कन्या, व्याही कई हजार ।
रावण आलिंगन कर हनुको, पहुँचाया निज द्वार ॥१३०९॥
मात पिताको सीस झुकाया, हरषे पवन नरेश ।
सती अंजना पुत्र परखके, पाई सौख्य विशेष ॥१३१०॥

॥ पवन और अंजनाका वैराग्य ॥

जाता सुखमें समय सदा यों, एक समय सुविचार ।
रात पिछली धर्म जागृका, करती विविध प्रकार ॥१३११॥
संजम लेना वैभव तजके, पतिपग करे प्रणाम ।
जनम मरण के दुख जग मोटा, सवही काम निकाम ॥१३१२॥
पवन कहें लघु वयमें सुतको, कैसे छोड़ा जाय ।
वृद्ध पनेमें तुम हम मिलके, लेंगे जोग सवाय ॥१३१३॥
कालक्षेप मत कीजे स्वामिन् ? नहीं काल विश्वास ।
विषय भोग यह जहर जबर है, सुनो सत्य अरदास ॥१३१४॥

पवन हृदय वैराग्य हुआ तब, समझावे हनुमान ।
अरे पुत्र प्रिय ? चिन्ता चितमें, मत करिये मतिमान ॥१३१५॥
माता ऊपर अधिक प्रेम से, पग पकड़े हनुमान ।
माता ? तुम मत छोड़ सिधाओ, सत्यशील की खान ॥१३१६॥
दिया पुत्र समझाय सतीने, पति से विनय जताय ।
गुन्हो करो सव माफ आज से, लेन देन चुक जाय ॥१३१७॥
करके तप जप पवनमुनीश्वर, पहुँचे मोक्ष मझार ।
सती अंजना गुरणी के ढिग, लीना संजम धार ॥१३१८॥
लोच सोच तज जर जेवर को, देते हनुमत हाथ ।
चित्त उदासी छाई हनुके, मुझ मत छोड़ो मात ? ॥१३१९॥
वसंतमाला हुई साथ में, आखिर प्रेम निभाय ।
सती अंजना तपस्या करके, दीना अग सुकाय ॥१३२०॥
मास मास तप करे पारणा, सूखा लोही मांस ।
अनसण करके दोनों सतियां, लिया स्वर्ग में वास ॥१३२१॥
मोक्ष जायगा नरभव पाके, धन्य सती जग माय ।
मन वचकाया शील अराध्यो, पति सेवा उर लाय ॥१३२२॥
ऐसी साध्वी नाम भव्य नित, जपिये वारम्वार ।
मन वांछित संपति वर पावे, वरते जय जयकार ॥१३२३॥
संवत विक्रम दो हजार इक, भव्य सहर इन्दोर ।
पूज्यनंद "मुनिसूर्य" सती गुण, गावे युग करजोर ॥१३२४॥

॥ इति अंजना चरित्र ॥

मन्त्रि अरु राणी अति नृपको, वरजे वारम्वार।
कान धरी ना एक किसीकी, हुए आप अनगार ॥१२५३॥
जप तप धारक हुए मुनीश्वर, किया ज्ञान अभ्यास।
भूमण्डल नवरूप विहारी, करते कर्म विनाश ॥१२५४॥
विचरत आए पुरी अयोध्या, लेने शुद्ध आहार।
मध्य समय था उष्ण कालका, पडती धूप अपार ॥१२५५॥
पांव जले शिर अधिक तापसे, गरम पवन विकराल।
द्वार द्वारपे फिरे मुनीश्वर, पटकाया प्रतिपाल ॥ १२५६॥
राणी बैठी महिल गोखमें, अनरथ करे महान।
नगर छटाको लखे प्रेमसे, होते विध विध गान ॥ १२५७।
राणी देखे मुनिवर फिरते, मनमें हुई उदास।
ऋषि भेरे यह पतिवर आए, मनमें धर कुछ आश ॥१२५८॥
पहले आप वना जोगीये, अव सुत लेने आय।
नन्द चन्द सा ले जावेगा, इसमें संशय नाय ॥१२५९॥
पति के जाने वाद पुत्रपे, रखती नित विश्वास।
पुन गए फिर क्या गति होगी, आशा सभी निराश ॥१२६०॥
पतिसे प्यारा पुत्र कहाता, एक पुत्र आधार।
गरम हुई अतरकी आते, देती सुद्ध विसार ॥१२६१॥
वैर पूर्वका प्रकट हुआ मन, भटसे किया उचार।
जाओ ? मुनिका मुहँ काला कर, पुरसे करो वहार ॥१२६२।

आज्ञा होते तुरत सुभट वह, गया साधुके पास।
धक्का मुक्का थप्पड देकर, कहा अरे ? बदमास ॥१२६३॥
निकल यहां से फेर न आना, जो आया यदि भूल।
फिर तो तेरे प्राण लेयगें, डालेंगे मुख धूल ॥१२६४॥
अवतो तुजको छोड दिया है, अरेदुष्ट ? मतिमन्द।
तुरत निकल जा देर करे मत, चले न तुज छल छन्द ॥१२६५॥
मुनि गुण आगर समता सागर, जाते पुरी वहार।
याद हुई मन पूर्व वारता, स्वार्थ मयी संसार ॥१२६६॥
रागरोषसे न्यारे मुनिवर, चल आए वन माय।
तरुतल ले विश्राम थकेसे, ध्यान शुद्ध मन ध्याय ॥१२६७॥
मुनिको काढे वाहिर तवतो, देखे पुरके लोग
धिक्कारे राणीको सब मिल, कीना काम अजोग ॥१२६८॥
जोर न चाले तभी किसीका, होते मन नाराज।
धाय मात सुन राणी हालत, राणी किया अकाज ॥१२६९॥
ये राणी हत्यारी मुनिको, दिया अधिक संताप।
मार कूटके वाहिर काढे, धरा सीस घट पाप ॥१२७०॥
नैनों से जलधारा छूटी, आई राजा पास।
किन कारणसे रोती माता, कीजे हाल प्रकाश ॥१२७१॥
मास पारणे मुनि आए थे, शोषणकी निज काय।
धक्का देकर साधु निकाले, भूखे प्यासे जाय ॥१२७२।

सभी नगर में शोर हुआ है, धुत्कारे सब लोक।
घोर पाप क्यों ? ऐसा होता, घर २ चिन्ता शोक ॥१२७३॥
कैसे ? पुरमें क्षेम रहेगा, हो मुनिको सन्ताप।
राजा सुनकर थर हर कंपा, हुआ घोर ये पाप ॥१२७४॥
मुज होते मुनिवर दुख पाते, होता काम अजोग।
कैसे पुरमें मुँह वताऊं, धिक्कारे सब लोक ॥१२७५।
पुण्यहीन है कौन नगरमे काली जस करतूत।
किसका ऐसा कठिन हृदय है, पाप करन मजवूत ॥१२७६॥
धाय मातृ कह खुद राणीजी, मुनिवर किये वहार।
क्या ? दुख उसको हुआ साधुसे, दीना काम विगार ॥१२७७॥
पूर्व वैर क्या उदय हुआ है, किया काम हद पार।
अन्य नहीं थे वे मुनिवरजी, खुद राणी भरतार ॥१२७८॥
खुद आए थे पिता मुनीश्वर, राणी किया वहार।
हाहा ? जुल्म जवर कर डाला, मुनि समता भण्डार। १२७९॥
तुरत अश्व चढ राजा मुनि ढिग, आकर किया प्रणाम।
तरुतल ध्यान लगा मुनि बैठे, शुद्ध आप परिणाम ॥१२८०॥
हुआ अधिक अपराध हमारा, माता किया अकाज।
नगर पधारो अर्ज हमारी, सुनो गरीव निवाज ॥१२८१॥
दर्शन दे करके पुर जनको, करो कृतारथ आप।
वढी अज्ञता कीनी मैंने, हुआ आप सन्ताप ॥१२८२॥

दन्त कुदाला मांस चोटियाँ, खाती कर आस्वाद।
हाथ थाप दी छाती उपर, शम दम धारी साध ॥१४१३॥
चूर चूर तनकी हो हड्डी, खून बहा ज्यों नाल।
प्यासी पीने लगी खून को, अजब कर्म की चाल ॥१४१४॥
खड खण्ड कर दिया अंग का, मुनि चढ़ते परिणाम।
क्षपक श्रेणि पर चढ़े मुनीश्वर शुक्ल ध्यान विश्राम ॥१४१५॥
पाए केवलज्ञान कर्म क्षय, लिया साध्य शिवराज।
खडे खडे गुरु लखे दूरसे, पापिनि किया अकाज ॥१४१६॥
ज्ञान लगाकर लखी सिंहनी हती सुकोशल मात।
मोही मरके हुई बाघनी, कीनी सुत की घात ॥१४१७॥
मुनि बोले ! बाघन हत्यारी, निज सुत मारा आज।
क्या गति होगी पापिन तेरी, सिंहनी सुना आवाज ॥१४१८॥
दंत पंक्ति मुनि की लख सोचे, सुन्दर वदन निहार।
ऐसी कहीं पे देखी मैंने, मन में हुआ विचार ॥१४१९॥
खाती खाती ध्यान लगाती, जातीसुमरण पाय।
हा ! हा ! सुतमें मारा मेरा, घोर किया अन्याय ॥१४२०॥
जिस कारणमें पड़ी महिलमें, उसको मारा आज।
नरतन पाके भ्रष्ट किया मैं, तजके कुलकी लाज ॥१४२१॥
निंदा करती निज पापोंकी, देती लख धिक्कार।
मुनितट आती मन शरमाती, नमती वारम्वार ॥१४२२॥

जावज्जीव सथारा ठाया, त्यागे पाप अठार।
स्वर्ग आठवें गई बाघनी, धर्म शुद्ध मन धार ॥१४२३॥
कीर्तिध्वज मुनि कर्म काटके, हुए सिद्ध भगवान।
कहैं "सूर्यमुनि" मुनिगुण गावें, पावें शिवकल्याण ॥१४२४॥

॥ नघूकका युद्धमें जाना और राणीपे संदेह लाना ॥

राणि सुकोशल राजाकी थी, चित्रमाल तस नाम।
हिरण्यगर्भ नामक तस सुत है, गुण यौवन अभिराम ॥१४२५॥
जिनके राणी मृगावती थी, नघूक नामा नन्द।
हिरण्यगर्भ नृप एक समयमें, बैठे महिला वृन्द ॥१४२६॥
शिरपे देखा श्वेत केश तब, सोचा ज्ञान लगाय।
निज सुतको अधिकार देयके, सजम लिया सवाय ॥१४२७॥
नघूक नृपकी राणी सिंहका, सकल कलाकी जान।
रूपरग वर धर्म परायण, पति हित देती प्राण ॥१४२८॥
उत्तर दिशिमें नघूक नृप तब, वैरी जीतन जाय।
इतने दक्षिण दिशिसे वैरी, पुरको घेरा आय ॥१४२९॥
राणी सोचे विना भूपके, क्या ? करना इसवार।
दुश्मन शिरपे आन खडा है, युद्ध गए भरतार ॥१४३०॥
सब दास्योंको राणी कहती, करलो नरका वेष।
बख्तर सजलो अस्त्र शस्त्र से, तजदो सारी ऐश ॥१४३१॥

सुनके सबको बडी वीरता, चचल गति हय धार।
सभी अश्व चढ चली युद्धमें, हिम्मत धार अपार ॥१४३२॥
जोश रोष खा पडी शत्रुपे, जैसे श्रावण मेघ।
लडी वीरता से अति राणी, गही हाथमें तेग ॥१४३३॥
प्रबल युद्धमें जीती राणी, गए शत्रु सब भाग।
राणी आई महिल आपके पुर जन धरते राग ॥१४३४॥
शत्रु जीत तब आए भूपति सुन राणीका हाल।
व्यभिचारणि यह नार दिखाती, करती काम छिनाल ॥१४३५॥
क्यों जाती ये नार युद्धमें, फौज कमी हम पास।
राण लडने गई इसीसे, इज्जत हो हम नाश ॥१४३६॥
राणीसे मन खेंच लिया नृप, किया बोलना बन्द।
अच्छा करते बुरा बने है, यही कर्मका द्वन्द ॥१४३७॥
समझ गई राणी भी मनमें, होता जो पति ख्याल।
सोचे प्रतिपल कैसे उतरे, मेरे शिरका आल ॥१४३८॥
एक समय नृपके तन उपना, दाघज्वर का रोग।
करें चिकित्सा वैद्य अनेकों, मिला विविध संयोग ॥१४३९॥
लगी न औषध रोग बढा अति, रहा भूप घबराय।
निज शिर दोष मिटाने कारण, राणी अवसर पाय ॥१४४०॥
सबके सन्मुख प्रकट सुनाया, मैंने मन वच काय।
अन्य पुरुष वाछा नहिं कबहू, पाला शील सवाय ॥१४४१॥

युद्ध परस्पर पिता पुत्रके, होता तभी महान ।
आखिर जीत पिताने पाई, हारा निज सतान ॥१४७१॥
पिता हृदयसे लिया पुत्रको, करके अधिका प्यार ।
दिया राजपद दोनों पुरका, आप हुए अनगार ॥१४७२॥

॥ दशरथ नृपकी उत्पत्ति ॥

सूर्यवश में ऐसे केई, भूप हुए बलवान ।
अतिम जप तप करके धारण, किया आ म कल्यान ॥ ४७३॥
बाद हुए हैं भूप अनेकों, कहूं नाम दरसाय ।
सिंहरथके सुत हुआ ब्रह्मरथ, अनुक्रमसे पट पाय ॥१४७४॥
हिमरथ शतरथ उदयपृथू नृप, वारीरथ भूपाल ।
इन्दुरथ आदित्यरथ अरु, मांधाता महिपाल ॥ ४७५॥
वीरसेन प्रतिमन्यु वीर नृप, पद्मबंधु रविमन्य ।
वसततिलक र. कुवेरदत नृप, कथु शरभ अरिहन्य ।१४७६॥
द्विरदसिंह सुदर्श हिरण्यक, पुजस्थल वराय ।
काकुस्थल के पाट विराजे, महिपति श्री रघुराय ।१४७७।
ऐसे होते सूर्यवशमें, महिपति वीर अनेक ।
गए स्वर्ग कई शिव पद पाए, रखी धर्मकी टेक ॥१४७८॥
शरणार्थीको शरण दियाहै, अनुकपा दिलधार ।
हुए भूप अनरण्य नामके, दीन दुखी हितकार ॥१४७९॥

जिनके राणी पृथ्वीदेवी, तिनके दोय कँवार ।
अनतरथ अरु दशरथ नामक, वश वधारण हार ॥१४८०॥
दीक्षा ले अनरण्य भूपती, दे दशरथ को राज ।
अनतरथ भी साथ पिताके, सारे आतम काज ॥१४८१॥
एक मासके थे दशरथजी, तवसे किए नृपाल ।
प्रतिदिन चन्द्र कला ज्यों बढते, सुखसें जावें काल ॥१४८२॥
कला बहोत्तर सीखे दशरथ, विनय विवेक विचार ।
शूर वीर दाता अरु भोक्ता फैला यश ससार ॥१४८३।
दिन २ प्रतपे तेज चन्द्रिका, निशमें चन्द्र अनूप ।
सब राजा में राजा बढकर, दीपे दशरथ भूप ॥१४८४।
दर्भस्थल पुरका था स्वामी, भूप सुकोशल नाम ।
राणी अमृतप्रभा जिनोके, यौवन वय अभिराम ॥१४८५।
जिनके कन्या अपराजित थी, परणे दशरथ भूप ।
नगर कमलसकुल का राजा, सुबंधूतिलक अनूप ॥ ४८६॥
मित्रादेवी राणी जिनके सुता सुमित्रा खास ।
दशरथ नृपकी हो पटराणी, पूर्व पुण्य सुविकाश ॥१४८७॥
कन्या थी सुप्रभानामकी, पिता आनिन्दित नाम ।
परणे दशरथराय उसीको, नूतन सुख अभिराम ॥१४८८॥
ऐसे दशरथ सुखसे अपना विता रहे हैं काल ।
अब रावणकी कथा सुनाते, कहै "सूर्य,, सब हाल ॥१४८९॥

॥ रावण की मृत्यु का खुलासा ॥

अर्ध भरत का स्वामी रावण, बैठा सभा मझार ।
सहस भूप जस सेवा करते, विद्या प्रवल हजार ॥१४९०॥
वैभव अपना देख करे मन, रावण अति अभिमान ।
सुरनर पांव पडे मुज आकर, देते सब सन्मान ॥१४९१॥
इन्द्रसभा सी सभा सुशोभित अधिक पुण्यका पुंज ।
हय गय रथ भट पूर्ण खजाना, ललित महिल वर कुंज॥१४९२॥
भ्रात विभीषण कुम्भकरणसे, मेघ इन्द्र से पूत ।
शूरवीर पौत्रादिक सारे, बडे बडे रजपूत ॥१४९३॥
हजार चोपन सारी नारी, मन्दोदरि पटनार ।
मेरा जैसा विरला होगा, तेजस्वी ससार ॥१४९४॥
तीन खड मे आण हमारी, हुआ न होगा भूप ।
गर्व धरी रावण यों बोला, मेरी सभा अनूप ।१४९५॥
सुनके सारी सभा स्वारथी, वोली एक ब्यान ।
आप तुल्य नहिं जग में कोई, देखा सब जग छान ॥१४९६॥
नैमित्तक बुलवाके रावण, अपना पूछा हाल ।
गर्व करो मत ज्ञानी भाखे, सिरपे काल कराल ॥१४९७॥
मेरा जैसा कौन ? जगत में, शूरवीर सरदार ।
खोल तुम्हारा पोथा देखो, कहो सत्य सुविचार ॥१४९८॥

युद्ध परस्पर पिता पुत्रके, होता तभी महान।
आखिर जीत पिताने पाई, हारा निज संतान ॥१४७१॥
पिता हृदयसे लिया पुत्रको, करके अधिका प्यार।
दिया राजपद दोनों पुरका, आप हुए अनगार ॥१४७२॥

॥ दशरथ नृपकी उत्पत्ति ॥

सूर्यवंशम ऐसे केई, भूप हुए बलवान।
अंतिम जप तप करके धारण, किया आम कल्यान॥ ४७३॥
बाद हुए हैं भूप अनेकों, कहूं नाम दरसाय।
सिंहरथके सुत हुआ ब्रह्मरथ, अनुक्रमसे पट पाय ॥१४७४॥
हिमरथ शतरथ उदयपृथू नृप, वारीरथ भूपाल।
इन्दुरथ आदित्यरथ अरु, मांधाता महिपाल ॥१४७५॥
वीरसेन प्रतिमन्यु वीर नृप, पद्मबंधु रविमन्य।
वसततिलक र कुबेरदत नृप, कुंथु शरभ अरिहन्य ॥१४७६॥
द्विरदसिंह सुदर्श हिरण्यक, पुंजस्थल वरराय।
काकुस्थल के पाट विराजे, महिपति श्री रघुराय ॥१४७७।
ऐसे होते सूर्यवंशमें, महिपति वीर अनेक।
गए स्वर्ग कई शिव पद पाए, रखी धर्मकी टेक ॥१४७८॥
शरणार्थीको शरण दियाहै, अनुकंपा दिलधार।
हुए भूप अनरण्य नामके, दीन दुखी हितकार ॥१४७९॥

जिनके राणी पृथ्वीदेवी, तिनके दोय कुँवार।
अनतरथ अरु दशरथ नामक, वश बधारण हार ॥१४८०॥
दीक्षा ले अनरण्य भूपती, दे दशरथ को राज।
अनतरथ भी साथ पिताके, सारे आतम काज ॥१४८१॥
एक मासके थे दशरथजी, तबसे किए नृपाल।
प्रतिदिन चन्द्र कला ज्यों बढ़ते, सुखसें जावें काल ॥१४८२॥
कला बहोत्तर सीखे दशरथ, विनय विवेक विचार।
शूर वीर दाता अरु भोक्ता फैला यश ससार ॥१४८३।
दिन २ प्रतपें तेज चन्द्रिका, निशमें चन्द्र अनूप।
सब राजा में राजा बढ़कर, दीपे दशरथ भूप ॥१४८४।
दर्भस्थल पुरका था स्वामी, भूप सुकोशल नाम।
राणी अमृतप्रभा तिनोके, यौवन वय अभिराम ॥१४८५।
जिनके कन्या अपराजित थी, परणे दशरथ भूप।
नगर कमलसकुल का राजा, सुबंधूतिलक अनूप ॥१४८६॥
मित्रादेवी राणी जिनके सुता सुमित्रा खास।
दशरथ नृपकी हो पटराणी, पूर्व पुण्य सुविकाश ॥१४८७॥
कन्या थी सुप्रभानामकी, पिता अनिंदित नाम।
परणे दशरथराय उसीको, नूतन सुख अभिराम ॥१४८८॥
ऐसे दशरथ सुखसे अपना बिता रहे हैं काल।
अब रावणकी कथा सुनाते, कहैं "सूर्य,, सब हाल ॥१४८९॥

॥ रावण की मृत्यु का खुलासा ॥

अर्ध भरत का स्वामी रावण, बैठा सभा मझार।
सहस भूप जस सेवा करते, विद्या प्रबल हजार ॥१४९०॥
वैभव अपना देख करे मन, रावण अति अभिमान।
सुरनर पांव पडे मुज आकर, देते सब सन्मान ॥१४९१॥
इन्द्रसभा सी सभा सुशोभित, अधिक पुण्यका पुंज।
हय गय रथ भट पूर्ण खजाना, ललित महिल वर कुंज॥१४९२।
भ्रात विभीषण कुम्भकरणसे, मेघ इन्द्र से पूत।
शूरवीर पौत्रादिक सारे, बडे बडे रजपूत ॥१४९३॥
हजार चौपन सारी-नारी, मन्दोदरि पटनार।
मेरा जैसा विरला होगा, तेजस्वी ससार ॥१४९४।
तीन खन्ड में आण हमारी, हुआ न होगा भूप।
गर्व धरी रावण यों बोला, मेरी सभा अनूप। १४९५॥
सुनके सारी सभा स्वारथी, बोली एक जबान।
आप तुल्य नहि जग में कोई, देखा सब जग छान ॥१४९६॥
नैमित्तक बुलवाके रावण, अपना पूछा हाल।
गर्व करो मत ज्ञानी भाषे, सिरपे काल कराल ॥१४९७॥
मेरा जैसा कौन? जगत में, शूरवीर सरदार।
खोल तुम्हारा पोथा देखो, कहो सत्य सुविचार ॥१४९८॥

मन्त्री सोचे कार्य सिद्ध अब, मन मानी हो बात।
आया नृप ढिग भेटन लेके, बैठा जोडी हाथ ॥१५२४॥
आदर दे मन्त्री को अति नृप, पाए परम प्रमोद ।
इतने राज दुलारी आई, बैठी नृपके गोद ॥१५२५।
मृगनयनी छबि रूप अतुल है, सोचे नृप इसबार ।
इन जैसा यदि वर मिल जावे, शोभित जोड़ि अपार १५२६॥
नृप पूछे मन्त्री से कैसे, आये हो तुम चाल ।
मंत्रि कहे तुम दर्शन के हित, आया यहाँ दयाल ॥१५२७॥
तुम फिरते हो विविध देशमें, कोई अचरज खास ।
देखा होतो हमें सुनादो, हे सुनने की आश ॥१५२८॥
मुज कन्या के लायक जैसा, देखा नर किस ठोर ।
मन्त्री बोला देखे मैंने, जगमें पुरुष किरोर ॥१५२९॥
सब से बढके राजपुत्र इक, देखा सब जग छान ।
रत्नदत्त है नाम उसीका, गुणी अधिक विद्वान ॥१५३०॥
सब जग वल्लभ सुन्दर काया, शूरवीर बलवान ।
एक जीभ से इसके गुणका, होता नहीं बयान ॥१५३१॥
चित्र खोल बतलाया सब को, कन्या तब छबि देख ।
निश्चय मनमें करती मेरे, इस भव ये पति ऐक ॥१५३२॥
ध्यान हुआ ज्यों चन्द्र चकोरी, आई महिल मझार ।
खान पान निद्रा सब भूली, ध्यान एक भरतार ॥१५३३॥

दासी पूछे क्या! चित चिन्ता, कहो? प्रकट दरसाय ।
रत्नदत्त पति, धारा मैने, कन्या कहा सुनाय ॥१५३४॥
पति मिल जावे छह महिनों में, तो समझो सब क्षेम ।
नहिंतो फिरमें अनल शरणलूं, लिया सु निश्चय नेम ॥१५३५॥
दासी जाय कहा राणी से, कन्या का सब हाल ।
भूप कहे कन्या सुत भाया, उससे हुमी खु शाल ॥१५३६॥
नृप ने मंत्री से जब पूछा, कैसे होय सम्बन्ध ।
मन्त्रि कहें सबसे कर सकता, इसमें क्या छल छंद ॥१५३७॥
गणिक बुला पूछे शुभ मुहूरत, कहें गणिक दरसाय ।
दिन सत्तरवें श्रेष्ठ लग्न है, कहे सोच समझाय ॥१५३८॥
फिर आवेगा वर्ष बाद दो, लग्न सुनो भूपाल ।
श्रेष्ठ कार्य में देर न करना, कर लेना तत्काल ॥१५३९॥
मन्त्री चल आया निज पुरमें बीती कह दी बात ।
चित्र देख कन्या का सब के, हर्षित होते गात ॥१५४०॥
दोनों घर में मंगल बाजा, गाते गीत रसाल ।
भावी क्या? अब होने वाला, अजब कर्म का ख्याल ॥१५४१
वह पंडित रावण से कहता, जो होता यह ब्याह ।
दिन सत्तरवां यह टल जावे, मृत्यू तुम टल जाय ॥१५४२॥
रावण कहता इसमें क्या है? मुहुरत वह टल जाय ।
सांच झूठ का निर्णय अब ही, तुम सन्मुख हो जाय ॥१५४३॥

बन्ध कोठरी धरें तुम्हीं को, यदि जाओ कुछ भाग ।
कुलफ लगा के धरे कोटडी, हो न निकलने लाग । १५४४॥
कहा असुर को चन्द्रस्थलपुर, जाओ इस ही बार।
लाओ? वह बाला जा करके, शीघ्र होय हुशियार ।१५४५॥
रंग मंच पे बैठी बाला, गही असुर उस बार ।
हा हा कार मचा महलों में, रोवें नृप-परनार ॥१५४६॥
रावण को दीनी वह कन्या, हो भय भीत अपार ।
नाम मंगला देवी उसको, बुलवाई निज द्वार ॥१५४७॥
खूब यत्नसे सतरह दिन तक, रखो गुप्त किस ठौर ।
दिन अठारवें आकर देना, होते ही जब भौर ॥१५४८॥
मुख पेटी में धरी मंजूषा, देवी ने उस काल ।
गंगा सागर का संगम था, आई तटपे चाल ॥१५४९॥
गरुड़ नाग को, बुला दशानन, रत्नदत्त को खास ।
जाओ? जलदी डंक देय के, फिर आओ मुज पास ॥१५५०॥
रावण आज्ञा होते जाता, सोया जहां कँवार ।
डंक जोर से विषमय दीना, फिर आया निज द्वार ॥१५५१॥
दशकंधर को बात सुनाई, पाया मन आनंद ।
भावि भाव क्या होने वाला, ब्याह क्रिया में बन्द ॥१५५२॥
राजकुवर के तन विष फैला, खबर हुई सब ठोर ।
राजा राणी आरत करते, दुःख हुआ मन घोर ॥१५५३॥

मिट्टी की मूरत बनवाई दशरथ सी साक्षात।
रूप रंग में फर्क पडे नहीं, करे असल को मात ॥१५८३॥
सिंहासन पर उसे बिठाई होती नहीं पिछान।
इसी तरह से जनक भूप का, समझो सर्व बयान ॥१५८४॥
उधर विभीषण निशि काली में, आए बैठ विमान।
तुरत खड्ग से सिर को छेदा, पाए हर्ष महान ॥१५८५॥
उधर सुभट कोलाहल करते, पकड़ो दुष्ट महान।
हना हमारा स्वामी इसने, कपटी शठ नादान ॥१५८६॥
चढ़े व्योम में आय विभीषण, देखे पुर का हाल।
रुदन करे राणी सब सेना, हाहाकार कराल ॥१५८७॥
किया सभी सस्कार भूप का; मिल के लोक हजार।
देख विभीषण दृश्य सर्व ही, पाए हर्ष अपार ॥१५८८॥
ऐसे राय जनक को मारा, छल का भेद न पाय।
पास दशानन आकर सारा, बीतक कहा सुनाय ॥१५८९॥
दिल का खटका मेट दिया मैं, दशकंधर हर्षाय।
करे प्रशंसा सभी समाजन, शूर वीर कहलाय ॥१५९०॥
मंत्री के बिन इस छल बल का, भेद अन्य नहिं पाय।
बचा दिया दोनों राजाको, मंत्री बुद्ध सवाय ॥१५९१॥
जनक और दशरथ नृप वन में, फिरते स्वेच्छाचार।
मिले अचानक फिरते फिरते, दोनों बीच उजार ॥१५९२॥

बडे प्रेमसे मिले परस्पर, करते बात विचार।
फिरे साथमे दोनों प्रतिदिन, वन फलका आहार ॥१५९३॥

॥ कैकयीसे दशरथका व्याह और वरका देना ॥

तभी नगर कौतुकमंगलमें, शुभमति था भूपाल।
पृथ्वीराणी तास सुता थी, कैकयी रूप रसाल ॥१५९४॥
द्रोणमेघ कैकयीका भाई, बडा वीर बलवान।
रचा स्वयंवर मंडप भारी, आडंबर महान ॥१५९५॥
बडे २ राजा आये हैं, उस मंडपके माय।
खबर मिली दोनों राजाको, रहैं सोच मनलाय ॥१५९६॥
सूर्यवंशि हम भूप कहाते, सबमें मान सवाय।
आज फिरे हम जंगल-जंगल, रहते वनफल खाय ॥१५९७॥
दोनों राजा चलके आए, जहां बना मंडाण।
पास नहीं था सैन्य बलादिक, पर था पुण्य महान ॥१५९८॥
देखा आसन खाली उसपे, बैठ गए महिपाल।
बडे २ अभिमानी सारे, बैठे थे भूपाल ॥१५९९॥
सीस मुकुट कानोंमें कुंडल, उर मोत्योंके हार।
दिलमें था अरमान यही की, नहिं हमसे संसार ॥१६००॥
वरमालाका समय हुआ जब, बैठे भूप हजार।
भाग्य परीक्षा होती सबकी, कौन पुण्य अवतार ॥१६० ॥

उडुगणमें शशि जैसे सोभे, दशरथ पुण्य प्रकाश।
संग सहेली राज दुलारी, आती तब हुल्लास ॥१६०२॥
ऋद्धि और प्रतिबिम्ब दिखाती, सब नृपकी धामात।
सजा हुआ शृंगार सभी विधि, जैसे शचि साक्षात ॥१६०३॥
धन्यवाद का पात्र वही है, जिसकी हो यह नार।
किसपे डाले यह वर माला, देखें दृष्टि पसार ॥१६०४॥
दशरथ नृपको देख खुशीहो, कैकयीने वरमाल।
तुरत गलेमें डाली नृपके, देखे सब भूपाल ॥१६०५॥
हरिवाहन यह दृश्य देखके, करता क्रोध कराल।
वरमाला पहनाने निश्चय, भूलगई यह बाल ॥१६०६॥
बडे २ तो बैठ रहे हैं, रांक गले वरमाल।
क्या गिनती तुज रंक भिखारी ? कहाँ अन्य भूपाल ॥१६०७॥
दे दे यह वरमाला जोतूं, चाहैं निजकी क्षेम।
नहिं देगातो छीन लेंयेंगे, कहैं तुझे धर प्रेम ॥१६०८॥
भाग अभी दे दे वरमाला, या तो ले तलवार।
सीस उडादूं तेरा अबतो, मिटे सभी तकरार ॥१६०९॥
होगा कौन सहायक तेरा, समझ जरा नादान।
सुना बैन यों दशरथ तबतो, चढ़ा हृदय में पान ॥१६१०॥
वीर सिंह सम लगे गर्जने, हाथों में तलवार।
गीदड भभकी क्या ? बतलाता, दूम दबा चुप धार ॥१६११॥

अमर लोकसे चवकर आए, मात करे प्रतिपाल ।
श्याम वरण सुंदर तन जगमें, अरिजन कद कुदाल ॥ ६४ ॥
दृष्टम जन पैदा होवेसे, सबका हो कल्याण ।
नारायण हे नाम दूसरा, लक्ष्मण नाम निधान ॥१६४२॥
जनसे धीर बड़े ये दोनों, अधिक परस्पर प्यार ।
नीलाम्बर पीताम्बर पहने, दोनों राज कुमार ॥१६४३॥
कला बहोतर पढ गुण होते, शूर वीर विद्वान ।
वासुदेव बलदेव कहाते, तीन खन्डके त्राण ॥१६४४॥
गिरिवर चूर करे लीलासे, लेते करमे धार ।
दशरथ अपने पुत्र देखके, पाए हर्ष अपार ॥१६४५॥
धनुष हाथमें लेकर ऊंचा, ताने तेज कमान ।
कहे सूर्य शकित हो मुजप, डालो नहीं विमान ॥१६४६॥

पुत्र और भुज बल लख अपना, धरा धैर्य भूपाल ।
पुरी अयोध्या वास बसाया, परिजनको संभाल ॥१६४७॥
कैकयी के सुत हुए भरतजी, पौरुष पुण्य निधान ।
हुए शत्रुघन मात प्रभाके, नन्दण अति बलवान ॥१६४८॥
सोभित जोडी राम लखनकी, होता नहीं बयान ।
भरत शत्रुघनकी भी जोडी, दीपे तेज महान ॥१६४९॥
नृप दशरथके नन्दण चारों, एक एक बलवान ।
बडे प्रतापी तेज भूपका, मानत है सब आन ॥१६५०॥
प्रथम भाग यों पूर्ण हुआ है, राम लखन विस्तार ।
भाग दूसरा रचके कीना, बाद प्रथम अधिकार ॥१६५१॥
भव्य श्रवण कर लाभ लहेगा, करता मूर्ख मजाक ।
करता सोही भोक्ता प्राणी, निजफल उदय विपाक ॥१६५२॥

महत्व पुरुषका जीवन सारा, परहित साधन काज ।
पूज्यनन्द आचार्य हमारे, सरल शुद्ध गुरुराज ॥१६५३॥
तास पसाय 'मुनिसूर्य', राम जश, गाया धरके मोद ।
चतुर्मास इन्दोर सहरमें, पाया परम प्रमोद ॥१६५४॥
पूज्य पिता श्री वच्छराजजी, साथ शिष्य तस चार ।
दोय हजारके एक सालमें, बरते जय जयकार ॥१६५५॥
तिथि ग्यारस आसोज शुक्ल पख, गाया रामचरित्र ।
पढे सुने सो मंगल पावे, होवे जन्म पवित्र ॥१६५६॥
पञ्च इष्ट नवकार मंत्रका, जपिये प्रतिपल जाप ।
ऋद्धि वृद्धि सुख संपति पावे, बढता अमित प्रताप ॥१६५७॥

॥ इति श्री सूर्यमुनि कृत रावण–दशरथ–राम–लक्ष्मण उत्पत्ति और वीर हनुमान अंजनादि वंशावली प्रथम भाग समाप्तम् ॥

॥ इति प्रथम भाग ॥

वेगवती मुनि गुण यों सुनके, मन में जली विशेष।
वह मिथ्यात्वी मोह उदय से, मुनि पे धरती द्वेष ॥ १० ॥
सहन हुआ नहिं मुनि गुण उसको, जलकर होती खाक।
भोजन मिष्ट मधुर रस तज के, विष्टा खावे काक ॥ ११ ॥
यह पाखण्डी कपट रचाया, भोला जन भरमाय।
मूर्ख लोक मिल मूर्ख बखाने, समझ पड़े कुछ नाय ॥ १२ ॥
इनका अब अपमान करूं मैं, लोक देय धिक्कार।
देऊं ऐसा दोष साधु पे, हो अपमान अपार। १३ ॥
वेगवती यों हृदय सोच के, कहती घर घर बैन।
इस साधु को शील खड़ते, मैं देखा निज नैन॥ १४ ॥
यह पाखण्डी कपटी सूखा, नहिं साधु गुण लेश।
घर २ में यह पाप कथा को, प्रकटाई धर द्वेष॥ १५ ॥
लोक सुनी अचरज मन धरते, लिया साधु का भेष।
तो नहिं कर्म विटम्बन छोड़े, अजब कर्मगति लेख॥ १६ ॥
काम अकारन मुनि ने कीना, लुब्ध विषय रस होय।
तिरस्कार पुरजन मिल करते, धिक्कारे रुख कोय॥ १७ ॥
विलख वदन मुनि सुत यों होते, निज अपमानित ख्यात। ॥
मेरे द्वारे जिन शासन को, दोष लगा साक्षात ॥ १८ ॥
जब तक दोष मिटे नहिं मेरा, जब तक भोजन त्याग।
क्षमा भाव है सब के ऊपर, नहीं द्वेष नहिं राग ॥ १९ ॥

या विधि अभिग्रह मुनिवर लीना, आया शासन देव।
सान्निध कारण वेगवती तन, किया रोग ततखेव ॥२०॥
मुख सोजन तन तीव्र वेदना, वहती व्यथा महाव।
फल प्रत्यक्ष लख सोचे दीना, झूठा अभ्याख्यान ॥ २१ ॥
हा हा पापिन! कूटमती मैं, मुनि पे दीना आल।
मुनि समीप सो जाकर बोली, कीजे क्षमा दयाल ॥ २२ ॥
सुनिये लोको! इन मुनिवर पे, दीना झूठा आल।
यह तो सच्चे निर्दोषी है, सतगुरु परम दयाल ॥ २३ ॥
फलप्रत्यक्ष मैं पाई देखो, यह मोटा मुनिराय।
पूजो अरचो इन मुनिवरको, संशय सभी मिटाय ॥२४ ॥
गरम किया सोना उज्ज्वल हो, कनक सूप से होय।
जैसे यह मुनि शुद्ध हुए है, मुज दूषण से जोय ॥ २५ ॥
पूजे अरचे यह सह सुन के, भागा मन का भर्म।
जैन धर्म की महिमा जगगई, सच्चा इनका धर्म ॥ २६ ॥
वेगवती सुन धर्म साधुसे, लेती संयम भार।
तहां से मर कर प्रथम स्वर्ग में, हो देवी अवतार ॥ २७ ॥
यों जानी मत देओ झूठा, पर पे अभ्याख्यान।
वेगवती दुख भ्रम भव पाई, समझो भव्य सुजान ॥ २८ ॥
वेगवती वहाँसे चवपाई, सीता नाम रसाल।
तिन का सब मैं कथन सुनाऊं, सुन गोतम गणपाल ॥२९॥

॥ श्रीसीता का जन्म, और भामण्डलका अपहरण ॥

इसी भरत में मिथिला नगरी, हती स्वर्ग अनुसार।
ख्याति विश्वमें रम्य मनोहर, भरी रिद्ध भंडार। ३० ॥
जनक जनक सम भूप वहां का, रुभी प्रजा हितकार।
राजकाज पाले सु नीति से, शचिपति सम अवतार। ३१ ॥
सीतल शशिधर तेज सूर्य सा, रतिपति सम है रूप।
करण भूप ज्यों दानी जगमें, सब विधि गुणका तूप ॥ ३२ ॥
नाम विदेही राणी अनुपम, पति भक्ती दातार।
जीवन प्राणाधार भूपके, रंभा रूप उदार ॥ ३३ ॥
इन्द्राणी सम राणी मंजुल, चौसठ कला निधान।
वेगवती देवी वह चवकर, आयुस्थिति कर हान ॥ ३४ ॥
मात विदेही उर में जनमी, लिङ्ग त्रिया का धार।
अन्य जीव भी आया तबही, राणी उदर मझार ॥ ३५ ॥
शुभ समय राणी युग जगमें, पुत्री पुत्र उदार।
एक देव अपहरा पुत्रको, जन्म लिया उसवार ॥ ३६ ॥
गौतम पूछे महावीर से, पुत्र हरा क्यों ? देव।
पूर्व वैर क्या था उस साथे, सभी कहो गुरुदेव ॥ ३७ ॥

किन पापी उर दाह प्रकट की, जाऊं किन दिशि भाग।
मुख में ग्रास देय फिर लीना, मेरा बड़ा अभाग ॥ ६५ ॥
राज्य देय खोसा अरु गज तज, दिया गधा बेकाज।
राणी से दासी मुज कीनी, निधि में फूटा जहाज ॥ ६६ ॥
किसे उपालभ देऊं म्हेंतो, कीना पाप अघोर।
भव पूरब में किसी जीव का, लिया रत्न में चोर ॥ ६७ ॥
झूठा आल दिया मुनि जन पे, थापण दई दवाय।
छाना गर्भ गलाया अति ही, जलचर जीव हणाय ॥ ६८ ॥
जमीं कन्द काचा फल तोडे, तोडी तरु वर डाल।
सरद्रह शोषण फोडे इण्डा, मार्या विध २ व्याल ॥ ६९ ॥
जीवाणी जतना नहीं कीनी, डाले पशु मृग पास।
जूं लींखा खटमल को मारे, त्रश विकलेन्द्रि विणास ॥ ७० ॥
भांची दीनी रंक भीख में, घाणी पीले बीज।
खान खोद दावानल दीने, अधिक पापमें रींझ ॥ ७१ ॥
गांव जलाए कैई मैंने, परकी वृत्ति विनाश।
विष देकर मारे अति प्राणी, या ढाया आवास ॥ ७२ ॥
रागद्वेष वश किया कटीका, या मारे लघु बाल।
बरस मात से दूध छुडाया, किया विछोहा लाल ॥ ७३ ॥
भक्षण करते पशु मुख बांधा, दिया शीत अरु ताप।
मुनि निंदा कर पाप कमाया, या में लिया सराप ॥ ७४ ॥

विलख बदल रोती राणी यों, आए चल कर भूप।
अरे प्रिया ? कुछ धीरज धारो, अस्थिर जगत स्वरूप ॥ ७५ ॥
जनक राय ने चहुँ दिशि भटको, भेजे खबर मगाय।
दीर्घ काल अति होने पर भी, पुत्र खबर नहिं पाय ॥ ७६ ॥
किया कर्म छुटे नहिं कब भी, करते क्रोड उपाय।
राणी मन सतोष विचारे, सच्चा धर्म सहाय ॥ ७७ ॥
राजा सोचे धान्याकुर सम, यह पुत्री गुणवंत।
यों सु विचारी मोत्सव पुरमें, किया भूप अत्यंत ॥ ७८ ॥

॥ सीताका—जन्मोत्सव ॥

दान मान पुनि गीत गान हो, भोजन भांति विधान।
क्रिया दशोटन मिले स्वजन जन, सबको दे सन्मान ॥ ७९ ॥
विरह विथामें तनुजा देखत, शीतलता उर आय।
इस कारण से निज पुत्रिका, सीता नाम दिलाय ॥ ८० ॥
परिजन देते शुभ महुरत में, "सीता" नाम सवाय।
गिरि कदर में चंपकबेली, ज्यों बढती सुख माय ॥ ८१ ॥
पचधाय से प्रतिपल पलती, हाथो हाथ रहाय।
सुखसे जावें सदा काल यों, कभी रही नहिं काय ॥ ८२ ।
बाल कालमें सीखी बाला, चौसठ कलाभिराम।
देह लाज गुण बडी चातुरी, बडा पांचवां काम ॥ ८३ ॥

सिया कुमारी रूप रंग में, सोहै रूपारेल।
भर जोबन आई शशि बदनी, चाले गजगति गेल ॥ ८४ ॥
श्याम भँवर कच वेणी लंबी, वदन सु चन्द्र ललाम।
नैन कमल वत कीर नासिका, नकवेशर अभिराम ॥ ८५ ॥
काना कुण्डल झगमग करते, दाडिम कलिवत दंत।
वचन सुधारस सब सुखदाई, कटि हरि सम दीपत ॥ ८६ ॥
कुच घण युग है कलश विशाला, योवन जल लहराय।
कदली सम है जांघ मनोहर, रोम रहित मृदु भाय ॥ ८७ ॥
पग उन्नत कच्छप सम माता, राता नख पग हाथ।
सुर नरादि मन मोहे देखत, अमरी सम साक्षात ॥ ८८ ॥
शील रूप से शोभा बदती, नहीं बढाई रूप।
शीलवंत की वाचा फलती, यह है अटल स्वरूप ॥ ८९ ॥
सीता तोले को नर ओले, बोले सीतल वाच।
रूप विशाला सब विधी बाला, पाप निकदन राच ॥ ९० ॥
ऐसी सीता गुणकी गीता, सजके सब सिनगार।
पिता जनक पग बंदन आवे, पद प्रणमें धर प्यार ॥ ९१ ॥
कमलाक्षी यौवन वय बाला, देवी जनक नरेश।
हृदय विचारे मुज कन्याका, होगा को प्राणेश ॥ ९२ ॥
हृदय चक्षु से देखे नृप गण, रुचिकर हुआ न एक।
प्रतिदिन चिंता लगी रायको, सोचे धार विवेक ॥ ९३ ॥

प्रबल कोप नारद मन लाया, दूं सीताको त्रास।
कभी नहीं अपमान करे मुज, तुरत उढे आकाश ॥१२२॥
गिरि वैताढ्य जहां चल आए, वहां चन्द्रगति भूप।
भामण्डल था पुत्र सामने, लिखा जानकी रूप ॥१२३॥
लख भामण्डल सिया रूपको, लगा कामका भूत।
विह्वल हो पूछे नारद से, कौन? नार अदभूत ॥१२४॥
इन्द्राणी या सुरी किन्नरी, कहां देखी यह नार।
कहे नारद यह जनक अङ्गजा, सीता रूप उदार ॥१२५॥
नहीं वहिन सगुपण यह जाने, हा! हा! मूढ अज्ञान।
हित अहित सुविचार भूलते, ज्योंहि क्रिये मदपान ॥१२६॥
खान पान निद्रा सब तजदी, बोल चाल परिहार।
रम्मत गम्मत स्नान विभूषा, अदभूत काम विकार ॥१२७॥
राजा पूछे वत्स! हृदय क्या, चिन्ता से मुरझाय।
कहता नहिं लज्जा से कुछ भी, मौन धरी विलखाय ॥१२८॥
कहा मित्रने हाल कुँवरका, नारद चित्र बताय।
सिया चित्र लख कुँवर फसा मन, कैसे प्रकट सुनाय ॥१२९॥
पिता कहैं हैं! शक्ति अधिक मुज, करके दक्ष उपाय।
सीता को परणाऊं निश्चय, रहो सदा सुखमाय ॥१३०॥

॥ सीताका रामके साथ सम्बन्ध का होना ॥

इधर सोचते जनक विदेही, सीता देऊं राम।
शूर वीर बल बुद्धि पूरण, जोडी हैं अभिराम ॥१३१॥
लखा रामका साहस जबरा, उपकारी साक्षात।
मन्त्रि बुला भेजा दशरथपे, जता सभी मन बात ॥१३२॥
मन्त्री दशरथ नृपपे जा कहि, सीता राम सम्बन्ध।
दीनी सीता रामकँवर को, अटल वचन मुज बन्ध ॥१३३॥
प्रथम प्रेम हैं पूर्ण आपका, फिर भी अधिका होय।
थोछे नरसे प्रीत किया से, भला कहैं नहि कोय ॥१३४॥
दशरथ सुन यों कहैं हर्ष से, हमको बात प्रमाण।
मुँह मांगा पासा यह पडिया, सगपण निश्चय जान ॥१३५॥
निद्रित को शय्या सुखदाई, पडी दूध में खांड।
मूर्ख गधे पे करे सवारी, एरापति को छांड ॥१३६॥
निश्चय कर सगपण मन्त्रीजी, आया मधुरा माय।
नृप राणी को कही हकीकत, घादि घत दरशाय ॥१३७॥
सोना और सुगन्ध मिला है, सीता भाग्य सवाय।
सीता भी सुन हर्षित होती, मधुकर पुष्प लुभाय ॥१३८॥

॥सीता को व्याहने के लिए भामण्डल का प्रयत्न॥

भामण्डलको चन्द्रगती नृप, देकर के संतोष।
आकर निज महिलों में सोचे, सीता गुणकी कोष ॥१३९॥
कैसे होगा काम बड़ा ये, आवत रहें न सान।
भूचर आगे खेचर मांगे, जाय इसी में सान ॥१४०॥
प्रत्र देय मांगे यदि कन्या, नट जावे भूपाल।
आत्मभंग हो मेरा इससे, कहना काम सँभाल ॥१४१॥
अपलगती इक विद्याधर था, उसे बुलाया पास।
विकट काम यह करके आओ, मिले लाख सावास ॥१४२॥
अश्व रूप धर चला तुरत से, आया अथुरा माय।
अजब अश्व लख भूप शाल में, बांधा प्रेम जनाय ॥१४३॥
भूप चित्त अनुसार चले यों, कई दिन दिये बिताय।
उस हयपे चढ इकदिन राजा, क्रिडा करने जाय ॥१४४॥
समय उचित लख जनक सहितसे, उड़ा अश्व आकाश।
विद्याधर के पास बिठाया, आदर दे हुल्लास ॥१४५॥
कह विद्याधर सुनो जनक नृप, दिया तुम्हें संताप।
छल कर मैं मगवाया तुमको, करो गुन्हा सब माफ ॥१४६॥
करिये वचन प्रमाण हमारा, भामण्डल मुज नंद।
उसको अपनी सीता कन्या, दीजे धर आनन्द ॥१४७॥
यह मांग सुन जनक उचारे, दशरथ नन्दन खास।
दे चुका मैं सिया उन्हि को, जग में बात प्रकाश ॥१४८॥
उन जैसा नहि आज जगत में, रूपवन्त बलवान।
उन्हें छोडकर देता परको, समझो वह अज्ञान ॥१४९॥

राजकुमारों ? इधर पधारो, दर्शन हमको देय।
सबकी दृष्टी आप तरफ है, मुजरा हमका लेय ॥१७८॥
राम कहैं हम गांव अयोध्या, दशरथ तात नरेश।
रामलखन हम दोनों भ्राता, आय तुम्हारे देश ॥१७६॥
आए स्वयम्बर देखन कारण, जनक भूप महमान।
मथुरा नगरी देखन निकले, कैसा सुंदर स्थान ।१८०॥
भले पधारे पावन कीना, दिया सु दर्शन आज।
भलीभांति यह देखो नगरी, इच्छा जहां हो राज ॥१८१॥
करे परस्पर बातें नरगण, विजयी होगा राम।
उम्मेद पूरी इसमें हमको, नहिं मशब का काम ॥१८२॥
धनुष बडा है तदपी क्या है, ब्रह्मचारी है राम।
सीता के पति निश्चय होंगे, सुधरे काम तमाम ॥१८३॥
रामचन्द्रको शक्ति देना, है ईश्वर ? अरदास।
स्वयम्बर मे विजय होयगी, है पूरण विश्वाश ॥१८४॥
इधर राम है इधर सिया है, सोना और सुगंध।
भूप जनक के ख्वाहिश दिलमें, होगा राम सबन्ध ॥१८५॥
राम लखन मिल चलते निर्भय, जहां वाटिका स्थान।
है भाई ? यह बाग अजब है, इसका हो न बयान ॥१८६॥
जनकराय ने बडे शौक से, लगवाया यह बाग।
बुल बुल चहचा रही यहांपे, भ्रमर अलापे राग ॥१८७॥

राजकुमारी उसी बाग में, साथ सहेली वृन्द।
लेकर अपनी सखी बाग में, आई धर सानन्द ॥१८८॥
राम कहे यहां नहीं ठहरना, आई राजकुमार।
होय रगमें भंग इन्ही के, मानो वचन विचार ॥१८६॥
बैठे चलो अशोक वृक्ष तल, लेय जहां आराम।
उधर सिया निज सखी साथ में, फिरन लगी चहुँ धाम ।१६०।
कहै सहेली महक रहीहै, अजब पुष्प की गंध।
हरेक टहनी लहरा रही है, क्या यहाँ का आनन्द ॥१६१॥
झूला गावे दिल वह लावे, फूल रही फुलवार।
क्या हरियाली आली व्हाली, देखो बाग बहार। १६२।
पक्षीगण होके मतवारे, बैठे पांख पसार।
कोयल कुहुक रही मधुरस्वसे, झूले तरु की डार।।१६३॥
फिर क्या आना होगा प्यारी, बार बार इस स्थान।
क्यों कि आप सुसराल जाओगे, बिछुडेंगे हर आन ॥१६४॥
होगा सबका अलग ठिकाना, नया होय घर बार।
क्या २ सहने होंगे ताने, कौन करेगा प्यार ॥१६५॥
मात पिता भ्राता छोडेगें साथ सभी परिवार।
सास ननद का ताना सुनना, होय जहां हरवार ॥१६६॥
कौन ? सुनेगा अपना कहना, तानें मिले हजार।
बात २ पर धमकी मिलती, परवश बात विचार ॥१६७॥

कहे सखी यों व्याह बादमें, पलट जाय सब बात।
पति अच्छा मिलगया तो मानो, स्वर्ग सौख्य साचात ॥१६८॥
नहीं मिला तो सभी उम्रभर, मिट्टी होय खराब।
मारपीट हो लडना नित ही, अनुचित होय बनाव ॥१६६॥
इक तरफी नहि बात बने हैं, बहुमें होय कसूर।
कितनी है नादान लडकियां, पति करती मजबूर। २००॥
एक सखी कहैं ऐसी बातें, करना देओ छोड।
सीता सुखहो ऐसी बातें, कीजे साच निचोड ॥२०१॥
एक सखी कहैं सिया भाग्यका, कल होगा इनसाफ।
मन माना भरतार मिले या, खुले भाग्य की छाप ॥२०२॥
एक सहेली आई दौडी, कहै सिया से बात।
चलो साथ कुछ इधर देखलो, कौन खडे साचात ॥२०३॥
सिया कहे क्यों हसी उडाती, हुई कहो जो बात।
हाथ इशारा करके बोली, कौन यहां उत्पात ॥२०४॥
देखो सियाजी इन झाडों मे, छुपे हुए है कौन।
यह अयोध्या राज पुत्र हैं, खडे अचल धर मौन ॥२०५॥
सूरत शक्ल इनकी ईश्वर ने, हाथों हाथ बनाय।
प्यारी सीता गले इन्हीं के, जयमाला पहिनाय ॥२०६॥
सीता जब सुखपाल बैठ के, अपने भवन सिधाय।
बसे हृदय में राम निरंतर, और पुरुष नहिं भाय ॥२०७।

प्रबल कोप नारद मन लाया, दूं सीताको भ्राय।
कभी नहीं अपमान करे मुज, तुरत उडे आकाश ॥१२२॥
गिरि वैताल्य जहां चल आए, वहां चन्द्रगति भूप।
भामण्डल था पुत्र सामने, लिखा जानकी रूप ॥१२३॥
लख भामण्डल सिया रूपको, लगा कामका भूत।
विह्वल हो पूछे नारद से, कौन? नार अदभूत ॥१२४॥
इन्द्राणी या सुरी किन्नरी, कहां देखी यह नार।
कहे नारद यह जनक अङ्गजा, सीता रूप उदार ॥१२५॥
नहीं वहिन सगुपण शह जाने, हा? हा? मूढ़ अज्ञान।
हित अहित सुविचार भूलते, ज्योंहि किये मदपान ॥१२६॥
खान पान निद्रा सब तजदी, बोल चाल परिहार।
रम्मत गम्मत स्नान विभूषा, अदभूत काम विकार ॥१२७॥
राजा पूछे वत्स? हृदय क्या, चिन्ता से मुरझाय।
कहता नहिं लज्जा से कुछ भी, मौन धरी विलखाय ॥१२८॥
कहा मित्रने हाल कुँवरका, नारद चित्र बताय।
सिया चित्र लख कंवर ग्रसा मन, कैसे प्रकट सुनाय ॥१२९॥
पिता कहे हूं? शक्ति अधिक मुज, करके दाव उपाय।
सीता को परणाऊं निश्चय, रहो सदा सुखमाय ॥१३०॥

॥ सीताका रामके साथ सम्बन्ध का होना ॥

इधर सोचते जनक विदेही, सीता देऊं राम।
शूर वीर बल बुद्धि पूरण, जोडी हैं अभिराम ॥१३१॥
लखा रामका साहस जबरा, उपकारी साक्षात।
मन्त्रि बुला भेजा दशरथपे, जता सभी मन बात ॥१३२॥
मन्त्री दशरथ नृपपे जा कहि, सीता राम सम्बन्ध।
दीजो सीता रामकँवर को, अटल वचन मुज बन्ध ॥१३३॥
प्रथम प्रेम हैं पूर्ण आपका, फिर भी अधिका होय।
ओछे नरसे प्रीत किया से, भला कहीं नहिं कोय ॥१३४॥
दशरथ सुन यों कहें हर्ष से, हमको बात प्रमाण।
मुँह मांगा पासा यह पडिया, सगपण निश्चय जान ॥१३५॥
निद्रित को शय्या सुखदाई, पडी दूध में खांड।
मूर्ख गधे पे करे सवारी, परापति को छांड ॥१३६॥
निश्चय कर सगपण मन्त्रीजी, आया मथुरा माय।
नृप राणी को कही हकीकत, आदि अंत दरशाय ॥१३७॥
सोना और सुगंध मिला है, सीता भाग्य सवाय।
सीता भी सुन हर्षित होती, मधुकर पुष्प लुभाय ॥१३८॥

॥सीता को व्याहने के लिए भामण्डल का प्रयत्न॥

भामण्डलको चन्द्रगती नृप, देकर के संतोष।
आकर निज महिलों में सोचे, सीता गुणकी कोष ॥१३९॥
कैसे होगा काम बड़ा ये, आसत रहे न मान।
भूचर आगे खेचर मांगे, आब इसी में सान ॥१४०॥
अन्न देय मांगे यदि कन्या, नट जावे भूपाल।
मानभंग हो मेरा इसमें, कहना काम सँभाल ॥१४१॥
चपलगती इक विद्याधर था, उसे बुलाया पास।
विकट काम यह करके आओ, मिले लाख स्याबास ॥१४२॥
अश्व रूप धर चला तुरत से, आया मथुरा माय।
अजब अश्व लख भूप शाल में, बांधा प्रेम जगाय ॥१४३॥
भूप चित्त अनुसार चले यों, कई दिन दिये बिताय।
उस अश्वपे चढ़ इकदिन राजा, क्रिडा करने जाय ॥१४४॥
समय उचित लख जनक सहितसे, उड़ा अश्व आकाश।
विद्याधर के पास बिठाया, आदर दे हुलास ॥१४५॥
कह विद्याधर सुनो जनक नृप, दिया तुम्हें संताप।
छल कर में मगवाया तुमको, करो गुन्हा सब माफ ॥१४६॥
करिये वचन प्रमाण हमारा, भामण्डल मुज नंद।
उसको अपनी सीता कन्या, दीजे धर आनन्द ॥१४७॥
यह मांग सुन जनक उचारे, दशरथ नन्दन खास।
दे चुका मैं सिया उन्हि को, जग में बात प्रकाश ॥१४८॥
उन जैसा नहिं आज जगत में, रूपवन्त बलवान।
उन्हें छोड़कर देता परको, समझो वह नादान ॥१४९॥

प्रबल कोप नारद मन लाया, दूं सीताको त्रास।
कमी नहीं अपमान करे मुज, तुरत उडे आकाश ॥१२२॥
गिरि वैताढ्य जहां चल आए, वहां चन्द्रगति भूप।
भामण्डल था पुत्र सामने, लिखा जानकी रूप ॥१२३॥
लख भामण्डल सिया रूपको, लगा कामका भूत।
विह्वल हो पूछे नारद से, कौन ? नार अदभूत ॥१२४॥
इन्द्राणी या सुरी किन्नरी, कहां देखी यह नार।
कहे नारद यह जनक अङ्गजा, सीता रूप उदार ॥१२५॥
नहीं वहित सगुपय यह जाने, हा ! हा ! मूढ अज्ञान।
हित अहित सुविचार भूलते, ज्योंहि क्रिये मदपान ॥१२६॥
खान पान निद्रा सब तजदी, बोल चाल परिहार।
रमत गम्मत स्नान विभूषा, अदभूत काम विकार ॥१२७॥
राजा पूछे वत्स ! हृदय क्या, चिन्ता से मुरझाय।
कहता नहिं लज्जा से कुछ भी, मौन धरी विलखाय ॥१२८॥
कहा मित्रने हाल कँवरका, नारद चित्र बताय।
सिया चित्र लख कँवर बसा मन, कैसे प्रकट सुनाय ॥१२९॥
पिता कहैं हैं ? शक्ति अधिक मुज, करके दाव उपाय।
सीता को परणाऊं निश्चय, रहो सदा सुखमाय ॥१३०॥

॥ सीताका रामके साथ सम्बन्ध का होना ॥

इधर सोचते जनक विदेही, सीता देऊं राम।
शूर वीर बल बुद्धि पूरण, जोडी हैं अभिराम ॥१३१॥
लखा रामका साहस जबरा, उपकारी साक्षात।
मन्त्रि बुला भेजा दशरथपे, जता सभी मन बात ॥१३२॥
मन्त्री दशरथ नृपपे जा कहि, सीता राम सम्बन्ध।
दीनी सीता रामकँवर को, अटल वचन मुज बन्ध ॥१३३॥
प्रथम प्रेम हैं पूर्ण आपका, फिर भी अधिका होय।
ओछे नरसे प्रीत किया से, भला कहैं नहिं कोय ॥१३४॥
दशरथ सुन यों कहैं हर्ष से, हमको बात प्रमाण।
मुंह मांगा पासा यह पडिया, सगपण निश्चय जान ॥१३५॥
निद्रित को शय्या सुखदाई, पड़ी दूध में खांड।
मूर्ख गधे पे करे सवारी, एरापति को छांड ॥१३६॥
निश्चय कर सगपण मन्त्रीजी, आया मथुरा माय।
नृप राणी को कही हकीकत, आदि अत दरशाय ॥१३७॥
सोना और सुगन्ध मिला है, सीता भाग्य सवाय।
सीता भी सुन हर्षित होती, मधुकर पुष्प लुभाय ॥१३८॥

॥ सीता को व्याहने के लिए भामण्डल का प्रयत्न ॥

भामण्डलको चन्द्रगती नृप, देकर के संतोष।
आकर निज महिलों में सोचे, सीता गुणकी कोष ॥१३९॥
कैसे होगा काम भला ये, आचत रहे न सान।
भूचर आगे खेचर मांगे, आय इसी में सान ॥१४०॥
अन्न देय मांगे यदि कन्या, नट जावे भूपाल।
मानभंग हो मेरा इससें, करना काम सँभाल ॥१४१॥
चपलगती इक विद्याधर था, उसे बुलाया पास।
विकट काम यह करके आओ, मिले लाख सावास ॥१४२॥
अश्व रूप धर चला तुरत से, आया मथुरा माय।
अजब अश्व लख भूप शाल में, बांधा प्रेम जनाय ॥१४३॥
भूप चित्त अनुसार चले यों, कई दिन दिये बिताय।
उस हयपे चढ इकदिन राजा, क्रिडा करने जाय ॥१४४॥
समय उचित लख जनक सहितसे, उडा अश्व आकाश।
विद्याधर के पास बिठाया, आदर दे हुल्लास ॥१४५॥
कहे विद्याधर सुनो जनक नृप, दिया तुम्हें सताप।
छल कर मैं मंगवाया तुमको, करो गुन्हा सब माफ ॥१४६॥
करिये वचन प्रमाण हमारा, भामण्डल सुन नंद।
उसको अपनी सीता कन्या, दीजे धर आनन्द ॥१४७॥
यह मांग सुन जनक उचारे, दशरथ नन्दन खास।
दे चुका मैं सिया उन्हि को, जग में बात प्रकाश ॥१४८॥
उन जैसा नहिं आज जगत मे, रूपवन्त बलवान।
उन्हें छोड़कर देता परको, समझो वह नादान ॥१४९॥

प्रबल कोप नारद मन लाग्या, दूं सीताको त्रास।
कभी नहीं अपमान करे मुज, तुरत उडे आकाश ॥१२२॥
गिरि वैताढ्य जहाँ चल आए, वहाँ चन्द्रगति भूप।
भामण्डल था पुत्र सामने, लिखा जानकी रूप ॥१२३॥
लख भामण्डल सिया रूपको, लगा कामका भूत।
विह्वल हो पूछे नारद से, कौन ? नार अदभूत ॥१२४॥
इन्द्राणी या सुरी किन्नरी, कहाँ देखी यह नार।
कहै नारद यह जनक अङ्गजा, सीता रूप उदार ॥१२५॥
नहीं वहिन सगुपण यह जाने, हा ! हा ! मूढ अज्ञान।
हित अहित सुविचार भूलते, ज्योंहि किये मदपान ॥१२६॥
खान पान निद्रा सब तजदी, बोल चाल परिहार।
रम्मत गम्मत स्नान विभूषा, अदभूत काम विकार ॥१२७॥
राजा पूछे वत्स ! हृदय क्या, चिन्ता से मुरझाय।
कहता नहिं लज्जा से कुछ भी, मौन धरी बिलखाय ॥१२८॥
कहा मित्रने हाल कुँवरका, नारद चित्र बताय।
सिया चित्र लख कुँवर फँसा मन, कैसे प्रकट सुनाय ॥१२९॥
पिता कहै है ! शक्ति अधिक मुज, करके दाव उपाय।
सीता को परणाऊं निश्चय, रहो सदा सुखमाय ॥१३०॥

॥ सीताका रामके साथ सम्बन्ध का होना ॥

इधर सोचते जनक विदेही, सीता देऊं राम।
शूर वीर बल बुद्धि पूरण, जोडी है अभिराम ॥१३१॥
लखा रामका साहस जबरा, उपकारी साक्षात।
मन्त्रि बुला भेजा दशरथपे, जता सभी मन बात ॥१३२॥
मन्त्री दशरथ नृपपे जा कहि, सीता राम सम्बन्ध।
दीनो सीता रामकँवर को, अटल वचन मुज बन्ध ॥१३३॥
प्रथम प्रेम है पूर्ण आपका, फिर भी अधिका होय।
ओछे नरसे प्रीत किया से, भला कहीं नहिं कोय ॥१३४॥
दशरथ सुन यों कहैं हर्ष से, हमको बात प्रमाण।
मुँह मांगा पासा यह पडिया, सगपण निश्चय जान ॥१३५॥
निद्रित को शय्या सुखदाई, पडी दूध में खांड।
मूर्ख गधे पे करे सवारी, एरापति को छांड ॥१३६॥
निश्चय कर सगपण मन्त्रीजी, आया मथुरा मांय।
नृप राणी को कही हकीकत, आदि अत दरशाय ॥१३७॥
सोना और सुगंध मिला है, सीता भाग्य सवाय।
सीता भी सुन हर्षित होती, मधुकर पुष्प लुभाय ॥१३८॥

॥ सीता को व्याहने के लिए भामण्डल का प्रयत्न ॥

भामण्डलको चन्द्रगती नृप, देकर के संतोष।
आकर निज महिलों में सोचे, सीता गुणकी कोष ॥१३९॥
कैसे होगा काम अहा ये, आपत रहै न मान।
भूचर आगे खेचर मांगे, जाय इसी में सान ॥१४०॥
अन्न देय मांगे यदि कन्या, नट जावे भूपाल।
मानभंग हो मेरा इससे, करना काम सँभाल ॥१४१॥
चपलगती इक विद्याधर था, उसे बुलाया पास।
विकट काम यह करके आओ, मिले लाख साबास ॥१४२॥
अश्व रूप धर चला तुरत से, आया मथुरा मांय।
अजब अश्व लख भूप शाल में, बांधा प्रेम जगाय ॥१४३॥
भूप चित्त अनुसार चले यों, कई दिन दिये बिताय।
उस हयपे चढ इकदिन राजा, क्रिडा करने जाय ॥१४४॥
समय उचित लख जनक सहितसे, उडा अश्व आकाश।
विद्याधर के पास बिठाया, आदर दे हुल्लास ॥१४५॥
कह विद्याधर सुनो जनक नृप, दिया तुम्हें संताप।
छल कर मैं अगवाया तुमको, करो गुन्हा सब माफ ॥१४६॥
करिये वन्दन प्रणाम हमारा, भामण्डल मुज नंद।
उसको अपनी सीता कन्या, दीजे धर आनन्द ॥१४७॥
यह मांग सुन जनक उचारे, दशरथ नन्दन खास।
दे चुका मैं सिया उन्हि को, जग में बात प्रकाश ॥१४८॥
उन जैसा नहि आज जगत में, रूपवन्त बलवान।
उन्हें छोडकर देता परको, समझो वह नादान ॥१४९॥

किन पापी उर दाह प्रकट की, जाऊं किन दिशि भाग।
मुख में ग्रास देय फिर लीना, मेरा बड़ा अभाग ॥ ६५ ॥
राज्य देय खोसा अरु गज तज, दिया गधा बेकाज।
राणी से दासी मुज कीनी, निधि में फूटा जहाज ॥ ६६ ॥
किसे उपालभ देऊं म्हैंतो, कीना पाप अघोर।
भव पूरब में किसी जीव का, लिया रत्न में चोर ॥ ६७ ॥
झूठा आल दिया मुनि जन पे, थापण दई दबाय।
छाना गर्भ गलाया अति ही, जलचर जीव हणाय ॥ ६८ ॥
जमीं कद काचा फल तोडे, तोडी तरु पर डाल।
सरद्रह शोषण फोडे इण्डा, मार्या विध २ व्याल ॥ ६९ ॥
जीवाणी जतना नहीं कीनी, डाले पशु मृग पास।
जूं लींखा खटमल को मारे, त्रश विकलेन्द्रि विणास ॥ ७० ॥
भांचो दीनी रंक भीख में, घाणी पीले बीज।
खान खोद दावानल दीने, अधिक पापमें रीझ ॥ ७१ ॥
गांव जलाए कैई मैंने, परकी वृत्ति विनाश।
विष देकर मारे अति प्राणी, या ढाया आवास ॥ ७२ ॥
रागद्वेप वश किया कटोका, या मारे लघु बाल।
वरस मात से दूध छुडाया, किया विछोहा लाल ॥ ७३ ॥
भक्षण करते पशु मुख बांधा, दिया शीत अरु ताप।
मुनि निंदा कर पाप कमाया, या में लिया सराप ॥ ७४ ॥

विलख वदन रोती राणी यों, आए चल कर भूप।
अरे प्रिया ! कुछ धीरज धारो, अस्थिर जगत स्वरूप ॥ ७५ ॥
जनक राय ने चहुँ दिशि भटको, भेजे खबर मगाय।
दीर्घ काल अति होने पर भी, पुत्र खबर नहिं पाय ॥ ७६ ॥
किया कर्म छूटे नहिं कब भी, करते क्रोड उपाय।
राणी मन सतोष विचारे, सच्चा धर्म सहाय ॥ ७७ ॥
राजा सोचे भान्याकुर सम, यह पुत्री गुणवंत।
यों सु विचारी मोत्सव पुरमें, किया भूप अत्यंत ॥ ७८ ॥

॥ सीताका—जन्मोत्सव ॥

दान मान पुनि गीत गान हो, भोजन भांति विधान।
किया दशोटन मिले स्वजन जन, सबको दे सन्मान ॥ ७९ ॥
विरह विथामें तनुजा देखत, शीतलता उर आय।
इस कारण से निज पुत्रिका, सीता नाम दिलाय ॥ ८० ॥
परिजन देते शुभ महुरत में, "सीता" नाम सवाय।
गिरि कदर में चपकबेली, ज्यों बढती सुख माय ॥ ८१ ॥
पचधाय से प्रतिपल पलती, हाथो हाथ रहाय।
सुखसे जावें सदा काल यों, कभी रही नहिं काय ॥ ८२ ।
बाल कालमें सीखी वाला, चौसठ कलाभिराम।
देह लाज गुण बडी चातुरी, बढा पांचवां काम ॥ ८३ ॥

सिया कुमारी रूप रंग में, सोहै रूपारेल।
भर जोवन आई शशि बदनी, चाले गजगति गेल ॥ ८४ ॥
श्याम भंवर कच वेणी लंबी, वदन सु चन्द्र ललाम।
नैन कमल वत कीर नाशिका, नकवेशर अभिराम ॥ ८५ ॥
काना कुण्डल झगमग करते, दाडिम कलिवत दंत।
वचन सुधारस सम सुखदाई, कटि हरि सम दीपत ॥ ८६ ॥
कुच घण युग है कलश विशाला, योवन जल लहराय।
कदली सम है जांघ मनोहर, रोम रहित मृदु भाय ॥ ८७ ॥
पग उन्नत कच्छप सम माता, राता नख पग हाथ।
सुर नरादि मन मोहे देखत, अमरी सम साक्षात ॥ ८८ ॥
शील रूप से शोभा बढती, नहीं बढाई रूप।
शीलवंत की वाचा फलती, यह है अटल स्वरूप ॥ ८९ ॥
सीता तोले को नर श्रोले, बोले सीतल वाच।
रूप विशाला सब विधी बाला, पाप निकंदन राच ॥ ९० ॥
ऐसी सीता गुणकी गोता, सजके सब सिनगार।
पिता जनक पग वंदन आवे, पद प्रणमें धर प्यार ॥ ९१ ॥
कमलाक्षी यौवन वय बाला, देवी जनक नरेश।
हृदय विचारे मुज कन्याका, होगा को प्राणेश ॥ ९२ ॥
हृदय चक्षु से देखे नृप गण, रुचिकर हुआ न एक।
प्रतिदिन चिंता लगी रायको, सोचे धार विवेक ॥ ९३ ॥

किन पापी उर दाह प्रकट की, जाऊं किन दिशि भाग।
मुख में ग्रास देय फिर लीना, मेरा बड़ा अभाग ॥ ६५ ॥
राज्य देय खोसा धन गज तज, दिया गधा बेकाज।
राणी से दासी मुज कीनी, निधि में फूटा जहाज ॥ ६६ ॥
किसे उपालंभ देऊं म्हेंतो, कीना पाप अघोर।
भव पूरव में किसी जीव का, लिया रत्न में चोर ॥ ६७ ॥
झूठा श्राल दिया मुनि जन पे, थापण दई दबाय।
छाना गर्भ गलाया अति ही, जलचर जीव हणाय ॥ ६८ ॥
जमीं कंद काचा फल तोडे, तोडी तरु वर डाल।
सरद्रह शोषण फोडे इण्डा, मार्या विध २ व्याल ॥ ६९ ॥
जीवाणी जतना नहीं कीनी, डाले पशु मृग पास।
जूं लींखा खटमल को मारे, त्रश विकलेन्द्रि विणास ॥ ७० ॥
भांची दीनी रंक भीख में, घाणी पीले बीज।
खान खोद दावानल दीने, अधिक पापमें रींझ ॥ ७१ ॥
गांव जलाए कैई मैंने, परकी वृत्ति विनाश।
विष देकर मारे अति प्राणी, या छाया श्रावास ॥ ७२ ॥
रागद्वेष वश किया कटीका, या मारे लघु बाल।
वत्स मात से दूध छुडाया, किया विछोहा लाल ॥ ७३ ॥
भक्षण करते पशु मुख बांधा, दिया शीत अरु ताप।
मुनि निंदा कर पाप कमाया, या में लिया सराप ॥ ७४ ॥

विलख वदन रोती राणी यों, आए चल कर भूप।
अरे प्रिया ? कुछ धीरज धारो, अस्थिर जगत स्वरूप ॥ ७५ ॥
जनक राय ने चहुँ दिशि भटको, भेजे खबर मगाय।
दीर्घ काल अति होने पर भी, पुत्र खबर नहिं पाय ॥ ७६ ॥
किया कर्म छूटे नहिं कब भी, करते क्रोड उपाय।
राणी मन संतोष विचारे, सच्चा धर्म सहाय ॥ ७७ ॥
राजा सोचे धान्यांकुर सम, यह पुत्री गुणवंत।
यों सु विचारी मोत्सव पुरमें, किया भूप अत्यंत ॥ ७८ ॥

॥ सीताका—जन्मोत्सव ॥

दान मान पुनि गीत गान हो, भोजन भांति विधान।
किया दशोटन मिले स्वजन जन, सबको दे सन्मान ॥ ७९ ॥
विरह वियामें तनुजा देखत, शीतलता उर आय।
इस कारण से निज पुत्रिका, सीता नाम दिलाय ॥ ८० ॥
परिजन देते शुभ महुरत में, "सीता" नाम सवाय।
गिरि कंदर में चंपकबेली, ज्यों बढती सुख माय ॥ ८१ ॥
पंचधाय से प्रतिपल पलती, हाथो हाथ रहाय।
सुखसे जावें सदा काल यों, कभी रही नहिं काय ॥ ८२ ॥
बाल कालमें सीखी बाला, चौसठ कलाभिराम।
देह लाज गुण बढी चातुरी, बढा पाचवां काम ॥ ८३ ॥

सिया कुमारी रूप रंग में, लाट [illegible]।
भर जोवन आई शशि वदनी, चाले गजगति गेल ॥ ८४ ॥
श्याम भँवर कच वेणी लंबी, वदन सु चन्द्र ललाम।
नैन कमल वत कीर नाशिका, नकवेशर अभिराम ॥ ८५ ॥
काना कुण्डल झगमग करते, दाडिम कलिवत दंत।
वचन सुधारस सब सुखदाई, कटि हरि सम दीपंत ॥ ८६ ॥
कुच घण युग है कलश विशाला, योवन जल लहराय।
कदली सम है जांघ मनोहर, रोम रहित मृदु भाय ॥ ८७ ॥
पग उन्नत कच्छप सम माता, राता नख पग हाथ।
सुर नरादि मन मोहे देखत, अमरी सम साचात ॥ ८८ ॥
शील रूप से शोभा वदती, नहीं बढाई रूप।
शीलवंत की वाचा फलती, यह है अटल स्वरूप ॥ ८९ ॥
सीता तोले को नर ओले, बोले सीतल वाच।
रूप विशाला सब विधी बाला, पाप निकंदन राच ॥ ९० ॥
ऐसी सीता गुणकी गीता, सजके सब सिनगार।
पिता जनक पग वंदन आवे, पद प्रणमें धर प्यार ॥ ९१ ॥
कमलाची यौवन वय बाला, देवी जनक नरेश।
हृदय विचारे मुज कन्याका, होगा को प्राणेश ॥ ९२ ॥
हृदय चक्षु से देखे नृप गण, रुचिकर हुआ न एक।
प्रतिदिन चिंता लगी रायको, सोचे धार विवेक ॥ ९३ ॥

किन पापी उर दाह प्रकट की, जाऊं किन दिशि भाग।
मुख में ग्रास देय फिर लीना, मेरा बड़ा अभाग ॥ ६५ ॥
राज्य देय खोसा अरु गज तज, दिया गधा बेकाज।
राणी से दासी मुज कीनी, निधि में फूटा जहाज ॥ ६६ ॥
किसे उपालभ देऊं म्हेंतो, कीना पाप अघोर।
भव पूरव में किसी जीव का, लिया रत्न में चोर ॥ ६७ ॥
भूठा आल दिया मुनि जन पे, थापण दई दबाय।
छाना गर्भ गलाया अति ही, जलचर जीव हणाय ॥ ६८ ॥
जमीं कंद काचा फल तोडे, तोडी तरु वर डाल।
सरद्रह शोषण, फोडे इण्डा, मार्या विध २ व्याल ॥ ६९ ॥
जीवाणी जतना नहीं कीनी, डाले पशु मृग पास।
जूं लींखा खटमल को मारे, त्रय विकलेन्द्रि विणास ॥ ७० ॥
भांची, दीनी रक भीख में, घाणी पीले बीज।
खान खोद दावानल दीने, अधिक पापमें रींझ ॥ ७१ ॥
गांव जलाए कैई मैंने, परकी वृत्ति विनाश।
विष देकर मारे अति प्राणी, या छाया आवास ॥ ७२ ॥
रागद्वेष वश किया कटीका, या मारे लघु बाल।
वत्स मात से दूध छुडाया, किया विछोहा लाल ॥ ७३ ॥
भक्षण करते पशु मुख बांधा, दिया शीत अरु ताप।
मुनि निंदा कर पाप कमाया, या में लिया सराप ॥ ७४ ॥

बिलख बदल रोती राणी यों, आए चल कर भूप।
अरे प्रिया? कुछ धीरज धारो, अस्थिर जगत स्वरूप ॥ ७५ ॥
जनक राय ने चहुँ दिशि भटको, भेजे खबर मगाय।
दीर्घ काल अति होने पर भी, पुत्र खबर नहिं पाय ॥ ७६ ॥
किया कर्म छूटे नहिं कब भी, करते क्रोड उपाय।
राणी मन सतोष विचारे, सच्चा धर्म सहाय ॥ ७७ ॥
राजा सोचे धान्याकुर सम, यह पुत्री गुणवंत।
यों सु विचारी मोत्सव पुरमें, किया भूप अत्यंत ॥ ७८ ॥

॥ सीताका—जन्मोत्सव ॥

दान मान पुनि गीत गान हो, भोजन भांति विधान।
किया दशोटन मिले स्वजन जन, सबको दे सन्मान ॥ ७९ ॥
विरह विथामें तनुजा देखत, शीतलता उर आय।
इस कारण से निज पुत्रिका, सीता नाम दिलाय ॥ ८० ॥
परिजन देते शुभ महुरत में, "सीता" नाम सवाय।
गिरि कंदर में चपकबेली, ज्यों बढतो सुख माय ॥ ८१ ॥
पञ्चधाय से प्रतिपल पलती, हाथो हाथ रहाय।
सुखसे जावें सदा काल यों, कमी रही नहिं काय ॥ ८२ ॥
बाल कालमें सीखी बाला, चौसठ कलाभिराम।
देह लाज गुण बढी चातुरी, बढा पांचवां काम ॥ ८३ ॥

सिया कुमारी रूप रंग में, सोहै रूपारेल।
भर जोबन आई शशि बदनी, चाले गजगति गेल ॥ ८४ ॥
श्याम भंवर कच वेणी लंबी, वदन सु चन्द्र ललाम।
नैन कमल वत कीर नाशिका, नकवेशर अभिराम ॥ ८५ ॥
काना कुण्डल झगमग करते, दाडिम कलिवत दंत।
वचन सुधारस सब सुखदाई, कटि हरि सम दीपत ॥ ८६ ॥
कुच घण युग है कलश विशाला, योवन जल लहराय।
कदली सम है जांघ मनोहर, रोम रहित मृदु भाय ॥ ८७ ॥
पग उन्नत कच्छप सम माता, राता नख पग हाथ।
सुर नरादि मन मोहे देखत, अमरी सम साक्षात ॥ ८८ ॥
शील रूप से शोभा बढती, नहीं बढाई रूप।
शीलवंत की वाचा फलती, यह है अटल स्वरूप ॥ ८९ ॥
सीता तोले को नर ओले, बोले सीतल वाच।
रूप विशाला सब विधी बाला, पाप निकंदन राच ॥ ९० ॥
ऐसी सीता गुणकी गीता, सजके सब सिनगार।
पिता जनक पग बंदन आवे, पद प्रणमें धर प्यार ॥ ९१ ॥
कमलाक्षी यौवन वय बाला, देवी जनक नरेश।
हृदय विचारे मुज कन्याका, होगा कौ प्राणेश ॥ ९२ ॥
हृदय चक्षु से देखे नृप गण, रुचिकर हुआ न एक।
प्रतिदिन चिंता लगी रायको, सोचे धार विवेक ॥ ९३ ॥

मन्त्री सोचे कार्य सिद्ध अब, मन मानी हो बात।
आया नृप ढिग भेटन लेके, बैठा जोडी हाथ ॥१५२४॥
आदर दे मन्त्री को अति नृप, पाए परम प्रमोद।
इतने राज दुलारी आई, बैठी नृपके गोद ॥१५२५।
मृगनयनी छवि रूप अतुल है, सोचे नृप इसवार।
इन जैसा यदि वर मिल जावे, शोभित जोडि अपार।१५२६॥
नृप पूछे मंत्री से कैसे; आये हो तुम चाल।
मन्त्रि कहै तुम दर्शन के हित, आया यहाँ दयाल ॥१५२७॥
तुम फिरते हो विविध देशमें, कोई अचरज खास।
देखा होतो हमें सुनादो, है सुनने की आश ॥१५२८॥
मुज कन्या के लायक जैसा, देखा नर किस ठोर।
मन्त्री बोला। देखे मैंने, जगमें पुरुष किरोर ॥१५२९॥
सब से बढके राजपुत्र इक, देखा सब जग छान।
रक्तदत्त है नाम उसीका, गुणी अधिक विद्वान ॥१५३०॥
सब जग वल्लभ सुन्दर काया, शूरवीर बलवान।
एक जीभ से उसके गुणका, होता नहीं बयान ॥१५३१॥
चित्र खोल बतलाया सब को, कन्या तव छवि देख।
निश्चय मनमें करती मेरे, इस भव ये पति ऐक ॥१५३२॥
ध्यान हुआ ज्यों चन्द्र चकोरी, आई महिल मझार।
खान पान निद्रा सब भूली, ध्यान एक भरतार ॥१५३३॥

दासी पूछे क्या। चित चिन्ता, कहो ? प्रकट दरसाय।
रक्तदत्त पति धारा मैंने, कन्या कहा सुनाय ॥१५३४॥
पति मिल जावे छह महिनों में, तो समझो सब क्षेम।
नहिंतो फिरमें अनल शरणलूं, लिया सु निश्चय नेम ॥१५३५॥
दासी जाय कहा राणी से, कन्या का सब हाल।
भूप कहै कन्या मन भाया, उससे हमीं खुशाल ॥१५३६॥
नृप ने मंत्री से जब पूछा, कैसे होय सम्बन्ध।
मन्त्रि कहैं सबसे कर सकता, इसमें क्या छल छंद ॥१५३७॥
गणिक बुला पूछे शुभ मुहरत, कहैं गणिक दरसाय।
दिन सत्तरवें श्रेष्ठ लग्न है, कहै सोंच समझाय ॥१५३८॥
फिर आवेगा वर्ष बाद दो लग्न सुनो भूपाल।
श्रेष्ठ कार्य में देर न करना, कर लेना तत्काल ॥१५३९॥
मन्त्री चल आया निज पुरमें बीती कह दी बात।
चित्र देख कन्या का सब के, हर्षित होते गात ॥१५४०॥
दोनों घर में मंगल बाजा, गाते गीत रसाल।
भावी क्या ? अब होने वाला, अजब कर्म का ख्याल ॥१५४१
वह पंडित रावण से कहता, जो होता यह व्याह।
दिन सत्तरवां यह टल जावे, मृत्यू तुम टल जाय ॥१५४२॥
रावण कहता इसमें क्या है ? महुरत वह टल जाय।
सांच झूठ का निर्णय अब ही, तुम सन्मुख हो जाय ॥१५४३॥

बन्ध कोटरी धरें तुम्हीं को, यदि जाओ कुछ भाग।
कुलफ लगा के धरे कोटडी, हो न निकलने लाग।१५४४॥
कहा असुर को चन्द्रस्थलपुर, जाओ इस ही वार।
लाओ ? वह बाला जा करके, शीघ्र होय हुशियार।१५४५॥
रंग मच पे बैठी बाला, गही असुर उस वार।
हा हा कार मचा महलों में, रोवें नृप-पटनार ॥१५४६॥
रावण को दीनी वह कन्या, हो भय भीत अपार।
नाम मगला देवी उसको, बुलवाई निज द्वार ॥१५४७॥
खूब यत्नसे सतरह दिन तक, रखो गुप्त किस ठौर।
दिन अठारवें आकर देना, होते ही जब भोर ॥१५४८॥
मुख पेटी में धरी मजूषा, देवी ने उस काल।
गगा सागर का संगम था, आई तटपे चाल ॥१५४९॥
गरुड नाग को, बुला दशानन, रक्तदत्त को खास।
जाओ ? जलदी डंक देय के, फिर आओ मुज पास ॥१५५०॥
रावण आज्ञा होते जाता, सोया जहाँ कँवार।
डक जोर से विषमय दीना, फिर आया निज द्वार ॥१५५१॥
दशकधर को चान न नाई, पाया मन आनंद।
भावि भाव क्या होने वाला, व्याह क्रिया में धन्द ॥१५५२॥
राजकवर के तन विष फैला, खबर हुई सब ठोर।
राजा राणी आरत करते, दुःख हुआ मन घोर ॥१५५३॥

मंत्री सोचे कार्य सिद्ध अथ, मन मानी हो बात।
आया नृप ढिग भेटन लेके, बैठा जोड़ी हाथ ॥१५२४॥
आदर दे मंत्री को अति नृप, पाए परम प्रमोद।
इतने राज दुलारी आई, बैठी नृपके गोद ॥१५२५॥
मृगनयनी छवि रूप अतुल है, सोचे नृप उसवार।
इस जैसा यदि वर मिल जावे, शोभित जोड़ि अपार ॥१५२६॥
नृप पूछे मंत्री से कैसे, आये हो तुम चाल।
मंत्रि कहे तुम दर्शन के हित, आया यहाँ दयाल ॥१५२७॥
तुम फिरते हो विविध देशमें, कोई अचरज खास।
देखा हो तो हमें सुनादो, है सुनने की आश ॥१५२८॥
मुझ कन्या के लायक जैसा, देखा नर किस ठोर।
मंत्री बोला देखे मैंने, जगमें पुरुष किशोर ॥१५२९॥
सब से बढ़के राजपुत्र इक, देखा सब जग छान।
रत्नदत्त है नाम उसीका, गुणी अधिक विद्वान ॥१५३०॥
सब जग वल्लभ सुन्दर काया, शूरवीर बलवान।
एक जीभ से उसके गुणका, होता नहीं बयान ॥१५३१॥
चित्र खोल बतलाया सब को, कन्या तब छवि देख।
निश्चय मनमें करती मेरे, इस भव ये पति एक ॥१५३२॥
ध्यान हुआ ज्यों चन्द्र चकोरी, आई महिल मझार।
खान पान निद्रा सब भूली, ध्यान एक भरतार ॥१५३३॥

दासी पूछे क्या! चित चिंता, कहो? प्रकट दरसाय।
रत्नदत्त पति धारा मैंने, कन्या कहा सुनाय ॥१५३४॥
पति मिल जावे छह महिनों में, तो समझो सब क्षेम।
नहिं तो फिरमें अनल शरणलूं, लिया सु निश्चय नेम ॥१५३५॥
दासी जाय कहा राणी से, कन्या का सब हाल।
भूप कहे कन्या मन भाया, उसमें हमीं खु शाल ॥१५३६॥
नृप ने मंत्री से जब पूछा, कैसे होय सम्बन्ध।
मंत्रि कहें सबसें कर सकता, इसमें क्या छल छंद ॥१५३७॥
गणिक बुला पूछे शुभ मुहूरत, कहैं गणिक दरसाय।
दिन सत्तरवें श्रेष्ठ लग्न है, कहूँ सोच समझाय ॥१५३८॥
फिर आवेगा वर्ष बाद वो, लग्न सुनो भूपाल।
श्रेष्ठ कार्य में देर न करना, कर लेना तत्काल ॥१५३९॥
मंत्री चल आया निज पुरमें, बीती कह दी बात।
चित्र देख कन्या का सब के, हर्षित होते गात ॥१५४०॥
दोनों घर में मंगल बाजा, गाते गीत रसाल।
भावी क्या? अब होने वाला, अजब कर्म का ख्याल ॥१५४१
वह पंडित रावण से कहता, जो होता यह ब्याह।
दिन सत्तरवां यह टल जावे, मृत्यू तुम दल जाय ॥१५४२॥
रावण कहता इसमें क्या है? मुहुरत वह टल जाय।
सांच झूठ का निर्णय अब ही, तुम सन्मुख हो जाय ॥१५४३॥

बन्ध कोटरी धरें तुम्हीं को, यदि जाओ कब भाग।
कुलफ लगा के धरे कोटड़ी, हो न निकलने लाग। १५४४॥
कहा असुर को चन्द्रस्थलपुर, जाओ इस ही बार।
लाओ? वह बाला जा करके, शीघ्र होय हुशियार ॥१५४५॥
रंग मंच पे बैठी बाला, गही असुर उस बार।
हा हा कार मचा महलों में, रोवें नृप-पटनार ॥१५४६॥
रावण को दीनी वह कन्या, हो भय भीत अपार।
नाम मंगला देवी उसको, बुलवाई निज द्वार ॥१५४७॥
खूब यत्नसे सत्तरह दिन तक, रखो गुप्त किस ठौर।
दिन अठारवें आकर देना, होते ही जब भोर ॥१५४८॥
मुख पेटी में धरी मंजूषा, देवी ने उस काल।
गंगा सागर का संगम था, आई तटपे चाल ॥१५४९॥
गरुड़ नाग को, बुला दशानन, रत्नदत्त को खास।
जाओ? जलदी डंक देय के, फिर आओ मुझ पास ॥१५५०॥
रावण आज्ञा होते जाता, सोया जहाँ कँवार।
डंक जोर से विषमय दीना, फिर आया निज द्वार ॥१५५१॥
दशकंधर को बात न भाई, पाया मन आनंद।
भावि भाव क्या होने वाला, ब्याह क्रिया में बन्द ॥१५५२॥
राजकंवर के तन विष फैला, खबर हुई सब ठोर।
राजा राणी आरत करते, दुःख हुआ मन घोर ॥१५५३॥

युद्ध परस्पर पिता पुत्रके, होता तभी महान।
आखिर जीत पिताने पाई, हारा निज संतान ॥१४७१॥
पिता हृदयसे लिया पुत्रको, करके अधिका प्यार।
दिया राजपद दोनों पुरका, आप हुए अनगार ॥१४७२॥

॥ दशरथ नृपकी उत्पत्ति ॥

सूर्यवंश में ऐसे केई, भूप हुए बलवान।
अंतिम जप तप करके धारण, किया आतम कल्यान ॥१४७३॥
बाद हुए हैं भूप अनेकों, कहूं नाम दरसाय।
सिंहरथके सुत हुआ ब्रह्मरथ, अनुक्रमसे पट पाय ॥१४७४॥
हिमरथ शतरथ उदयपृथू नृप, वारीरथ भूपाल।
इन्दुरथ आदित्यरथ अरु, मांधाता महिपाल ॥१४७५॥
वीरसेन प्रतिमन्यु वीर नृप, पद्मबंधु रविमन्य।
वसततिलक रु कुबेरदत नृप, कुथु शरभ अरिहन्य ॥१४७६॥
द्विरदसिंह सुदर्श हिरण्यक, पुजस्थल वरराय।
काकुस्थल के पाट विराजे, महिपति श्री रघुराय ॥१४७७॥
ऐसे होते सूर्यवंशमें, महिपति वीर अनेक।
गए स्वर्ग कई शिव पद पाए, रखी धर्मकी टेक ॥१४७८॥
शरणार्थीको शरण दियाहै, अनुकंपा दिलधार।
हुए भूप अनरण्य नामके, दीन दुखी हितकार ॥१४७९॥

जिनके राणी प्रथ्वीदेवी, तिनके दोय कुंवार।
अनंतरथ अरु दशरथ नामक, वंश वधारण हार ॥१४८०॥
दीक्षा ले अनरण्य भूपती, दे दशरथ को राज।
अनंतरथ भी साथ पिताके, सारे आतम काज ॥१४८१॥
एक मासके थे दशरथजी, तबसे किए नृपाल।
प्रतिदिन चन्द्र कला ज्यों बढ़ते, सुखमें जावें काल ॥१४८२॥
कला बहोत्तर सीखे दशरथ, विनय विवेक विचार।
शूर वीर दाता अरु भोक्ता फैला यश ससार ॥१४८३॥
दिन २ प्रतपे तेज चन्द्रिका, निशमें चन्द्र अनूप।
सब राजा में राजा बढ़कर, दीपे दशरथ भूप ॥१४८४॥
दर्भस्थल पुरका था स्वामी, भूप सुकोशल नाम।
राणी अमृतप्रभा जिनोंके, यौवन वय अभिराम ॥१४८५॥
जिनके कन्या अपराजित थी, परणे दशरथ भूप।
नगर कमलसकुल का राजा, सुबंधूतिलक अनूप ॥१४८६॥
मित्रादेवी राणी जिनके सुता सुमित्रा खास।
दशरथ नृपकी हो पटराणी, पूर्व पुण्य सुविकाश ॥१४८७॥
कन्या थी सुप्रभानामकी, पिता अनिदित नाम।
परणे दशरथराय उसीको, नूतन सुख अभिराम ॥१४८८॥
ऐसे दशरथ सुखसे अपना बिता रहे हैं काल।
अब रावणकी कथा सुनाते, कहै "सूर्य" सब हाल ॥१४८९॥

॥ रावण की मृत्यु का खुलासा ॥

अर्ध भरत का स्वामी रावण, बैठा सभा मझार।
सहस्र भूप जस सेवा करते, विद्या प्रबल हजार ॥१४९०॥
वैभव अपना देख करे मन, रावण अति अभिमान।
सुरनर पांव पड़े मुझ आकर, देते सब सन्मान ॥१४९१॥
इन्द्रसभा सी सभा सुशोभित, अधिक पुण्यका पुंज।
हय गय रथ भट पूर्ण खजाना, ललित महिल वर कुंज ॥१४९२॥
भ्रात विभीषण कुम्भकरणसे, मेघ इन्द्र से पूत।
शूरवीर पोत्रादिक सारे, बटे बटे रजपूत ॥१४९३॥
हजार चोपन सारी नारी, मन्दोदरि पटनार।
मेरा जैसा विरला होगा, तेजस्वी ससार ॥१४९४॥
तीन खण्ड में आण हमारी, हुआ न होगा भूप।
गर्व धरी रावण यों बोला, मेरी सभा अनूप ॥१४९५॥
सुनके सारी सभा स्वारथी, बोली एक जबान।
आप तुल्य नहिं जग में कोई, देखा सब जग छान ॥१४९६॥
नैमित्तक बुलवाके रावण, अपना पूछा हाल।
गर्व करो मत ज्ञानी भाषे, सिरपे काल कराल ॥१४९७॥
मेरा जैसा कौन ? जगत में, शूरवीर सरदार।
खोल तुम्हारा पोथा देखो, कहो सत्य सुविचार ॥१४९८॥

दन्त कुदाला मांस चोटियां, खाती कर आस्वाद।
हाथ थाप दी छाती ऊपर, शम दम धारी साध ॥१४१३॥
चूर चूर तनकी हो हड्डी, खून बहा ज्यों नाल।
प्यासी पीने लगी खून को, अजब कर्म की चाल ॥१४१४॥
खंड खण्ड कर दिया अंग का, मुनि चढ़ते परिणाम।
चपक श्रेणि पर चढ़ मुनीश्वर शुक्ल ध्यान विश्राम ॥१४१५॥
पाए केवलज्ञान कर्म चय, लिया साध्य शिवराज।
खडे खडे गुरु लखे दूरसे, पापिनि किया अकाज ॥१४१६॥
ध्यान लगाकर लखी सिंहनी हती सुकोशल मात।
मोही मरके हुई वाघनी, कीनी सुत की घात ॥१४१७॥
मुनि बोले ? वाघन हत्यारी, निज सुत मारा आज।
क्या गति होगी पापिन तेरी, सिंहनी सुना आवाज ॥१४१८॥
दंत पक्ति मुनि की लख सोचे, सुन्दर वदन निहार।
ऐसी कहीं पे देखी मैंने, मन में हुआ विचार ॥१४१९।
खाती खाती ध्यान लगाती, जातीसुमरण पाय।
हा ? हा ? सुतमें मारा मेरा, घोर किया अन्याय। १४२०॥
जिस कारणमें पढ़ी महिलसे, उसको मारा आज।
नरतन पाके भ्रष्ट किया मे, तजके कुलकी लाज ॥१४२१॥
निंदा करती निज पापोंकी, देती लख धिक्कार।
मुनितट आती मन शरमाती, नमती वारम्वार ॥१४२२॥

जावज्जीव संथारा ठाया, त्यागे पाप अठार।
स्वर्ग आठवें गई वाघनी, धर्म शुद्ध मन धार ॥१४२३।
कीर्तिध्वज मुनि कर्म काटके, हुए सिद्ध भगवान।
कहें 'सूर्यमुनि" मुनिगुण गावें, पावें शिवकल्याण ॥१४२४॥

॥ नघूकका युद्धमें जाना और राणीपे संदेह लाना ॥

राणि सुकोशल राजाकी थी, चित्रमाल तस नाम।
हिरण्यगर्भ नामक तस सुत है, गुण यौवन अभिराम ॥१४२५॥
जिनके राणी मृगावती थी, नघूक नामा नन्द।
हिरण्यगर्भ नृप एक समयमें, बैठे महिला वृन्द ॥ ४२६॥
शिरपे देखा श्वेत केश तब, सोचा ज्ञान लगाय।
निज सुतको अधिकार देयके, सजम लिया सवाय ॥१४२७॥
नघूक नृपकी राणी सिंहका, सकल कलाकी खान।
रूपरग वर धर्म परायण, पति हित देती प्राण ॥१४२८॥
उत्तर दिशिमें नघूक नृप तब, वैरी जीतन जाय।
इतने दक्षिण दिशिसे वैरी, पुरको घेरा आय ॥१४२९॥
राणी सोचे विना भूपके, क्या ? करना इसवार।
दुश्मन शिरपे आन खड़ा है, युद्ध गए भरतार ॥१४३०॥
सब दास्योंको राणी कहती, करलो नरका वेश।
वस्तर सजलो शस्त्र शस्त्र से, तजदो सारी ऐश ॥१४३१॥

सुनके सबकी बड़ी वीरता, चपल गति हय धार।
सजी सैन्य चढ़ चला युद्धमें, हिम्मत धार अपार ॥१४३२॥
जोश जोर [illegible] पड़ी शत्रु, जैसे श्रावण मेघ।
लड़ी वीरता से अति राणी, गई छाती में तेग ॥१४३३॥
प्रबल युद्धमें दोनों राजा गए, शत्रु सब भाग।
राणी [illegible] आपके पुर जन धरते राग ॥१४३४॥
गए जीत तब आए नृपजी सुन राणीका हाल।
व्यभिचारिणि यह नार [illegible], करती काम छिनाल ॥१४३५॥
क्यों जाता ये नार [illegible], [illegible] पास।
राण रहने गई [illegible], [illegible] हो हम नाश ॥१४३६॥
राणीसे मन खेंच लिया नृप, दिया योजना बन्द।
इच्छा करते [illegible], यही कर्मका द्वंद ॥१४३७॥
समझ गई राणी भी मनमें, होना जो पति [illegible]।
सोचे प्रतिपल [illegible] उतरे, [illegible] शिरका आल ॥१४३८॥
एक समय नृपके तन उपना, दाघज्वर का रोग।
करें चिकित्सा वैद्य अनेको, मिला विविध संयोग ॥१४३९॥
लगी न औषध रोग बढ़ा अति, तब नृप घबराय।
निज शिर दोष मिटाने कारण, राणी अवसर पाय ॥१४४०॥
रचके सम्मुख प्रगट सुनाया, [illegible] मन वच काय।
अन्य पुरुष चाहा नहि [illegible], पाला शील सवाय ॥१४४१॥

युद्ध परस्पर पिता पुत्रके, होता तभी महान ।
आखिर जीत पिताने पाई, हारा निज संतान ॥१४७१॥
पिता हृदयसे लिया पुत्रको, करके अधिका प्यार ।
दिया राजपद दोनों पुरका, आप हुए अनगार ॥१४७२॥

॥ दशरथ नृपकी उत्पत्ति ॥

सूर्यवंश में ऐसे केई, भूप हुए बलवान ।
अंतिम जप तप करके धारण, किया आतम कल्यान ॥ ४७३॥
बाद हुए हैं भूप अनेकों, कहूं नाम दरसाय ।
सिंहरथके सुत हुआ ब्रह्मरथ, अनुकमसे पट पाय ॥१४७४॥
हिमरथ शतरथ उदयपृथू नृप, वारीरथ भूपाल ।
इन्दुरथ आदित्यरथ अरु, मांधाता महिपाल ॥१४७५॥
वीरसेन प्रतिमन्यु वीर नृप, पद्मबंधु रविमन्य ।
वसततिलक र. कुवेरदत्त नृप, कुंथु शरभ अरिहन्य ॥१४७६॥
द्विरदसिंह सुदर्श हिरण्यक, पुंजस्थल वरराय ।
काकुस्थल के पाट विराजे, महिपति श्री रघुराय ॥१४७७॥
ऐसे होते सूर्यवंशमें, महिपति वीर अनेक ।
गए स्वर्ग कई शिव पद पाए, रखी धर्मकी टेक ॥१४७८॥
शरणार्थीको शरण दियाहै, अनुकपा दिलधार ।
हुए भूप अनरण्य नामके, दीन दुखी हितकार ॥१४७९॥

जिनके राणी प्रथ्वीदेवी, तिनके दोय कँवार ।
अनंतरथ अरु दशरथ नामक, वंश वधारण हार ॥१४८०॥
दीक्षा ले अनरण्य भूपती, दे दशरथ को राज ।
अनंतरथ भी साथ पिताके, सारे आतम काज ॥१४८१॥
एक मासके ये दशरथजी, तबसे किए नृपाल ।
प्रतिदिन चन्द्र कला ज्यों बढते, सुखसें जावें काल ॥१४८२॥
कला बहोत्तर सीखे दशरथ, विनय विवेक विचार ।
शूर वीर दाता अरु भोक्ता फैला यश संसार ॥१४८३॥
दिन २ प्रतपे तेज चन्द्रिका, निशमें चन्द्र अनूप ।
सब राजा में राजा बढकर, दीपे दशरथ भूप ॥१४८४॥
दर्भस्थल पुरका था स्वामी, भूप सुकोशल नाम ।
राणी अमृतप्रभा जिनोके, यौवन वय अभिराम ॥१४८५॥
जिनके कन्या अपराजित थी, परणे दशरथ भूप ।
नगर कमलसकुल का राजा, सुबंधूतिलक अनूप ॥१४८६॥
मित्रादेवी राणी जिनके सुता सुमित्रा खास ।
दशरथ नृपकी हो पटराणी, पूर्व पुण्य सुविकाश ॥१४८७॥
कन्या थी सुप्रभानामकी, पिता अनिंदित नाम ।
परणे दशरथराय उसीको, नूतन सुख अभिराम ॥१४८८॥
ऐसे दशरथ सुखसे अपना बिता रहे हैं काल ।
अब रावणकी कथा सुनाते, कहैं "सूर्य,, सब हाल ॥१४८९॥

॥ रावण की मृत्यु का खुलासा ॥

अर्ध भरत का स्वामी रावण, बैठा सभा मझार ।
सहस भूप जस सेवा करते, विद्या प्रबल हजार ॥१४९०॥
वैभव अपना देख करे मन, रावण अति अभिमान ।
सुरनर पांव पडे मुज आकर, देते सब सन्मान ॥१४९१॥
इन्द्रसभा सी सभा सुशोभित, अधिक पुण्यका पुंज ।
हय गय रथ भट पूर्ण खजाना, ललित महिल वर कुंज॥१४९२॥
भ्रात विभीषण कुम्भकरणसे, मेघ इन्द्र से पूत ।
शूरवीर पौत्रादिक सारे, बडे बड़े रजपूत ॥१४९३॥
हजार चौपन सारी नारी, मन्दोदरि पटनार ।
मेरा जैसा विरला होगा, तेजस्वी संसार ॥१४९४॥
तीन खण्ड में आण हमारी, हुआ न होगा भूप ।
गर्व धरी रावण यों बोला, मेरी सभा अनूप ॥१४९५॥
सुनके सारी सभा स्वारथी, बोली एक जबान ।
आप तुल्य नहिं जग में कोई, देखा सब जग छान ॥१४९६॥
नैमित्तक बुलवाके रावण, अपना पूछा हाल ।
गर्व करो मत ज्ञानी भाषे, सिरपे काल कराल ॥१४९७॥
मेरा जैसा कौन ? जगत में, शूरवीर सरदार ।
खोल तुम्हारा पोथा देखो, कहो सत्य सुविचार ॥१४९८॥

युद्ध परस्पर पिता पुत्रके, होता तभी महान ।
आखिर जीत पिताने पाई, हारा निज संतान ॥१४७१॥
पिता हृदयसे लिया पुत्रको, करके अधिका प्यार ।
दिया राजपद दोनों पुरका, आप हुए अनगार ॥१४७२॥

॥ दशरथ नृपकी उत्पत्ति ॥

सूर्यवंश में ऐसे केई, भूप हुए बलवान ।
अंतिम जप तप करके धारण, किया आतम कल्यान ॥१४७३॥
बाद हुए हैं भूप अनेकों, कछु नाम दरसाय ।
सिंहरथके सुत हुआ ब्रह्मरथ, अनुक्रमसे पट पाय ॥१४७४॥
छिमरथ शतरथ उदयपृथू नृप, वारीरथ भूपाल ।
इन्दुरथ आदित्यरथ अरु, मांधाता महिपाल ॥१४७५॥
वीरसेन प्रतिमन्यु वीर नृप, पद्मबंधु रविमन्य ।
पसलतिलक र कुबेरदत नृप, कुंथु शरभ अरिहन्य ॥१४७६॥
द्विरदसिंह सुदर्श हिरण्यक, पुजस्थल वरराय ।
ककुस्थल के पाट विराजे, महिपति श्री रघुराय ॥१४७७॥
ऐसे होते सूर्यवंशमें, महिपति वीर अनेक ।
गए स्वर्ग कई शिव पद पाए, रखी धर्मकी टेक ॥१४७८॥
शरणार्थीको शरण दियाई, अनुकंपा दिलधार ।
हुए भूप अनरण्य नामके, दीन दुखी हितकार ॥१४७९॥

जिनके राणी प्रथ्वीदेवी, तिनके दोय कँवार ।
अनंतरथ अरु दशरथ नामक, वश बधारण हार ॥१४८०॥
दीक्षा ले अनरण्य भूपती, दे दशरथ को राज ।
अनंतरथ भी साथ पिताके, सारे आतम काज ॥१४८१॥
एक मासके ये दशरथजी, तबसे किए नृपाल ।
प्रतिदिन चन्द्र कला ज्यों बढते, सुखसें जावें काल ॥१४८२॥
कला बहोत्तर सीखे दशरथ, विनय विवेक विचार ।
शूर वीर दाता अरु भोक्ता फैला यश संसार ॥१४८३॥
दिन २ प्रतपें तेज चन्द्रिका, निशसें चन्द्र अनूप ।
सब राजा में राजा बढकर, दीपे दशरथ भूप ॥१४८४॥
दर्भस्थल पुरका था स्वामी, भूप सुकोशल नाम ।
राणी अमृतप्रभा जिनोके, यौवन वय अभिराम ॥१४८५॥
जिनके कन्या अपराजित थी, परणे दशरथ भूप ।
नगर कमलसकुल का राजा, सुबंधूतिलक अनूप ॥१४८६॥
मित्रादेवी राणी जिनके सुता सुमित्रा खास ।
दशरथ नृपकी हो पटराणी, पूर्व पुण्य सुविकाश ॥१४८७॥
कन्या थी सुप्रभानामकी, पिता अनिंदित नाम ।
परणे दशरथराय उसीको, नूतन सुख अभिराम ॥१४८८॥
ऐसे दशरथ सुखसे अपना बिता रहे हैं काल ।
अब रावणकी कथा सुनाते, कहैं "सूर्य" सब हाल ॥१४८९॥

॥ रावण की मृत्यु का खुलासा ॥

अर्ध भरत का स्वामी रावण, बैठा सभा मझार ।
सहस भूप जस सेवा करते, विद्या प्रबल हजार ॥१४९०॥
वैभव अपना देख करे मन, रावण अति अभिमान ।
सुरनर पांव पडे मुज आकर, देते सब सन्मान ॥१४९१॥
इन्द्रसभा सी सभा सुशोभित, अधिक पुण्यका पुंज ।
हय गय रथ भट पूर्ण खजाना, ललित महिल वर कुंज ॥१४९२॥
भ्रात विभीषण कुम्भकरणसे, मेघ इन्द्र से पूत ।
शूरवीर पौत्रादिक सारे, बडे बडे रजपूत ॥१४९३॥
हजार चौपन सारी नारी, मन्दोदरि पटनार ।
मेरा जैसा विरला होगा, तेजस्वी संसार ॥१४९४॥
तीन खन्ड में आण हमारी, हुआ न होगा भूप ।
गर्व धरी रावण यों बोला, मेरी सभा अनूप ॥१४९५॥
सुनके सारी सभा स्वारथी, बोली एक जबान ।
आप तुल्य नहिं जग मे कोई, देखा सब जग छान ॥१४९६॥
नैमित्तक बुलवाके रावण, अपना पूछा हाल ।
गर्व करो मत ज्ञानी भाषे, सिरपे काल कराल ॥१४९७॥
मेरा जैसा कौन ? जगत में, शूरवीर सरदार ।
खोल तुम्हारा पोथा देखो, कहो सत्य सुविचार ॥१४९८॥

मन्त्री सोचे कार्य सिद्ध अब, मन मानी हो बात ।
आया नृप ढिग भेटन लेके, बैठा जोड़ी हाथ ॥१५२४॥
आदर दे मन्त्री को अति नृप, पाए परम प्रमोद ।
इतने राज दुलारी आई, बैठी नृपके गोद ॥१५२५।
मृगनयनी छवि रूप अतुल है, सोचे नृप उसवार ।
इन जैसा यदि वर मिल जावे, शोभित जोड़ि अपार १५२६॥
नृप पूछे मन्त्री से कैसे, आये हो तुम चाल ।
मन्त्रि कहै तुम दर्शन के हित, आया यहाँ दयाल ॥१५२७॥
तुम फिरते हो विविध देशमें, कोई अचरज खास ।
देखा होतो हमें सुनादो, है सुनने की आश ॥१५२८॥
मुझ कन्या के लायक जैसा, देखा नर किस ठौर ।
मन्त्री बोला देखे मैंने, जगमें पुरुष किरोर ॥१५२९॥
सब से बढके राजपुत्र इक, देखा सब जग छान ।
रत्नदत्त है नाम उसीका, गुणी अधिक विद्वान ॥१५३०॥
सब जग वल्लभ सुन्दर काया, शूरवीर बलवान ।
एक जीभ से उसके गुणका, होता नहीं बयान ॥१५३१॥
चित्र खोल बतलाया सब को, कन्या तब छवि देख ।
निश्चय मनमें करती मेरे, इस भव ये पति ऐक ॥१५३२॥
ध्यान हुआ ज्यों चन्द्र चकोरी, आई महिल मझार ।
खान पान निद्रा सब भूली, ध्यान एक भरतार ॥१५३३॥

दासी पूछे क्या! चित चिन्ता, कहो ? प्रकट दरसाय ।
रत्नवृत्त पति धारा मैंने, कन्या कहा सुनाय ॥१५३४॥
पति मिल जावे छह महिनों में, तो समझो सब क्षेम ।
नहिंतो फिरमें अनल शरणालूं, लिया सु निश्चय नेम ॥१५३५॥
दासी जाय कहा राणी से, कन्या का सब हाल ।
भूप कहै कन्या मन भाया, उससे हमी खुशाल ॥१५३६॥
नृप ने मन्त्री से जब पूछा, कैसे होय सम्बन्ध ।
मन्त्रि कहैं सबमें कर सकता, इसमें क्या छल छंद ॥१५३७॥
गणिक बुला पूछे शुभ मुहूरत, कहैं गणिक दरसाय ।
दिन सत्तरवें श्रेष्ठ लग्न है, कहूं सोच समझाय ॥१५३८॥
फिर आवेगा वर्ष बाद दो लग्न सुनो भूपाल ।
श्रेष्ठ कार्य में देर न करना, कर लेना तत्काल ॥१५३९॥
मंत्री चल आया निज पुरमें, बीती कह दी बात ।
चित्र देख कन्या का सब के, हर्षित होते गात ॥१५४०॥
दोनों घर मे मंगल बाजा, गाते गीत रसाल ।
भावी क्या ? अब होने वाला, अजब कर्म का ख्याल ॥१५४१
वह पंडित रावण से कहता, जो होता यह ब्याह ।
दिन सत्तरवां यह टल जावे, मृत्यु तुम टल जाय ॥१५४२॥
रावण कहता इसमें क्या है ? मुहुरत वह टल जाय ।
सांच झूठ का निर्णय अब ही, तुम सन्मुख हो जाय ॥१५४३॥

बन्ध कोटरी धरें तुम्हीं को, यदि जाओ कब भाग ।
कुलफ लगा के धरे कोटड़ी, हो न निकलने लाग । १५४४॥
कहा असुर को चन्द्रस्थलपुर, जाओ इस ही बार ।
लाओ ? वह बाला जा करके, शीघ्र होय हुशियार ॥१५४५॥
रंग मच पे बैठी बाला, गही असुर उस बार ।
हा हा कार मचा महलों में, रोवें नृप-पटनार ॥१५४६॥
रावण को दीनी वह कन्या, हो भय भीत अपार ।
नाम मगला देवी उसको, बुलवाई निज द्वार ॥१५४७॥
खूब यत्नसे सतरह दिन तक, रखो गुप्त किस ठौर ।
दिन अठारवें आकर देना, होते ही जब भोर ॥१५४८॥
मुख पेटी में धरी मञ्जूषा, देवी ने उस काल ।
गंगा सागर का सगम था, आई तटपे चाल ॥१५४९॥
गरुड नाग को, बुला दशानन, रत्नदत्त को खास ।
जाओ ? जलदी डक देय के, फिर आओ मुज पास ॥१५५०॥
रावण आज्ञा होते जाता, सोया जहां कँवार ।
डक जोर से विषमय दीना, फिर आया निज द्वार ॥१५५१॥
दशमधर को बात न जाई, पाया मन आनन्द ।
भावि भाव क्या होने वाला, ब्याह क्रिया में बन्द ॥१५५२॥
राजकवर के तन विष फैला, खबर हुई सब ठौर ।
राजा राणी आरत करते, दुःख हुआ मन घोर ॥१५५३॥

मन्त्री सोचे कार्य सिद्ध अब, मन मानी हो बात।
आया नृप ढिग भेटन लेके, बैठा जोडी हाथ ॥१५२४॥
आदर दे मन्त्री को अति नृप, पाए परम प्रमोद।
इतने राज दुलारी आई, बैठी नृपके गोद ॥१५२५॥
मृगनयनी छवि रूप अतुल है, सोचे नृप वसवार।
इन जैसा यदि वर मिल जावे, शोभित जोडि अपार ॥१५२६॥
नृप पूछे मन्त्री से कैसे, आये हो तुम चाल।
मन्त्रि कहे तुम दर्शन के हित, आया यहाँ दयाल ॥१५२७॥
तुम फिरते हो विविध देशमें, कोई अचरज खास।
देखा होतो हमें सुनादो, है सुनने की आश ॥१५२८॥
मुज कन्या के लायक जैसा, देखा नर किस ठौर।
मन्त्री बोला देखे मैंने, जगमें पुरुष किशोर ॥१५२९॥
सब से बढके राजपुत्र इक, देखा सब जग छान।
रत्नदत्त है नाम उसीका, गुणी अधिक विद्वान ॥१५३०॥
सब जग वल्लभ सुन्दर काया, शूरवीर बलवान।
एक जीभ से उसके गुणका, होता नहीं बयान ॥१५३१॥
चित्र खोल बतलाया सब को, कन्या तब छवि देख।
निश्चय मनमें करती मेरे, इस भव ये पति ऐक ॥१५३२॥
ध्यान हुआ ज्यों चन्द्र चकोरी, आई महिल मझार।
खान पान निद्रा सब भूली, ध्यान एक भरतार ॥१५३३॥

दासी पूछे क्या ! चित चिंता, कहो ? प्रकट दरसाय।
रत्नदत्त पति धारा मैंने, कन्या कहा सुनाय ॥१५३४॥
पति मिल जावे छह महिनों में, तो समझो सब क्षेम।
नहिंतो फिरमें अनल शरणलूं, लिया सु निश्चय नेम ॥१५३५॥
दासी जाय कहा राणी से, कन्या का सब हाल।
भूप कहे कन्या सुन भाया, उसमें हमीं खुशाल ॥१५३६॥
नृप ने मन्त्री से जब पूछा, कैसे होय सम्बन्ध।
मन्त्रि कहें सबमें कर सकता, इसमें क्या छल छंद ॥१५३७॥
गणिक बुला पूछे शुभ मुहुरत, कहें गणिक दरसाय।
दिन सत्तरवें श्रेष्ठ लग्न है, कहूँ सांच समझाय ॥१५३८॥
फिर आवेगा वर्ष बाद वो लग्न सुनो भूपाल।
श्रेष्ठ कार्य में देर न करना, कर लेना तत्काल ॥१५३९॥
मंत्री चल आया निज पुरमें बीती कह दी बात।
चित्र देख कन्या का सब के, हर्षित होते गात ॥१५४०॥
दोनों घर में मंगल बाजा, गाते गीत रसाल।
भावी क्या ? अब होने वाला, अजब कर्म का ख्याल ॥१५४१
वह पंडित रावण से कहता, जो होता यह ब्याह।
दिन सत्तरवां यह टल जावे, मृत्यू तुम टल जाय ॥१५४२॥
रावण कहता इसमें क्या है ? मुहुरत वह टल जाय।
सांच झूठ का निर्णय अब ही, तुम सन्मुख हो जाय ॥१५४३॥

बन्ध कोठरी धरें तुम्हीं को, यदि जाओ कब भाग।
कुलफ लगा के धरे कोठडी, हो न निकलने लाग। १५४४॥
कहा असुर को चन्द्रस्थलपुर, जाओ इस ही बार।
लाओ ? वह बाला जा करके, शीघ्र होय हुशियार ॥१५४५॥
रंग मंच पे बैठी बाला, गही असुर उस बार।
हा हा कार मचा महलों में, रोवें नृप-परनार ॥१५४६॥
रावण को दीनी वह कन्या, हो भय भीत अपार।
नाम मंगला देवी उसको, बुलवाई निज द्वार ॥१५४७॥
खूब यत्नसे सतरह दिन तक, रखो गुप्त किस ठौर।
दिन अठारवें आकर देना, होते ही जब भौर ॥१५४८॥
सुख पेटी में धरी मंजूषा, देवी ने उस काल।
गंगा सागर का संगम था, आई तटपे चाल ॥१५४९॥
गरुड नाग को, बुला दशानन, रत्नदत्त को खास।
जाओ ? जलदी डंक देय के, फिर आओ मुज पास ॥१५५०॥
रावण आज्ञा होते जाता, सोया जहाँ कॅवार।
डंक जोर से विषमय दीना, फिर आया निज द्वार ॥१५५१॥
दशकंधर को बात न नाई, पाया मन आनंद।
भावि भाव क्या होने वाला, व्याह किया में बन्द ॥१५५२॥
राजकंवर के तन विष फैला, खबर हुई सब ठोर।
राजा राणी आरत करते, दु:ख हुआ मन घोर ॥१५५३॥

मन्त्री सोचे कार्य सिद्ध अब, मन मानी हो बात।
आया नृप झिग भेटन लेके, बैठा जोडी हाथ ॥१५२४॥
आदर दे मन्त्री को अति नृप, पाए परम प्रमोद।
इतने राज दुलारी आई, बैठी नृपके गोद ॥१५२५॥
मृगनयनी छवि रूप अतुल है, सोचे नृप इसवार।
इन जैसा यदि वर मिल जावे, शोभित जोडि अपार ॥१५२६॥
नृप पूछे मन्त्री से कैसे, आये हो तुम चाल।
मंत्रि कहै तुम दर्शन के हित, आया यहाँ दयाल ॥१५२७॥
तुम फिरते हो विविध देशमें, कोई अचरज खास।
देखा होतो हमें सुनादो, है सुनने की आश ॥१५२८॥
मुज कन्या के लायक जैसा, देखा नर किस ठोर।
मन्त्री बोला देखे मैंने, जगमें पुरुष किरोर ॥१५२९॥
सब से बढके राजपुत्र इक, देखा सब जग छान।
रत्नदत्त है नाम उसीका, गुणी अधिक विद्वान ॥१५३०॥
सब जग वल्लभ सुन्दर काया, शूरवीर, बलवान।
एक जीभ से उसके, गुणका, होता नहीं बयान ॥१५३१॥
चित्र खोल बतलाया सब को, कन्या तब छवि देख।
निश्चय मनमें करती मेरे, इस भव ये पति ऐक ॥१५३२॥
ध्यान हुआ ज्यों चन्द्र चकोरी, आई महिल मझार।
खान पान निद्रा सब भूली, ध्यान एक भरतार ॥१५३३॥

दासी पूछे क्या! चित चिन्ता, कहो ? प्रकट दरसाय।
रत्नदत्त पति, धारा मैंने, कन्या कहा सुनाय ॥१५३४॥
पति मिल जावे छह महिनों में, तो समझो सब क्षेम।
नहिंतो फिरमें अनल शरणलूं, लिया सु निश्चय नेम ॥१५३५॥
दासी जाय कहा राणी से, कन्या का सब हाल।
भूप कहै कन्या मन भाया, उसमें हमी खुशाल ॥१५३६॥
नृप ने मन्त्री से जब पूछा, कैसे होय सम्बन्ध।
मन्त्रि कहैं सबमैं कर सकता, इसमें क्या छल छंद ॥१५३७॥
गणिक बुला पूछे शुभ मुहुरत, कहैं गणिक दरसाय।
दिन सत्तरवें श्रेष्ठ लग्न है, कहूँ सांच समझाय ॥१५३८॥
फिर आवेगा वर्ष बाद वो, लग्न सुनो भूपाल।
श्रेष्ठ कार्य में देर न करना, कर लेना तत्काल ॥१५३९॥
मन्त्री चल आया निज पुरमें बीती कह दी बात।
चित्र देख कन्या का सब के, हर्षित होते गात ॥१५४०॥
दोनों घर में मंगल बाजा, गाते गीत रसाल।
भावी क्या ? अब होने वाला, अजब कर्म का ख्याल ॥१५४१
वह पंडित रावण से कहता, जो होता यह ब्याह।
दिन सत्तरवां यह टल जावे, मृत्यू तुम दल जाय ॥१५४२॥
रावण कहता इसमें क्या है ? मुहुरत वह टल जाय।
सांच झूठ का निर्णय अब ही, तुम सन्मुख हो जाय ॥१५४३॥

बन्ध कोटरी धरें तुम्हीं को, यदि जाओ कब भाग।
कुलप लगा के धरे कोटडी, हो न निकलने लाग ॥१५४४॥
कहा श्वसुर को चन्द्रस्थलपुर, जाओ इस ही बार।
लाओ ? वह बाला जा करके, शीघ्र होय हुशियार ॥१५४५॥
रत्न मंच पे बैठी बाला, गही श्वसुर उस बार।
हा हा कार मचा महलों में, रोवें नृप-परनार ॥१५४६॥
रावण को दीनी वह कन्या, हो भय भीत अपार।
नाम मंगला देवी उसको, बुलवाई निज द्वार ॥१५४७॥
खूब यत्नसे सतरह दिन तक, रखो गुप्त किस ठौर।
दिन अठारवें आकर देना, होते ही जब भोर ॥१५४८॥
मुख पेटी में धरी मंजूषा, देवी ने उस काल।
गंगा सागर का संगम था, आई तटपे चाल ॥१५४९॥
गरुड नाग को, बुला दशानन, रत्नदत्त को खास।
जाओ ? जलदी डक देय के, फिर आओ मुज पास ॥१५५०॥
रावण आज्ञा होते जाता, सोया जहाँ कँवार।
डंक जोर से विषमय दीना, फिर आया निज द्वार ॥१५५१॥
दशकंधर को बात सुनाई, पाया मन आनन्द।
भावि भाव क्या होने वाला, ब्याह किया में बन्द ॥१५५२॥
राजकंवर के तन विष फैला, खबर हुई सब ठोर।
राजा राणी आरत करते, दुःख हुआ मन घोर ॥१५५३॥

मिट्टी की मूरत बनवाई दशरथ सी साक्षात।
रूप रंग मे फर्क पडे नहीं, करे असल को मात ॥१५८३॥
सिंहासन पर उसे बिठाई होती नहीं पिछान।
इसी तरह से जनक भूप का, समझो सर्व बयान ॥१५८४॥
उधर विभीषण निशि काली मे, आए बैठ विमान।
तुरत खड्ग से सिर को छेदा, पाए हर्ष महान ॥१५८५॥
उधर सुभट कोलाहल करते, पकड़ो दुष्ट महान।
हना हमारा स्वामी इसने, कपटी शठ नादान ॥१५८६॥
खड़े व्योम मे आय विभीषण, देखे पुर का हाल।
रुदन करे राणी सब सेना, हाहाकार कराल ॥१५८७॥
किया सभी सस्कार भूप का, मिल के लोक हजार।
देख विभीषण दृश्य सर्व ही, पाए हर्ष अपार ॥१५८८॥
ऐसे राय जनक को मारा, छल का भेद न पाय।
पास दशानन आकर सारा, बीतक कहा सुनाय ॥१५८९॥
दिल का खटका मेट दिया मे, दशकंधर हर्षाय।
करे प्रशसा सभी सभाजन, शूर वीर कहलाय ॥१५९०॥
मत्री के बिन इस छल बल का, भेद अन्य नहिं पाय।
बचा दिया दोनों राजाको, मंत्री बुद्ध सवाय ॥१५९१॥
जनक और दशरथ नृप वन मे, फिरते स्वेच्छाचार।
मिले अचानक फिरते फिरते, दोनो बीच उजार ॥१५९२॥

बडे प्रेमसे मिले परस्पर, करते बात विचार।
फिरे साथमे दोनों प्रतिदिन, वन फलका आहार ॥१५९३॥

॥ कैकयीसे दशरथका व्याह और वरका देना ॥

तभी नगर कौतुकमंगलमें, शुभमति था भूपाल।
पृथ्वीराणी तास सुता थी, कैकयी रूप रसाल ॥१५९४॥
द्रोणमेघ कैकयीका भाई, बडा वीर बलवान।
रचा स्वयंवर मंडप भारी, आडंबर महान ॥१५९५॥
बडे २ राजा आये हैं, उस मंडपके माय।
खबर मिली दोनों राजाको, रहें सोच मनलाय ॥१५९६॥
सूर्यवंशि हम भूप कहाते, सबमें मान सवाय।
आज फिरे हम जंगल-जंगल, रहते वनफल खाय ॥१५९७॥
दोनों राजा चलके आए, जहां बना मंडाण।
पास नहीं था सैन्य बलादिक, पर था पुण्य महान ॥१५९८॥
देखा आसन खाली उसपे, बैठ गए महिपाल।
बडे २ अभिमानी सारे, बैठे थे भूपाल ॥१५९९॥
सीस मुकुट कानोंमें कुंडल, उर मोत्योंके हार।
दिलमें था अरमान यही की, नहिं हमसे संसार ॥१६००॥
वरमालाका समय हुआ जब, बैठे भूप हजार।
भाग्य परीक्षा होती सबकी, कौन पुण्य अवतार ॥१६० ॥

उडुगणमे शशि जैसे सोभे, दशरथ पुण्य प्रकाश।
संग सहेली राज दुलारी, आती तब हुल्लास ॥१६०२॥
ऋद्धि और प्रतिबिम्ब दिखाती, सब नृपकी धामात।
सजा हुआ शृंगार सभी विधि, जैसे शचि साक्षात ॥१६०३॥
धन्यवाद का पात्र वही है, जिसकी हो यह नार।
किसपे डाले यह वर माला, देखें दृष्टि पसार ॥१६०४॥
दशरथ नृपको देख खुशीहो, कैकयीने वरमाल।
तुरत गलेमें डाली नृपके, देखे सब भूपाल ॥१६०५॥
हरिवाहन यह दृश्य देखके, करता क्रोध कराल।
वरमाला पहनाने निश्चय, भूलगई यह बाल ॥१६०६॥
बडे २ तो बैठ रहे हैं, रांक गले वरमाल।
क्या गिनती तुज रंक भिखारी? कहाँ अन्य भूपाल ॥१६०७॥
दे दे यह वरमाला जोतूं, चाहें निजकी क्षेम।
नहि देगातो छीन लेंयेंगे, कहँ तुझे घर प्रेम ॥१६०८॥
भाग अभी दे दे वरमाला, या तो ले तलवार।
सीस उडादूं तेरा अबतो, मिटे सभी तकरार ॥१६०९॥
होगा कौन सहायक तेरा, समझ जरा नादान।
सुना बैन यों दशरथ तबतो, चढ़ा हृदय में पान ॥१६१०॥
वीर सिंह सम लगे गर्जने, हाथों में तलवार।
गीदड भभकी क्या ? बतलाता, दूम दबा चुप धार ॥१६११॥

मिट्टी की मूरत बनवाई दशरथ सी साक्षात।
रूप रंग में फर्क पड़े नहीं, करे असल को मात ॥१५८३॥
सिंहासन पर उसे बिठाई होती नहीं पिछान।
इसी तरह से जनक भूप का, समझो सर्व बयान ॥१५८४॥
उधर विभीषण निशि काली में, आए बैठ विमान।
तुरत खड्ग से सिर को छेदा, पाए हर्ष महान ॥१५८५॥
उधर सुभट कोलाहल करते, पकड़ो दुष्ट महान।
हना हमारा स्वामी इसने, कपटी शठ नादान ॥१५८६॥
खड़े व्योम में आय विभीषण, देखे पुर का हाल।
रुदन करे राणी सब सेना, हाहाकार कराल ॥१५८७॥
किया सभी संस्कार भूप का, मिल के लोक हजार।
देख विभीषण दृश्य सर्व ही, पाए हर्ष अपार ॥१५८८॥
ऐसे राय जनक को मारा, छल का भेद न पाय।
पास दशानन आकर सारा, बीतक कहा सुनाय ॥१५८९॥
दिल का खटका मेट दिया मैं, दशकंधर हर्षाय।
करे प्रशंसा सभी सभाजन, शूर वीर कहलाय ॥१५९०॥
मन्त्री के बिन इस छल बल का, भेद अन्य नहिं पाय।
बचा दिया दोनों राजाको, मन्त्री बुद्ध सवाय ॥१५९१॥
जनक और दशरथ नृप वन में, फिरते स्वेच्छाचार।
मिले अचानक फिरते फिरते, दोनो बीच उजार ॥१५९२॥
बढे प्रेमसे मिले परस्पर, करते बात विचार।
फिरे साथमें दोनों प्रतिदिन, वन फलका आहार ॥१५९३॥

॥ कैकयीसे दशरथका व्याह और वरका देना ॥

तभी नगर कौतुकमंगलमें, शुभमति था भूपाल।
पृथ्वीराणी तास सुता थी, कैकयी रूप रसाल ॥१५९४॥
द्रोणमेघ कैकयीका भाई, बढा वीर बलवान।
रचा स्वयंवर मंडप भारी, आडंबर महान ॥१५९५॥
बडे २ राजा आये हैं, उस मंडपके माय।
खबर मिली दोनों राजाको, रहैं सोच मनलाय ॥१५९६॥
सूर्यवंशि हम भूप कहावे, सबमें मान सवाय।
आज फिरे हम जंगल-जंगल, रहते वनफल खाय ॥१५९७॥
दोनों राजा चलके आए, जहाँ बना मंडाण।
पास नहीं था सैन्य बलादिक, पर था पुण्य महान ॥१५९८॥
देखा आसन खाली उसपे, बैठ गए महिपाल।
बडे २ अभिमानी सारे, बैठे थे भूपाल ॥१५९९॥
सीस मुकुट कानोंमें कुंडल, उर मोत्योंके हार।
दिलमें था अरमान यही की, नहिं हमसे ससार ॥१६००॥
वरमालाका समय हुआ जब, बैठे भूप हजार।
भाग्य परीक्षा होती सबकी, कौन पुण्य अवतार ॥१६० ॥
उडुगणमें शशि जैसे सोभे, दशरथ पुण्य प्रकाश।
संग सहेली राज दुलारी, आती तब हुल्लास ॥१६०२॥
ऋद्धि और प्रतिबिम्ब दिखाती, सब नृपकी धामात।
सजा हुआ शृंगार सभी विधि, जैसे शचि साक्षात ॥१६०३॥
धन्यवाद का पात्र वही है, जिसकी हो यह नार।
किसपे डाले यह वर माला, देखें दृष्टि पसार ॥१६०४॥
दशरथ नृपको देख खुशीहो, कैकयीने वरमाल।
तुरत गलेमें डाली नृपके, देखे सब भूपाल ॥१६०५॥
हरिवाहन यह दृश्य देखके, करता क्रोध कराल।
वरमाला पहनाने निश्चय, भूलगई यह बाल ॥१६०६॥
बडे २ तो बैठ रहे हैं, रांक गले वरमाल।
क्या गिनती तुज रंक भिखारी? कहाँ अन्य भूपाल ॥१६०७॥
दे दे यह वरमाला जोतू, चाहें निजकी क्षेम।
नहि देगातो छीन लेंयगे, कहँ तुझे घर प्रेम ॥१६०८॥
भाग अभी दे दे वरमाला, या तो ले तलवार।
सीस उडादूँ तेरा अबतो, मिटे सभी तकरार ॥१६०९॥
होगा कौन सहायक तेरा, समझ जरा नादान।
सुना बैन यों दशरथ तबतो, चढा हृदय में पान ॥१६१०॥
वीर सिंह सम लगे गर्जने, हाथों में तलवार।
गीदड भभकी क्या? बतलाता, दूंम दखा सुप धार ॥१६११॥

मिट्टी की मूरत बनवाई दशरथ सी साक्षात।
रूप रंग में फर्क पड़े नहीं, करे असल को मात ॥१५८३॥
सिंहासन पर उसे बिठाई होती नहीं पिछान।
इसी तरह से जनक भूप का, समझो सर्व बयान ॥१५८४॥
उधर विभीषण निशि काली में, आए बैठ विमान।
तुरत खड्ग से सिर को छेदा, पाए हर्ष महान ॥१५८५॥
उधर सुभट कोलाहल करते, पकड़ो दुष्ट महान।
हना हमारा स्वामी इसने, कपटी शठ नादान ॥१५८६॥
खड़े व्योम में आय विभीषण, देखे पुर का हाल।
रुदन करे राणी सब सेना, हाहाकार कराल ॥१५८७॥
किया सभी संस्कार भूप का, मिल के लोक हजार।
देख विभीषण दृश्य सर्व ही, पाए हर्ष अपार ॥१५८८॥
ऐसे राय जनक को मारा, छल का भेद न पाय।
पास दशानन आकर सारा, बीतक कहा सुनाय ॥१५८९॥
दिल का खटका मेट दिया मे, दशकधर हर्षाय।
करे प्रशंसा सभी सभाजन, शूर वीर कहलाय ॥१५९०॥
मंत्री के बिन इस छल बल का, भेद अन्य नहिं पाय।
बचा दिया दोनों राजाको; मंत्री बुद्ध सवाय ॥१५९१॥
जनक और दशरथ नृप बन मे, फिरते स्वेच्छाचार।
मिले अचानक फिरते फिरते, दोनों बीच उजार ॥१५९२॥
बड़े प्रेमसे मिले परस्पर, करते बात विचार।
फिरे साथमें दोनों प्रतिदिन, वन फलका आहार ॥१५९३॥

॥ कैकयीसे दशरथका व्याह और वरका देना ॥

तभी नगर कौतुकमंगलमें, शुभमति था भूपाल।
पृथ्वीराणी तास सुता थी, कैकयी रूप रसाल ॥१५९४॥
द्रोणमेघ कैकयीका भाई, बड़ा वीर बलवान।
रचा स्वयंवर मंडप भारी, आडंबर महान ॥१५९५॥
बड़े २ राजा आये हैं, उस मंडपके माय।
खबर मिली दोनों राजाको, रहें सोच मनलाय ॥१५९६॥
सूर्यवंशि हम भूप कहाते, सबमें मान सवाय।
आज फिरे हम जंगल-जंगल, रहते वनफल खाय ॥१५९७॥
दोनों राजा चलके आए, जहां बना मंडाण।
पास नहीं था सैन्य बलादिक, पर था पुण्य महान ॥१५९८॥
देखा आसन खाली उसपे, बैठ गए महिपाल।
बड़े २ अभिमानी सारे, बैठे थे भूपाल ॥१५९९॥
सीस मुकुट कानोंमें कुंडल, उर मोत्योंके हार।
दिलमें था अरमान यही की, नहिं हमसे ससार ॥१६००॥
वरमालाका समय हुआ जब, बैठे भूप हजार।
भाग्य परीक्षा होती सबकी, कौन पुण्य अवतार ॥१६० ॥
उडुगणमें शशि जैसे सोभे, दशरथ पुण्य प्रकाश।
संग सहेली राज दुलारी, आती तब हुल्लास ॥१६०२॥
ऋद्धि और प्रतिबिम्ब दिखाती, सब नृपकी धामाव।
सजा हुआ शृंगार सभी विधि, जैसे शचि साक्षात ॥१६०३॥
धन्यवाद का पात्र वही है, जिसकी हो यह नार।
किसपे डाले यह वर माला, देखें दृष्टि पसार ॥१६०४॥
दशरथ नृपको देख खुशीहो, कैकयीने वरमाल।
तुरत गलेमें डाली नृपके, देखे सब भूपाल ॥१६०५॥
हरिवाहन यह दृश्य देखके, करता क्रोध कराल।
वरमाला पहनाने निश्चय, भूलगई यह बाल ॥१६०६॥
बड़े २ तो बैठ रहे हैं, रांक गले वरमाल।
क्या गिनती तुज रंक भिखारी? कहां अन्य भूपाल ॥१६०७॥
दे दे यह वरमाला जोतू, चाहे निजकी क्षेम।
नहिं देगा तो छीन लेंयेंगे, कहें तुझे धर प्रेम ॥१६०८॥
भाग अभी दे दे वरमाला, या तो ले तलवार।
सीस उड़ादूं तेरा अबतो, मिटे सभी तकरार ॥१६०९॥
होगा कौन सहायक तेरा, समझ जरा नादान।
सुना वैन यों दशरथ तबतो, चढ़ा हृदय में पान ॥१६१०॥
वीर सिंह सम लगे गर्जने, हाथों मे तलवार।
गीदड़ भभकी क्या ? बतलाता, दूम दबा चुप धार ॥१६११॥

अमर लोकसे चवकर आए, मात करे प्रतिपाल ।
श्याम वरण सुंदर तन जगमें, अरिजन कद कुद्दाल ॥ ६४ ॥

उत्तम जन पैदा होनेसे, सबका हो कल्याण ।
नारायण दे नाम दूसरा, लक्ष्मण नाम निधान ॥१६४२॥

क्रमसे वीर बढे ये दोनों, अधिक परस्पर प्यार ।
नीलाम्बर पीताम्बर पहने, दोनों राज कुमार ॥१६४३॥

कला बहोतर पद गुण होते, शूर वीर विद्वान ।
वासुदेव बलदेव कहाते, तीन खन्डके त्राण ॥१६४४॥

गिरिवर चूर करे लीलासे, लेते करमें धार ।
दशरथ अपने पुत्र देखके, पाए हर्ष अपार ॥१६४५॥

धनुष हाथमें लेकर ऊंचा, ताने तेज कमान ।
कहे सूर्य शकित हो मुजप, डालो नहीं विमान ॥१६४६॥

पुत्र और भुज बल लख अपना, धरा धैर्य भूपाल ।
पुरी अयोध्या वास बसाया, परिजनको सभाल ॥१६४७॥

कैकसी के सुत हुए भरतजी, पौरुष पुण्य निधान ।
हुए शत्रुघन मात प्रभाके, नन्दण अति बलवान ॥१६४८॥

सोभित जोडी राम लखनकी, होता नहीं बयान ।
भरत शत्रुघनकी भी जोडी, दीपे तेज महान ॥१६४९॥

नृप दशरथके नन्दण चारों, एक एक बलवान ।
चढे प्रतापी तेज भूपका, मानत है सब आन ॥१६५०॥

प्रथम भाग यों पूर्ण हुआ है, राम लखन विस्तार ।
भाग दूसरा रचके कीना, बाद प्रथम अधिकार ॥१६५१॥

भव्य श्रवण कर लाभ लहेगा, करता मूर्ख मजाक ।
करता सोही भोक्ता प्राणी, निजफल उदय विपाक ॥१६५२॥

महत पुरुषका जीवन सारा, परहित साधन काज ।
पूज्यनन्द आचार्य हमारे, सरल शुद्ध गुरुराज ॥१६५३॥

तास पसाय 'मुनिसूर्य', राम जश, गाया धरके मोद ।
चतुर्मास इन्दौर सहरमें, पाया परम प्रमोद ॥१६५४॥

पूज्य पिता श्री बच्छराजजी, साथ शिष्य तस चार ।
दोय हजारके एक सालमें, बरते जय जयकार ॥१६५५॥

तिथि ग्यारस आसोज शुक्ल पख, गाया रामचरित्र ।
पढे सुने सो मंगल पावे, होवे जन्म पवित्र ॥१६५६॥

पञ्च इष्ट नवकार मंत्रका, जपिये प्रतिपल जाप ।
ऋद्धि वृद्धि सुख सपति पावे, बढता अमित प्रताप ॥१६५७॥

॥ इति श्री सूर्यमुनि कृत रावण-दशरथ-राम-लक्ष्मण उत्पत्ति और वीर हनुमान अंजनादि वृत्तान्तली प्रथम भाग समाप्तम् ॥

॥ इति प्रथम भाग ॥

वेगवती मुनि गुण यों सुनके, मन में जली विशेष।
वह मिथ्यात्वी मोह उदय से, मुनि पे धरती द्वेष ॥ १० ॥
खुश हुआ नहिं मुनि गुण उसको, जलकर होती खाक।
भोजन मिष्ट मधुर रस तज के, विष्टा खावे काक ॥ ११ ॥
यह पाखंडी कपट रचाया, भोला जन भरमाय।
मूर्ख लोक मिल मूर्ख बखाने, समझ पड़े कुछ नाय ॥ १२ ॥
इनका अब अपमान करूं मैं, लोक देय धिक्कार।
देऊं ऐसा दोष साधु पे, हो अपमान अपार। १३ ॥
वेगवती यों हृदय सोच के, कहती घर घर बैन।
इस साधू को शील सहित ते, मैं देखा निज नैन ॥ १४ ॥
यह पाखण्डी कपटी सच्चा, नहिं साधु गुण लेश।
घर २ में यह पाप कथा को, प्रकटाई धर द्वेष ॥ १५ ॥
लोक सुनी अचरज मन धरते, लिया साधु का भेख।
तो नहिं कर्म विटम्बन छोड़े, अजब कर्मगति लेख ॥ १६ ॥
काम अकारज मुनि ने कीना, लुब्ध विषय रस होय।
तिरस्कार पुरजन मिल करते, धिक्कारे सब कोय ॥ १७ ॥
विलख वदन मुनि सुन यों होते, निज अपमानित बात ॥ [illegible] ॥
मेरे द्वारे जिन शासन को, दोष लगा साक्षात ॥ १८ ॥
जब तक दोष मिटे नहिं मेरा, जब तक भोजन त्याग।
क्षमा भाव है सब के ऊपर, नहीं द्वेष नहिं राग ॥ १९ ॥

या विधि अभिग्रह मुनिवर लीना, आया शासन देव।
सानिध कारण वेगवती तन, किया रोग ततखेव ॥२०॥
मुख सोजन तन तीव्र वेदना, बढ़ती व्यथा महान।
फल प्रत्यक्ष लख सोचे दीना, झूठा अभ्याख्यान ॥ २१ ॥
हा हा पापिन! कूटमती मैं, मुनि पै दीना आल।
मुनि समीप सो जाकर बोली, कीजे क्षमा दयाल ॥ २२ ॥
सुनिये लोको? इन मुनिवर पे, दीना झूठा आल।
यह तो सच्चे निर्दोषी है, सतगुरु परम कृपाल ॥ २३ ॥
फलप्रत्यक्ष मैं पाई देखो, यह मोटा मुनिराय।
पूजो अरचो इन मुनिवरको, संशय सभी मिटाय ॥२४॥
गरम किया सोना उज्जवल हो, अन्न सूप से होय।
जैसे यह मुनि शुद्ध हुए हैं, मुज दूषण से जोय ॥ २५ ॥
पूजे अरचे यह सहु सुन के, आया सब का मर्म।
जैन धर्म की महिमा बढ़गई, सच्चा इनका धर्म ॥ २६ ॥
वेगवती सुन धर्म सा धुमे, लेती संयम भार।
तहां से मर कर प्रथम स्वर्ग में, हो देवी अवतार ॥ २७ ॥
यों जानी मत देओ झूठा, पर पे अभ्याख्यान।
वेगवती दुख बहु भव पाई, समझो भव्य सुजान ॥ २८ ॥
वेगवती वहाँसे चवपाई, सीता नाम रसाल।
तिन का अब मैं कथन सुनाऊं, सुन गौतम गणपाल ॥२९॥

॥ श्रीसीता का जन्म, और भामण्डलका अपहरण ॥

इसी भरत मे मिथिला नगरी, हती स्वर्ग अनुसार।
ख्याति विश्वमें रम्य मनोहर, भरी रिद्ध भंडार। ३० ॥
जनक जनक समभूप वहां का, रूभी प्रजा हितकार।
राजकाज पाले सु नीति से, शचिपति सम अवतार। ३१ ॥
सीतल शशिधर तेज सूर्य सा, रतिपति सम है रूप।
करण भूप ज्यों दानी जगमें, सब विधि गुणका तूप ॥ ३२ ॥
नाम विदेही राणी अनुपम, पति भक्ती दातार।
जीवन प्राणाधार भूपके, रंभा रूप उदार ॥ ३३ ॥
इन्द्राणी सम राणी मजुल, चौसठ कला निधान।
वेगवती देवी वह चवकर, आयुस्थिति कर हान ॥ ३४ ॥
सात विदेही उर में जनमी, लिङ्ग त्रिया का धार।
अन्य जीव भी आया तबही, राणी उदर मझार ॥ ३५ ॥
शुभ समय राणी युग जनमें, पुत्री पुत्र उदार।
एक देव अपहरा पुत्रको, जन्म लिया उसवार ॥ ३६ ॥
गौतम पूछे महावीर से, पुत्र हरा क्यों? देव।
पूर्व वैर क्या था उस साथे, सभी कहो गुरुदेव ॥ ३७ ॥

वेगवती मुनि गुण यों सुनके, मन में जली विशेष।
वह मिथ्यात्वी मोह उदय से, मुनि पे धरती द्वेष ॥ १० ॥

सहन हुआ नहिं मुनि गुण उसको, जलकर होती खाक।
भोजन मिष्ट मधुर रस तज के, विष्टा खावे काक ॥ ११ ॥

यह पाखंडी कपट रचाया, भोला जन भरमाय।
मूर्ख लोक मिल मूर्ख बखाने, समझ पड़े कुछ नाय ॥ १२ ॥

इनका अब अपमान करूं मैं, लोक देय धिक्कार।
देऊं ऐसा दोष साधु पे, हो अपमान अपार। १३ ॥

वेगवती यों हृदय सोच के, कहती घर घर बैन।
इस साधु को शील खंडते, मैं देखा निज नैन॥ १४ ॥

यह पाखंडी कपटी सच्चा, नहिं साधु गुण लेय।
घर घर में यह पाप कथा को, प्रकटाई धर द्वेष ॥ १५ ॥

लोक सुनी अचरज मन धरते, लिया साधु का भेष।
तो नहिं कर्म विटम्बन छोड़े, अजब कर्मगति खेल ॥ १६ ॥

काम अकारन मुनि ने कीना, लुब्ध विषय रस होय।
तिरस्कार पुरजन मिल करते, धिक्कारे सब कोय। १७ ॥

विलख वदन मुनि सुन यों होते, निज अपमानित बात। ८ ॥
मेरे द्वारे जिन शासन को, दोष लगा साक्षात ॥ १८ ॥

जब तक दोष मिटे नहिं मेरा, तब तक भोजन त्याग।
क्षमा भाव है सब के ऊपर, नही द्वेष नहिं राग ॥ १९ ॥

या विधि अभिग्रह मुनिवर लीना, आया शासन देव।
सानिध कारण वेगवती तन, किया रोग ततखेव ॥२०॥

मुख सोजन तन तीव्र वेदना, धरती व्यथा महान।
फल प्रत्यक्ष लख सोचे दीना, झूठा अभ्याख्यान ॥ २१ ॥

हा हा पापिन ! कूटमती मे, मुनि दीना आल।
मुनि समीप सो जाकर बोली, कीजे क्षमा दयाल ॥ २२ ॥

सुनिये लोको ? इन मुनिवर पे, दीना झूठा आल।
यह तो सच्चे निर्दोषी हैं, सतगुरु परम दयाल ॥ २३ ॥

कुटमत्सर से पाई देखो, यह मोटा मुनिराय।
पूजो अरचो इन मुनिवरको, संशय सभी मिटाय ॥२४ ॥

गरम किया सोना उज्वल हो, कनक सूप से होय।
जैसे यह मुनि शुद्ध हुए हैं, मुझ दृष्टान्त से जोय ॥ २५ ॥

पूजे अरचे यह सहु सुन के, भाग्य मन का भर्म।
जैन धर्म की महिमा बढ़गई, सच्चा इनका धर्म ॥ २६ ॥

वेगवती सुन धन्य सा धुने, लेती संयम भार।
तहां से मर कर प्रथम स्वर्ग में, हो देवी अवतार ॥ २७ ॥

यों जानी मत देओ झूठा, पर पे अभ्याख्यान।
वेगवती दुख इम भव पाई, समझो भव्य सुजान ॥ २८ ॥

वेगवती वहांसे चवपाई, सीता नाम रसाल।
तिन का अब मैं कथन सुनाऊं, सुन गौतम गणपाल ॥२९॥

॥ श्रीसीता का जन्म, और भामण्डलका अपहरण ॥

इसी भरत मे मिथिला नगरी, इती स्वर्ग अनुसार।
रव्याति विश्वमें रम्य मनोहर, भरी रिद्ध भंडार । ३० ॥

जनक जनक समभूप वहां का, रूभी प्रजा हितकार।
राजकाज पाले सु नीति से, शचिपति सम अवतार । ३१ ॥

सीतल शशिधर तेज सूर्य सा, रतिपति सम है रूप।
करण भूप ज्यों दानी जगमें, सब विधि गुणका भूप ॥ ३२ ॥

नाम विदेही राणी अनुपम, पति भक्ती दातार।
शीयल आभूषण भूपरे, रंभा रूप उदार ॥ ३३ ॥

इन्द्राणी सम राणी मंजुल, चोसठ कला निधान।
वेगवती देवी वह चवकर, आयुस्थिति कर हान ॥ ३४ ॥

मात विदेही उर में जनमी, लिङ्ग त्रिया का धार।
अन्य जीव भी आया तबही, राणी उदर मझार ॥ ३५ ॥

शुभ समय राणी युग जनमें, पुत्री पुत्र उदार।
एक देव अपहरा पुत्रको, जन्म लिया उसवार ॥ ३६ ॥

गौतम पूछे महावीर से, पुत्र हरा क्यों ? देव।
पूर्व वैर बधा था उस साथे, सभी कहो गुरुदेव ॥ ३७ ॥

किन पापी उर दाह प्रकटकी, जाऊं किन दिशि भाग।
मुख में ग्रास देय फिर लीना, मेरा बड़ा अभाग ॥ ६५ ॥
राज्य देय खोसा अरु गज तज, दिया गधा बेकाज।
राणी से दासी मुज कीनी, निधि में फूटा जहाज ॥ ६६ ॥
किसे उपालभ देऊं म्हेंतो, कीना पाप अघोर।
भव पूरब में किसी जीव का, लिया रत्न में चोर ॥ ६७ ॥
झूठा आल दिया मुनि जन पे, थापण दई दबाय।
छाना गर्भ गलाया अति ही, जलचर जीव हणाय ॥ ६८ ॥
जमीं कंद काचा फल तोडे, तोडी तरु वर डाल।
सरद्रह शोषण फोडे इण्डा, मार्या विध २ व्याल ॥ ६९ ॥
जीवाणी जतना नहीं कीनी, डाले पशु मृग पास।
जूं लींखा खटमल को मारे, त्रश विकलेन्द्रि विणास ॥ ७० ॥
भांची दीनी रंक भीख में, घाणी पीले बीज।
खान खोद दावानल दीने, अधिक पापमें रींझ ॥ ७१ ॥
गांव जलाए कैई मैंने, परकी वृत्ति विनाश।
विष देकर मारे अति प्राणी, या ढाया आवास ॥ ७२ ॥
रागद्वेष वश किया कटीका, या मारे लघु बाल।
वत्स मात से दूध छुडाया, किया विछोहा लाल ॥ ७३ ॥
भक्षण करते पशु मुख बांधा, दिया शीत अरु ताप।
मुनि निंदा कर पाप कमाया, या में लिया सराप ॥ ७४ ॥

बिलख बदल रोती राणी यों, आए चल कर भूप।
अरे प्रिया ? कुछ धीरज धारो, अस्थिर जगत स्वरूप ॥ ७५ ॥
जनक राय ने चहुँ दिशि भटको, भेजे खबर मगाय।
दीर्घ काल अति होने पर भी, पुत्र खबर नहिं पाय ॥ ७६ ॥
क्रिया कर्म छूटे नहिं कब भी, करते क्रोड उपाय।
राणी मन सतोष विचारे, सच्चा धर्म सहाय ॥ ७७ ॥
राजा सोचे धान्याकुर सम, यह पुत्री गुणवत।
यों सु विचारी मोत्सव पुरमें, किया भूप अत्यत ॥ ७८ ॥

॥ सीताका—जन्मोत्सव ॥

दान मान पुनि गीत गान हो, भोजन भांति विधान।
किया दशोटन मिले स्वजन जन, सबको दे सन्मान ॥ ७९ ॥
विरह वियामें तबुजा देखत, शीतलता उर आय।
इस कारण से निज पुत्रिका, सीता नाम दिलाय ॥ ८० ॥
परिजन देते शुभ महुरत में, "सीता" नाम सवाय।
गिरि कदर में चपकबेली, ज्यों बढती सुख माय ॥ ८१ ॥
पचधाय से प्रतिपल पलती, हाथो हाथ रहाय।
सुखसे जावें सदा काल यों, कभी रही नहिं काय ॥ ८२ ॥
बाल कालमें सीखी बाला, चौसठ कलाभिराम।
देह लाज गुण बढी चातुरी, बढा पांचवां काम ॥ ८३ ॥

सिया कुमारी रूप रंग में, सोहै रूपारेल।
भर जोवन आई शशि बदनी, चाले गजपति गेल ॥ ८४ ॥
श्याम भँवर कच वेणी लंबी, वदन सु चन्द्र ललाम।
नैन कमल वत कीर नाशिका, नकवेशर अभिराम ॥ ८५ ॥
काना कुण्डल कगमग करते, दाडिम कलिवत दत।
वचन सुधारस सब सुखदाई, कटि हरि सम दीपत ॥ ८६ ॥
कुच घण युग है कलश विशाला, योवन जल लहराय।
कदली सम है जांघ मनोहर, रोम रहित मृदु भाय ॥ ८७ ॥
पग उन्नत कच्छप सम माता, राता नख पग हाथ।
सुर नरादि मन मोहे देखत, अमरी सम साक्षात ॥ ८८ ॥
शील रूप से शोभा वदती, नहीं बढाई रूप।
शीलवत की वाचा फलती, यह है अटल स्वरूप ॥ ८९ ॥
सीता तोले को नर ओले, बोले सीतल वाच।
रूप विशाला सब विधी बाला, पाप निकंदन राच ॥ ९० ॥
ऐसी सीता गुणकी गोता, सजके सब सिनगार।
पिता जनक पग बंदन आवे, पद प्रणमें धर प्यार ॥ ९१ ॥
कमलाक्षी यौवन वय बाला, देवी जनक नरेश।
हृदय विचारे मुज कन्याका, होगा को प्राणेश ॥ ९२ ॥
हृदय चक्षु से देखे नृप गण, रुचिकर हुआ न एक।
प्रतिदिन चिंता लगी रायको, सोचे धार विवेक ॥ ९३ ॥

प्रबल कोप नारद मन लाया, दूं सीताको त्रास।
कमी नहीं अपमान करे मुज, तुरत उडे आकाश ॥१२२॥
गिरि वैताढ्य जहां चल आए, वहां चन्द्रगति भूप।
भामण्डल था पुत्र सामने, लिखा जानकी रूप ॥१२३॥
लख भामण्डल सिया रूपको, लगा कामका भूत।
विह्वल हो पूछे नारद से, कौन ? नार अदभूत ॥१२४॥
इन्द्राणी या सुरी किन्नरी, कहां देखी यह नार।
कहे नारद यह जनक अङ्गजा, सीता रूप उदार ॥१२५॥
नहीं वहित सगुपण यह जाने, हा ! हा ! मूढ अज्ञान।
हित अहित सुविचार भूलते, ज्योंहि किये मदपान ॥१२६॥
खान पान निद्रा सब तजदी, बोल चाल परिहार।
रम्मत गम्मत स्नान विभूषा, अदभूत काम विकार ॥१२७॥
राजा पूछे वत्स ? हृदय क्या, चिन्ता से मुरझाय।
कहता नहिं लज्जा से कुछ भी, मौन धरी विलखाय ॥१२८॥
कहा मित्रने हाल कँवरका, नारद चित्र बताय।
सिया चित्र लख कँवर बसा मन, कैसे प्रकट सुनाय ॥१२९॥
पिता कहें हैं ? शक्ति अधिक मुज, करके दाव उपाय।
सीता को परणाऊं निश्चय, रहो सदा सुखमाय ॥१३०॥

॥ सीताका रामके साथ सम्बन्ध का होना ॥

इधर सोचते जनक विदेही, सीता देऊं राम।
शूर वीर बल बुद्धि पूरण, जोडी हैं अभिराम ॥१३१॥
लखा रामका साहस जबरा, उपकारी साक्षात।
मन्त्रि बुला भेजा दशरथपे, जता सभी मन बात ॥१३२॥
मन्त्री दशरथ नृपपे जा कहि, सीता राम सम्बन्ध।
दीनो सीता रामकँवर को, अटल वचन मुज बन्ध ॥१३३॥
प्रथम प्रेम हैं पूर्ण आपका, फिर भी अधिका होय।
थोछे नरसे प्रीत किया से, भला कहैं नहिं कोय ॥१३४।
दशरथ सुन यों कहें हर्ष से, हमको बात प्रमाण।
मुँह मांगा पासा यह पडिया, सगपण निश्चय जान ॥१३५॥
निद्रित को सय्या सुखदाई, पडी दूध में खांड।
मूर्ख गधे पे करे सवारी, परापति को छांड ॥१३६॥
निश्चय कर सगपण मन्त्रीजी, आया मथुरा माय।
नृप राणी को कही हकीकत, आदि अंत दरशाय ॥१३७॥
सोना और सुगन्ध मिला है, सीता भाग्य सवाय।
सीता भी सुन हर्षित होती, मधुकर पुष्प लुभाय ॥१३८॥

॥सीता को ब्याहने के लिए भामण्डल का प्रयत्न॥

भामण्डलको चन्द्रगती नृप, देकर के संतोष।
आकर निज महिलों में सोचे, सीता गुणकी कोष ॥१३९॥
कैसे होगा काम अहा ये, आजत रहे न मान।
भूचर आगे खेचर मांगे, जाय इसी में सान ॥१४०॥
अन्न देय मांगे यदि कन्या, नट जावे भूपाल।
मानभंग हो मेरा इससे, करना काम सँभाल ॥१४१॥
अपलगती इक विद्याधर था, उसे बुलाया पास।
विकट काम यह करके आओ, मिले लाख साबास ॥१४२॥
अश्व रूप धर चला तुरत से, आया अथुस माय।
अजब अश्व लख भूप शाल में, बांधा प्रेम जगाय ॥१४३॥
भूप चित्त अनुसार चले यों, कई दिन दिये बिताय।
उस हयपे चढ इकदिन राजा, क्रिडा करने जाय ॥१४४॥
समय उचित लख जनक सहितसे, उड़ा अश्व आकाश।
विद्याधर के पास बिठाया, आदर दे हुल्लास ॥१४५॥
कह विद्याधर सुनो जनक नृप, दिया तुम्हें संताप।
छल कर में मगवाया तुमको, करो गुन्हा सब माफ ॥१४६॥
करिये वचन प्रमाण हमारा, भामण्डल मुज नंद।
उसको अपनी सीता कन्या, दीजे धर आनन्द ॥१४७॥
यह मांग सुन जनक उचारे, दशरथ नन्दन खास।
दे चुका मैं सिया उन्हि को, जग में बात प्रकाश ॥१४८॥
उन जैसा नहिं आज जगत में, रूपवन्त बलवान।
उन्हें छोडकर देता परको, समझो वह नादान ॥१४९॥

राजकुमारों ? इधर पधारो, दर्शन हमको देय।
सबकी दृष्टी आप तरफ है, मुजरा हमका लेय ॥१७८॥
राम कहैं हम गांव अयोध्या, दशरथ तात नरेश।
रामलखन हम दोनों भ्राता, आय तुम्हारे देश ॥१७९॥
आए स्वयम्बर देखन कारण, जनक भूप महमान।
मथुरा नगरी देखन निकले, कैसा सुदर स्थान ॥१८०॥
भले पधारे पावन कीना, दिया सु दर्शन आज।
भलीभांति यह देखो नगरी, इच्छा जहां हो राज ॥१८१॥
करे परस्पर बातें नरगण, विजयी होगा राम।
उम्मेद पूरी इसमें हमको, नहिं मशव का काम ॥१८२॥
धनुष वडा है तदपी क्या है, ब्रह्मचारी है राम।
सीता के पति निश्चय होंगे, सुधरे काम तमाम ॥१८३॥
रामचन्द्रको शक्ति देना, हे ईश्वर ? अरदास।
स्वयम्बर में विजय होयगी, है पूरण विश्वाश ॥१८४॥
इधर राम है इधर सिया है, सोना और सुगंध।
भूप जनक के ख्वाहिश दिलमें, होगा राम सबन्ध ॥१८५॥
राम लखन मिल चलते निर्भय, जहां वाटिका स्थान।
है भाई ? यह बाग अजब है, इसका हो न बयान ॥१८६॥
जनकराय ने बडे शौक से, लगवाया यह बाग।
बुल बुल चहचा रही यहांपे, भ्रमर अलापे राग ॥१८७॥

राजकुमारी उसी बाग में, साथ सहेली वृन्द।
लेकर अपनी सखी बाग मे, आई धर सानन्द ॥१८८॥
राम कहैं यहाँ नहीं ठहरना, आई राजकुमार।
होय रगमें भंग इन्ही के, मानो वचन विचार ॥१८९॥
बैठे चलो अशोक वृक्ष तल, लेय जहां आराम।
उधर सिया निज सखी साथ में, फिरन लगी चहुँ धाम ॥१९०॥
कहें सहेली महक रही है, अजब पुष्प की गध।
हरेक टहनी लहरा रही है, क्या यहां का आनन्द ॥१९१॥
झूला गावे दिल वह लावे, फूल रही फुलवार।
क्या हरियाली आली व्हाली, देखो बाग बहार। १९२।
पक्षीगण होके मतवारे, बैठे पांख पसार।
कोयल कुहुक रही मधुरवसे, झूले तरु की डार ॥१९३॥
फिर क्या आना होगा प्यारी, बार बार इस स्थान।
क्यों कि आप सुसराल जाओगे, बिछुडेंगे हर आन ॥१९४॥
होगा सबका अलग ठिकाना, नया होय घर बार।
क्या २ महने होंगे ताने, कौन करेगा प्यार ॥१९५॥
मात पिता भ्राता छोटेगें साथ सभी परिवार।
सास ननद का ताना सुनना, होय जहां हरबार ॥१९६॥
कौन ? सुनेगा अपना कहना, तानें मिले हजार।
बात २ पर धमकी मिलती, परवश बात विचार ॥१९७॥

कहें सखी यों व्याह बादमें, पलट जाय सब बात।
पति अच्छा मिलगया तो मानो, स्वर्ग सौख्य साक्षात ॥१९८॥
नहीं मिला तो सभी उम्रभर, मिट्टी होय खराब।
मारपीट हो लडना नित ही, अनुचित होय बनाव ॥१९९॥
इक तरफी नहिं बात बने है, बहुम होय कसूर।
कितनी हे नादान लड़कियां, पति करतीं मगरूर। २००॥
एक सखी कहें ऐसी बातें, करना देखो छोट।
सीता सुनाके ऐसी बातें, कीजे साच निचोर ॥२०१॥
एक सखी कहें सिया भाग्यका, कल होगा इन्साफ।
मन माना भरतार मिले या, खुले भाग्य की छाप ॥२०२॥
एक सहेली आई दौडी, कहे सिया से बात।
चलो साथ कुछ इधर देखलो, कोन खडे साक्षात ॥२०३॥
सिया कहें क्यों हंसी उडाती, हुई कहो जो बात।
हाथ इशारा करके बोली, कोन बडा उत्पात ॥२०४॥
देखो सियाजी इन झाड़ों में, छुपे हुए हैं कौन।
यह अयोध्या राज पुत्र हैं, खडे अचल धर मौन ॥२०५॥
सूरत शक्ल इनकी ईश्वर ने, हाथों हाथ बनाय।
प्यारी सीता गले इन्हीं के, जयमाला पहिनाय ॥२०६॥
सीता जब सुखपाल बैठ के, अपने भवन सिधाय।
बसे हृदय में राम निरंतर, और पुरुष नहिं भाय ॥२०७।

जनकराय की जोश भरी सुन-वाणी राज कुमार।
धनुप चढ़ाने कारण उठते, तब तो के सरदार ॥२३७॥
फसके कमर कहें क्या इसमें, थोथा काम दिखाय।
अहि थे लिपटे हुए धनुप पे, फणिधर फण फैलाय ॥२३८॥
ज्वाला मुख से दान्त बतावे, काटे सन्मुख आय।
देख दृश्य यह भगे तुरत से, राज कँवर घवराय ॥२३९॥
दूजा ऊठा मूंछ तानके, क्यों भागे घवराय।
सदा पुराना धनुप तोड़नां, क्या ? इसमें अधिकाय ॥२४०॥
चाहू तो मैं एक हाथ से, उठा नमाऊं चाप।
तेज धनुप का देख भगावो, है क्या ? ये सन्ताप ॥२४१॥
उठा तीसरा धनुप उठाने, मन मे धर अभिमान।
गया पास में कहें यह क्या है, यह तो बडा तुफान ॥२४२॥
बोला चौथा धनुष उठा नहीं, जाते गौरव हार।
उठने की बस मेरी देरी, टुक कर दूं दो चार ॥२४३॥
गया पास सर लज्जित होता, हुआ पसीना अंग।
यह जनक ने-साथ हमारे, किया हँसी का ढंग ॥२४४॥
जो जो जाते धनुप पास में, देते आव गमाय।
छू नहि सकता धनुप देखके, पृथ्वी पे गिरजाय ॥२४५॥
कितने ही यों सोचे राजा, वृथा गँमाना मान।
ऊठ सके नहि धनुप कदापी, करना क्यों? अभिमान ॥२४६॥

यों विचार कई बैठे राजा, धरे न आगे पांव।
मुख नीचा कर रहें शरम से, नहि जाने का दाव ॥२४६॥
भूचर खेचर हारे सब ही, कोई न जावें पास।
एक एक के सन्मुख देखे, मन में बडे उदास ॥२४८॥
खड़ा हुआ दशकधर तवतो, दे मूछों पे ताव।
कहन लगा क्या? काम छोकरें, कर लेंगे रख आव ॥२४९॥
रावण को फिर कौन पिछाने, भूल जाय ससार।
मेरे विन यह काम न होगा, कहता साच पुकार ॥२५०॥
गया पास फिर निराश होता, मन ही मन पछताय।
बड़ी भूल की वना वनाया, अपना भर्म गमाय ॥२५१॥
बोला जल्दी रावण मेरे, एक जरूरी काम।
इस कारण से जाता जलदी, जहा रहा मुज धाम ॥२५२॥
जनक भूप यह दृश्य देखके, बोला करके कोप।
वडे वीर में नाम लिखाया, गया तुम्हारा रोप ॥२५३॥
हा ? गजव जगमें नर कोई, नही वीर दिखलाय।
पहले मालुम होती मुजको, क्यों मण्डप रचवाय ॥२५४॥
क्षत्रिवश का ध्वंस अन्त अब, नहीं धर्म वलवीर।
विगड़ी की पत रखिये भगवन् ? वीरों की तासीर ॥२५५॥
शीर्फ नामके रहें वहादुर, कर सकते नहि काम।
पता नहीं था मुजको क्षत्री, डूबे वीर तमाम ॥२५६॥

धनुप उठाना दूर रहा पर, दोनों नहीं [illegible]।
वात विगड़ गई सारी अबतो, वाते सरल बनाय ॥२५७॥
सिया जन्म भर रही कुमारी, मन में रहती वात्त।
ऐसे कब कायर को सीता, नहि व्याहती साक्षात ॥२५८॥
घर मे जा ताकत दिखलाओ, लखी वीरता आज।
मर्द हुए नामर्द सभी यहाँ, क्या ? कर सकते काज ॥२५९॥
महिरवान ? अवतो तुम जाओ, अपने २ द्वार।
शेखी मारो बैठ सामने, औरत के दरवार ॥२६०॥
अपमानित यों वैन जनक का, सुन सब रहते मौन।
किन्तु सिंहको वचन लगे हैं, ज्यों दाझे पर नौन ॥२६१॥

॥ राम और लक्ष्मण द्वारा धनुष्य चढ़ाना ॥

तब ही लक्ष्मण भूकटि चढ़ा के, देते शख्त जवाव।
करो होश से वात जनक तुम, सब नहि होय खराव ॥२६२॥
हरेक की यों इज्जत लेना, कहना कायर चैन।
क्षत्री वंश का अन्त हुआ यों, ऐसा कहो न बैन ॥२६३॥
यह जवान पे वात न लाओ, तजो बताना धोस।
मन से ही कर लिया फैसला, करिये नहि मन रोप ॥२६४॥
अगर धनुप नही उठा तो उसको, लगते हँसी उडान।
अपने घरपे आए अतिथी, लखो उसे भगवान् ॥२६५॥

राम हुक्म से लक्ष्मण दूजा, लीना धनुप चढाय।
पणच खेंचके लिया कान तक, फिर छोडा हर्षाय ॥२६५॥
घोर धनुप टकारव चहुँदिश, शब्द गया गुजाय।
पुन धनुपको रखा जमींपे, अचरज सब जन पाय ॥२६६॥
भामण्डल तव हुआ क्रोधमें, कहता सख्त सुनाय।
राम सियाको व्याह नहिं सक्ते, लीना खड्ग सहाय ।।२६७॥
राम कहैं क्यों ? गुस्सा करते, सच्चा कहो वयान।
धनुप उठाने यहां सब आए, बडे २ बलवान ॥२६८॥
मैंने धनुप उठाया जिसपे, करते क्रोध फिजूल।
बुरा काम क्या कीना हमने, वृथा हुई तन शूल ॥२६९॥
बात विगड्ती थी भूपोंकी, रखदी हमने लाज।
क्यों नां अपना बल अजमाया, अब होते नाराज ॥३००॥
खेचर कहने लगे जनकको, शांती का हो ख्याल।
नरेन्द्र सभासे इन दोनों को, जल्दी दिओ निकाल ॥३०१॥
मण्डप होगा यह रण भूमी, देंगे मान उतार।
करदेंगे हम हड्डी चूरन, मानव गण सहार ॥३०२॥
जरा उठाया धनुप इसे तो, भारी हुआ गुमान।
कहतो सबको तुच्छ समझते, कौन सहैं अपमान ॥३०३॥
लक्ष्मण ऊठा तुरत खड्गले, बोले सिंह समान।
किसे डराते क्या ? सोचा है, तजदो सब तोफान ॥३०४॥

गीदड़ भमकी वीर बालको, बतलाना नहि ठीक।
नहिं घबराते या डर लाते, लडते हम निर्भीक ॥३०५॥
हम रघुवंशी को आकर के, कहदे कटुक जवान।
उनका मान मिटावे जलदी, पहुँचावे यमस्थान ॥३०६॥
यों गरजे तव लखन सभामें, पाये त्रास नरेश।
सुन सब बैठे बहिरे जैसे, सुन लक्ष्मण संदेश ॥३०७॥
भूचर आदिक क्रोध शमन कर, सोचे ये बलवान।
भूप यहां आये हैं जिनमें, लक्ष्मण सिंह समान ॥३०८॥
कन्या अष्टादश लक्ष्मणको, विद्याधर परणाय।
खेचर खुश हो करी मित्रता, वैर विरोध मिटाय ॥३०९॥
भामण्डलको पुन हृदयमें, द्वेप अधिक प्रकटाय।
हो सका नहिं सहन करे क्या, ? सिरपे सेर सवाय ॥ ३१० ॥
भामण्डल को चन्द्र भूप अति, समझावे धर प्यार।
हार जीत थी धनु के उपर, अब कहना बेकार ॥ ३११ ॥
समझा करके भामण्डल को, किया तुरत प्रस्थान।
मिथिला पुरसे रथनूपुर में, चल आए मतिमान ॥३१२॥

॥ सीताके लिए भामण्डल का मुनिसे पूछना ॥

रास्ते में थे सत्यभूति मुनि, चार ज्ञानके धार।
भामण्डलकी दृष्टि पडती, ठहरे जहां अणगार ॥ ३१३ ॥
नमन किया भामण्डल मुनि से अरजें, [illegible] ।
सीता क्यों ? नहिं पाई मैंने, दया थी मुझ से [illegible] ॥३१४॥
स्वयंवर मंडप में पाया, मैं अपमान महान।
इसका कारण आदि [illegible], मुझे कहो भगवान ? ॥३१५॥
मुनिवर भाखे भामण्डल को, [illegible] तुझ बात।
सिया साथ तुझ जन्म हुआ है, तेरी विदेही मात ॥३१६॥
पिंगलसुर तुझ जन्म होत ही, हरन किया रख वैर।
चन्द्रगती नृप घर तुझ बढते, सिया रही निज घेर ॥३१७॥
वैन सुनि मुनिवर के ततछिन, जातीसुमरन पाय।
भ्रमें यथा निज हृद पर भवकी, देखो मन मुस्काय ॥३१८॥

॥ भामण्डलकी सियासे क्षमा याचना ॥

हुआ प्रेम भगनीके उपर, तब मिथिला में जाय।
पग पडते सीता को नमके, शरज धरे शिरनाय ॥३१९॥
बडा अनर्थ मैं किया बहिनजी, तुम पर [illegible] अभिलाप।
नरक नींव में डाली पापी, हो विषयों का दास ॥३२०॥
मुझ कृत दोप क्षमाकर बहनी, बडी हुई मुझ भूल।
सीता दे आशीप भाई को, खुले भाग्य अनुकूल ॥३२१॥
मात पिताके नमें चरन ज्यों, प्रेम चकोरी चंद।
दूध विदेहा स्तनसे छूटा, देखा जब निज नंद ॥३२२॥

राम हुक्म ले लक्ष्मण दूजा, लीना धनुप चढाय।
पणच खेंचके लिया कान तक, फिर छोडा हर्षाय ॥२६५॥
घोर धनुप टंकारव चहुँदिश, शब्द गया गुजाय।
पुन धनुपको रखा जमींपे, अचरज सब जन पाय ॥२९६॥
भामण्डल तब हुआ क्रोधमें, कहता सख्त सुनाय।
राम सियाको व्याह नहिं सक्ते, लीना खड्ग सहाय ।।२९७॥
राम कहैं क्यों ? गुस्सा करते, सच्चा कहो बयान।
धनुप उठाने यहां सब आए, बडे २ बलवान ॥२९८॥
मैंने धनुप उठाया जिसपे, करते क्रोध फिजूल।
बुरा काम क्या कीना हमने, वृथा हुई तन शूल ॥२९९॥
यात विगड़ती थी भूपोंकी, रखदी हमने लाज।
क्यों ना अपना बल अजमाया, अब होते नाराज ॥३००॥
खेचर कहने लगे जनकको, शांती का हो ख्याल।
नरेन्द्र सभासे इन दोनों को, जल्दी दिओ निकाल ॥३०१॥
मण्डप होगा यह रण-भूमी, देंगे मान उतार।
करदेंगे हम हड्डी चूरन, मानव गण सहार ॥३०२॥
जरा उठाया धनुप इसे तो, भारी हुआ गुमान।
महतो सबको तुच्छ समझते, कौन सहैं अपमान ॥३०३॥
लक्ष्मण उठा तुरत खड्गले, बोले सिंह समान।
किसे डराते क्या ? सोचा है, तजदो सब तोफान ॥३०४॥

गीदड़ भभकी वीर बालको, बतलाना नहिं ठीक।
नहिं घबराते या डर लाते, लडते हम निर्भीक ॥३०५॥
हम रघुवन्शी को आकर के, कहदे कटुक जवान।
उनका मान मिटावे जलदी, पहुँचावे यमस्थान ॥३०६॥
यों गरजे तब लखन सभामें, पाये त्रास नरेश।
सुन सब बैठे बहिरे जैसे, सुन लक्ष्मण सदेश ॥३०७॥
भूचर आदिक क्रोध शमन कर, सोचे ये बलवान।
भूप यहा आये हैं जिनमें, लक्ष्मण सिंह समान ॥३०८॥
कन्या अष्टादश लक्ष्मणको, विद्याधर परणाय।
खेचर खुश हो करी मित्रता, वैर विरोध मिटाय ॥३०९॥
भामण्डलको पुन. हृदयमें, द्वेप अधिक प्रकटाय।
हो सका नहिं सहन करे क्या, ? सिरपे सेर सवाय ॥ ३१० ॥
भामण्डल को चन्द्र भूप अति, समझावे धर प्यार।
हार जीत थी धनु के उपर, अब कहना बेकार ॥ ३११ ॥
समझा करके भामण्डल को, किया तुरत प्रस्थान।
मिथिला पुरसे रथनूपुर में, चल आए मतिमान ॥३१२॥

॥ सीताके लिए भामण्डल का मुनिसे पूछना ॥

रास्ते में थे सत्यभूति मुनि, चार ज्ञानके धार।
भामण्डलकी दृष्टि पडती, ठहरे जहाँ अणगार ॥ ३१३ ॥
नमन किया भामण्डल मुनि से, प्रश्नकरें करजोड़।
सीता क्यों ? नहि पाई मैंने, क्या थी मुझ में खोड ॥३१४॥
स्वयंवर मंडप से पाया, मैं अपमान महान।
इसका कारण आदि अन्तमें, मुझे कहो भगवान ? ॥३१५॥
मुनिवर भाषे भामण्डल को, जनक भूप तुज तात।
सिया साथ तुज जन्म हुआ है, खरी विदेही मात ॥३१६॥
पिंगलसुर तुज जन्म लेत ही, हरन किया रख वैर।
चन्द्रगती नृप घर तुज बढते, सिया रही निज पैर ॥३१७॥
वैन सुनि मुनिवर के ततछिन, जातीसुमरन पाय।
कर्म कथा निज इह पर भवकी, देखी मन मुरझाय ॥३१८॥

॥ भामण्डलकी सियासे क्षमा याचना ॥

हुआ प्रेम भगनीके उपर, तब मिथिला में आय।
पग पडते सीता को नमके, अरज करे शिरनाय ॥३१९॥
बडा अनर्थ मे किया बहिनजी, तुम धर [illegible] अभिलाष।
नरक नीम मे डाली पापी, हो विषयों का दास ॥३२०॥
मुज कृत दोप समाकर बहनी, बडी हुई मुज भूल।
सीता दे आशीप भाई को, खुले भाग्य अनुकूल ॥३२१॥
मात पिताके नमे चरन ज्यों, प्रेम चकोरी चंद।
दूध विदेहा स्तनसे छूटा, देखा जब निज नंद ॥३२२॥

देखें चलो बरात रामकी, खूब लगा है ठाठ।
विरदावलियाँ बोल रहे हैं, मिलके सारे भाट ॥३४६॥
कतार हाथी पुनि घोडे की, जिनका हैं नहिं थाग।
पैदल कई असवारी करते, सिर केसरिया पाग ॥३४७॥
कहिं रथ डोली और पालकी, बालक क्रीड़ा साज।
राग रंग नट नाच रहे हैं, बाजें विध विध बाज ॥३४८॥
गिन गिन कदम उठाकर चलते, सुभट हाथ तलवार।
फौजों बादल कैसी छाई, सबके उमग अपार ॥३४९॥
पुर जन मिल उत्सव कर लाए, आए पुरमें राम।
काराग्रह से कैदी छोडे, हो रहि लील ललाम ॥३५०॥
अमित दान याचक को दीना, दीन दुखी बल हीन।
रोग ग्रसित थे मनुज अपाहिज, चिंता में लयलीन ॥३५१॥
किया सभी का पोषण पाए–सब जन मन संतोष।
अमर पढह पिटवाया पुरमें, खोल दिया सब कोष ॥३५२॥
गुरुकुल पुनि विद्यालय खोले, दिया ज्ञान का दान।
अपढ रहे ना इसी राज्यमें, बने सभी विद्वान ॥३५३॥
अनाथ जन हित खोले शाला, मांग सके नहिं भीख।
चले जीविका सरल सत्यसे, प्रजा रहे निर्भीक ॥३५४॥
अधिक लगा था बोझा करका, हटा दिया वह दूर।
सुखमें रहें प्रजाजन सारी, दिन दिन चढता नूर ॥३५५॥

घर घर तोरण गावे मगल, रहे वधाई बांट।
मुक्तासे घर को सिनगारे, नीर सुगंधित छांट ॥३५६॥
सज धज नर सब मिलके आए, भरा जहाँ दरबार।
सुवर्ण थाल मोत्यों की भर भर, करते भेंट अपार ॥३५७॥
अतर पान हो रहा घरो घर, थाल भरे मिष्टान।
उचित दिया सत्कार रामने, सोभा स्वर्ग समान ॥३५८॥
सिया कौशल्या चरन नमें हैं, बिठा लई निज गोद।
माता दे आशीष जिओ चिर, पाओ परम प्रमोद ॥३५९॥
ऐसे सब माता पे जाती, चरन नमे धर प्रेम।
सबने दी आशीष सिया को, रहो सदा शिव क्षेम ॥३६०॥
उत्सव आठ दिनों का करते, थी दशरथ सिरताज।
दान मान सत्कार सर्व को, देते सब विधि साज ॥३६१॥

॥ दशरथ की वैराग्य का कारण ॥

इक्षु रसके घडे भेट मे, आए दशरथ पास।
सब राणी के पास पठाए, जहाँ जहाँ रणवास ॥३६२॥
धुर कौशल्या पटराणी पे, घडा एक भिजवाय।
दास साथमें सब राणी घर, इक्षु घट पहुँचाय ॥३६३॥
सभी राणियें पास पहुँचते, जो घट भेजे राय।
पटराणी के पास न पहुँचा, राणी मन अकुलाय ॥३६४॥

राणी सोचे भूले मुझको, मुझसे प्रेम हटाय।
सहुण राणिये मनमें भाई, मुझको दी विसराय ॥३६५॥
जीना है धिक्कार धूल सम, मरना कर अपघात।
यह दुख कैसे देखूं इससे, अपमानित साक्षात ॥३६६॥
अपयश जीवन मरन तुल्य है, वालेश्वर दी छोड।
अपमानित हो जिन्दा रहना, जिस मे मोटी खोड ॥३६७॥
क्रोधित होकर गले बीच में, दृढ डाली है पास।
हा ? हा ? कार कर रोवे पीटे, ठाढे दासी दास ॥३६८॥
नृप कोलाहल सुन झट आए, राणी ? क्या ? यह बात।
पासा छेदन किया गले का, क्या कीना उत्पात ॥३६९॥
कोपित कारण कहो मरण का, क्यों मन में यह लाय।
किया किन्हें अपमान तुम्हारा, विकट क्रोध क्यों छाय ॥३७०॥
दृग जल डारी गद गद वाणी, कहती राणी साफ।
औरों के घर भेजा तुमने, मुज अपमानी आप ॥३७१॥
इतने मे घट लेकर आया, वृद्ध वहाँ नर एक।
रोष मिटा राणी का दिल से, तुरत घडे को देख ॥३७२॥
नृप पूछे रे ? बूढ़ा तेने, बहुत लगाई देर।
वृद्ध कहे मैं बूढ़ा स्वामिन् ? थके हमारे पैर ॥३७३॥
पाँव उठाते नहीं उठते, घिसते चलता पाँव।
लाल गिरे मुख दान्त पडे सब, उतर गया मुख आव ॥३७४॥

देखें चलो बरात रामकी, खूब लगा है ठाठ।
विरदावलियाँ बोल रहे हैं, मिलके सारे भाट ॥३४६॥
कतार हाथी पुनि घोडे की, जिनका हैं नहिं थाग।
पैदल कई असवारी करते, सिर केसरिया पाग ॥३४७॥
कहिं रथ डोली और पालकी, बालक कीडा साज।
राग रग नट नाच रहे हैं, बाजें विध विध बाज ॥३४८॥
गिन गिन कदम उठाकर चलते, सुभट हाथ तलवार :
फोजों बादल कैसी छाई, सबके उमग अपार ॥३४९॥
पुर जन मिल उत्सव कर लाए, आए पुरमें राम।
कारागृह से कैदी छोडे, हो रहि लील ललाम ॥३५०॥
अमित दान याचक को दीना, दीन दुखी बल हीन।
रोग ग्रसित थे मनुज अपाहिज, चिंता में लयलीन ॥३५१॥
किया सभी का पोषण पाए—सब जन मन सतोष।
अमर पडह पिटवाया पुरमें, खोल दिया सब कोष ॥३५२॥
गुरुकुल पुनि विद्यालय खोले, दिया ज्ञान का दान।
अपढ रहे ना इसी राज्यमें, बने सभी विद्वान ॥३५३॥
अनाथ जन हित खोले शाला, मांग सके नहिं भीख।
चले जीविका सरल सत्यसे, प्रजा रहें निर्भीक ॥३५४॥
अधिक लगा था बोझा करका, हटा दिया वह दूर।
सुखमें रहै प्रजाजन सारी, दिन दिन चढता नूर ॥३५५॥

घर घर तोरण गावे मगल, रहैं वधाई बांट।
मुक्तासे घर को सिनगारे, नीर सुगधित छांट ॥३५६॥
सज धज नर सब मिलके आए, भरा जहां दरवार।
सुवर्ण थाल मोत्यों की भर भर, करते भेंट अपार ॥३५७॥
अतर पान हो रहा घरो घर, थाल भरे मिष्टान।
उचित दिया सत्कार रामने, सोभा स्वर्ग समान ॥३५८॥
सिया कौशल्या चरन नमें है, बिठा लई निज गोद।
माता दे आशीष जिओ चिर, पाओ परम प्रमोद ॥३५९।
ऐसे सब माता पे जाती, चरन नमें धर प्रेम।
सबने दी आशीष सिया को, रहो सदा शिव क्षेम ॥३६०॥
उत्सव आठ दिनों का करते, श्री दशरथ सिरताज।
दान मान सत्कार सर्व को, देते सब विधि साज ॥३६१॥

॥ दशरथ को वैराग्य का कारण ॥

इक्षु रसके घडे भेट में, आए दशरथ पास।
सब राणी के पास पठाए, जहाँ जहाँ रणवास ॥३६२॥
धुर कौशल्या पटराणी पे, घडा एक भिजवाय।
दास साथमें सब राणी घर, इक्षु घट पहुँचाय ॥३६३॥
सभी राणियें पास पहुँचते, जो घट भेजे राय।
पटराणी के पास न पहुँचा, राणी मन अकुलाय ॥३६४॥

राणी सोचे भूले मुजको, मुजसे प्रेम हटाय।
तृष्णा राणिये मनमें भाई, मुजको दी बिसराय ॥३६५॥
जीना है धिक्कार धूल सम, मरना कर अपघात।
यह दुख कैसे देखूं दगसे, अपमानित साक्षात ॥३६६॥
अपयश जीवन मरन तुल्य है, वालेश्वर दी छोड।
अपमानित हो जिन्दा रहना, जिस में मोटी खोड ॥३६७॥
क्रोधित होकर गले बीच में, दृढ डाली है पास।
हा? हा? कार कर रोवे पीटे, ठाडे दासी दास ॥३६८॥
नृप कोलाहल सुन झट आए, राणी? क्या? यह बात।
पासा छेदन किया गले का, क्या कीना उत्पात ॥३६९॥
कोपित कारण कहो मरण का, क्यों मन में यह लाय।
किया किन्हें अपमान तुम्हारा, विकट क्रोध क्यों छाय ॥३७०॥
दग जल डारी गद गद वाणी, कहती राणी साफ।
औरों के घर भेजा तुमने, मुज अपमानी आप ॥३७१॥
इतने मे घट लेकर आया, वृद्ध वहाँ नर एक।
रोष मिटा राणी का दिल से, तुरत घडे को देख ॥३७२॥
नृप पूछे रे? बूढा तेने, बहुत लगाई देर।
वृद्ध कहे मैं बूढा स्वामिन्? थके हमारे पेर ॥३७३॥
पाँव उठाते नहीं उठते, घिसते चलता पाँव।
लाल गिरे मुख दान्त पडे सब, उतर गया मुख आव ॥३७४॥

भूपति मन में अन्य विचारा, खबर तुम्हें नहिं पाय।
राज छोड़ नृप सजम धारे, सबसे ममत मिटाय ॥४०४।
राम अवध के राजा होंगे, सब जन माने आन।
राज मात कौशल्या होगी, सब विधि से सन्मान ॥४०५॥
भरतकँवर भी सजम धारे, कुल दीपक कुल चद।
कौशल्या मन फूल रही है, माना अति आनद ॥४०६॥
प्रेम २ में पागल होवे, शुद्ध गए विसराय।
मन वांछित हो कौशल्या के, राम अयोध्या पाय ॥४०७॥
भृकुटी टेढ़ी लाल नैन कर, बोली कैकयी मात।
अरि ? निलज्ज निपट निष्ठुर तू, कहती क्या ? ये बात ॥४०८॥
अरि ? मन्थरा धड़से सिर तुज, देऊ अभी उतार।
ऐसा वचन सुनाया तेने, लगी कलेजे आर ॥४०९॥
राम भरत दोनों मुज नदण, दोनों आंख समान।
अधिक न्यून में किस को मानू, दोनों कुल के भान ॥४१०।
राज्य राम या भरत करे तो, नहिं मुज मन में भेद।
मेरे तो मन खुशी भई है, क्यों हो चित्ता खेद ॥४११॥
जाकर नृप को बात सुना दूं, जिह्वा ले तुज काट।
ऐसी बात कभी मत कहना, होगा बड़ा उचाट ॥४१२॥
डरी धूजती बोली दासी, मन मे होय उदास।
हित की कहते उलटी माने, काटा मैंने घास ॥४१३॥

होय अयोध्या राजा कोई, इस में मुझे न हान।
हित की बात कही मैं तुमसे, पाई मैं अपमान ॥४१४॥
जरा देरके बात कैकयी, बिगड़ा मन का भाव।
दासी बात खरी है मैंने, उलटा दिया जवाब ॥४१५॥
बोली कैकयी सुभगे प्यारी ? क्यों रोती अकुलाय।
शुभ चिंतक तू दासी मेरी, लीनी हृदय लगाय ॥४१६।
भूलो मेरी कड़ी बातको, अन्य तरफ था ध्यान।
अब तो हित की बात सुनाओ, करती सभी प्रमान ॥४१७॥
मैंने हाँस किया था तैंने, लीनी सच्ची मान।
तब तो दासी कहने लागी, युक्ती एक निदान ॥४१८॥
मेरे मन यह बात समाई, होय भरत यदि भूप।
तो मनकी सब व्यथा नशावें, बात रहें तद्रूप ॥४१९॥
भूपति से थी मांग आपकी, कई दिनोंकी खास।
अभी समय पर मांगो स्वामिनि ? हितकी कहूं प्रकाश ॥४२०॥
दिलमें चिन्ते कैकयी राणी, हो मुज सुतको राज।
तो सब काज हमारा होवे, बनी रहे जग लाज ॥४२१॥
राम लखन बलवत विकट है, इनका यहां निवास।
कैसे करता राज भरत मुज, फले न मेरी आश ॥४२२॥
राम लखन को माने सबही, दीपे पुण्य प्रकाश।
तिमर सूर्य सब हरें जगतका, क्या ? दीपक उजियास ॥४२३॥

चिन्तामणि तज काच लहे कौं, पिये दूध तज छास।
कहाँ भरत कहां राम लखन हैं, इतना अतर खास ॥४२४॥

॥ राजासे कैकयीका वर मांगना ॥

अत वर मांगू राजासे, आती दशरथ पास।
अर्ज करे करजोड भूपसे, सुनिये मुज अरदास ॥४२५॥
मेरी मांगें आप पास में, याद करो महाराज।
मुज मांगें कर पूर्ण बादमें, कीजे आतम काज ॥४२६॥
याद करो मम वचन दिया था, जभी युद्ध के माय।
मैंने साज दिया था तुमको, जब खुश हो फरमाय ॥४२७॥
मांगो वर जो देऊ कुछ भी, वचन अटल मुज जान।
क्षत्रि वैन मुज कभी डिगेनां, यदि निकसे तन प्राण ॥४२८॥
जभी कहा था रखो कोपमें, अवसर पाकर आज।
वचन आपसे मांग रहीहूं, कीजे पूरण काज ॥४२९॥
क्षत्री वचन कभी नहिं हारे, रघुकुलकी यह रीत।
आप पुण्यके प्रबल पौरसा, करते नहीं अनीत ॥४३०॥
भूपति भाखे सुनो भामनी, इच्छा हो वर माग।
तप अबाध्य हो ऐसी वस्तू, मागो धर अनुराग ॥४३१॥
दानी नहिं हैं आप तुल्य कौ, जाना मैं पतिराज।
एक वचन यह मांग रहीहूं, दिओ भरत को ताज ॥४३

नृपति मन में अन्य विचारा, खबर तुम्हें नहिं पाय ।
राज छोड़ नृप सजम धारे, सबसे ममत मिटाय ॥४०४ ।
राम अवध के राजा होंगे, सब जन माने आन ।
राज मात कौशल्या होगी, सब विधि से सन्मान ॥४०५॥
भरतेश्वर भी सजम धारे, कुल दीपक कुल चट ।
कौशल्या मन फूल रही हैं, माना अति आनद ॥४०६॥
प्रेम २ में पागल होते, शुद्ध गए विसराय ।
मन वांछित हो कौशल्या के, राम अयोध्या पाय ॥४०७॥
भृकुटी टेढ़ी लाल नेन कर, बोली कैकयी मात ।
अरि ? निलज्ज निपट निष्ठुर तूं, कहती क्या ? ये बात ॥४०८॥
अरि ? मन्थरा धड़से सिर तुज, देऊं अभी उतार ।
ऐसा वचन सुनाया तेने, लगी कलेजे आर ॥४०९॥
राम भरत दोनों मुज नदण, दोनों आंख समान ।
अधिक न्यून मे किस को मानू, दोनों कुल के भान ॥४१० ।
राज्य राम या भरत करे तो, नहिं मुज मन में भेद ।
मेरे तो मन खुशी भई है, क्यों हो चिन्ता खेद ॥४११॥
जाकर नृप को बात सुना दू, जिह्वा ले तुज काट ।
ऐसी बात कभी मत कहना, होगा बड़ा उचाट ॥४१२॥
डरी धूजती बोली दासी, मन में होय उदास ।
हित की कहते उलटी माने, काटा मैंने घास ॥४१३॥

होय अयोध्या राजा कोई, इस मे मुझे न हान ।
हित की बात कही मैं तुमसे, पाई मैं अपमान ॥४१४॥
जरा देरके बात कैकयी, विगड़ा मन का भाव ।
दासी बात खरी है मैंने, उलटा दिया जवाब ॥४१५॥
बोली कैकयी सुभगे प्यारी ? क्यों रोती अकुलाय ।
शुभ चिंतक तू दासी मेरी, लीनी हृदय लगाय ॥४१६।
भूलो मेरी कही बातको, अन्य तरफ था ध्यान ।
अब तो हित की बात सुनाओ, करती सभी प्रमान ॥४१७॥
मैंने हाँस किया था तैंने, लीनी सच्ची मान ।
तब तो दासी कहने लागी, युक्ती एक निदान ॥४१८॥
मेरे मन यह बात समाई, होय भरत यदि भूप ।
तो मनकी सब व्यथा नशावें, बात रहें तद्रूप ॥४१९॥
भूपति से थी मांग आपकी, कई दिनोंकी खास ।
अभी समय पर मागो स्वामिनि ? हितकी कहूं प्रकाश ॥४२०॥
दिलमें चिन्ते कैकयी राणी, हो मुज सुतको राज ।
तो सब काज हमारा होवे, बनी रहें जग लाज ॥४२१॥
राम लखन बलवत विकट है, इनका यहां निवास ।
कैसे करता राज भरत मुज, फले न मेरी आश ॥४२२॥
राम लखन को माने सबही, दीपे पुण्य प्रकाश ।
तिमर सूर्य सब हरें जगतका, क्या ? दीपक उजियास ॥४२३॥

चिन्तामणि तज काच लहै कौ, पिये दूध तज छास ।
कहाँ भरत कहां राम लखन हैं, इतना अंतर खास ॥४२४॥

॥ राजासे कैकयी का वर मांगना ॥

अत. वर मांगू राजासे, आती दशरथ पास ।
अर्ज करे करजोड भूपसे, सुनिये मुज अरदास ॥४२५॥
मेरी मांगें आप पास में, याद करो महाराज ।
मुज मांगें कर पूर्ण बादमें, कीजे आतम काज ॥४२६॥
याद करो मम वचन दिया था, जभी युद्ध के माय ।
मैंने साज दिया था तुमको, जब खुश हो फरमाय ॥४२७॥
मांगो वर जो देऊं कुछ भी, वचन अटल मुज जान ।
क्षत्रि वैन मुज कभी डिगेना, यदि निकले तन प्राण ॥४२८॥
जभी कहा था रखो कोपमें, अवसर पाकर आज ।
वचन आपसे मांग रहीहूं, कीजे पूरण काज ॥४२९॥
क्षत्री वचन कभी नहिं हारे, रघुकुलकी यह रीत ।
आप पुण्यके प्रबल पौरसा, करते नहीं अनीत ॥४३०॥
भूपति भाखे सुनो भामनी, इच्छा हो वर माग ।
तप अवाध्य हो ऐसी वस्तू, मागो धर अनुराग ॥४३१॥
दानी नहि हैं आप तुल्य कौ, जाना में पतिराज ।
एक वचन यह माग रहीहूं, दिओ भरत को ताज ॥४३

चरन पकड़ गद २ स्वर वैना, कहै भरत ? सुन मात।
आप सरीखे भ्रात हमारे, पुरुषोत्तम विख्यात ॥४६२॥
राज योग्य अधिकारी नहिं मैं, संजम की इक आश।
तुम होते मैं भूप कहाऊं, मैं हूँ तुम का दास ॥४६३॥
भरत वचन सुन राम तुरत से, बोले सोच विचार।
मुज रहते नहि राज भरत ले, यह हैं आखिरकार ॥४६४॥
विनय वान अति भरत कहावे, मेरे रहते राज।
करे नहीं तो निश्चय मुज को, लगे हृदय में दाज ॥४६५॥
इधर कैकयी हो नाराजी, वचन पिता का जाय।
दोनों बात बनी रहैं ऐसा, करना काम सवाय ॥४६६॥
श्रेष्ट मुझे वनवास सिधाना, करना तुरत प्रयाण।
करू राज्य नहि राम सामने, या है भरत जवान ॥४६७॥
वचन पिता का और भरत का, मुझे निभाना खास।
भरत करेगा राज इगसे, मुज को है विश्वाश ॥४६८॥
सुनो पिताजी वचन आपका, और मात की आश।
बात रहेगी बनी सभी—मुज, जाने पर वनवास ॥४६९॥
कहै भरत क्यों ? नार वचन पे, करते इतना ख्याल।
त्रिया कहावे पाछल वुद्धी, करती वड़ी कमाल ॥४७०॥
ऐसा कह मत राम कहै यों, कैकयी मेरी मात।
हुक्म उठाना सीस झुकाना, सेवा कर दिन रात ॥४७१॥
इतना कहके राम-भूप के, कीना पांव प्रणाम।
जावे वन में सुख से रहिये, करे सिद्ध हम काम ॥४७२॥
नैना नीर बहाय भूमि पे, गस खा के गिर जाय।
दशरथ नृप को भरत उठाके, पडे पांव में आय ॥४७३॥
कहैं भूप अय कैकयी ? तेने, ढाया जुल्म अपार।
निर्दोषी पे जुल्म लगाया, ईश खोफ कुछ धार ॥४७४॥

॥ विदाई के समय रामका कैकई माता पे जाना ॥

कर धनुप ले राम चले जब, आए कैकयी पास।
सीस नमाया गुण मुख गाया, करते यों अरदास ॥४७५॥
अय माता ? हम वन को जाते, देओ अब आशीप।
कैकयी कहती अरे राम तुज, भला करे जगदीश ॥४७६॥
वर्ष चतुर्दश को वनवासा, करना होगा राम।
यह वर्ष अब छिन में निकले, नहीं फिकर का काम ॥४७७॥
यही काम मामूली माता ? बड़ी हर्ष की बात।
अवध सीममें पैर रखू नां, हुक्म तुम्हारा माथ ॥४७८॥
जाओ वेटा ? जल्द सिधाओ ? पितुका हुक्म बजाय।
मनका सारा दुःख मिटाओ, वर वीरत्व दिखाय ॥४७९॥

॥ राम का कौशल्या मात पे जाना ॥

जा कौशल्या मात पास में, नमन किया करजोड।
चिरजीवि रहो मेरे लाला, तपो दिवाली कोड ॥४८०॥
वदन चुम्ब निज गोद विठाया, खाओ मधुर आहार।
लाती में मिष्टान तुरत से, रसवति विविध प्रकार ॥४८१॥
वस माताजी ? क्षमा कीजिये, नहिं भोजन का काम।
म्हैं तो वेटा ? अभी खिलाऊं, तज नन्ना का नाम ॥४८२॥
क्यों कि राज तिलक शुभ होगा, तुमको आज महान।
नहिं जाने दूं नोराहारी, यह वद शकुन निदान ॥४८३॥
राम कहैं वह राज तिलक की, आश रही अति दूर।
उसके बदले वन जाने का, हुक्म हुआ मंजूर ॥४८४॥
क्या वेटा ? यह फिकर विकट सा, तुमने कहा सवाल।
बनी वात यह विगडी कैसे, कहो सकल मुज हाल ॥४८५॥
हुक्म आपका लेने खातिर, खड़ा दास यह आय।
दिया भरत को राज पिता ने, जिसकी चिंता नाय ॥४८६॥
वर्ष चतुर्दश वन में रहना, नहीं किसी का दोप।
वचन पिता का मुझे निभाना, इसमें है सन्तोप ॥४८७॥
वड़ी खुशाली धरके वेटा ? वैठी थी इस वार।
सुनकर सारी वातें अवतो, जान हुई वेकार ॥४८८॥

विकट कष्ट तुमपे आजावे, कौन करे सम्भाल।
अभी दूध के दांत रहे हैं, तू है भोली बाल ॥२१८॥
सिया मानो ? साथ न जाओ, सासु हुक्म धर प्यार।
सासु सेव किया पति सेवा, होती बार हजार ॥२१९॥
सिया कहे सासूजी सुनिये, छिन नहिं रहती दूर।
पति छाया सम नार कहावे, सग सभी सुख भूर ॥२२०॥
पति साथे यदि कष्ट होय तो, कष्ट वही सुख रूप।
त्रियारूप पतिरूप कहावे, बिना कंथ जग कूप ॥२२१॥
नर अर्धाङ्गिन नार कहावे, कैसे ? तजती दूर।
पति पीछे जो चले निरंतर, तो नारी का नूर ॥२२२॥
जो नारी को माना पति ने, माना जग किरतार।
नारी का परमेश्वर सचा, जगमें है भरतार ॥२२३॥
[illegible] — अमृत सम माने, कोटिवर्ष दुख जाय।
[illegible] शोभा है जगमें, जलधर जब वर्षाय ॥२२४॥
[illegible] पतिव्रत धर्म निभाना, पडे विपत सिर भार।
किंचित् भय मनमें नहिं मेरे, एक कंथ आधार ॥२२५॥
शूली के सम है सुख सैया, शून्य सकल संसार।
जहाँ राम तहां सीता रहती, यह निश्चय अवधार ॥२२६॥
नमस्कार कर सीता ऊठी, गई सास घबराय।
नैनों से जल धारा छूटी, मूर्छित हो गिरजाय ॥२२७॥

शुद्ध लेय कौशल्या बोली, धन्य सती साक्षात।
जिनसे व्याही वही धन्य है, मात पिता कुल जात ॥२२८॥
सभी अवध के सुखको तजके, जाती है वनवास।
दोनों कुलको उज्वल कीने, यथानाम गुणरास ॥२२९॥
अन्य राणियां सखी सहेल्या, सिय समझाने काज।
विध २ युक्ती कर भरमावे, मत छोड़ो सुख साज ॥२३०॥
मत जाओ वन ? रहो भवनमें, कष्ट वृथा क्यों धार।
बड़ी विपत जंगल में होगी, मिले न पूर्ण आहार ॥२३१॥
पैदल चलना नहीं सवारी, जाओगे सुध भूल।
सीता सुनके मधुर गिरासे, कहती वचन अमूल ॥२३२॥
जहाँ राम तहाँ सीता समझो, सभी सौख्य पति साथ।
प्रभु समान समझू मैं पति-को, कष्ट नहीं तिलमात ॥२३३॥
हुई और होगा अति सतियों, तिनमें सिया विशेष।
अवध नारियां अरजी करती, माने नहिं लवलेश ॥२३४॥

॥ रामके साथ सीताका वनमें जाना ॥

राम पास चल सीता आई, कहै चलूंगी साथ।
सिया रहेगा सदा संगमें, छाया जहाँ है नाथ ॥२३५॥
चौदह वर्षों तक वनवासा, रहो यहाँ सुख माय।
कौशल्या को माता समझो, सेवा सतत बजाय २३६॥
कैकयी की भी सेवा करना, मनमें होय खुशाल।
इसमें किसका दोष नहीं है, मेरा कर्म कराल ॥२३७॥
भरत शत्रुघन और लखनका, हुक्म उठाना खास।
चौदह वर्ष तो अभी निकलते, रखना मन विश्वास ॥२३८॥
सिया कहै क्या ? बात सुनाई, चलू आपके साथ।
जहाँ राम है वहाँ अयोध्या, सब ही मेरे आथ ॥२३९॥
मात विदेह आदेश यही था रहना पति के संग।
सेवा पति की कभी न छोड़ो, किरिये भक्ति उमंग ॥२४०॥
जिस मारग पे आप चलोगे, करूं पंथ वह साफ।
चरणों की रहुंगा मैं दासी, टले सभी संताप ॥२४१॥
जाती नहिं मैं किसी स्थानपे, पितृ द्वार सुसराल।
चढ़े सत्य पे उसे गिराना, यह मत करो दयाल ॥२४२॥

॥ रामके पास लक्ष्मण का आना ॥

लखन बात सुन आए रघुपे, जाते क्यों ? वनवास।
खून जिस्म का गरम हुआ है, मन हो परम उदास ॥२४३॥
अजब हुआ अंधेरा भरत को, देते क्यों ? अधिकार।
सभी तरफ से राज ताजका, रामचन्द्र हक़दार ॥२४४॥
किसी दूसरे का हक़ छिनना, इसमें क्या ? फल पाय।
किसके कहने सुनने पर नहिं, घर से राम सिधाय ॥२४५॥

परम विशुद्धी तेरी बुद्धी, अपना फर्ज विचार।
तन जावे तो खोफ न लाना, रहना अटल करार ॥५७४॥
पिता तुल्य लख रामचन्द्र को, सीता समझो मात।
पडे उन्हीं पे कष्ट उसीको, निज सिर लेना भ्रात ? ॥५७५॥
मेरा प्यारा राम दुलारा, तन मन भक्ति बजाय।
मेरी शीक्षा परम सुखाकर, दिल में लियो जमाय ॥५७६॥
है कर्तव्य सहारा देना, सुख दुख में रुब स्थान।
यदि भक्ति से हृदय चुराया, हो सिर छाप महान ॥५७७॥
भले प्राण अर्पण निज करदो, अपने भाई काज।
इसमें मैं हूँ खुशी अतुल ही, रख रघुकुल की लाज ॥५७८॥
रहा भाईवत् इतने दिन तू, अब रह दास समान।
मिलो राम से जल्दी जाओ, शुभाशीष मुज जान ॥ ७९॥

॥ राम लक्ष्मण और सीता का कौशल्या पे आना ॥

राम चरन में सीस नमाया, जल्दी लक्ष्मण आय।
तीनों मिल दर्शन को आखिर, कौशल्या घर जाय ॥५८०॥
अन्तिम फिर हित शीक्षा देती, कहै राम से मात।
कहती हूँ दो बात ध्यान में, शिशु रखना दिन रात ॥५८१॥
करी परीक्षा मैं तीनों की, हुआ हृदय विश्वाश।
होय सिद्ध रुब काम तुम्हारा, पूर्ण बनेगी आश ॥५८२।
आपस में मिल जुलके रहना, समय सभी अनुकूल।
पुत्र ? अकेला तू मत आना, कभी अवध में भूल ॥५८३॥
तुम्हें रवाना नहिं करती मैं, करा रहा है धर्म।
करो काम तीनों की मतिसे, यह है सच्चा कर्म ॥५८४॥
मेरा नन्हा कोमल बच्चा, लक्ष्मण का रख ख्याल।
कभी कष्ट नहिं पहुँचे इसको, मेरा प्यारा लाल ॥५८५।
यदि दुख इसको हुआ तो तेरी, नहिं है जगमें ठोर।
और जानकी जान तुल्य तूं, कीजे यत्न किरोर ॥५८६॥
समय नहीं है कष्ट सहन का, भोली भाली बाल।
कभी भूल हो गुन्हा इसी का, मत करना तूं ख्याल ॥५८७॥
सिया अकेली कभी न छोड़ो, कहा कभी बेभान।
करना मत विश्वाश किसी का, कहना सत्य ज़बान ॥५८८॥
एक २ सब पहरा देना, निशि में हो हुसियार।
निंद चमक से लेते रहना, गफलत सदा निवार ॥५८९॥
दो घटिका रहे रात तभी तो, देना निंद निवार।
प्रभु सुमरण अरु धर्म ध्यान कर, लेना जन्म सुधार ॥५९०॥
दुखी दीन या धर्मी जनपे, करना कुछ उपकार।
शरणागत का पालन करना, नरभव का यह सार ॥५९१॥
जैसे जाते वैसे आना, अचल रखो मन ध्यान।
इसमें भूल हुई तो मुज को, मुँह बता मत आन। ५९२॥
कष्ट सहो गंभीर वीर बन, कायर कहो न वैन।
देकर पीठ भगो मत डरसे, धरो वीर के चैन ॥५९३॥
धर्म अहिंसा पालन करना, सच्चा क्षत्री धर्म।
विष क्यारी परनार न छूना, दूर करो दुष्कर्म ॥५९४॥
मुज सेवा में भरत पुत्र है, मुज चिंता मत धार।
एक भाव रख सबसे हिल मिल, परहित कर सुविचार ॥५९५॥
कीजे काम सलाह से तीनों, शीक्षा यह सुविशेष।
कौशल्या को भूलो वेशक, शीख न भूलो एक ॥५९६॥
शीक्षा युत सुन वचन मात के, बढ़ता मन उत्साह।
विश्व वन्द्य है ? माता तेरा, हैं उपकार अथाह ॥५९७॥
तीनों मिल माता को वन्दे, किया वचन मजूर।
धनुष बाण का भाथा लीना, सज धज चढते नूर ॥५९८॥

॥ वनमें जाते समय पुरवासी की पुकार ॥

पितु वचन निभाते, रघुवरजी जाते, वनमें मोद से ॥टेर॥

राम लखन सीता मिल तीनों, जाते हैं वनवास।
राजपाट पितु माता छोडे, छोडे भव्य निवास ॥५९९॥
सबसे किया प्रणाम रामने, फेर किया प्रस्थान।
हितु मितु जनसे मिले प्रेमसे, धर उत्साह महान ॥६००॥

उचित कार्य मैंने नहिं कीना जाने सब संसार।
प्यारे पुत्र को दुःख दिया मैं, होता होवन हार ॥६३१॥
राम कहे पितु सुनो हमारी, अपने वचन विचार।
राज छोड़ ली दीक्षा जलदी, कीजे आत्म उद्धार ॥६३२॥
पुन मात से कहें रघुवरजी, बिछुड़ेंगे हम आज।
प्रेम पूर्ण से करी पालना, एक वचन के काज ॥६३३॥
होते थे हम मुदित दर्शकर, हमें बिठाते गोद।
हाथ सीस पे धरती माता, पाती पूर्ण प्रमोद ॥६३४॥
जो कुछ भावी हुआ वही जो, नहिं टलने का लेख।
मात पिताजी नगर सिधाओ, आखिर अरजी एक ॥६३५॥
मात पिता सुन नैन नीर धर, धरे राम सिर हाथ।
राम लखन सिय चरन चूमते, पगधारो मम नाथ ॥६३६॥
देय दिलासा मात पिता को राघव आगे धाय।
मात पिता सब गए नगर में, निज मन को समझाय ॥६३७॥
औरों को भी दिया दिलासा, अवध भणी जन जाय।
पलटे मंत्री आदिक सब ही, अधिक राम गुन गाय ॥६३८॥
राम लखन अब चले सियाजी, धर ईश्वर का ध्यान।
संकट पड़ते उनको सहते, होते नहीं मन म्लान ॥६३९॥
जहां जाते वहां गावपती मिल, करते थे अरदास।
राम विराजो यहां दयाकर, कीजे महिल निवास ॥६४०॥

गांव नगर पाटन फिरते, रहें एक नहिं स्थान।
उधर भरत की बात सुनावे, रखिये श्रोता ध्यान ॥६४१॥

॥ दासी मन्थरा का भरत पे आना ॥

सखी मन्थरा सुना आसजी, नहिं लेते हैं राज।
आकर कहने लगी मधुर स्वर, मेरा है ये काज ॥६४२॥
राणी कैकयी को सुध नहिं थी, जाय दिया मैं भान।
इस कारण से मिला राजपद, समझो मन धर ज्ञान ॥६४३॥
आए माता पास भरतजी, माता पाई मोद।
कहो बेटा हो कुशल क्षेम में, सुनी भरत हो क्रोध ॥६४४॥
अए माताजी ? क्या कहते हो, लगे कलेजे आर।
इतनी तेजी क्यों है बेटा ? आज हुए हद बार ॥६४५॥
क्या नहिं जानूं तुमने मिल कर, गूंथी झूठी जाल।
मैंने माना राज तख्त को, जैसे कैद कराल ॥६४६॥
कभी राज की बात कही तो, करलूंगा निज घात।
कहती माता जरा ध्यान से, सुन ले मेरी बात ॥६४७॥
मुजको भी यह खबर नहीं थी, होगा राजा राम।
भला मन्थरा दासी का हो, कहती हाल तमाम ॥६४८॥
भूपति पास दो मांग मेरी थी, रखी हुई मजूर।
अवसर उचित जान मैं मांगी, क्या ? मैं किया कसूर ॥६४९॥

चौदह वर्षों राम रहे वन, और भरत को राज।
वचन यही दोनों मैं मांगे, हुआ वही सब काज ॥६५०॥
नृप ने की थी टाला टूली, मैं जिद लीनी खास।
अन्त तंग हो राम सिया अरु, लखन गए वनवास ॥६५१॥
बेटा ? स्वयं विचारो दिल में, मुजको कब मजूर।
राम भूप हो मुज लाला को, मिले न हक दस्तूर ॥६५२॥
मैंने अपना काम बजाया, बोझा सिरका मेट।
तुम जानो अब काम तुम्हारा, रखनी अपनी पेठ ॥६५३॥
हां में हा तब मिला मन्थरा, सुनिये भरत कुमार।
माता की शिक्षा सच मानो, तजिये निज तकरार ॥६५४॥

॥ कैकयी और मन्थरा पे भरत को क्रोध आना ॥

नमक हरामी सारी तेने, दीनी आग लगाय।
खड्ग काढ़ कर कहे ठहर जा, कज़ा निकट में आय ॥६५५॥
शत्रुघन कहे हाथ पकड़ के, होता होवन हार।
दाग लगाते अपने कुल में, कर नारी पे वार ॥६५६॥
हरामजादी, उठ जल्दी से, दृष्टि से हो दूर।
दृग से आंसू लगे टपकने, हो चिन्ता में चूर ॥६५७॥
माता आंसू पोंछ कहे रे ? मत रो मेरे लाल ?।
हाथ झपट माता से कहते, हट जाओ हरहाल ॥६५८॥

राम लखन भी यह कहते हैं, भ्राता क्यों न विचार ।
मस्तक तिलक लगादू तेरे, होगा सब श्रयकार ॥६८८॥
कोटि कहो नहिं मानू भूपति, राज पाट बेकार ।
हो कर चाकर रहूँ राम का, राम राज्य अधिकार ॥६८६॥
जलते को मत अधिक जलाओ, सुनू अन्य नहिं बात ।
वन दुख पावे भ्राता, ऐसे—राज ताज पे लात ॥६६०।

॥ वन में राम जाने पर कैकयी का विलाप ॥

भरत हाल लख कैकयी सोचे, उलटा बना बनाव ।
क्या ? सोची थी हुई बात क्या, मुजपे धरा कुभाव ॥६६१॥
बिना राम के राज चले नहिं, भरत न माने बात ।
जगसे वैर बसाया मैंने, मन ही मन पछतात ॥६६२॥
कीर्ति अमूल्य गमाई मैंने, अपयश जगमें पाय ।
एक बना कारज नहिं मेरा, खान पान बिसराय ॥६६३॥
यों सु विचारी दशरथ के ढिग, कैकयी आई चाल ।
कहैं नोड़ कर हाल हृदय का, दगसे आंशू डाल ॥६६४॥
आज्ञा दीजे प्राण पतीजी, लाऊ राम बुलाय ।
लषमण सीता तुरत मनाऊं, साथ भरत ले जाय ।६६५॥
मेरे जाते राम जरूरी, आवेंगे धर मोद ।
हर्गिज नहिं छोड़ूगी इनको, पकड़ बिठाऊं गोद ॥६६६॥

दशरथ कहते कैकयी अब तुज, मन आया सुविचार ।
मलीन मति होती इतने दिन, किया उलट व्यवहार ॥६६७॥
बिन सोचे नर करते कारज, विपदा होय अनेक ।
तुजको मैं पहले समझाई, पर मानी नहिं एक ॥६६८॥
वचन मांगती समय सोच के, पाती नहिं अपमान ।
मगल में बाधाकर—सबकी, जलवाई है जान ॥६६६॥
जाय मनाओ ? इसमें मेरा, किंचित् नहिं इनकार ।
आज्ञा पाते रथ सज कीना, छोड़ भाव बदकार ॥७००॥

॥ कैकयी मंत्रि और भरत वनमें रामके पास जाना ॥

कैकयी मन्त्री और भरतजी, बैठे रथ के माय ।
शीघ्र गति से यान चलाया, दक्षिण दिशि में जाय ॥७०१॥
छहों दिवस में चलते चलते, धरा उलघी खूब ।
तरु तल देखे तीनों जनकी, मूर्ति आवे हूब ।७०२॥
रज उडती जब देख जानकी, भय धर कहती बैन ।
सावधान हो रहिये साहिब, लखो दीर्घ कर नैन ॥७०३॥
सुनो राम कर खड्ग धार के, उठते हो हुशियार ।
देख पताका भरत भ्रात की, हुआ अधिक मन प्यार ॥७०४॥
लखो लखन यह भरत आय हैं, और कोई ना बात ।
माता कैकयी रहीं साथ में, और शत्रुघन भ्रात ॥७०५॥

निकट आय उतरे रथ पर से, नैना नीर गिराय ।
राम चरण में गिरे भरतजी, लीना गले लगाय ॥७०६॥
अय ? आंखों के तारे प्यारे, क्यों रोते बेजार ।
आंख उठा देखो मुख सामे, राम बात लो धार ॥७०७॥
त्रिलख विलख क्यों रोते भ्राता ?, होकरके बेमान ।
देख तुम्हारी हालत मेरे, जाय पखेरू प्राण ।७०८॥
क्या दुःख कौन ? सताया तुमको, छोड़ अवधका राज ।
आये हो जगल में चल के, इतने क्यों ? नाराज ॥७०६॥
राज भार दे आए किसको, कहो अवध के हाल ।
मेरी दाई भुजा तुल्य हो, रचा बाल सा ख्याल ॥७१०॥
दुखमय देखू तुम्हें स्वप्न में, होता जार बेजार ।
मेरे होते तुम दुख पावे, मुजको शत धिक्कार ॥७११॥
इसी ज़िंदगी पर लानत हैं, जीने में क्या ? सार ।
अधिक मुजे हैरान करो मत, भाई ? प्राणाधार ॥७१२॥
कहे भरत बेकार बनाकर, आए सब को छोड़ ।
क्यों हि गुजारू रही जिन्दगी, आया तुमपे दौड़ ॥७१३॥
बिन सोचे समझे क्या कीना, निकले पुरी बहार ।
रुके किसीके नहीं रुकाए, करती अवध पुकार ॥७१४॥
दोष नहीं हैं जरा आपका, किस्मत का ये खेल ।
मेरी माता ने छल बलकर, घर से दिया धकेल ॥७१५॥

पडे कष्ट यदि तुम पे आकर, हमें खबर दिलवाय।
न्याय नीति से प्रजा निभाओ, बढता सुयश सवाय ॥७४४॥
भरत कहे अरजी सुन लीजे, आखिर मेरी बात।
पाँव पादुका देओ स्वामिन्! पूजूंगा दिनरात ॥७४५॥

कवित्त- अरे राम भैया प्यारे? मुजको खटाऊ दे दे,
पादुका से तख्त सजा, हुकम बजाऊंगा।
भूमि पे आसन लगा, रहूंगा संन्यासी वत्,
भूषन वशन तज, लूखा सूखा खाऊंगा।
वर्ष चउदह बीते, बाद दर्श जल्द दीजे,
यदि नहीं आये तम, अग्नि में जलाऊंगा।
कहे 'सूर्यमुनि, ऐसे, भाई प्रेम जानो साँच,
वर्ष चउदह तक प्रण को निभाऊंगा ॥१॥

हो बातें यों बहुत देर तक, अतुल प्रेम उरधार।
धरा सीस पे हाथ मात ने, मिलते बाह पसार ॥७४६॥
यथा योग्य सब मिले परस्पर, राम किया प्रस्थान।
राम विरह से सब के दग से, निकला नीर महान ॥७४७॥
रही आए राम वहाँ तक, खडे सभी धर प्रेम।
बाद बैठ सब रथ में आए, अवधपुरी सुख क्षेम ॥७४८॥

आदि अंत से बात कही सब, सुन खुश होता भूप।
वचन कर्ज़ का उतरा मेरा, अच्छा हुआ अनूप ॥७४९॥
कर महोत्सव दे राज भरत को, नगरी सब सिनगार।
घर २ मगल महिला गावे, घर २ खुशी अपार ॥७५०॥

॥ राजा दशरथ का संसार त्यागना ॥

मिटा राजका सोच सर्व ही, दशरथ मन आनद।
अबतो आतम साधत करना, छोड़ सभी जग द्वंद ॥७५१॥
दशरथ हो तैयार योगमें, कौशल्या तव आय।
अर्ज करे क्या? नाथ विचारी, अपना फर्ज निभाय ॥७५२॥
राम छोड वनवास गए सुज, इधर आप टो छोड़।
बाद सहारा हमें किसी का, आप तलक एम दोड़ ॥७५३॥
राणी मंत्री सुत आकर के, भूप भणी समझाय।
एक न माने बात किसीकी, शिव रमणी चित चाय ॥७५४॥
सब को दे समझाय भूपति, चढ़ा जोर वैराग।
सत्यभुति-मुनिराज पास में, सजम ले वड़भाग ॥७५५॥
लगता रंग मजीठ जिन्होंके, झूठा लख ससार।
गृही वेष तज लिया साधु का, हुए आप अनगार ॥७५६॥
चन्द्रगती विद्याधर मुनिकी, वाणी सुन व्रत धार।
भामण्डल को राजा करके, ले निज काज सुधार ॥७५७॥

तप जप सजम रक्त रहे मुनि, सारे आतम काज।
राम रास अब कहूं रसीला, राम भक्त के ताज ॥७५८॥

॥ रामका वन में जाना ॥

चले रामजी दक्षिण दिशि में, करते स्वेच्छावास।
चित्रकूट आ पहुचे जहाँ पे, करते सुखद निवास ॥७५९॥
बीते कुछ दिन रहे वहा पे, पाए शांति अपार।
चलते पिछली रात वहाँ से, अटवी दवदाकार ॥७६०॥
कोलाहल पक्षी जहाँ करते, रहे सिंह गुंजार।
कुम्भ विदारे गज के जिनसे, पडे मोति अंबार ॥७६१॥
चहुं दिशि भालू गीदड़ वानर, शूकर हिंसक जीव।
करे भयानक शब्द जोर से, भीरु डरे अतीव ॥७६२॥
फल फूलादिक खाय स्वाद युत, पिये छान कर नीर।
केते दिन वहाँ रहे मोद से, निर्भय होय सधीर ॥७६३॥
क्रमसे आगे चले वहाँ से, देश अवंती आय।
वट तल ले विश्राम थके से, अचरज एक दिखाय ॥७६४॥
शून्य सभी हे स्थान जहा के, वन वाड़ी आराम।
गाय भैंस छूटे फिरते हैं, भरे धान के ठाम ॥७६५॥
मनुज शब्द नहि कान पडे हैं, कहे लखन से राम।
शून्य पड़े क्यों स्थान सर्व ही, निर्णय करो तमाम ॥७६६॥

मात पिता मुज श्रावक सच्चा, जैन धर्म सुध धार।
जिनका सुतमें विजय नाम से, श्रद्धा जैन करार ॥७९६॥
द्रव्य हेतु उज्जैणी आया, लेता द्रव्य कमाय।
द्रव्य करे अनरथ सब विधि से, जभी कुमति दिल छाय ॥७९७॥
एक दिना मुज दृष्टी पड़ती, केली गर्भ समान।
चन्द्र वदन मृग लोचन जैसी, रंभा रूप महान ॥७९८॥
अनग थी वेश्या मदमाती, पड़ा उसी के पास।
कौन चुके नहिं काम विवश में, हुए काम के दास ॥७९९॥
गणिका वश हो कामी निशदिन, रहता उसके पास।
क्यों नहिं विगडे बात उमी की, हिये विषय रस प्यास ॥८००॥
द्रव्य लिया गणिका सब मेरा, सब स्वारथ के साज।
गणिका कहती जाओ यहां से, एक करो मुज काज ॥८०१॥
पटराणी के कुण्डल दोनों, लाओ जल्दी जाय।
जब तो तुममें प्रेम रहेगा, साच कहूं समझाय ॥८०२॥
गया महिल में चोरी करने, जागे राणी राय।
छिप बैठा एकान्त स्थान में, कब निद्रा वश पाय ॥८०३॥
जब सोवे तो राणी श्रुत से, लेऊ कुण्डल चोर।
किन्तु भूप था चिंतातुर में, निद्रा गई निठोर ॥८०४॥
राणी पूछे चिंतातुर क्यों, नैना नींद न आय।
त्रिय को गुह्य कभी ना कहिये, सोचे नृप मन माय ॥८०५।

बोलाये नहिं बोले राजा, हठ ले राणी तान।
आखिर बात कही राजा ने, आदि रु अन्त बयान ॥८०६॥
वज्रजंघ नहिं नमता मुजको, करूं उसे संहार।
या कारण से नींद न आई, आता अधिक विचार ॥८०७॥
मैने बात सुनी यह वहाँ पे, मन में किया विचार।
वज्रजंघ निज धर्मी मेरा, है समकित दृढ धार ॥८०८॥
गणिका वश हो द्रव्य गमाया, आया चोरी काज।
मैं पापी निर्लज्ज कहाया, लोपी कुल की लाज ॥८०९॥
धर्म समझ का यह फल लीजे, कीजे पर उपकार।
यों सोची में भेद सुनाने, आया मम धर प्यार ॥८१०॥
कौन सिंहोदर भूप सामने, लेता जीव बचाय।
निज का बचना करो सोच के, समकित रखो सवाय ॥८११॥
राय कहैं उपकारी तुम हो, दिया भेद सब आय।
सह धर्मी का सगपण सच्चा, तुमने दिया दिखाय ॥८१२॥
वज्रजंघ घबराया सुनकर, पहिरे टोप सनाह।
संग्रह करते धान्य नीर का, पुर के द्वार दिलाय ॥८१३॥
कोप युक्त सिंहोदर आया, लिया नगर को घेर।
पुर नरनारी सब घबराए, लख सेना का ढेर ॥८१४॥
दूत एक सिंहोदर भेजा, वज्रजघ के पास।
घेरा आन दिया है हमने, नहिं बचने की आश ॥८१५॥

चहो बचाना जान तुम्हारी, नमो चरण में आय।
वृथा धर्म के जाल फँसे हो, जीवन दीप जलाय ॥८१६॥
वज्रजंघनने कहा दूतसे, राज पाट धन माल।
इसकी मुजको परवाह नहिं है, धर्म एक रखवाल ॥८१७॥
सुगुरुदेवके शिवा अन्य को, नहिं नमाता सीस।
छोड़ राजको जाता यहाँ से, मनमें जप जगदीश ॥८१८॥
वृथा प्रजा को दुख देना है, क्या है ? इसमें सार।
धर्म न त्यागू हर्गिज मेरा, उलट पड़े संसार ॥८१९॥
क्षत्री धर्म कभी नहिं छोटे, करे जान पर वार।
क्या ? हट करना वृथा इसीमें, देखा तुमने सार ॥८२०॥
सिंहोदर को चढ़ा रोष अति, सुनकर भूप जवाब।
विना वध हर्गिज नहिं छोड़ूं, मुजपे करे दबाव ॥८२१॥
लूट प्रजाको आग लगाई, भगे नगर नर नार।
हीन किया है अन्न वस्त्रसे, प्रजा बनी निर्धार ॥८२२॥
वैभव शाली देश सर्वही दीना तुरत उजाड।
उनमें से मैं भी भगकर के, आय आप आधार ॥८२३॥
आप दर्शसे मिला सभी सुख, निर्भय हुआ अपार।
आज्ञा आप अब दीजे मुजको, जाता अपने द्वार ॥८२४॥
नारी हित जाता मैं स्वामिन्!, राम दया दिल लाय।
कटि कदोरा दिया हर्ष से, लेके सीख सिधाय ॥८२५॥

मात पिता मुज श्रावक सघा, जैन धर्म सुध धार।
जिनका सुतमें विजय नाम से, श्रद्धा जैन करार ॥७९६॥
द्रव्य हेतु उज्जैणी आया, लेता द्रव्य कमाय।
द्रव्य करे अनरथ सब विधि से, जभी कुमति दिल छाय ॥७९७॥
एक दिना मुज दृष्टी पड़ती, केली गर्भ समान।
चन्द्र वदन मृग लोचन जैसी, रंभा रूप महान ॥७९८॥
अनग थी वेश्या मदमाती, पड़ा उसी के पास।
कौन चुके नहिं काम विवश में, हुए काम के दास ॥७९९॥
गणिका वश हो कामी निशदिन, रहता उसके पास।
क्यों नहिं विगड़े बात उन्ही की, हिये विषय रस प्यास ॥८००॥
द्रव्य लिया गणिका सब मेरा, सब स्वारथ के साज।
गणिका कहती जाओ यहां से, एक करो मुज काज ॥८०१॥
पटराणी के कुण्डल दोनों, लाओ जल्दी जाय।
जब तो तुमसे प्रेम रहेगा, साच कहू समझाय ॥८०२॥
गया महिल में चोरी करने, जागे राणी राय।
छिप बेठा एकान्त स्थान में, कब निद्रा वश पाय ॥८०३॥
जब सोवे तो राणी श्र त से, लेऊ कुण्डल चोर।
किन्तु भूप था चिंतातुर में, निद्रा गई निठोर ॥८०४॥
राणी पूछे चितातुर क्यों, नैना नींद न आय।
त्रिय को गुह्य कभी नां कहिये, सोचे नृप मन माय ॥८०५।

बोलाये नहिं बोले राजा, हठ ले राणी तान।
आखिर बात कही राजा ने, आदि रु अन्त बयान ॥८०६॥
वज्रजघ नहिं नमता मुजको, करू उसे संहार।
या कारण से नींद न आई, आता अधिक विचार ॥८०७॥
मैंने बात सुनी यह वहाँ पे, मन में किया विचार।
वज्रजघ निज धर्मी मेरा, हे समकित दृढ धार ॥८०८॥
गणिका वश हो द्रव्य गमाया, आया चोरी काज।
मैं पापी निर्लज्ज कहाया, लोपी कुल की लाज ॥८०९॥
धर्म समझ का यह फल लीजे, कीजे पर उपकार।
यों सोची में भेद सुनाने, आया मम धर प्यार ॥८१०॥
कौन सिंहोदर भूप सामने, लेता जीव बचाय।
निज का यचना करो मोक्ष के, समकित रखो सवाय ॥८११॥
राय कहें उपकारी तुम हो, दिया भेद सब आय।
सह धर्मी का सगपण सच्चा, तुमने दिया दिखाय ॥८ २॥
वज्रजघ घवराया सुनकर, पहिरे टोप सनाह।
संग्रह करते धान्य नीर का, पुर के द्वार दिलाय ॥८१३॥
कोप युक्त सिंहोदर आया, लिया नगर को घेर।
पुर नरनारी सब घवराए, लख सेना का ढेर ॥८१४॥
दूत एक सिंहोदर भेजा, वज्रजघ के पास।
घेरा आन दिया है हमने, नहिं बचने की आश ॥८१५॥

चहो बचाना जान तुम्हारी, नमो चरण में आय।
वृथा धर्म के जाल फँसे हो, जीवन दीप जलाय ॥८१६॥
वज्रजघनने कहा दूतसे, राज पाट धन माल।
इसकी मुजको परवाह नहिं है, धर्म एक रखवाल ॥८१७॥
सुगुरुदेवके शिवा अन्य को, नहिं नमाता सीस।
छोड़ राजको जाता यहाँ से, मनमें जप जगदीश ॥८१८॥
वृथा प्रजा को दुख देना है, क्या है ? इसमें सार।
धर्म न त्यागू हर्गिज मेरा, उलट पड़े ससार ॥८१९॥
क्षत्री धर्म कभी नहिं छोडे, करे जान पर वार।
क्या ? हट करना वृथा इसीमें, देखा तुमने सार ॥८२०॥
सिंहोदर को चढ़ा रोष अति, सुनकर भूप जवाब।
विना वध हर्गिज नहिं छोड़ू, मुजपे करे दवाव ॥८२१॥
लूट प्रजाको आग लगाई, भगे नगर नर नार।
हीन किया है अश्व वलसे, प्रजा वनी निर्धार ॥८२२॥
वैभव शाली देश सर्वही दीना तुरत उजाड।
उनमें से में भी भगकर के, आय आप आधार ॥८२३॥
आप दर्शसे मिला सभी सुख, निर्भय हुआ अपार।
आज्ञा आप अब दीजे मुजको, जाता अपने द्वार ॥८२४॥
नारी हित जाता में स्वामिन् !, राम दया दिल लाय।
कटि कदोरा दिया हर्ष से, लेके सीख सिधाय ॥८२५॥

राज पाट यह सभी आपका, किया दुष्टमें काम।
आज्ञा होसो काम करू में, हुक्म करो श्रीराम ॥८५५॥
राम कहैं मिल झुल तुम रहिये, नहिं सेवक नहिं नाथ।
दोनों भ्रात बराबर गिनिये, एक प्रेम के साथ ॥८५६॥
सिंहोदर से वज्रजंघ को, आधा राज दिलाय।
किया सभी मजूर भूपने, प्रेम सहित मिलवाय ॥८५७॥
अर्ज सिंहोदर करे रामसे, मेरी यह अवधार।
सुता तीनसौं मेरी—वज्रकी, कन्या आठ स्विकार ॥८५८॥
साथ लखनके व्याह कराऊं, तब कहते यों राम।
लखन करे मजूर तभी तो, होगा काम तमाम ।८५९॥
लखन कहैं शादी नहिं करता, जहा तक है वनवास।
व्याह करूंगा बाद जरूरी, मन रखिये विश्वाश ।८६०॥
गए उजेणी सिंहदर नृप, मिटा सकल सताप।
रामलखन भी चले वहांसे, निर्भय होके आप ।८६१॥
सीता के थक जाने पर ही, लेते थे विश्राम।
कूपचड उद्यान यहां पे, लेते है आराम ॥८६२॥
लगी प्यास सीताको अति ही, लखन नीरके काज।
गए एक सरवरके तटपर, जहाँ जल कीड़ा साज ॥८६३॥

॥ बालखिल्य का राज भ्रष्ट होना ॥

कुबेरपुरका आया राजा, वहां भूप कल्याण।
देख लखन को रूपरंग मय, मोहित हुआ महान ॥८६४।
हाथ मिलाया भूप लखनसे, धरके खूब पियार।
लखब सोचते पुरुष वेशमें, है यह कोई नार ॥८६५॥
नृप आमन्त्रण दिया अशन का, कीजे पावन द्वार।
लखन कहैं मुज भ्राता वनमें, कैसे करूं आहार ॥८६६॥
निज शचिवको भेज भूपने, बुलवाया है राम।
अपने राज महिल में लाए, कर भक्ती के काम ॥८६७॥
भोजन पान विविध कर सेवा, सिंहासन विठलाय।
अरज करे तुम हो उपकारी, देश्रो कष्ट मिटाय ॥८६८॥
सुनो विनय इक नाथ हमारी, आदि अंतसे बात।
बालखिल्य है पिता हमारा, पृथ्वीनामक मात ॥८६९॥
गर्भवती थी राणी तबतो, म्लेच्छ यवन चढ़ आय।
बालखिल्य को पकड़ बांधके, निजी साथ लेजाय ॥८७०॥
कई मासों तक पता चला नहिं, कीनी खूब तलाश।
उधर राणी ने कन्या जाई, थी सुत की मन आश ॥८७१॥
मत्री राणी सोचा की यह, सुता जन्म की बात।
सुन सिंहोदर राज लेयगा, होय बड़ा उत्पात ॥८७२॥

इस कारण से सब मिल जुलके, युक्ती एक उपाय।
सुत जन्मा है महाराणी ने, सब जग में फैलाय ॥८७३॥
सिंहोदर को खबर दिलाई, हुआ पुत्र सुखदाय।
उत्तर में सिंहोदर बोला, पूर्ण खुशी मन लाय ॥८७४॥
राज तिलक कीजे लघु सुत को, यह मेरा फरमान।
पुरुप वेष मुज को पहिनाया, होती पुरुष पिछान ॥८७५॥
राणी मंत्री सिवा किसी को, पाया भेद न ज्ञान।
हुआ प्रसिद्ध कल्याण भूप से, मिला मुझे सन्मान ॥८७६॥
म्लेच्छ भूप को धन देने पर, छोड़े नहिं मुज तात।
लड़ने की ताकत नहि मेरी, बड़ी विकट यह बात ॥८७७॥
वज्रजघ की रक्षा कीनी, मेरी भी कर नाथ।
रक्षा कर दुख दूर हमारा, छुड़ा यवन का साथ ॥८७८॥
राम कहे तुम पुरुप वेष को, रखिये धार शरीर।
पिता छुड़ाकर राज दिलाऊं, सत्य वचन आखीर ॥८७९॥
मन्त्रि कहे यह राजकुमारी, लक्ष्मण को दी सूप।
यह कन्या है शरण आपके, सुन्दर रूप अनूप ॥८८०॥
राम कहै वनवास लौटते, फेर व्याह का काम।
जबतक घर में रखो इसी को, होगा काम तमाम ॥८८१॥
तीन दिनों के बाद वहाँ से, पिछली रात मझार।
धर के साहस चले सुबह में, तीनों एक कतार ॥८८२॥

राज पाट यह सभी आपका, किया दुष्टने काम।
आज्ञा होवो काम करूं में, हुक्म करो श्रीराम ॥८५५॥
राम कहै मिल जुल तुम रहिये, नहिं सेवक नहिं नाथ।
दोनों भ्रात बराबर गिनिये, एक प्रेम के साथ ॥८५६॥
सिंहोदर से वज्रजंघ को, आधा राज दिलाय।
किया सभी मजूर भूपने, प्रेम सहित मिलवाय ॥८५७॥
अर्ज सिंहोदर करे रामसे, मेरी यह अवधार।
सुता तीनसौं मेरी-वज्रकी, कन्या आठ स्विकार ।।८५८॥
साथ लखनके व्याह कराऊं, तब कहते यों राम।
लछन करे मजूर तभी तो, होगा काम तमाम। ८५९॥
लखन कहैं शादी नहिं करता, जहां तक है वनवास।
व्याह करूंगा बाद जरूरी, मन रखिये विश्वाश। ८६०॥
गए उजेणी सिंहदर नृप, मिटा सकल सताप।
रामलखन भी चले वहांसे, निर्भय होके आप ।।८६१॥
सीता के थक जाने पर ही, लेते ये विश्राम।
कूपचन्द्र उद्यान यहां पे, लेते है आराम ॥८६२॥
लगी प्यास सीताको अति ही, लखन नीरके काज।
गए एक सरवरके तटपर, जहाँ जल कीड़ा साज ॥८६३॥

॥ बालखिल्य का राज भ्रष्ट होना ॥

कुबेरपुरका आया राजा, वहां भूप कल्याण।
देख लखन को रूपरंग-मय, मोहित हुआ महान ॥८६४।
हाथ मिलाया भूप लखनसे, धरके खूब पियार।
लखन सोचते पुरुष वेशमें, है यह कोई नार ॥८५६॥
नृप आमन्त्रण दिया अशन का, कीजे पावन द्वार।
लखन कहैं मुज भ्राता वनमें, कैसे करूं आहार ॥८६६॥
निज शचिवको भेज भूपने, बुलवाया है राम।
अपने राज महिल में लाए, कर भक्ती के काम ॥८६७॥
भोजन पान विविध कर सेवा, सिंहासन विठलाय।
अरज करे तुम हो उपकारी, देश्रो कष्ट मिटाय ॥८६८॥
सुनो विनय इक नाथ हमारी, आदि-अंतसे बात।
बालखिल्य है पिता हमारा, पृथ्वीनामक मात ॥८६९॥
गर्भवती थी राणी तबतो, म्लेच्छ यवन चढ़ आय।
बालखिल्य को पकड़ बांधके, निजी साथ लेजाय ॥८७०॥
कई मासों तक पता चला नहिं, कीनी खूब तलाश।
उधर राणी ने कन्या जाई, थी सुत की मन आश ॥८७१॥
मन्त्री राणी सोचा की यह, सुता जन्म की बात।
सुन सिंहोदर राज लेयगा, होय वड़ा उत्पात ॥८७२॥

इस कारण से सब मिल जुलके, युक्ती एक उपाय।
सुत जन्मा है महाराणी ने, सब जग मे फैलाय ॥८७३॥
सिंहोदर को खबर दिलाई, हुआ पुत्र सुखदाय।
उत्तर में सिंहोदर बोला, पूर्ण खुशी मन लाय ॥८७४॥
राज तिलक कीजे लघु सुत को, यह मेरा फरमान।
पुरुष वेष मुज को पहिनाया, होती पुरुष पिछान ॥८७५॥
राणी मंत्री सिवा किसी को, पाया भेद न ज्ञान।
हुआ प्रसिद्ध कल्याण भूप से, मिला मुझे सन्मान ॥८७६॥
म्लेच्छ भूप को धन देने पर, छोड़े नहिं मुज तात।
लड़ने की ताकत नहिं मेरी, बड़ी विकट यह बात ॥८७७॥
वज्रजंघ की रक्षा कीनी, मेरी भी कर नाथ।
रक्षा कर दुख-दूर हमारा, छुड़ा यवन का साथ ॥८७८॥
राम कहै तुम पुरुष वेष को, रखिये धार-शरीर।
पिता छुड़ाकर राज दिलाऊं, सत्य वचन आखीर ॥८७९॥
मन्त्रि कहै यह राजकुमारी, लक्ष्मण को दी सूप।
यह कन्या है शरण आपके, सुन्दर रूप अनूप ॥८८०॥
राम कहै वनवास लौटते, फेर व्याह का काम।
जबतक घर में रखो इसी को, होगा काम तमाम ॥८८१॥
तीन दिनों के बाद वहाँ से, पिछली रात मझार।
धर के साहस चले सुबह में, तीनों एक कतार ॥८८२॥

इधर पिसाचक कपिल विकल मन, आया घरपे चाल।
देख राम सिर पे चल डाला, कहे वचन विकराल ॥६११॥
रे कुलटा ? इस घर पे किस को, तेने दिया बिठाय।
अग्नी होत्री धर्म हमारा, तेने भ्रष्ट कराय ॥६१२॥
कौन जाति के है ये तीनों, किया धर्म मुज हान।
हुआ अपावन घर ये मेरा, दिया म्लेच्छ को मान ॥६१३॥
ब्याह किया मुज साथ वृथा में, फूटा मेरा भाग।
निकल रांड यों कहके लाया, लकडी बलती आग। ॥६१४।
भगी ब्राह्मणी डर मन लाके, सिया शरण चल आय।
फिर भी शठ मारण को धाया, रीष अधिक मन लाय ॥६१५॥
देख लखन यह हाल विप्र का, समझावे धर प्यार।
नहिं माने चढाल जरा भी, अपनी हठ ली धार ॥६१६॥
लखन ऊठ कर कोप विप्र पे, पकड़ा पैर उछाल।
खूब घुमाया नभमें उसको, रोता वह असराल ॥६१७॥
राम कहे इस कीडे पर क्यों, इतना रोष भराय।
लखन छोड दे इस कायर को, रहा अधिक चिल्लाय ॥६१८॥
इस घरका जल पिया अपन ने, करना नहिं अपकार।
यह तो ब्राह्मण है अज्ञानी, सुज्ञ इसी की नार ॥६१९॥
सिया कहे मैं कहा प्रथम ही, रहने में नहिं सार।
दुष्ट जनों की सगत से है, श्रेष्ट शून्य आगार ॥६२०॥

दिया लखन ने छोड विप्र को, वहाँ से तभी सिधाय।
आगे इक घनघोर विपिन में, दुखमें सुख होजाय ॥६२१।

॥ चातुर्मासमें एक असुरकी सेवा ॥

उसी समय वर्षा ऋतु आई, मास पूर्ण आषाढ।
गाज बीज हो कडक जोर से, हुआ अधारा गाढ ॥६२२॥
पानी वर्षा जोर जोर से, थर थर धूजे काय।
बड़ा एक जहां वट तरु लख के, आश्रय ले जहां जाय ॥६२३॥
तह वासी था ऐक देवता, तेज राम का देख।
घबराया भय भीत हुआ सो, सोचे बात अनेक ॥६२४॥
गया देव अपने मालिक पे, कहता सारा हाल।
तीनों जन ऐसे आये हैं, जिनका तेज विशाल ॥६२५।
तेज सहिन मैं नहिं कर सकता, ऐसे पुरुष महान।
देख ज्ञान से कहैं सुर तब यों, वे है पुरुष प्रधान ॥६२६॥
उनकी भक्ती करो प्रेम से, उचित शक्ति अनुसार।
सूर्यवंश के मुकुट मणी हैं, राम लखन सिय नार ॥६२७॥
वासुदेव बलदेव आठवें, पुरुष बडे बलवान।
महमानी कर लाभ लीजिये, है मोटे महमान ॥६२८॥
देव आय नव जोजन चोड़ी, लम्बी बारह मान।
करी अयोध्या नगरी जैसी, रामपुरी अभिधान ॥६२९॥

कोट कांगुरा ऊंचा मंदिर, हाट वस्तु भण्डार।
वापि कूप दरवाजा चारों, शोभा अतुल विचार ॥६३०॥
नगर यक्षने एक रातमें, कीना शीघ्र तयार।
देव ऋद्धि का पार न आवे, सभी स्वर्ग आकार ॥६३१॥
बाग बगीचा नाच रंग अति, होते मधुरे गान।
जय २ रव सुन राम सोचते, क्या ? अचरज का स्थान ॥६३२॥
तीनों सोचे अटवी में ये, नगरी कैसे होय।
देव खड़ा करजोड सामने, वन्दे राम विलोय ॥६३३॥
यक्ष कहे मैं पुरी बनाई, वर्षा ऋतु के काज।
आप रहो सानन्द यहां पे, सभी सुखों के साज ॥६३४॥
पुण्यवन्त जावे नर जहाँ पे, पग २ नवे निधान।
सुखसे बीते समय उन्हीं का, जैसे स्वर्ग समान ॥६३५॥

॥ राम पे ब्राह्मण कपिल का आना ॥

विप्र कपिल वहां फिरता आया, इकदिन इंधन काज।
नूतन पुर लख मनमें सोचे, क्या ये अचरज आज। ६३६॥
त्रिया वेष में देख यक्षणी, पूछे द्विज जा पास।
करी देव यह पुरकी रचना, यहाँ पे राम निवास ॥६३७॥
याचक को दे दान रामजी, जैसे जल वर्षन्त।
द्विज सुन होता लोभ ग्रसित मन, मेरी आश पुरन्त ॥६३८॥

॥ वनमाला कन्या का कथन ॥

विजय नगर का हाल सुनावे, क्या होता वहा काम ।
श्रोता सुनिये ध्यान लगा के, वर्णन विशद ललाम ॥६६६॥
विजयपुरी का महिधर भूपति, इन्द्राणी पटनार ।
वनमाला थी सुन्दर तनुजा, रूप विनय भण्डार ॥६६७॥
बाल पनेसे उस कन्या ने, लक्ष्मण गुण सुन पाय ।
तब से पति मन निश्चय ठाया, लखन सिवा नहिं चाय ॥६६८॥
राणी द्वारा राजा ने यह, भेद सकल सुन पाय ।
करें सुता का व्याह लखन सह, यह निश्चय मन ठाय ॥६६९॥
चन्द्रनगर का वृषभ भूप के, सुत सुरइन्द्र कुमार ।
सुना जभी वन राम लखन गए, भूपति किया विचार ॥९७०॥
तिन से व्याहना वनमाला को, करी सगाई राय ।
वनमाला सुन चिन्ता छाई, कैसे नियम निभाय ॥९७१॥
अन्य कथ मैं कभी न धारूं, लखन बसा मन माय ।
करे पिताजी व्याह अन्य जे, इस में संशय नाय ॥९२७॥
यह निकट दिन आने वाला, प्रण मेरा टल जाय ।
इससे अच्छा प्राण गमाना, प्रण मेरा रह जाय ॥९७३॥
वन में जा गल फाँसी लेना, निश्चय किया विचार ।
चली रात में सब सुख तजके, ध्यान लखन उरधार ।।९७४।।
छिटक रही थी चन्द्र चांदनी, आवे बट-तल पास ।
बट पे चढ़ गल फांसी लेती, तज के जीवन आश ॥९७५॥
जाग रहे थे लक्ष्मण देखे, तब तो हुआ विचार ।
कौन यहां वन देवी आई, रम्भा रूप उदार ॥९७६॥
क्या यह बीज चमकसी होती, जेवर पट तन धार ।
इन्द्राणी सम बटके ऊपर, बैठी कौन विचार । ९७७ ।
चढे लखन भी बटके उपर, लखते कौतुक बात ।
बट शाखा से रस्सी बांधी, करती प्राणाघात ॥९७८॥
कह वनमाला शिवा लखनके, माना में पितु भ्रात ।
मिला लखन नहिं इस कारण से, तजूं प्राण साक्षात ॥९७९॥
पासा डाला गले बीच में, आखिर मरण विचार ।
तुरत लखन डोरी को पकडे, कहते साहस धार ॥९८०॥
हे भद्रे ? साहस मत करना, मैं हूं लक्ष्मण खास ।
जिसके हित तू प्राण त्यागती, वही खडा तुज पास ॥९८१॥
चमक उठी बाला ? लख नर को, नकली लखन अनेक ।
बनकर आते जगमें कैई, नहिं भरमाती देख ॥९८२॥
बात बनाते क्यों ?भरमाते, जाओ ? मुज से दूर ।
राम लखन वनवास फिरे है, हे वे सच्चे शूर ॥९८३॥
क्यों बहकाते ? डाल भर्म में, झूठ सुना के बात ।
जिगर जलाते क्यों अबलाका, प्रणहित प्राणाघात ॥९८४॥
शियल धर्म रखना है मुजको, शरण नहीं संसार ।
हटो प्राण प्यारे पे त्यागूं, बात सजो बेकार ॥९८५॥
हे सुभगे ? किस कारण इतनी, होती है बेजार ।
खास लखनमें—राम सिया ये, सोते वट तल धार ॥९८६
मुज नामांकित पढो मुद्रिका, संशय सब मिट जाय ।
हम तीनों निकले हैं वन में, सूर्यवंश कहलाय ॥९८७॥
राम सिया के दर्शन करलो, होगा जन्म पवित्र ।
वनमाला सुन अचरज पाई, सोचे बात विचित्र ॥९८८॥
नैन उठाकर लगी देखने, देखा तेज प्रताप ।
लखन सही ये सूरवीर है, मिटा सकल सन्ताप ॥९८९॥
इनके सम नहिं लखन जगत में, आया मन विश्वाश ।
तुरत उतर वट पर से आई, सिया राम के पास ॥९९०॥
निंद खुली है सिया राम की, निज तट देखे नार ।
तभी लखन ने उस नारी का, कहा हाल विस्तार ।.९९१॥
वनमाला ने सिया राम के, चरणे सीस नमाय ।
देय दिलासा पास बिठाई, सन्तोषामृत पाय ॥९९२॥

॥ वनमाला की महिल में सोध ॥

उधर मात ने वनमाला को, महिलों में नहिं पाय ।
शोर हुआ माता घबराई, नृप चिंता चित छाय ॥९९३॥

महिधर कहै तुम जाओ जलदी, दल बल लेकर साथ।
हम आते हैं—कह दो नृप को, दूत चला नम माथ ॥१०२३॥
कहै राम से महिधर ऐसा, शठ अतिवीर्य महान।
भरत साथ में युद्ध करन मुज, बुलवाता नादान ॥१०२४॥
दोनों में सधी करवाऊं, वहाँ पे जलदी जाय।
जो नहिं माने अतिवीर्य तो, दू गा भरत जिताय ॥१०२५॥
राम कहैं हम ही जावेंगे, देंगे सब समझाय।
पुत्र तुम्हारा अरु सेना ले, मैं जाता सुन राय ॥१०२६॥
महिधर ने मंजूर किया तब, पुत्र सैन्य ले साथ।
राम लखन सीता मिल चलते, निर्भय राम सनाथ ॥१०२७॥
नद्यावर्त समीप गए है, उतरे बाग मझार।
उसी बाग की देवी रचक, पाई हर्ष अपार ॥१०२८॥
राम निकट आ करके बोली, कर जोड़ी अरदास।
जो कुछ हुक्म मुझे फरमाओ, मुज पे रख विश्वास ॥१०२९॥
राम कहैं कुछ काम नहीं है, जाओ अपने स्थान।
कहत देवी कुछ भी सेवा, करनी हमे निदान ॥१०३०॥
यदि है इच्छा देवी तुम की, बदलो सब का रूप।
नारी रूप सभी का कर दो, होगी बात अनूप ॥१०३१॥
राम लखन पुनि सैन्य सभीका, किया त्रिया का वेष।
सुंदर सब ही सज्जित होके, करते नगर प्रवेश ॥१०३२॥

अतिवीर्य ने सुना फोज अति, आई मुज हित काज।
मन हर्षा कुछ देर याद में, होता है नाराज ॥१०३३॥
महिधर ने उपहास किया मुज, भेज जनानी सेन।
दिया मुजे धौके मे उसने, कहता निष्ठुर बैन ॥१०३४॥
हुक्म दिया नृप आई जितनी, करदो नार बहार।
मत आने दो नगरी अन्दर, काम किया बेकार ॥१०३५॥
भरत पराजय करूं अकेला, चहि न किसको साथ।
फोज त्रिया की घुमी नगर में, रोके नहीं रुकाय। १०३६॥
राजा हुक्म दिया सुभटों को, कान पकड़ कर बार।
सबको करिये मार मार के, दीजे लात प्रहार १०३७॥
तुरत वीर सामत ऊठकर, जाते ताड़न काज।
उधर वीर लखनने उनको रोका दे आवाज ॥१०३८॥
पकड़ पग्ड़ के ऐक ऐक को, फेका तृणवत् दूर।
विकट लड़ाई हुई परस्पर, घबराऐ सब शूर ॥१०३९।
त्रिया सुभट का जोर देख के, अतिवीर्य घबराय।
हाथी पे आया चढ़ कर के, भाल भ्रकुटी चढ़ाय ॥१०४०॥
उधर लखन ने धनुष बाण से, दे टकारव जोर।
भगा भूप मैदान छोड़के, दुख पाया अति घोर ॥१०४१॥
कैंस पकड़ के बांधा उसको, धरा राम के पास।
हाथ जोड के खड़ा सामने, करता यों अरदास ॥१०४२॥

उधर सुरी ने त्रिया वेष का, किया तुरत अपहार।
राम लखन को देख भूपती, होता विस्मयकार ॥१०४३॥
राम चरन मे पड़ा भूपती, कहता सुनिये राम।
मैंने नहिं पहचाना स्वामी, काम किया निष्काम ॥१०४४॥
क्षमा करो श्रीराम हमारा, गुन्हा हुआ भरपूर।
राज पाट है सभी आप का, तुम पग की मैं धूर ॥१०४५॥
मिला जुल्मका सभी अभी फल, कृपा करो महाराज।
कहे राम जो होना होता, भावी नहीं इलाज ॥१०४६॥
जैसा भरत वैसा ही तूं हैं, किया माफ सब दोष।
भरत भूप से संधी करलो, तज दो मन का रोष ॥१०४७॥
मानध्वंस होने से राजा, मन में किया विचार।
राज काज से क्या मुज मतलब, अस्थिर सब ससार॥ ०४८॥
जोग लेय आतम हित करना किसकी करना सेव।
यों सुविचारी कहैं रामसे जगमें तप अछेव ॥१०४९॥
में तो दीक्षा लेना चाहूं, नहीं राजसे काम।
दीक्षा मत लो राम कहैं यों, करो राज आराम ॥१०५०॥
जोवन जोर हटा तन छीजा, लेना सजम भार।
राम बात माने नहिं भूपति, मन सजम की धार ॥१०५१॥
राज विजयरथ सुतको देकर, आप हुए अनगार।
विजय भूपने भरत भूपकी, आज्ञा ली सिरधार ॥१०५२॥

महिधर कहै तुम जाओ जलदी, दल बल लेकर साथ।
हम आते है–कह दो नृप को, दूत चला नम माथ ॥१०२३॥
कहै राम से महिधर ऐसा, शठ, अतिवीर्य महान।
भरत साथ में युद्ध करन मुज, बुलवाता नादान ॥१०२४॥
दोनों में सधी करवाऊ, वहाँ पे जलदी जाय।
जो नहिं माने अतिवीर्य तो, दू गा भरत जिनाय ॥१०२५॥
राम कहैं हम ही जावेंगे, देंगे सब समझाय।
पुत्र तुम्हारा अरु सेना ले, मैं जाता सुन राय ॥१०२६॥
महिधर ने मजूर किया तब, पुत्र सैन्य ले साथ।
राम लखन सीता मिल चलते, निर्भय राम सनाथ ॥१०२७॥
नद्यावर्त समीप गए है, उतरे बाग मझार।
उसी बाग की देवी रक्षक, पाई हर्ष अपार ॥१०२८॥
राम निकट आ करके बोली, कर जोड़ी अरदास।
जो कुछ हुक्म मुझे फरमाओ, मुज पे रख विश्वास ॥१०२९॥
राम कहैं कुछ काम नहीं है, जाओ अपने स्थान।
कहत देवी कुछ भी सेवा, करनी हमे निदान ॥१०३०॥
यदि है इच्छा देवी तुम की, बदलो सब का रूप।
नारी रूप सभी का करदो, होगी बात अनूप ॥१०३१॥
राम लखन पुनि सैन्य सभीका, किया त्रिया का वेष।
सुंदर सब ही सज्जित, होके, करते नगर प्रवेश ॥१०३२॥

अतिवीर्य ने सुना फोज अति, आई मुज हित काज।
मन हर्षा कुछ देर बाद में, होता है नाराज ॥१०३३॥
महिधर ने उपहास किया मुज, भेज जनानी सेन।
दिया मुझे धोके में उसने, कहता निष्ठुर बैन ॥१०३४॥
हुक्म दिया नृप आई जितनी, करदो नार बहार।
मत आने दो नगरी अन्दर, काम किया बेकार ॥१०३५॥
भरत पराजय करू अकेला, चहैं न किसको साथ।
फोज त्रिया की घुमी नगर में, रोके नहीं रुकाय। १०३६॥
राजा हुक्म दिया सुभटों को, कान पकड़ कर बार।
सबको करिये मार मार के, दीजे लात प्रहार १०३७॥
तुरत वीर सामत ऊठकर, जाते ताड़न काज।
उधर वीर लखनने उनको रोका दे आवाज ॥१०३८॥
पकड़ पकड़ के ऐक ऐक को, फेका तृणवत् दूर।
विकट लड़ाई हुई परस्पर, घबराऐ सब शूर ॥१०३९॥
त्रिया सुभट का जोर देख के, अतिवीर्य घबराय।
हाथी पे आया चढ़ कर के, भाल भ्रकुटी चढ़ाय ॥१०४०॥
उधर लखन ने धनुष बाण से, दे टकारव जोर।
भगा भूप मैदान छोड़ के, दुख पाया अति घोर ॥१०४१॥
कैस पकड़ के बांधा उसको, धरा राम के पास।
हाथ जोड़ के खड़ा सामने, करता यों अरदास ॥१०४२॥

उधर सुरी ने त्रिया वेष को, किया तुरत अपहार।
राम लखन को देख भूपती, होता विस्मयकार ॥१०४३॥
राम चरन में पड़ा भूपती, कहता सुनिये राम।
मैंने नहिं पहचाना स्वामी, काम किया निष्काम ॥१०४४॥
क्षमा करो श्रीराम हमारा, गुन्हा हुआ भरपूर।
राज पाट है सभी आप का, तुम पग की मैं धूर ॥१०४५॥
मिला जुलमका सभी अभी फल, कृपा करो महाराज।
कहे राम जो होना होता, भावी नहीं इलाज ॥१०४६॥
जैसा भरत वैसा ही तु हैं, किया माफ सब दोष।
भरत भूप से सधी करलो, तज दो मन का रोष ॥१०४७॥
मानध्वंस होने से राजा, मन में किया विचार।
राज काज से क्या मुज मतलब, अस्थिर सब ससार ॥१०४८॥
जोग लेय आतम हित करना किसकी करना सेव।
यों सुविचारी कहैं रामसे जगमें तप अछेव ॥१०४९॥
मैं तो दीक्षा लेना चाहूं, नहीं राजसे काम।
दीक्षा मत लो राम कहैं यों, करो राज आराम ॥१०५०॥
जोवन जोर हटा तन छीजा, लेना संजम भार।
राम बात माने नहिं भूपति, मन सजम की धार ॥१०५१॥
राज विजयरथ सुतको देकर, आप हुए अनगार।
विजय भूपने भरत भूपकी, आज्ञा ली सिरधार ॥१०५२॥

भरतदूत पुत्री व्याहता है, मनमें धरके आश।
छाय रहा तुज काल सीसपे, वृथा धरे विश्वाश ॥१०७३॥
एक शक्ति के द्वारा इसको, पहुँचाता यमद्वार।
भूप कहेरे दूत ? शक्ति मुज सह सकता इसवार ॥१०७४॥
दूत कहै मैं पच शक्ति को, सह सकता इकवार।
इक शक्ति क्या चीज समझता, मैं बलवीर करार ॥१०७५॥
खड़ा सामने करो परीक्षा, करो जरा नहिं देर।
दूत र तुम क्या कहते हो, समझा क्या ? अंधेर ॥१०७६॥
हुए कोप युत भूप शक्ति ले, कहै ? संभल जा दूत।
देख लखन छवि पुरजन सोचे, बड़ी विकट करतूत ॥ ०७७।
पुरजन मिलके कहैं लखनसे, वृथा गमाते प्राण।
सुनी खबर 'जितपद्मा' आई, लक्ष्मण रूप निधान ॥१०७८॥
लखन देख के मोहित होती, धरती मन अनुराग।
वार वार देखे उन मुखको, पुरुष बड़ा वर भाग ॥१०७९॥
कहै पिता से उत्तम नर की, वृथा गमाते ज्ञान।
बना चुकी पति मेरा निश्चय, यही वीर बलवान ॥१०८०॥
ब्याह करो इन साथ हमारा, दीजे शक्ती डाल।
एक न माना भूप मान वश, करता क्रोध कराल ॥१०८१॥
दुसह शक्ति से भूप-लखन पे, दीने पांच प्रहार।
दोय हाथ दो भुज के ऊपर, एक दंत पे धार ॥१०८२॥

देख सभासद् अचरज पाए, भूप हुआ हैरान।
दूत नजर यह नहीं आता है, ये तो क्षत्रि महान ॥१०८३॥
मेरी शक्ती द्वारा कुछ भी, नहिं घबराया वीर।
देखा ऐसा वीर न जगमें, सहते शक्ति सधीर ॥१०८४॥
राजकुमारी कंठ लखन के, वरमाला दी डाल।
भूप कहैं मुज पुत्री परणो, मानो अर्ज दयाल ॥१०८५॥
लखन कहैं मेरे वड भ्राता बैठे बाग मझार।
उनकी आज्ञा होतो मुज को, होगा बात स्विकार। १०८६।
मैं परतन्त्र सदा सेवक हूं, सुन नृप हुआ विचार।
यह तो राम लखन बडभागी, आए मुज हितकार ॥१०८७॥
विनय युक्त जा राम पासमें, करते अर्ज महान।
आप पूज्य महिमान हमारे धरो दास पे ध्यान ॥१०८८॥
राजा अर्ज करे रघुवर से, माने एक न राम।
दिया राम समझाय भूपको, कुछ दिन लो विश्राम ॥१०८९॥

॥ कुलभूषण और देश भूषण मुनिका चरित्र ॥

पुन चले आगे मिल तीनों, वशशैल गिरि धाम।
वशस्थल था नगर गिरी पे, आए जहाँ श्रीराम ॥१०९०।
वशस्थल के पुर जन सब ही, थे भयभीत अपार।
एक पुरुष से भय का कारण, पूछे राम विचार ॥१०९१॥

तीन दिनों से इस पर्वत पे, होता निशि तोफान।
शब्द भयकर होता तिनमें, डरते पुर जन प्राण ॥१०९२॥
उसके भय से निशि में इत उत, फिरते सब नर नार।
दिन को तो सुख से यहाँ रहते भगते रात मझार ॥१०९३॥
इस सकट से बालक बूढे, रहैं सभी घबराय।
यह सुन गिरि पे जाते लक्ष्मण, राम हुकम को पाय ॥ ०९४॥
राम सिया भी चले साथ में, पर्वत पे चढ़ जाय
मुनि दो दृष्टी आए वहाँ पे, वन्दन कर इपाय ॥१०९५॥
तरु तल बैठे तीनों मिलके, वीणा बजाते राम।
ताल बजाते लखन साथमें, सीता स्वर अभिराम ॥१०९६॥
सूर्य अस्त था उदय रात का, आया जब वैताल।
अट्ट हास विद्रूप बनाके, शब्द भयकर काल ॥१०९७॥
नभ भेदी रव करत भयानक, बैठे मुनि जहाँ दोय।
निकट उन्हीं के आ दुख देता, सम भावी मुनि होय ॥१०९८॥
उस असुर को मारन लक्ष्मण, ऊठे काल समान।
तेज सहन सुर नहिं कर सकता, भगता अपने स्थान ॥१०९९॥
चढे श्रेणि मुनि शुक्ल ध्यान की, केवल ज्ञान उपाय।
तुरत देवने केवल उत्सव, आकर किया सवाय ॥११००॥
राम तभी युग मुनि को वन्दे, चरण नमाया सीस।
हे भगवन् ? सुर कष्ट दिया क्यों, फरमाओ जगदीश ॥११०१॥

कुल भूषण पुनि देशभूषण यों, नाम दिया हितकार।
विद्याध्ययन के लिए भूपने, भेजे पाठक द्वार ॥११३२॥
घोप नाम के पाठक तिनपे, करते विद्याभ्यास ।
बारह वर्ष तक पढे वहां पे, करके गुरकुल वास ॥११३३॥
वर्ष तेरवें पाठक हमको, लाते राजा पास।
रूपवती इक कन्या पथ में, बैठी थी हुल्लास ॥११३४॥
उसे देख हम मोहित होते, छाई चिन्ता ज्वाल ।
भूप पास गुरु ले गए हमको, नृप लख हुए खुशाल ॥११३५॥
भरी सभा में भूप हमारी, करी परीक्षा खास ।
कला बताई विध २ सारी, भूप हुआ हुल्लास ॥११३६॥
अमित दान दे नृप पाठक को, दिया खूब सन्मान।
बिदा किया पाठक को घरपे, पाया हर्ष महान ॥११३७॥
पितुको नम हम माता तटपे, आए दर्शन काज ।
नमन मात को किया मोदसे, मिले सभी सुख साज ॥११३८॥
मात पास वह कन्या देवी, प्रथम लखी आवास।
कहा मात से कौन ? बालिका, जो बैठी तुम पास ॥११३९॥
है भाई यह बहिन तुम्हारी, कनकप्रभा है नाम।
गुरुकुल तुम पढते थे जब ये, जन्म लिया सुख धाम ॥११४०॥
इससे नहिं पहचानी तुमने, सुनके माता हाल।
दोनों भ्राता लज्जित होते, हृदय हुआ बेहाल ॥११४१॥

क्षणिक देर में हुए विरागी, गुरु से दीक्षा धार।
तिव्र तपस्या करते प्रतिदिन, धिग २ काम विकार ॥११४२॥
दृष्टि बहिन पे धरी इसीसे, छोडा सब जजाल।
भ्रमण करत हम दोनों भ्राता, आए गिरिपे चाल ॥११४३॥
जीवन और मरण भय तजके, करते ध्यान अडोल।
उधर हमारे पिता विरह से, दुख पाए वे तोल ॥११४४॥
अनशन कर महालोचन नामे, हुए गरुडपति देव।
अवधि-ज्ञान धर देखा हमको, आए करने सेव ॥११४५॥
उसी समय अतिवीर्य मुनीजी, पाए केवल ज्ञान।
मुज पितु सुर जाते उत्सव में, जहाँ थे देव महान ॥११४६॥
गया अनलप्रभ देव वहां भी, दीना मुनि उपदेश।
उसी समय इक साधु सभा में, पूछे प्रश्न विशेष ॥११४७॥
स्वामी ? तुमके ज्ञान बाद में, कौन केवली होय।
कहें केवली वंशस्थल पे, ठाडे मुनि जहाँ दोय ॥११४८॥
कुलभूषण पुनि देश भूषण मुनि, जिनका यह शुभ नाम।
केवल ज्ञान लहेगा, मुनिवर, नहिं संशय का काम ॥११४९॥
सुनी अनलप्रभ देव बात यह, जागा पूरव वैर।
उसी समय चल आया गिरिपे, नहीं लगाई देर ॥११५०॥
कष्ट देन वह नितप्रति आता, करता सौर महान।
विध विध करता रूप शक्ति से, पूर्व कर्म बलवान ॥११५१॥

लोक गए घबराय नगर के, भागे तज के काम।
अहो राम? जब तुम यहां आए, सुर भागा निज धाम ॥११५२॥
शुक्ल ध्यान ध्याया हम दोनों, पाया केवल ज्ञान।
पूर्व पिता महालोचन नामक, यह आए हम स्थान ॥११५३॥
मुनि कहते थे कथा राम को, सुन सुर मन हर्षाय।
पछा राम के चरन देवता, बोला विनय जताय ॥११५४॥
तुम कारण से सुर भय टलता, पाए मुनि आराम।
प्रत्युपकार करूं में तुम पे, जो हो कहिये काम ॥११५५॥
राम कहें जब कामहोयगा, तभी करेंगे याद।
वचन देय सुर गया स्थान पे, पाया मन आल्हाद ।११५६॥
आदि अत मुनिवर से कथनी, सुनी राम चितलाय।
हृदय विचारे कर्म कथा को, मेटन नही उपाय ॥११५७॥
राम नमन कर मुनि पद वंदे करन लगे प्रस्थान।
उधर वशस्थल भूप सुरप्रभ, आया चल उसस्थान ॥११५८॥
युगपद बढी अरजी करता, करिये यहां निवास।
राम न माने एक भूप की, एक अटन की आश ॥११५९॥
रघुवर याद रहें इस कारण, उस पर्वत का नाम।
धरा रामगिरी नाम उसीका, किये वहां कई धाम ॥११६०॥
आज्ञा लेकर सुरप्रभ नृप की, आगे चलते राम।
निर्भय हो के चले विकट पथ, तीनों जन अभिराम ॥११६१॥

लगा कुयुक्ती खंडन करने, निर्भय हो मन नीच ।
खंडन मंडन हुआ जोरसे, भरी सभा के बीच ॥११८६॥
उसी सभामें नृप सुत खधक, सुनकर आए चाल ।
करन लगे शास्त्रार्थ उसीमे, दीने खूब सवाल ॥११६०॥
हुआ निरुत्तर पालक तबतो, हुई सभा में हार ।
लगे करन उपहास सभाजन, सत्य जहाँ जयकार ॥११६१॥
हार हुई जब पालक मनमे, प्रगटा क्रोध अपार ।
जोर चला कुछ नहि स्कधकपे, दीर्घ रोष मन धार ॥११६२॥
विदा हुआ वह पालक निजपुर, आया भूपति पास ।
वैर कँवरसे लेऊं कबमे, प्रतिदिन रहे उदास ॥११६३॥
होते स्कधककवर विरागी, तजते सब संसार ।
मातपिता से आज्ञा लेने, आए निकट तिवार ।११६४
दीजे आज्ञा मात पिताजी, तजता जगत असार ।
कहती माता सुनिये लाला, कैसे रहो उचार ॥११६५॥
सहज नहीं दीक्षा जिनवरकी, कठिन पालना धर्म ।
कष्ट विविध से सहना पड़ता, कठिन काटना कर्म ॥११६६॥
कठिन महाव्रत पालन करना, शीत उष्ण दुख घोर ।
मान और अपमान समभमें, चित रखना इक ठौर ॥ ११६७॥
ठण्डा ऊन्हा भोजन खाना, नहीं स्वादका काम ।
लुंचन करना असिधारा व्रत, रखना दृढ परिणाम ॥११६८।

कँवर कहै सर्वज्ञ वचन को, पालूगा तिहुँ योग ।
कायर बन नहि संजम लेता, समझा विषवत् भोग ॥११६६॥
सबको मरना इकदिन जगमें, निश्चय कोई नाय ।
शरण अंतमें एक धर्म है, और वृथा जग माय ॥१२००॥
मिथ्यामत को मेटन कारन, फिरके देश विदेश ।
दीक्षा लेकर धर्म दिपाऊं, देकर सत् उपदेश ॥१२०१॥
माता हारी सुत समझाने, आज्ञा दे सुविचार ।
कँवर साथमे राज कँवर भी, हुए पानसो त्यार ॥१२०२।
पास जाय मुनिसुव्रत प्रभु से, दीक्षा ली हितकार ।
स्कधक के हो शिष्य पानसो, प्रभु आज्ञाको धार । १२०३॥
पढ़ गुणके विद्वान हुए हैं, समदम रस भरपूर ।
करे तपस्या पाप हननको, जग आशा कर दूर ॥१२०४॥
स्कधक मुनि अपने शिष्यों को, शीक्षा दे हितकार ।
घर छोडेका सार यही है, करना पर उपकार ॥१२०५॥
धर्म प्रचार करो मन वचसे, यदि हो कष्ट अपार ।
पगपीछे धरना नहि किंचित्, ये सजमका सार ॥१२०६॥
शिष्य कहैं हम मन वच तनसे, आज्ञा करे प्रमाण ।
सत्य धर्म फैलाने कारण, देते हैं हम प्राण ॥१२०७॥
दृढ प्रण निश्चय किया सभीने, हो स्कधक विश्वास ।
सब मिल आए पास प्रभुके, करते हैं अरदास ॥१२०८॥

दंडकनृप अरु वहिन पुरंदर, है नास्तिक मत धार ।
उनको हम समझाने कारण, जाते है इसवार ॥१२०६॥
सत्य धर्म की करें स्थापना, मिथ्या को उत्थाप ।
धर्मवृद्धि करनेकी आज्ञा, दीजे जिनवर आप ॥१२१०॥
प्रभु कहते जाने से तुमको, होगा दुख मरणान्त ।
तुमी और यह शिष्य पानसों, वध होंगे आक्रान्त ॥१२११॥
फिर पूछे स्कधक जिनवर से, क्या ? आराधक स्वाम ।
तुझे छोड़ के शिष्य पानसो, आराधक अभिराम ॥१२१२॥
शिष्य पानसों मोक्ष जायगें, इसमे सशय नाय ।
स्कधक सुन तब हृदय विचारे, जिन वाणी सुखदाय ।१२१३॥
टले नहीं ये वचन प्रभुका, होगा भावी भाव ।
मेरे द्वारा शिष्य पानसों, होगा सिद्ध स्वभाव ॥१२१४॥
यह भी कम उपकार नहीं है ? , धर्म लिए यह काय ।
जरूर अर्पण करें कष्ट सह, मिथ्या दूर नशाय ॥१२१५॥
चतुर्संघ को खबर हुई यह, आकरके समझाय ।
स्कधक कहते अचल प्रतिज्ञा, टलती मेरी नाय ॥१२१६॥
संघ कहे वह दुष्ट भूप है, अति मिथ्यामति वंत ।
आतम साधना करो यहां पे, मान्य करो भगवंत ॥१२१७॥
वचन आपका सुनकर स्वामिन्, रहा संघ घबराय ।
कुछ भी सोच समझकर कीजे, दीजे भाव हटाय ॥१२१८॥

यदि तूं वचना चाहे मुज से, तीन वात ले धार।
क्षमा मांगले निज कृत्यों की, या माफी इसवार ॥१२४६॥
जैन धर्म को त्याग और तू, ले मुज धर्म अराध।
तो वचती प्रिय जान आज तुज, होता तूं निर्वाध ॥१२५०॥
स्कधक मुनि सुन वात दुष्ट की, वोले हो गम्भीर।
रे पालक ? तूं किसे सुनाता, नहि मरने की पीर ॥१२५१॥
मरने म नहि हर्ष शोक है, नहि जीवन की आश।
भाव मित्र वैरी पे सम है, एक धर्म विश्वाश ॥१२५२॥
मरने से अव निर्भय मुनि है, जव तक रहता प्राण।
तव तक धर्म न छोडे तनसे, निश्चय सुन नादान ॥१२५३॥
पालक को फिर अधिक रोष हो, कहता शब्द कठोर।
एक स्थान मुनि किए घेर के, देन चहे दुख घोर ॥१२५४॥
स्वधक सोचे भव्य नहीं ये, इसे वृथा उपदेश।
काग कदापी हंस वने नहीं, पावे नाना क्लेश ॥१२५५॥
धर्म - प्राण के साथ हमारे, जैन धर्म है सार।
मरना जीना लगा अनादी, धर्म न वारम्वार ॥१२५६॥
स्कधक मुनि सव मुनि से, कहते, होकर सिंह समान।
करो धर्म पे जान निछावर, आया समय महान ॥१२५७॥
कायर पीठ दिखाकर भागे, लडे जगमें शूर।
[illegible]म मष्ट अव आने वाला, हरो कर्म दल क्रूर ॥१२५८।

आराधिक होकर के मरना धर्म न वारवार।
निश्चल अविचल अक्षय सुख को पाओगे हितकार ॥१२५९॥
क्षमा शस्त्र लो वांध कमर में, कर्म शत्रु के साथ।
लड़ो निडर हो भय मत लाना, होंगे सदा सनाथ ॥१२६०॥
सभी साधुने आलोचन कर, किया परम सथार।
पालक दुष्टी तव ही मुनि का, कर पकड़ा ललकार ॥१२६१॥
एक एक को स्कधक मुनि ने, संथारा करवाय।
पालक पैर पकड घाणी में, डाले दया नशाय ॥१२६२॥
क्षपक श्रेणी चढे भाव से, पाए केवल ज्ञान।
तुरत मोक्ष में गए कर्म तज, पाए पद निर्वाण ॥१२६३॥
क्रमसे एक २ को पीले, धरें हर्ष अनगार।
खून नदी ज्यों वहने लागा, वना कषाई द्वार ॥१२६४।
गीध और पक्षी अति नभ में फिरे मांस के काज।
सवही पील दिए तव चेले, हुए नहीं नाराज ॥१२६५॥
शिष्य रहा छोटा इक वाकी, होनहार विद्वान।
उनको पीलन काजे शठको, आई ना मन ग्लान ॥१२६६॥
लगा पीलने तवतो स्कधक, कहता वचन सुनाय।
रे पालक ? सतोप जरा भी, तुजको अव नहि आय ॥१२६७॥
मेरा प्राण पियारा चेला, तू उसको मत मार।
ज्ञान सिखाया प्रेम भावसे, है ये होवन हार ॥१२६८॥

मैं हूं वैरी तेरा—इसने, कीना नहि विगाड़।
क्यों कर इसकी घात करे तू, भाई सोच विचार ॥१२६९॥
इसके पहले मुझे पील दे, अन्त वचन यह मान।
मेरे सन्मुख इसको पीले, हो मुज दु ख महान ॥१२७०॥
साधु वचन सुन पालक वोला, मुजको अव आनद।
ज्यों २ दुख हो अधिक उसीमें, यही करू छल छद ॥१२७१॥
प्रथम शिष्य छोटे को मारू, फिर तेरा है काल।
हर्गिज इसको तुज कहने से, छोडू नहीं कराल ॥१२७२॥
तड़पा करके पीलू इसको, दुखमें दु ख दिखाय।
तेने मुजको राज भवनमें, दीना दु ख सवाय ॥१२७३॥
उसका वदला लेने को तो, किया यही सव काज।
अवतो तेरे लघु चेलेको, हनता छिनमें आज ॥१२७४॥
लघु चेला गुरुवर से कहता, सुनिये श्री गुरुदेव।
आप सामने काज सुधारू, मोक्ष लहूं ततखेव ॥१२७५॥
लघु चेले की चढी भावना, शुक्ल ध्यान—मन शान्त।
तुरत दुष्ट पालक ने मुनिको, पील दिया विन भ्रांत ॥१२७६॥
गए पानसौं साधु मोक्षमें, हुए सिद्ध भगवन्त।
जिनवर वाणी सत्य हुई है हाल आदि से अत ॥१२७७॥
हाल देख यह स्कन्धक मनमें, छाया क्रोध कराल।
जोर चले नहिं मेरा अवतो, करूं हाल वेहाल ॥१२७८॥

स्पर्श औषधी लब्धी इमपे, गिरा चरण यह आय।
स्पर्श किया से पक्षी तन का, रोग गया विरलाय ॥१३०९॥
पक्षी मुनि से चरित श्रवणकर, मन में हुआ खुशाल।
श्राद्ध धर्म को धारन करता, द्वादश व्रत को पाल ॥१३१०॥
हाल जटायु का यों सारा, मुनि ने कहा सुनाय।
तब मुनिवर श्रीरामचन्द्र से, देते सीख सवाय ॥१३११॥
साधर्मी यह पक्षी तुमको, रखना बंधव भाव।
सहधर्मी से प्रेम रखो अति, यह सम्यक्त्व स्वभाव ॥१३१२॥
साधु वचन सुन राम कहैं यों, यह है भ्रात समान।
सीता पास रहेगा प्रतिपल, पक्षी चतुर सुजान ॥१३१३॥
मुनि करते प्रस्थान वहां से, विमल ज्ञान भंडार।
पक्षि जटायू सुख में रहता, सिया निकट हरवार ॥१३१४॥
दिव्ययान था उसमें बैठे उडे पक्षि आकाश।
दंडक वन में फिरे जहां तहां, इच्छा जहां निवास ॥१३१५॥

॥ शंबुक कुँवार का बयान ॥

लंका थी पाताल वहां का, खर नामक था भूप।
शूर्पनखा थी राणी सुन्दर, यौवन रूप अनूप ॥१३१६॥
शंबुक सुन्द दो राज कंवर थे नव यौवन मतिमंत।
दंडक वन में सूर्यहास असि, साधन मन इच्छत ॥१३१७॥

मात पिता वरजे नित उनको, कठिन बड़ा है काज।
दिन कितने यों बीते किन्तु, लगी हृदय में दाज ॥१३१८॥
जो मुज सूर्यहास असि लेने, मना करेगा आज।
उसकी समझो मृत्यू आई, बोला विकट आवाज ॥१३१९॥
यह सुन के घबराए सबही, मौन धरे उसवार।
शंबुक चलता तुरत वहां से, पाता हर्ष अपार ॥१३२०॥
क्रौंच नदी के गया किनारे, जहां थी वंशाजाल।
वट शाखा से पैर बांध के, रहा अधो मुख डाल ॥१३२१॥
रखे विमल मन हो ब्रह्मचारी, ज्यों मुनि का आचार।
वर्ष दुवादश सात दिनों का, साधन समय विचार ॥१३२२॥
वन बांसों का सघन गुंजता, दृग से लखे न कोय।
सूर्यहास साधन के कारण, जाप जपे सुध होय ॥१३२३॥
प्रतिदिन सूर्पनखा माताजी, देती पुत्र आहार।
एक वक्त खाता था दिन में, साधे स्थिर मन वार ॥१३२४॥
तीन दिवस बाकी जब रहता, विद्या को साधंत।
आया अन्तिम दिन सिद्धी का, सूर्यहास चमकंत ॥१३२५॥
तेज सूर्य सम खड्ग म्यान से, रहा चमक लटकाय।
शंबुक होता परम प्रमोदित, अब तो यह मैं पाय ॥१३२६॥
चाहे जितने करो यत्न पर, मिले भाग्य बिन नाय।
मूंग खोदे नाग भोगवे, अटल युक्ति दरसाय ॥१३२७॥

उस अवसर लक्ष्मणजी फिरते, क्रौंच नदी के तीर।
क्रिडा करते आए जहां पे, शूरवीर गंभीर ॥१३२८॥
वंश जाल के निकट फिरे हैं, देख दिव्य तलवार।
तेज सूर्यवत् चमक रही है, अपर उदय रवि धार ॥१३२९॥
केसर चन्दन से पूजित हैं, शस्त्र अपूरव देख।
ललचाया मन लेने उनका, लखे दृष्टि धर एक ॥१३३०॥
हाथ पसारा लिया खड्ग को, पाए मन आमोद।
नूतन शस्त्र मिले क्षत्री को, होता हृदय प्रमोद ॥१३३१॥
शस्त्र परिक्षा लिए वश में, टीनी खड्ग चलाय।
वशो में था शंबुक उनका, गया सीस छेदाय ॥१३३२॥
बिन सोचे जब करी परीक्षा, गए पराए प्राण।
शंबुक आशा हुई निराशा, पर भव किया प्रयाण ॥१३३३॥
किसने साधा किसने पाया, होता होवन हार।
खून भरी तलवार देख के, लक्ष्मण करें विचार ॥१३३४॥
कानों कुण्डल झगमग करते, कमल सुगंधित सीस।
वंश जाल में पड़ा भूमि पे, लखे लखन क्षत्रीश ॥१३३५॥
लखन विलख हो सोचे मेरा, धिग २ पुरुषाकार।
वृथा बाहुबल बिन सोचे मैं, करता अत्याचार ॥१३३६॥
बिन अपराधी मारा इसको, देखे कदम बढाय।
सीस और धड न्यारा न्यारा, बहता खून दिखाय ॥१३३७॥

स्पर्श औषधी लब्धी इमपे, गिरा चरण यह आय।
स्पर्श किया से पची तन का, रोग गया विरलाय॥१३०९॥
पची मुनि से चरित श्रवणकर, मन में हुआ खुशाल।
श्राद्ध धर्म को धारन करता, द्वादश व्रत को पाल॥१३१०॥
हाल जटायु का यों सारा, मुनि ने कहा सुनाय।
तब मुनिवर श्रीरामचन्द्र से, देते सीख सवाय॥१३११॥
साधर्मा यह पची तुमका, रखना बंधव भाव।
सहधर्मी से प्रेम रखो अति, यह सम्यत्व स्वभाव॥१३१२॥
साधु वचन सुन राम कहे यों, यह है भ्रात समान।
सीता पास रहेगा प्रतिपल, पची चतुर सुजान॥१३१३॥
मुनि करते प्रस्थान वहां से, विमल ज्ञान भंडार।
पक्षि जटायू सुख में रहता, लिया निकट हरवार॥१३१४॥
दिव्ययान था उसमें बैठे उडे पक्षि आकाश।
दंडक वन में फिरे जहां तहां, इच्छा जहां निवास॥१३१५॥

॥ शंबुक कँवार का बयान ॥

लंका थी पाताल वहां का, खर नासक था भूप।
शूर्पनखा थी राणी सुन्दर, यौवन रूप अनूप॥१३१६॥
शंबुक सुन्द दो राज कंवर थे नव यौवन मतिमत।
दंडक वन में सूर्यहास असि, साधन मन इच्छत॥१३१७॥

मात पिता वरजे नित उनको, कठिन बड़ा है काज।
दिन कितने यों बीते किन्तु, लगी हृदय में दाज॥१३१८॥
जो मुज सूर्यहास असि लेने, मना करेगा आज।
उसकी समझो मृत्यू आई, बोला विकट आवाज॥१३१९॥
यह सुन के घबराए सबही, मौन धरे उसवार।
शंबुक चलता तुरत वहां से, पाता हर्ष अपार॥१३२०॥
क्रौंच नदी के गया किनारे, जहां थी वंशाजाल।
वट शाखा से पैर बांध के, रहा अधो मुख डाल॥१३२१॥
रखे विमल मन हो ब्रह्मचारी, ज्यों मुनि का आचार।
वर्ष दुवादश सात दिनों का, साधन समय विचार॥१३२२॥
वन वाँसों का सघन गुंजता, दग से लखे न कोय।
सूर्यहास साधन के कारण, जाप जपे सुध होय॥१३२३॥
प्रतिदिन सूर्पनखा माताजी, देती पुत्र आहार।
एक वक्त खाता था दिन में, साधे स्थिर मन धार॥१३२४॥
तीन दिवस बाकी जब रहता, विद्या को साधत।
आया अन्तिम दिन सिद्धी का, सूर्यहास चमक्त॥१३२५॥
तेज सूर्य सम खड्ग म्यान से, रहा चमक लटकाय।
शंबुक होता परम प्रमोदित, अब तो यह में पाय॥१३२६॥
चाहे जितने करो यत्न पर, मिले भाग्य विन नाय।
मूग खोदे नाग भोगवे, अटल युक्ति दरसाय॥१३२७॥

उस अवसर लक्ष्मणजी फिरते, क्रौंच नदी के तीर।
क्रिडा करते आए जहां पे, शूरवीर गंभीर॥१३२८॥
वंश जाल के निकट फिरे है, देख दिव्य तलवार।
तेज सूर्यवत् चमक रही है, अपर उदय रवि धार॥१३२९॥
केसर चन्दन से पूजित है, शस्त्र अपूरव देख।
ललचाया मन लेने उनका, लखे दृष्टि धर एक॥१३३०॥
हाथ पसारा लिया खड्ग को, पाए मन आमोद।
नूतन शस्त्र मिले चत्री को, होता हृदय प्रमोद॥१३३१॥
शस्त्र परिचा लिए वश में, दीनी खड्ग चलाय।
वंशो में था शंबुक उसका, गया सीस छेदाय॥१३३२॥
विन सोचे जब करी परीचा, गए पराए प्राण।
शंबुक आशा हुई निराशा, पर भव किया प्रयाण॥१३३३॥
किसने साधा किसने पाया, होता होवन हार।
खून भरी तलवार देख के, लक्ष्मण करें विचार॥१३३४॥
कानों कुण्डल झगमग करते, कमल सुगंधित सीस।
वंश जाल में पडा भूमि पे, लखे लखन चत्रीश॥१३३५॥
लखन विलख हो सोचे मेरा, धिग २ पुरुषाकार।
वृथा बाहुबल विन सोचे में, करता अत्याचार॥१३३६॥
विन अपराधी मारा इसको, देखे कदम बढाय।
सीस और धड न्यारा न्यारा, बहता खून दिखाय॥१३३७॥

मेरी गोदी खाली करके, बेटा ? गया सिधाय।
मेरे घरका गया उजाला, मेरा कौन सहाय ॥१३६७॥
विद्या साधी कौन ! दिखादे, जरा बंधा दे धीर।
बहुत देर से तेरी माता, डाले दृग से नीर ॥१३६८॥
नौ मासा तक रखा गर्भ में, प्यारा प्राण समान।
एक वक्त कुछ बोल जबां से, सुनना चाहूँ कान ॥१३६९॥
देखा बारह वर्ष दुःख अति, तजे अन्त में प्राण।
किसने काटा मस्तक तेरा, कहदे ज़रा बयान ॥१३७०॥
मोह युक्त विकराल सुन्दरी, कीना खूब विलाप।
ढूंढूं कैसे मारन हारा, होता अति सताप ॥१३७१॥
रोने से क्या सार निकलता, अभी लगाऊ खोज।
वैर खून का लहूं खून से, भीम विकट भुज फोज ॥१३७२॥
उसे चखादूं स्वाद तुरत से, बदला निश्चय मान।
चलती नीर बहाती वहां से, रुद्र धरा मन ध्यान ॥१३७३॥

॥ शूर्पनखा का राम पर आना ॥

चरन चिन्ह का खोज लगाती, चली जिधर है राम।
चारों बाजू दृग फैलाती, नहिं मन में आराम ॥१३७४॥
चरन चिन्ह से सोचा उसने, यह है मारन हार।
दृष्टी पड़ती राम लखन थे, बदला तुरत विचार ॥१३७५॥

अनुपम छबिमय देख राम को, विस्मय हुई अपार।
पुत्र शोक सब भूल गई है, प्रकटा मदन विकार ॥१३७६॥
सूर्य चन्द्र या इन्द्र स्वर्ग के, नल कूबेर समान।
रूप देख स्थिर दृष्टी होती, लगा काम का बाण ॥१३७७॥
महा शोक में थी वह कामण, होती मद आवेश।
दलना दल कंदर्प कठिन है, जीते कौन ? सुरेश ॥१३७८॥
शुध्द बुध्द सब नशे तुरत से, लगे काम के तीर।
लज्जा तज बेहया हुई है, मन में बड़ी अधीर ॥१३७९॥
पाया जगका रूप इन्होंने, हे ये राज कवार।
रग रग में रम गए रामजी, अधिक रूप आगार ॥१३८०॥
इनके बिन में स्वप्न अन्दर, नर नहिं इच्छु और।
लगी एक दृष्टी देखन को, कुल लज्जा को छोर ॥१३८१॥
राम पास लख सीता सुन्दर, मन में हो बेहाल।
इन्द्राणी से अधिक रूपवर, चतुरा चमक विशाल ॥१३८२॥
इस सुन्दर के पग के नख सम, नहीं है मेरा रूप।
तो मुजको ये कब चाहेंगे मेरा हैं बदरूप ॥१३८३॥
रूप अपूर्व बनाकर जाना, राम पास इसवार।
तो मुजको स्वीकार करेंगे, नहिं सदेह लिगार ॥१३८४॥
रूप परावर्तन विद्या से, बदला अपना रूप।
सुंन्दर नागकुँवारी जैसी, कीनी कान्ति अनूप ॥१३८५॥

दृग में अंजन कर तन मंजन, टाली नथनी नाक।
रख जड़ित सिर बोर चाँदसा, चढ़ी कामकी छाक ॥१३८६॥
गले माल हीरों का पहने, पग नेवर भनकार।
अधिक मूल्य अरु अल्प भार की, साड़ी तन प धार ॥१३८७॥
वंक सिंह कटि उर मत्स्योदर, मोती पोए बाल।
नख से सिर सज जेवर पहने, चलती चाल मराल ॥१३८८॥
चंचल चपला चली चमक से, चन्द्र वदन विकसाय।
गया शोक सुतका अब कहीं पे, तन को लिया सजाय ॥१३८९॥
आई सन्मुख रघुवर तट पे, सहसा इक दम राम।
दृष्टि पड़ी तब सोचे दिल में, फिरती कौन अकाम ॥१३९०॥
वन देवी या नाग कुमारी, फिरती विपिन उजार।
रघुवर पूछे सुन्दर तुम हो, कौन ? नाम आचार ॥१३९१॥
फिरो अकेली वन में कैसे, होकर निपट विडोल।
अपना सारा हाल सुनाओ, आदि अन्त से खोल ॥१३९२॥
शूर्पनखा अब कहने लगती, होकर दीन अवाज।
कहती सुनिये पथिक हमारी, कथनी कुछ महाराज ॥१३९३॥
प्यारी हूं मैं राज दुलारी, सूती महल मझार।
विद्याधर नभ उड़ता आया, जहां था मुज आगार ॥१३९४॥
रूप देख मुज मोहित होता, उठा उड़ा तत्काल।
निद्रावश नर मूर्छित होता, हाल होय बेहाल ॥१३९५॥

शादी करना मुझे जरूरी, इक चाहें मुज नार ।
किन्तु तुजसे नहिं कर सकता, विकट समस्या धार ॥१४२६॥
कोन ? समस्या नाथ ? कहो मुज, देऊ सभी सुधार ।
अरिकामिन् ? तू अन्धी होके, दीनी शर्म विसार ॥१४२७॥
मुज भ्राता को प्रथम् कन्थ कर, फिर आई मुज पास ।
सत्य धर्म यह तेरा कैसा, की दूजे की आश ॥१४२८॥
अबतो चूक गई भाभी तू, वाजी हाथ गमाय ।
पहले आती पास हमारे, होती वात सवाय ॥१४२९॥
अब जाओ ? तुम राम पासमें, वर शोभित है जोड ।
गई रामके पास कहे यों, क्यों ? करवाते दौड ॥१४३०॥
वृथा करो हैरान मुजे क्यों ? करें न यों इन्सान ।
बिलकुल वह नादान बाल है, नहीं हिताहित ज्ञान ॥१४३१॥
वह अलबेला कहा आपने, किन्तु बडा बदमाश ।
उसकी शक्ल पे नहीं थुकती, एक आपकी आश ॥१४३२॥
राम कहें वह लेय परिक्षा, कैसे हैं हुशियार ।
अगर सती तू है तो निश्चय, करलेगा तुज दार ।१४३३॥
क्या वह मेरी लेय परीक्षा, वह तो मूढ गिवार ।
वृथा मुझे धोका देते हो, आप वडे सरदार ॥१४३४॥
राम गले पर आगे वढ कर, धरना चाहें हाथ ।
कोमल कर ये हम गर्दन पर, शोभा देते नाथ ? ॥१४३५॥

राम हटे कुछ—क्यों करती तू, हाथा पाई काम ।
मुहसे वात करो हट करके, यह मेरा पैगाम ॥१४३६॥
मेरे कर क्या ? हे कांटे के, गर्दन पे चुभ जाय ।
नहीं तीर वत जो कि आप के, सीने में लग जाय ॥१४३७॥
राम कहें कह चुका तुम्हीं से, मेरे है इक नार ।
व्याह अन्य करना नहिं चाता, छोड सभी तकरार ॥१४३८॥
वडे वडे राजे महाराजे, व्याह हो न के वाद ।
शादी करते वडी चाव से, तुम पाते विखवाद ॥१४३९॥
दाल तुम्हारी नहीं गलेगी, होगी अन्त निराश ।
जोडी तो लक्ष्मण से होगी, जाकर कर अरदास ॥१४४०॥
आती लक्ष्मण पास कहे यों, क्यों ? भेजी उस पास ।
नहिं तमीज हे वातचीत की, मुझ से करता हाँस ॥१४४१॥
छोड आप को कहाँ जा सकती, मिले आप गुणवत ।
दोनों की हे जोडी अच्छी, रवि शशि वत् दीपत ॥१४४२॥
तुमतो होती भाभी मेरी, मानूं कमे वात ।
मैं तो अपना धर्म निभाऊ, तू ही क्यों न निभात ॥ १४४३॥
जान खाय क्यों पिछा तज दे, नखरे किसे दिखाय ।
अरी डायनी भाग यहां से, मत फंदा फैलाय ॥१४४४॥
वेशरमी होती तू बेगम, अरी ! दिवानी अध ।
गले पडी क्यों बिना बुलाए, बनता नहिं सबंध ॥१४४५॥

कहन लगी क्या ? जोड मिली है, पल २ म कुवान ।
दिल में झूठा भर्म भरा हे, हो पूरे नादान ॥१४४६॥
यदि रहना जिंदा तुम चाहो, करो न मुज अपमान ।
मल मल करके फिर रोओगे, होगे अति हैरान ॥१४४७॥
क्या ? मालुम नहिं मुज ताक़त की करती तेज जवान ।
लगा लगाम तू जरा जवां पे, छोड सभी तोफान ॥१४४८॥
दिल ही दिल मे सोचे यह तो, नट खट है वाचाल ।
किसी तरह जादू नहिं चलता, इसने किया कमाल ॥१४४९॥
पुन राम के पास गई हे, यदि होजावे काम ।
क्षमा करो ? हो चुकी बहुत अब, होती मैं बदनाम ॥१४५०॥
वृथा दिल्लगी करो न मुज से, तुम हो बुद्धि निधान ।
इस कारण फिर आई तुम पे, समझो अब श्रीमान् ॥१४५१॥
राम कहे खो चुकी शर्म तू, चल यहीं से दूर ।
परभव सुधरे काम करो वह, मिलता सौख्य जरूर ॥ १४५२॥
कहन लगी वह ठौर शर्म नहिं रखते हे विद्वान ।
हुए खफा क्यों नाहक मुज पे, ऊंच जात कुलवान ॥१४५३॥
इतनी सुन के लक्ष्मण झुंझले, देते हे फटकार ।
वेहया आखों मटकाती, इत उत फिर बदकार ॥१४५४॥
हम नहि माने वातें तेरी, रही जाल फैलाय ।
राज कँवारी तू वतला के, इत उत ठोकर खाय ॥१४५५॥

एक दूत भेजा रावण पे, आयो मेरी भीर।
हाल देख यह राम कहत है, सुनिये लपमण वीर ॥१४८५॥
जिसको तेने मारा उसका, आया ये परिवार।
फिर अनर्थ उस कामन कीना, जिसकी है तकरार ॥१४८६॥
सिंहनाद विद्याधर करते, नभ में रहैं विमान।
सचेत होजा लषमण अबतो, इधर उधर रख ध्यान ॥१४८७॥
अरि दल को मैं जाय भगाऊं, रह तू सीता पास।
हाथ जोड लक्ष्मणजी बोले, कहिये आप विमास ॥१४८८॥
आप रहो ढिग सीताजी के, मैं जाऊं रण बीच।
वैरी दल को तुरत जीत के, वध करूं नर नीच ॥१४८९॥
जब तक सेवक है सेवा में, नहीं फिकर का काम।
हाथ सीसपे मेरे धर दो, जीतू मैं सग्राम ॥१४९०॥

॥ युद्ध में लक्ष्मण का जाना ॥

अच्छा जाओ ? एक बात का, रखना पहिले ध्यान।
सब को ऐसा रणभूमी में, कहना मिष्ट जबान ॥१४९१॥
ये समझे शबुक को मारा, नहीं हमारा दोष।
गलती का आलोचन करते, रहेंगे हम खामोश ॥१४९२॥
विनय बात यह नहीं सुनेतो, करना फिर सग्राम।
तुझे जीत सकता नहीं जगमें, अटल बात मुद्दाम ॥१४९३॥
घिर जाओ जब वैरी दलमें, करना सिंहनिनाद।
तुरत भीडपे मैं आऊ गा, मिटे सकल विषवाद ॥१४९४॥
तुम सीता की रक्षा करना, मैं जाता इसवार।
जो सिंहनाद करूं तो आना, यह हैं आखिर कार ॥१४९५॥
खरदूषण को मन्त्री कहता, सुनो ! अर्ज सरकार।
कौन लाभ है युद्ध करन में, शिर्फ मनुज संहार ॥१४९६॥
मृतक पुत्र जिंदा नहिं होता, गई बात नहिं आय।
खड्ग मेलके नमें चरण में, तो झझट मिट जाय ॥१४९७॥
बात समझ में नृप के आई, लेख लिखा ततकाल।
पत्र दूत को देकर भेजा, पढे लखन सब हाल ॥१४९८॥
लखन राम से कही हकीकत, होय क्रोध में र ।
खड्ग देय के सीस नमाना, हम को कब मजूर ॥१४९९॥
जाओ ? रण में राम कहैं यों, वैरी लेना जीत।
करे तथास्तु ? हाथ जोड के, लषमण बड़ा वनीत ॥१५००॥
सीस नमाकर चले लखनजी, धनुष बाण ले हाथ।
खरदूषण भी भिडा सामने, अपनी सेना साथ ॥१५०१॥
जब लखन ने धनुष चढाया, हुआ शब्द विकराल।
टंकारव से सेना दलमें, मचा सोर असराल ॥१५०२॥
तीन भाग की सेना भग गई, भट छोडे हथियार।
एक लखन के लगे नहीं हैं, ज्यों गिरिपे जल धार ॥१५०३॥
वैरी दल सब कांप पड़ा है, लखन वज्र तन देख।
तीर लखन का लगे सभी पे, बच नही सकता एक ॥१५०४॥
किसके मस्तक हाथ छिदाए, किस की दाढ़ी मूछ।
हयगय से असवार पडे हैं, कटी तुरंगम पूछ ॥१५०५॥
सूंड उछाले हाथी भागे, हुई सभी को त्रास।
यह आपति लख खरदूषण भी, दिलमें हुआ निराश ॥१५०६॥
वालु भींतसे गिरे सुभट सब, विकट लखनका तीर।
शूर्पनखा ये हाल देख के, मन में हुई अधीर ॥१५०७॥
जुल्म अकेले किया लखन ने, सेना दल सहार।
बीज कड़क सा कड़क रहा है, पढे न इससे पार ॥१५०८॥
बल विहीन सेना सब होती, किसकी चले न चाल।
एक दैत्य ये बढ़ा सभी को, बना दिया कङ्गाल ॥१५०९॥
बिन रावण के चल नहि सक्ता, विकट हुआ संग्राम।
रावण को कहना जाकर के, होगा काम तमाम ॥१५१०॥

॥ रावणसे सीताकी रूपरेखा का कहना ॥

सूर्पनखा गई लंका गढ में, आई रावण पास।
अय भाई ! क्या बैठा सुख से, लूट रहे बदमाश ॥१५११॥
हाय लूट मैं मारी जाती, दिन धोले बेतोल।
रावण कहता बात हुई क्या, मुखसे कुछ तो बोल ॥१५१२॥

ताक़त छलबल कपट अय्यारी, मक्कारी कर काम।
किसी तरह से तुझे उड़ाकर, लाऊं लंका-ठाम ॥१५४२॥
बिना लड़ाई काम निकालू, हो रावण की नार।
अब है सीता? अवध पुरी में, जाना तुज बदकार ॥१५४३॥
भगा स्वयंवर में से फिर भी, अब अजमाता भाग।
मुज ताक़त से जगत कांपता, राम विचारा काग ॥१५४४॥
ध्यान धरा जिसने पर त्रिय का, धोका निश्चय खाय।
अपयश का वह घर घर अंदर, ढंढेरा पिटवाय ॥१५४५॥
धर्म चतुर्विध कहाँ शास्त्र में, दान शील तप भाव।
चित्त वित्त अरु पात्र तीन यें, दान दया सद्भाव ॥१५४६॥
दान द्रव्य से तप काया से, भाव भाव से होय।
किन्तु शील का पालन दुष्कर, असिधारा व्रत जोय ॥१५४७॥
उदधी तरना सांप खिलाना, नखसे खनना कूप।
इन से भी हैं दुष्कर दुष्कर, पालन शील अनूप ॥१५४८॥
अपर रंग सब निष्फल जानो, सच्चा रंग सुशील।
सहु जन दे सन्मान ठोर रुप, अचल मिले शिव लील ॥१५४९॥
अग्नी जल-अहि हो वरमाला, पर्वत स्थल सम लेख।
विष अमृत सिंह होय हरिण सम, वन में वस्ती पेख ॥१५५०॥
खल सज्जन हो, आपति संपति, चिंता रुप हो छार।
उलटे होते काम सुलट ही, शील हृदय जस धार ॥१५५१॥

जितने पल पर त्रिय पे दृष्टि, धरें होय विषयांध।
पल पल में पल्योपम दुख मय, लहें नरक कामांध ॥१५५२॥
नृप दंडे विन आयू मरणा, अपमानित प्रतिवार।
रहें बारवाँ चन्द्र उसी के, जो परत्रिय से प्यार ॥१५५३॥
कूकर सम निर्लज फिरे हैं, पग पग विपदा पाय।
शील हीन नरकी यह गति हो, शील धरें सुख सार ॥१५५४॥
शीलवती सीता सतियों में, गीता परम निधान।
शील निभाया कैसे सीता, सुनो लगाकर कान ॥१५५५॥
विषय विषे रावण रग रग में, व्यापक होता अंग।
लगी धून सीता लाने की, बढ़ता हृदय अनंग ॥१५५६।
पुष्पक नाम विमान बैठ के, रावण हो तैयार।
चला तुरत से सिया पास में, हो कामांध अपार ॥१५५७॥
दंडक वन में आये जब ही, बैठे सीताराम।
सिया पास में राम देख के, तरु तल ले विश्राम ॥१५५८॥
छुपा झाड़ की आड़ देख के, निरखे सिया स्वरूप।
इन्द्राणी ज्यों दिव्य कांति मय, देखा रूप अनूप ॥१५५९॥
पीन पयोधर मृग से लोचन, मुख ज्यों पूनम चंद।
केलथंभ उरु पग काछव से, अधर प्रवाला कंद ॥१५६०॥
सीता लख कामातुर होता, मुज जीवन धिक्कार।
धिक् विद्या धिक् राज सपंदा, जो न मिले यह नार ॥१५६१॥

तीन लोक में रूप नहीं है होय तृप्त नहि नैन।
जल से मछली बाहिर रहते, पावें नहिं मन चैन ॥१५६२॥
शूर्पनखा ने कहा उसी से, है ये बढ़कर रूप।
क्यों कर? मेरे कदम बढ़ेंगे, रघुवर तेज अनूप ॥१५६३॥
कालरूप रघुवर दिखते हैं, हृदय हिला लख तेज।
गीदड़ सम मैं राम सिंह वन, रखता मैं परहेज ॥१५६४॥
इन के बैठे सिया कदापी, हाथ न मेरे आय।
पैर बढ़े नहिं आगे मेरे, पीछे हटता जाय ॥१५६५॥
अवलोकिनि विद्या के द्वारा, मिले सकल मुज भेद।
उसे याद कर जनक सुता को, लेना बड़ी उमेद ॥१५६६॥

॥ अवलोकिनि विद्याद्वारा सीता हरण ॥

आना सहज हि जाना मुश्किल, हो जग में अपमान।
तुरत अविलोकिनि विद्या सुमरी, रावण धार गुमान ॥१५६७॥
आय तुरत विद्या अविलोकन, खड़ी दशानन पास।
किस कारण से मुझे बुलाई, मतलब कहिये खास ॥१५६८॥
कठिन उसे मैं सरल करूंगा, मुझ ताक़त अनुसार।
कहैं दशानन एक काम है, जो मेरे हितकार ॥१५६९।
राम पास यह सीता बैठी, वह मैं लेने आय।
इसे दिला दे काम यही है, अन्य नहीं मुज चाय ॥१५७०॥

राम कहैं सुन ? सीता तेरी, सांच सभी है बात ।
तुझे अकेली वनमें कैसे ?, छोडे हो उत्पात ॥१६००।
सिया कहे कुछ सोचो स्वामिन् ! ,दिया आपने बैन ।
उस अनुसारे वचन निभाओ, रखिये कुलकी ऐन ॥१६०१॥
प्रेम लखनका अधिक आपसे, तजा राजका ठाट ।
वनमें निशदिन रहैं साथमें, सहते कष्ट उचाट ॥१६०२॥
ऐसा भ्राता नहीं जगतमें, सिर देने को त्यार ।
कष्ट पड़ा जहाँ आगे होकर, गया लेय तलवार ॥१६०३॥
लिया शत्रु ने घेर उन्हींको, होनहार बलवान ।
समय गए फिर काम करेतों, समझो मत विद्वान ॥१६०४॥
जल्दी जाओ ? भ्रात बचाओ ! आखिर यह अरदास ।
वडी समस्या पड़ी रामपे, सुन प्यारी ? यह खास ॥१६०५॥
अरिदल की यह भूमी तुजको, कैसे ! जाऊं छोड़ ।
वने सहायक कौन यहाँपे, यह है जंगल घोर ॥१६०६॥
वार २ तेरे कहने से, मुज मन हुआ अधीर ।
धैर्य जहाँ तक नहीं आवेगा, मिले न लक्ष्मण वीर ॥१६०७॥
मेरे जाने वाद होय क्या, तेरा हवाल ।
विकट समस्या है यह मुजपे, प्रतिपल होता ख्याल ॥१६०८॥
वार वार सुन सिंहनाद को, रहा हृदय घवराय ।
भ्रात मिले जब होय सबूरी, देऊं उसे सहाय ॥१६०९॥

जाता मैं लक्ष्मण के तट अब तुम रहना इस ठौर ।
पक्षिजटायु पहरा देगा, सावधान चहुँ ओर ॥१६१०॥

॥ लक्ष्मणकी सहायतार्थ रामका जाना ॥

सिंहनाद पुनि सीता प्रेरित, राम हुए तैयार ।
धनुष बाण ले लिया हाथमें, पहना कवच करार ॥१६११॥
चले शत्रु जीतन को तवतो, शकुन हुए वेकार ।
बाया फड़का नेत्र रामका, मनमें हुआ विचार ॥१६१२॥
दक्षिण बायें ;मृग जाते हैं, बायें तीतर बोल ।
शशक पक्षि अहि आडे फिरते, अशकुन समझो तोल॥१६१३॥
चरण डिगे पग फटक लगते, ध्वजा मुकुट गिरजाय ।
अशगुन समझे हैं बुधजनये, बाहिर निकले नाय ॥१६१४॥
ईंधण कीच क्पास कैस तृण, अस्थि भस्म रज्ज चाम ।
सन्मुख ये सब मिले चले जब, यह है शकुन निकाम ॥१६१५॥
महिषी ऊंट विलाव रींछ कपि, श्वान वाम नहि ठीक ।
गो बकरी डावे हो बोले, चलिये तब निर्भीक ॥१६१६॥
चील शब्द है ठीक वाममें, फिर दक्षिण मे आय ।
चील भक्ष यदि पडे सीसपे, सो नृप पदवी पाय ॥१६१७॥
कर्म शुभाशुभ किए जीवने, सुख दुख रूप विचार ।
भला बुरा हो भावि वातका, शकुन करे निर्धार ॥१६१८॥

अशकुन अति होने से राघव, सीता तट फिर जाय ।
कहा हाल अशकुन का सारा, पल २ आढे आय ॥१६१९॥
अटल एक में "कार" लगाता, रहना उसके माय ।
कभी भूल मत बाहिर जाना, सांच कहू समझाय ॥१६२०॥
फिरतो किसकी ताकत नहीं है, देखे दृष्टि उठाय ।
यों कहके राघवजो जाते, मनका भर्म मिटाय ॥१६२१॥
लखन भीड पे चले रामजी, सीता रहती ऐकु ।
रावण सोचे हो मन माना, मेरी रहती टेक ॥१६२२॥

॥ सीताके द्वार योगीरूप रावणका आना ॥

होता खुश रावण अति दिलमें, मिला सभी अवकाश ।
तुरत लपक कुटिया पे आया, जहां सीता का वास ॥१६२३॥
सधा योगी वेष बनाया, सबको हो विश्वाश ।
भस्म लगाई जटा बढ़ाई, साधन सब ले पास ॥१६२४॥
अद्भुत योगी बना वृद्ध वय, आया सीता द्वार ।
करता सुमरण लिए सुमरणी, दिलमें कपट कटार ॥१६२५॥
हम सन्यासी पर उपकारी, दीनी उम्र बिताय ।
दुनियां की झंझट सब तजके, प्रतिपल योग कमाय ॥१६२६॥
लगन भजनमें मगन योगमें, करते विद्याभ्यास ।
योगी का सुन शब्द सियाजी, मनमें हो हुल्लास ॥१६२७॥

राम कहैं सुन ? सीता तेरी, सांच सभी है वात ।
तुझे अकेली वनमें कैसे ?, छोडे हो उसात ॥१६०० ।
सिया कहे कुछ सोचो स्वामिन् ! ,दिया आपने वैन ।
उस अनुसारे वचन निभाओ, रखिये कुलकी ऐन ॥१६०१॥
प्रेम लखनका अधिक आपसे, तजा राजका ठाट ।
वनमें निशदिन रहैं साथमें, सहते कष्ट उचाट ॥१६०२॥
ऐसा भ्राता नहीं जगतमें, सिर देने को त्यार ।
कष्ट पड़ा जहाँ आगे होकर, गया जेय तलवार ॥१६०३॥
लिया शत्रु ने घेर उन्हींको, होनहार बलवान ।
समय गए फिर काम करेतों, समझो मत विद्वान ॥१६०४॥
जल्दी जाओ ? भ्रात वचाओ ! आखिर यह अरदास ।
वड़ी समस्या पड़ी रामपे, सुन प्यारी ? यह खास ॥१६०५॥
अरिदल की यह भूमी तुजको, कैसे ! जाऊं छोड़ ।
बने सहायक कौन यहांपे, यह है जंगल घोर ॥१६०६॥
वार २ तेरे कहने से, मुज मन हुआ अधीर ।
धैर्य जहाँ तक नहीं आवेगा, मिले न लक्ष्मण वीर ॥१६०७॥
मेरे जाने वाद होय क्या, तेरा हवाल ।
विकट समस्या है यह मुजपे, प्रतिपल होता ख्याल ॥१६०८॥
वार वार सुन सिंहनाद को, रहा हृदय घवराय ।
भ्रात मिले जव होय सवूरी, देऊ उसे सहाय ॥१६०९॥

जाता में लक्ष्मण के तट अव, तुम रहना इस ठौर ।
पक्षिजटायु पहरा देगा, सावधान चहुँ ओर ॥१६१०॥

॥ लक्ष्मणकी सहायतार्थ रामका जाना ॥

सिंहनाद पुनि सीता प्रेरित, राम हुए तैयार ।
धनुष वाण ले लिया हाथमें, पहना कवच करार ॥१६११॥
चले शत्रु जीतन को तवतो, शकुन हुए वेकार ।
वाया फड़का नेत्र रामका, मनमें हुआ विचार ॥१६१२॥
दक्षिण वायें मृग जाते हैं, वायें तीतर वोल ।
शशक पक्षि अहि आडे फिरते, अशकुन समझो तोल॥१६१३॥
चरण डिगे पग कंटक लगते, ध्वजा मुकट गिरजाय ।
अशगुन समझे हैं वुधजनये, वाहिर निकले नाय ॥१६१४॥
ईंधण कीच कपास कैस तृण, अस्थि भस्म रजु चाम ।
सन्मुख ये सव मिले चले जव, यह है शकुन निकाम ॥१६१५॥
महिषी ऊंट बिलाव रींछ कपि, श्वान वाम नहि ठीक ।
गो वकरी डावे हो वोले, चलिये तव निर्भीक ॥१६१६॥
चील शव्द है ठीक वाममें, फिर दक्षिण में आय ।
चील भक्ष यदि पडे सीसपे, सो नृप पदवी पाय ॥१६१७॥
कर्म शुभाशुभ किए जीवने, सुख दुख रूप विचार ।
भला बुरा हो भावि वातका, शकुन करे निर्धार ॥१६१८॥

अशकुन अति होने से राघव, सीता तट फिर जाय ।
कहा हाल अशकुन का सारा, पल २ आडे आय ॥१६१९॥
अटल एक में "कार" लगाता, रहना उसके माय ।
कभी भूल मत वाहिर जाना, सांच कहूं समझाय ॥१६२०॥
फिरतो किसकी ताकत नहीं है, देखे दृष्टि उठाय ।
यों कहके राघवजो जाते, मनका भर्म मिटाय ॥१६२१॥
लखन भीड पे चले रामजी, सीता रहती ऐक ।
रावण सोचे हो मन माना, मेरी रहती टेक ॥१६२२॥

॥ सीताके द्वार योगीरुप रावणका आना ॥

होता खुश रावण अति दिलमें, मिला सभी अवकाश ।
तुरत लपक कुटिया पे आया, जहां सीता का वास ॥१६२३॥
सच्चा योगी वेश वनाया, सवको हो विश्वाश ।
भस्म लगाई जटा वढ़ाई, साधन सव ले पास ॥१६२४॥
अद्भुत योगी वना वृद्ध वय, आया सीता द्वार ।
करता सुमरण हिला सुमरणी, दिलमें कपट कटार ॥१६२५॥
हम सन्यासी पर उपकारी, दीनी उम्र विताय ।
दुनियां की झंझट सव तजके, प्रतिपल योग कमाय ॥१६२६॥
लगन भजनमें मगन योगमें, करते विद्याभ्यास ।
योगी का सुन शव्द सियाजी, मनमें हो हुल्लास ॥१६२७॥

करे कर्म यदि नीच–भूप हो, निर्लज वन सब ठौर।
करता होगा वृथा प्रजापे, अत्याचार कठोर ॥१६५७॥
राजा ऐसा जिस भूमी का, कामी या वदमाश।
कुछ ही दिन में ऐसे नृपका, होगा जगसे नाश ॥१६५८॥
कौवे कुत्ते से बदतर तू, हठ २ ? शठ चण्डाल।
भाग ! चला जा ? वरना तेरा, शिरपे आया काल ॥१६५९॥
अगर मेरे पति आजावेंगे, देंगे अकड निकाल।
छोड़ेंगे नहि तुजको जिंदा, वृथा फुला -मत गाल ॥१६६०॥
गिरगट रंग धरा ये तैने, होते ऐसे भूप।
राजा -होकर दास विषय का, वना—भाव विद्रूप ॥१६६१॥
रावण कहता प्यारी ? तेरी, चलती खूब जवान।
जो आया बक दिया जवांसे, छोड दिया सब भान ॥१६६२॥
कैसे ? पेश वडे से आना, तुझे नहीं तालीम।
तुम्हीं मर्ज की दवा करूंगा, खुद में होय -हकीम ॥१६६३॥
खुला तेरे हैं -कौन ? सहाई, मुजसे दे छुडवाय। -
जवरदस्ति से सिया पकड कर, रावण लिया उठाय ॥१६६४॥
विमान पुष्पक में विठलावें, सहसा रावण दुष्ट।
होंस उडे सीता के सारे, कैसा निकला धृष्ट ॥१६६५॥
हृदय लगा आघात वज्रसा, फूल खिला मुर्झाय।
दृग जल लाकर रोती सीता, ऊंचे स्वर अकुलाय ॥१६६६॥

परवश हो के कहती सीता, गए कहाँ पतिराम।
देवर लक्ष्मणजी भी तुमतो, करते हो सग्राम ॥१६६७॥
जनक पिताजी दशरथ सुसरा, हा ? भामंडल भ्रात।
आओ ? जल्दी मुझे छुडाओ, इस राक्षस के हाथ ॥१६६८॥
सींचाना, ज्यों गहे कबूतर, बगुला पकडे मीन।
ऐसे राक्षस मुझे पकडली, होती पर आधीन ॥१६६९॥

॥ सीता रक्षार्थ जटायु पक्षिका प्रयत्न ॥

पक्षी जटायू हाल देख ये, मन में हो बेहाल।
चोच पांख पजों से नोंचे, रावण को हरहाल ॥१६७०॥
सीता को छुटवाने कारण, पक्षी करे उपाय।
रावण कहता हट २ निरलज, जा तू दूम दबाय ॥१६७१॥
भाग ? निरर्थक क्यों खोता तू, अपना जीवन मूल।
नहि हटता जब क्रोध चढा हैं, रावण शिर तिरशूल ॥१६७२॥
पकड पक्षिकी पांख काट दी, करमें ले तलवार।
पक्ष विहीन पडा धरणी पे, वह पक्षी लाचार ॥१६७३॥
मरजाने का -फिकर नहीं है, शल्य रहा दुःख एक।
पडा २ पछताता पक्षी होनहार गति लेख ॥१६७४॥
निर्भय हो के रावण जाता, सीता रही पुकार।
कोई आओ ? मुझे छुडाओ ?, गए कहाँ भरतार ॥१६७५॥

परोपकारी आकर कोई, जल्दी करो सहाय।
आज छुपे उपकारी सारे, नजर कोई नां आय ॥१६७६॥
बदल गई किस्मत ये मेरी, सुने न कोई बात।
जीभ काटना ठीक समझती, करूं प्राण आघात ॥१६७७॥
मुज मरने पर पतिवर मेरे, तज देंगे हा ? प्राण।
क्या करना सूझे नहि अबतो, साय्य करो भगवान ॥१६७८॥
झुरु २ सीता देखे पीछे, लेने आवें राम।
निश्चय मेरी सोध निकाले, आकर के इस धाम ॥१६७९॥

॥ सीता हित रावणसे रत्नजटि का युद्ध ॥

अर्कजटी का पुत्र रत्न जटि, विद्याधर उसवार।
सुना रुदन उसने सीता का, विस्मय हुआ अपार ॥१६८०॥
भामण्डल प्रिय मित्र हमारा, उसकी यह हैं बहन।
राम प्रिया को लेकर जाता, कैसे हो मुज सहन ॥१६८१॥
लडना इससे सिया छुटाना, अपना फर्ज विचार।
चाहे प्राण रहे या जावे, इसकी नहि दरकार ॥१६८२॥
क्षत्रि कभी अपने नैनों से, देखे नहि अन्याय।
अपना काम समझ रत्नजटि, रावण सन्मुख जाय ॥१६८३॥
अरे दुरात्मन् ? डाकू तस्कर, सिया लेय कहाँ जाय।
छोड सिया को कहे विनय से, तू अन्याई राय ॥१६८४॥

मुझे काम क्या ? लङ्कागढ़ से, तुझे लाख धिक्कार।
क्षत्री कुल में दाग लगाया, करके अत्याचार ॥१७१३॥
वस्तु चुराकर लाना पर की, नर नीचों का काम।
मेरे सिर इक प्रबल धनी है, शूर वीर श्रीराम ॥१७१४॥
रावण कहै मैं किया उचित ये, सब ही सोच विचार।
मुझसे करले प्रेम अरी ? तू, तज के सब तकरार ॥१७१५॥
तेरे बिन नहिं चैन जरा है, सजलो सब सिनगार।
मणि मोती माणिक के जेवर, हाजिर में इरबार ॥१७१६॥
नहिं जा सकती मुज कबजे से, फले न तेरी आश।
राम लखन तो है वनवासी, फोज शस्त्र नहिं पास ॥१७१७॥
सीस रखा सीता के चरणों, आखिर भाव सुनाय।
लाज रखो मुज वचन मानलो, बिगड़ी पत रह जाय ॥१७१८॥
अन्य पुरुष लख सीता अपना, लीना पैर हटाय।
क्रोधित हो उत्तर वह देती, कटुक शब्द दर्शाय ॥१७१९॥

॥ रावण को सीता की फटकार ॥

अय ? जुल्मी क्यों जुल्म कमाता, आशिक मुजपे होय।
मत सतियों को सता समझले, अन्त रहेगा रोय ॥१७२०॥
हाथों से मुख काला करता, क्या ! तू है विद्वान।
परनारी पे हृदय चलाया, बेशक बेईमान ॥१७२१॥
शशि सीतलता सूर्य उष्णता, तजदे दधि मर्याद।
अनहोना भी हो—पर मेरा, शील अचल आबाद ॥१७२२॥
खण्डन करना अन्य धर्मका, इसमें क्या ? है स्वाद।
हाथ लगा मत—रहो दूर पे, रखना कुल मर्याद ॥१७२३॥
कटुक वचन यों रावण सुनता, लगता मिष्ट महान।
ज्वर रोगी को तैल खटाई, लगता ज्यों पकवान ॥१७२४॥
प्रेम पुराना अधिक रामसे, है सीता के साथ।
धीरे धीरे रहन सहन से, सिया लगेगी हाथ ॥१७२५॥
नूतन पशु आदि भी, धीरे, धीरे वशमें होय।
त्रिया बाल नृप योगी हटका, मिटना कठिन विलोय ॥१७२६॥
साधु समीप रावण ने पहले, लिया हुआ यह नेम।
मुजको नारी चहैं उसीसे, करना तबही प्रेम ॥१७२७॥
सीता चाहैं यदि नहिं मुजको, करूं न सहसा काम।
कुछ ही दिनमें इसके दिलसे, पलटेंगे परिणाम ॥१७२८॥

लकामें सीताका आना और प्रतिज्ञा करना

स्वागत कारण मंत्री आदिक, सुभट लङ्क नरनार।
आय वधावे मङ्गल गावे, जय जय ध्वनी उचार ॥१७२९॥
घर घर लङ्का को सिनगारे, लाए निरुपम नार।
लङ्का से दिशि पूर्व बाग में, देवरमण सहकार ॥१७३०॥
रक्ताशोका तरु तल सीता, बिठलाई धर प्यार।
मेवा फल मिष्टान थाल भर, धरते विविध प्रकार ॥१७३१॥
कोकिल मैना करे मधुर स्वर, खिले फूल फल डार।
त्रिजटि नामक रखते दासी, सीता की प्रतिहार ॥१७३२॥
धरे न सीता प्रेम किसीपे, एक राम में ध्यान।
कठिन सिया करी प्रतीज्ञा, मनमें धर सद् ज्ञान ॥१७३३॥
जबतक राम लखन की खबरें, सुनती नहिं निज कान।
तबतक खाने पीने का है, मुजको प्रत्याख्यान ॥१७३४॥
करके अधिक प्रबध सियाका, नृप आया निज धाम।
हर्ष दशानन अधिक हुआ मन, इच्छित बनता काम ॥१७३५॥
बैठी सीता उधर बागमें, रावण अपने स्थान।
उधर राम लक्ष्मण हित जाते, भ्रात प्रेम मन आन ॥१७३६॥
कर्म शुभाशुभ भुगते प्राणी, निज कृत सब संसार।
धर्माराधो शिव पथ साधो, बढ़ता सौख्य अपार ॥१७३७॥
भाग दूसरा रामायणका, कहा अल्प विस्तार।
'पूज्यनन्द गुरु' शिष्य सूर्यमुनि, कथी कथा हितकार ॥१७३८॥
विक्रम संवत दोय सहसके, माघ कृष्ण रविवार।
तिथि द्वादशवीं पूरन कीना, अल्प बुद्धि अनुसार ॥१७३९॥
जैन धर्म के रागी रहते, शुद्ध श्राद्ध अभिराम।
रामरास ये गाया मैंने, गांव रम्य रतलाम ॥१७४०॥

॥ इति द्वितीय भाग ॥

वैरी का वध करके जल्दी, मैं आता हूँ चाल।
सिया मात की रक्षा करना, वैरी से सभाल ॥ १२ ॥
लक्ष्मण के कहने से जल्दी, आते सीता स्थान।
सिया नजर नहिं पड़ी राम के, हो मूर्छित वे भान ॥ १३ ॥
पड़े जमीं पे शुद्ध भूल के, होता पवन प्रचार।
जरा देर में हुए सचेतन, देखें दृष्टि पसार ॥ १४ ॥
डोले इत उत ढूढत वन में, फिरके सारे स्थान।
आगे जाते मृत्यू सन्मुख, पड़ा पक्षी वे भान ॥ १५ ॥
एक गीध वह मुख से करता, राम नाम उचार।
सुना रामने कौन राम का, करता नाम पुकार ॥ १६ ॥
दया दृष्टि धर गए पास में, लखा पक्षि वे हाल।
अरे जटायू ? किसने तुजको, दीना कष्ट कराल ॥ १७ ॥
नैन खोल के लखे सामने, पाए अन्तिम राम।
शक्ति नहिं पर आँखों द्वारा करता राम प्रणाम ॥ १८ ॥
आँख मूंद के कहता मुजको, राम नाम आधार।
बस बोलो मत उसी रामको, जपने दो हर बार ॥ १९ ॥
तेरे सन्मुख राम खड़ा है, सुनके खोले नैन।
तेरी हालत होती क्या ये, कहो मुजे हो चैन ॥ २० ॥
पुन नमनकर बोला पक्षी, सचा यह सदेश।
एक दुष्ट आ उठा सिया को, जाता दक्षिण देश ॥ २१ ॥
सिया छुडाने लड़ा उसी से, चला न मेरा जोर।
मेरी दुष्टी पांख काटके, डाल गया इस ठौर ॥ २२ ॥
अब नहिं बोला जाता मुखसे, निकल रहे हैं प्राण।
देख दशा पक्षी की रघुवर, करते सोच महान ॥ २३ ॥
दिल में लाए दया दयालू, हो इसका उद्धार।
परोपकारी उसे सुनाया, मन्त्र बड़ा नवकार ॥ २४ ॥
तुजको भव २ शरणा इसका, सुनो पक्षि ? धर ध्यान।
शुभ भावों से श्रावक पक्षी, किया हृदय श्रद्धान ॥ २५ ॥
स्वर्ग चतुर्थे श्रद्धा रख कर, गया अमर पद पाय।
सत् श्रद्धा से तिरा पक्षि वर, सत्सगत सुखदाय ॥ २६ ॥
इधर उधर देखे चहुँ दिशि में, दिखा न कोई पास।
फिरे विपिन में आशा धरके, होते पूर्ण उदास ॥ २७ ॥
राम कहैं अय ? वनके पक्षी, सिया लखी किस ठौड़।
सुनो मृगों मृगनैनी मेरी, बतलाओ ? तुम दौड़ ॥ २८ ॥
अरी कौकिला ? कौकिल कण्ठी, सिया बतादो आज।
अय हंसो ? वह हस गामिनी, गई कहाँ किस काज ॥ २९ ॥
मेरी प्यारी मगलकारी, शील सत्य श्रृङ्गार।
अभी मिला दो सिया दयाकर, वनचर सुनो पुकार ॥ ३० ॥
विना सिया के काम न चलता, अपर वृथा सब बात।
शून्य सभी ससार समझता, दुखमय सारा गात ॥ ३१ ॥
शयन सेज यह देख सिया की, होता दुःख महान।
सज्जन जाते साले नहिं पर, शाले सब अहिठान ॥ ३२ ॥
जोड़ा विछुड़े पति पत्नि का, कौन ? नहीं सोचत।
सिया विछोहा कारण रघुपति, जल भर दृग रोवंत ॥ ३३ ॥
कौन ? दुष्ट ले गया जानकी, पद्मण पति व्रत नार।
किया रंग में भग अचानक, दुःख सिर पड़ा पहार ॥ ३४ ॥
दिया सियाने साथ्य विपिन में, सुख की तज दरकार।
आओ लक्ष्मण भैय्या ? सुनलो, साथ्य करो इसबार ॥ ३५ ॥
क्षणमें मूर्छित क्षणमें चेतन, रहते सिया पुकार।
कौन सुने जंगल में जिनकी, विपदा देय निवार ॥ ३६ ॥

॥ लक्ष्मण के शरणमें विराधका आना, और खर-दूषण का मरना ॥

उधर अकेला लखण वीर वर, करते युद्ध करूर।
नृप दूषणके साथ अड़े है, निर्भय होकर शूर ॥ ३७ ॥
उसी समय था खरसे छोटा, त्रिशरा नामक भ्रात।
आगे आकर कहै भ्रात से, सुनो हमारी बात ॥ ३८ ॥
इसी साथमें युद्ध तुमारा, है नहिं करना ठीक।
इस दुष्टीको मैं पल भरमें, जीतूगा निर्भीक ॥ ३९ ॥
रथारूढ़ हो लखन साथमें, लड़ता भर अभिमान।
मृगके सम मारा पल भरमें, वीर लखन बलवान ॥ ४० ॥

हु. सचेतन लखा लखनको, किया आलिंगन राम।
जो आनंदित हृदय भराया, मनकी कहैं तमाम ॥ ७० ॥
दोनों मिल नहिं सिया रखानी है अचरजकी वात।
कहै लखन सुनिये तुम स्वामिन्? , तजदो दिल उसात ॥ ७१ ।
कोई कपटी सिंहनाद कर, सीताको ले जाय।
जलदी लाऊं सिया ढूंढके, निश्चय मेरी वाय ॥ ७२ ॥
उस दुष्टीने सिया हरणकी, में लेता जस प्राण।
चले उसीकी सोध निकाले, देख सभी अहिठाण ॥ ७३ ॥

॥ सीताकी सोधमें जेवर का मिलना ॥

राम चले फिर खुद ढूंढनको, मिलता उन्हें निशान।
जो जेवर सीताने डाले, सभी मिले उस थान ॥ ७४ ॥
किए इकट्ठे किसके हे ये, नहीं रामको ध्यान।
लाकर सवको लखन सामने, धरे उमग मन आन ॥ ७५ ।
देख लखन यह किसके गहने, मुजसे हो नहिं छान।
मुजे मिले यह जेवर सारे, कर इसकी पहिचान ॥ ७६ ॥
माला नेवर विंदी कंकण, रत्न जडित ये हार।
हाथ पांव के जेवर सारे, देखो दृष्टि पसार ॥ ७७ ॥
लखन कहें भ्राता में कैसे, कर सकता पहिचान।
जो जेवर पहचानूं उसका, पाया नहीं निशान ॥ ७८ ॥

क्योंकि मैंने कभी उमर में, लखा न सीता अंग।
माता चहरे को नहिं देखा, कैसा तनका रंग ॥ ७९ ॥
कभी निकट में जाता यदि तो, रखता नीचे नैन।
नहीं जान सकता में जेवर, समझो सच्चे वैन ॥ ८० ॥
कोई पगका जेवर होतो, झट लूंगा पहिचान।
क्योंकि सुवह में सिया चरणको, नमता प्रतिदिन आन ॥ ८१ ॥
पग नेउर उस समय देखता, उसका है अव ध्यान।
वह होगातो तुरत आपको, कर दूंगा सव छान ॥ ८२ ॥
धन्य लखन हो तुम्हें कि ऐसे, शीलवंत गुणवंत।
विमल भावना उत्तम तुमकी, विरले संत महंत ॥ ८३ ॥
यह नेवर है सिया पैर के, सिया हरे चंडाल।
चिह्न गिराए पतिहित सियने, लेंगे मुज संभाल ॥ ८४ ॥
लखन कहे पहले करना है, काम एक तत्काल।
राज दिलाना धुर विराध को, नगरी लंक पयाल ॥ ८५ ॥
वचन इसीको दिया युद्धमें, पूरी करे जवान।
तव विराध ने सिया ढूंढने, भेजे भट सव थान ॥ ८६ ॥
भट विराध के वन २ सोधे, आखिर हुए निराश।
पुन लोट नीचे मुख करके, खडे रामके पास ॥ ८७ ॥
राम कहैं अय सुभटों ? तुमतो, स्वामी भक्त कहाय।
यथा शक्ति की महिनत इसमें, दोप तुमारा नाय ॥ ८८ ॥

कर्म होय उलटे तव दूजे, क्या! कर सकते काम।
तव विराध यों कहैं रामसे, समझो मुझे गुलाम ॥ ८९ ॥
लंकपयाला मुझे दिलादो, चलो आप इसवार।
खवर लगावे फिर सीता की, करके कुछ उपचार ॥ ९० ॥
तव विराध अरु रघुवर चलते, सेना सव ही साथ।
सीम जहाँ पाताल लंक की, ठहरे जव रघुनाथ ॥ ९१ ॥
उधर सुद खरपुत्र, सैन ले, आया लडने काज।
तव विराध से वोला कटुमय, करके क्रोध अवाज ॥ ९२ ॥
मुज पितुके ये मारन हारे, दिया इन्होंको साज।
अत. तुझे पहले मारूंगा, इनका वाद इलाज ॥ ९३ ॥
करते युद्ध विराध साथमें, हय गय सेन्य अपार।
जव लक्ष्मणजी गए युद्धमें, देय ऐक ललकार ॥ ९४ ॥
शूर्पनखा आ कहैं सुदसे, मत लड ये वलवान।
तुज पिता अरु काका मारे, तेरी क्या? है शान ॥ ९५ ॥
तभी सुंद भग करके जाता, शरण दशानन पास।
राम लखन पाताल लंकमें, जाकर किया निवास ॥ ९६ ॥
अपने कर आधीन राजको, करते भूप विराध।
खर महिलों में राम विराजे, रुच ही सौख्य अगाध ॥ ९७ ॥

किन्तु वह परत्रिय का लंपट, कंटक रूप कटार।
दोनों को वह मार आप ही, ग्रहण करें मुज नार ॥१२७॥

॥ सुग्रीव का राम शरण में जाना ॥

इसी विपत में साध्य रूप था, उग्रवली खर राय।
उसको वीर लखन ने मारा, हुआ बड़ा अन्याय। १२८॥
अत राम लक्ष्मण का शरणा, निश्चय लेना जाय।
क्यों कि शरणागत विराध को, राज दिया छिन माय ॥१२९॥
वेही मुज पे कृपा करेंगे, वें है दया निधान।
विना उन्हीं के नहिं दिखता है, कोई वीर प्रधान ॥१३०॥
पहले उन पे दूत भेज के, समझूं सारा हाल।
फिर विराध के द्वारा होगा, मेरा काम विशाल ॥१३१॥
गुप्त भृत्य को बुला भूप ने, कहा उसे सब हाल।
करो सिद्ध यह काम हमारा, जाकर लंक पयाल ॥१३२॥
निज स्वामी के वैन श्रवण कर, होता चित्त हुलास।
स विनय बोला नाथ तुमारी, होगा पूरण आश ॥१३३॥
किष्किंधा से दूत चला तब, आया लकपयाल।
राम लखन अरु विराध पद में, नमन करे सोल्लास ॥१३४॥
नृप विराध ने तभी दूत को, आदर दे बिठलाय।
किस कारण से आए चल के, अपना कहो सुनाय ॥१३५॥
दूत समय शुभ देख सुनाता, किष्किंधा का हाल।
क्या में स्वामिन्? कहूं आप को, हाल हुआ वे हाल ॥ ३६॥
मेरे नृप ने कहा आप से, नाव बनी झक झोल।
विना आप के पार न होगा, जो कि काम वेडोल ॥१३७॥
जीवन तक उपकार आप का, मानेंगे सुग्रीव।
बेघर होके फिरते इत उत, उखड़ गई है नीव ॥१३८॥
आदि अत से तभी सुनाई, बोला वीर विराध।
हे भाई? यह कहना सच्चा, होगा दु:ख अगाध ॥१३९॥
कहना उसका है मुज सिर पे, समझ गया सब बात।
किन्तु रामका आना कैसे, होय वहां साक्षात ॥१४०॥
क्यों? कि उनकी नारी सीता, उठा गया नर जार।
इसी समय में राम लखन भी, होय रहे वेजार ॥१४१॥
आ जावे यदि राम वहां तो, सुधर जाय सब काम।
मिल जावेगा गया राज्य भी, पावेंगे आराम ॥१४२॥
एक वक्त कपिपति आ करके, करे राम से भेट।
सुधर जायगें काम उन्ही के, मिटे दु ख आखेट ॥१४३॥
गया दूत सुग्रीव पास में, सारा हाल सुनाय।
चलता तब सुग्रीव हाल सुन, राम पास में आय ॥१४४॥
मिल विराध से आकर कपिपति, अपना किया बयान।
तब विराध सुग्रीव लेय के, आए रघुवर स्थान ॥१४५॥
आशा धर के दोनों आए, नमे चरण रघुवीर।
चतुर विज्ञ सुग्रीव सयाना, वेठे धर के धीर ॥१४६॥
नीर बहाते निज नैनों से, देख लिया तब राम।
मेरा जैसा यह है दुखिया, आया मेरे धाम ॥१४७॥
शरणागत की रक्षा करना, देकर इसको साज।
कहें तभी सुग्रीव दयानिधि?, सुनिये दुखित अवाज ॥१४८॥
राम कहें क्या? सिरपे आकर, दुख का पड़ा पहाड़।
जो कुछ सेवा मुज को कहिये, देवें शत्रु पछाड़ ॥१४९॥
हे रघुपति? दुख में दुख होता, गया कलेजा दाज।
सिया सोध में हाजिर सेवक, खड़ा सदा रघुराज ॥१५०॥
कैसा भी हो दुखतर उसको, करने को सब त्यार।
आज्ञा दो सेवक को स्वामिन्?, खड़ा आप दरबार ॥१५१॥
मेरे व्याधी लगी उसीको, आप मिटादो नाथ।
इतनी सुनके राम तुरत से, कहें बढ़ाकर हाथ ॥१५२॥
अपनी सारी कथा व्यथा को, बतलाओ? इसवार।
सज्जन जो परके दुख सुनके, निज दुख देय विसार। १५३॥
लगा कहन सुग्रीव राम से, दुख की कथा तमाम।
ऐसा आन पडा सिर फंदा, खाना हुआ हराम ॥१५४॥
बना अपर सुग्रीव मेरे सम, घुसा महिल दरम्यान।
किया सभी स्वाधीन उसीने, किससे हो नहिं छान ॥१५५॥

राम रोष धर कहते कामी, ? क्यों अब तू पछताय।
किये पाप का ये फल पाया, चिंता क्यों चितलाय ॥१८४॥
साहसगति तब कहता स्वामिन्, ? सुनिये अतर बात।
आप दयालू पूर्ण कहाते, मेटो मुज उत्पात ॥१८५॥
बड़ा बुरा यें काम किया मैं, पाया अति अपमान।
अधिक कष्ट से विद्या साधी, छोड सभी से ध्यान ॥१८६॥
मात पिता अरु राणी छोडी, राज पाट धन धाम।
इस तारे के कारण मैंने, छोड़ा सब अ राम ॥१८७॥
कई वर्ष तक गिरि कंदर में, छानी मैंने खाक।
भूख प्यास का कष्ट उठाया, आज हुआ नापाक ॥१८८॥
चहै चकोरी सदा चन्द को, जैसे मैं दिन रात।
दिल चाहैं वह तारा नारी, दिखलादो साक्षात ॥१८९॥
तारा का मैं दर्शन चाहूँ, अन्तिम बात स्विकार।
जरा दिखादो चन्द्र वदन वह, फिर जाता निज द्वार ॥१९०॥
साहसगति का वचन राम सुन, छाया क्रोध अपार।
सुनना बस तेरा नहिं चाहैं, मूर्खों का सिरदार ॥१९१॥
आया तेरा काल निकट अब, जाने को यमद्वार।
हो सचेत भज इष्ट देव को, अष्ट किया अवतार ॥१९२॥
तेरे जैसे पापी का यह, खून चूमता तीर।
इसमें किसका दोष नहीं—मुज, पाप कर्म अक्सीर ॥१९३॥

जब छोड़ा है तीर रामने, किया कलेजे छेद।
पड़ा जमीं पे गश खा करके, हुआ पूर्ण मन खेद ॥१९४॥
अन्तिममें कुछ हुआ सचेतन, निकट राम जब आय।
दो बातें कुछ हित शीक्षा की, आखिर कही सुनाय ॥१९५॥
अन्तिम तेरा समय हुआ अब, भजले श्री परमेश।
इसी ध्यान से प्राण गए तो, होगा गती सुरेश ॥१९६॥
जाया सोही जाने वाला, छोड़ विषय से ध्यान।
परदारा के कारण तेरे, निकल रहे हैं प्राण ॥१९७॥
साहसगति तब कहे राम से, सांच आपके वैन।
विषय विवशमें प्राण गमाया, मिला नहीं कुछ चैन ॥१९८॥
प्राण पंखेरू साहसगति के, निकल गए उसवार।
रामन्याय को देख सभी को, होता हर्ष अपार ॥१९९॥

॥ किष्किंधा में राम का निवास ॥

पहले वत् सुग्रीव भोगता, राजपाट आराम।
अर्ज करे सुग्रीव जोड़ कर, सुनिये मुज श्रीराम ॥२००॥
मुज पुत्री से व्याह कीजिये, कुछी समक्ष के भेट।
सदा ऋणी मैं दास आपका, काम किया मुज श्रेष्ट ॥२०१॥
कपिपतिसे रघुवर यों बोले, खटका दिल में एक।
सिया सुधी नहीं मिले वहांतक, छोड़ा काम हरेक ॥२०२॥
बीत गए कई दिनों वहां पे, रहते रहते राम।
भूले तब तो कपिपति सुख में, सिया सुधी का काम ॥२०३॥
राम रोष धर बोले तबतो, अय सुग्रीव हराम ?।
तूं तो अपने लगा काममें, भूल गया मुज काम ॥२०४॥
जब था तेरा स्वारथ मुजसे, दिखलाता था प्यार।
काम निकलने पर हो जाते, दुश्मन सब संसार ॥२०५॥
सिय सुध लाने की हो इच्छा, तो कहदे मुज बात।
वरना हम जाते हैं अब तो, दिखलावें दो हाथ ॥२०६॥
जोश भरे सुन राम बैन यों, पाया भय सुग्रीव।
भूला निश्चय काम किया नहिं, बनती बात अजीब ॥२०७॥
डरा धूजता हाथ जोड़ के, पडे राम के पाय।
क्षमा करो औगुन पे मेरे, माफी दो बक्साय ॥२०८॥
अब नहिं होगा गुन्हा दास से, छोड़ सभीमें काम।
तुरत सिया की सोध कराऊं, तज के सब आराम ॥२०९॥
बडे बडे क्षत्री वीरों को, कपिपति लिया बुलाय।
करे विचार सीता सोधन का, पता कहां पे पाय। २१०।

॥ रावण पे शूर्पनखा की पुकार ॥

उधर दशानन सिया ध्वनि में, भूल गया निज भान।
खाना पीना राज पाट का, जरा रहा नहिं ध्यान ॥२११।

देकर पीठ अधो मुख बैठी, दृगसे गिरता नीर।
हाल देख सीता का रावण, मन में हुआ अधोर ॥२४१॥
बोला रावण अरी मैथिली ?, अन्तर पटदे खोल।
रोना धोना छोड़ तोल मन, काया मिली अमोल ॥२४२॥
मत इसको तू वृथा नष्ट कर, नरभव का ले लाभ।
यह है जोवन चचल जैसे, अथिर अभ्र जल डाभ ॥२४३॥
छूग जंगल मंगल फिरना, मिलती सोवन लंक।
संगत छूट गई भीलों की, यह विधि के सब अंक। २४४॥
रत्न जटाऊ साड़ी भूषण, पहिन अरी हृदयेश ?।
पग सिर तकका गहना सारा, सिर धर पति लंकेश। ॥२४५॥
सभो तरह से हे मनमोहन, स्वर्ग रूप उद्यान।
फूल फलों से अंकित सारे, गुंजारव अलि थान ॥२४६॥
व्रमी कुण्ड जलाशय सारे, कमल पत्र दल छाय।
चलता मन्द समीर सुगंधित, हृदय कज विकशाय ॥२४७॥
उन्नत सुंदर हवा युक्त है, महिल गोख आराम।
षट् ऋतु के साधन सब इसमें, चित्र विचित्र ललाम ॥२४८॥
फर्श जडे हीरे पन्नों से, सजे सभी प्रासाद।
जगमग करते सूर्य किरण से, देखें मन आह्लाद ॥२४९॥
कहलावेगी तीन खड की, तू पटराणी खास।
अपर राणियां आज्ञा माने, बनो रहेगी दास ॥२५०॥

मनमानी तूं मोज मनाजे, निर्भय हो हरवार।
पुण्य सितारा चमका तेरा, तूठ गए किरतार ॥२५१॥
जो कुछ भी हो तेरे दिल में, उसे सुना दे साफ।
गुन्हा किया इतने दिन तेने, सभी किया में माफ ॥२५२॥
नजर उठाके देख सामने, रजोगम दे छोड़।
जरा कहन मुज मान लियातो, बन जाती सिर मोड़ ॥२५३॥

॥ रावण को सीता का जवाब ॥

इतने रावण की सुन सीता, बोली कटु आवाज।
अय कायर व्यभिचारी ? तेने, तजदी कुलकी लाज ॥२५४॥
वृथा करे बकवाद कभी का, थकती नहीं जबान।
घबराती में तो सुन करके, तेरा नीच बयान ॥२५५॥
कैंची जैसी चलती तेरी, तेजी वेग जबान।
भूक रहा कुत्ते सा कब का, छोड़ दिया ईमान ॥२५६॥
पुत्री तेरी मेरे सम है, उसे बना पटनार।
वस्त्राभूषण पहना उससे, मन माना कर प्यार ॥२५७॥
देवरमण वन तेरा मुजको, दिखता है समशान।
वस्त्राभूषण महिल अटारी, लगते सर्प समान ॥२५८॥
सुन्दर गीत रुदन से लगते, भोजन जैसे छाण।
भूत प्रेत से लगते परनर, सुन्दर शैय्या बाण ॥२५९॥

सुनले अय पापी दुष्टी ? तू, निलंज निपट गवार।
मेरे दिल में बसे राम जी, जग के वे किरतार ॥२६०॥
रग रग मेरे बसे राम जी, सूरत अँखियां माय।
भरे अनोखे अमित गुणों से, लज्जा राम सुहाय ॥२६१॥
सुरनर उनके दर्शन कारण, तरस रहे दिन रात।
बिना भाग्य छवि कौन देखता, गुन गण से विख्यात ॥२६२॥
क्या ? है तेरी ताकत मुजसे, देखें राम विसार।
रसस्वाद गद्धा क्या जाने, जो कि उठाता भार ॥२६३॥
सच्चा क्षत्री होता यदि तू, नहीं चुराता नार।
क्षत्री होके डाकू निकला, मर जाना श्रेयकार ॥२६४॥
बिन कारण से सती सताता, अरे ! नीच नादान।
सच्ची सतियाँ शील संपती, तजे न जबतक प्राण ॥२६५॥
जो चलता विपरीत धर्म से, उसका आया अन्त।
राजपाट से भ्रष्ट होय ले, भव भव कष्ट अनन्त ॥२६६॥
सती पयोधर मणि अहिवर की, वीराश्रय जो पाय।
कृपण द्रव्य सिंहकेस अन्य के, जीवित हाथ न जाय ॥२६७॥
करले कोटी यत्न कदापी, करके दाव उपाय।
तेरे कर सीता नहिं आवे, सिर पच पच मर जाय ॥२६८॥
जरा ध्यान धर सोच समझ के, दीपक ज्ञान विचार।
रामप्रभु के शरण चला जा, हो तेरा उद्धार ॥२६९॥

॥ पति विरह में मदोदरी का सोचना ॥

सोचे मदोदरी हमेशा, भूले हमें नरेश।
खबर न लीनी इतने दिनमें, कारण कौन विशेष ॥२९८॥
कहती दासी से यों राणी, नम्र वचन दरसाय।
देख अरी दासी ? तू अचरज, समय गया पलटाय ॥२९९॥
नहिं आते महिलों के अन्दर, होता कितना काल।
क्या कारण ये नहिं समझाता, भूल गए भूपाल ॥३००॥
बिना पियाके नैन तरसता, जैसे चन्द्र चकोर।
कथा है उनका जिकर सुनादे, मैंने सुना चकोर ॥३०१॥
नई एक लाए वे नारी, रखी उसे उद्यान।
क्यों ना हमको ये दिखलाते, बना कहीं तोफान ॥३०२॥
दासी कहती यही सुना मैं, घर घर हो रहि बात।
दशरथ सुत राघव की नारी, सीता शचि साक्षात ॥३०३॥
दंडक वन में देख अकेली, पिया जाय हरलाय।
शील धर्म वह नहीं छोड़ती, जबरन करता राय ॥३०४॥
बार बार वे जाय बाग में, समझाते धर प्रेम।
किन्तु एक नहिं माने सीता, अचल शील व्रत नेम ॥३०५॥
अधिक सताने से वह अपना, तज देवेगी प्राण।
भूल गए भूपाल भर्म में, कामी अन्ध समान ॥३०६॥
जाओ दासी ? समझा करके, लाओ महिल मझार।
पता लगेगा सभी बात का, है क्या ये तकरार ॥३०७॥
परकी नार चुराकर लाना, यह क्या ? नृपका धर्म।
नीति भ्रष्ट अब होते राजा, तजते कुलकी शर्म ॥३०८॥
दासी कहती कहूँ जायके, जहँ पे लका नाथ।
आना या नहिं आना वहतो, समझो उनके हाथ ॥३०९॥
सीधा उलटा प्रेम वचन से, समझाऊंगी हाल।
दासी पहुँची तुरत महिल में, लेटे थे भूपाल ॥३१०॥
मुख पकज था मुर्झित उनका, लम्बी लेते सास।
बार बार लेते थे करवट, भूले सभी विलास ॥३११॥
व्याधी ऐसी बढ़ी कि मानो, निकले अब ही सास।
देख ख्याल घबराती दासी, भूली होंस हवास ॥३१२॥
यदि इनसे कुछ बात कहे तो, हो क्या ? मेरा हाल।
गुस्से में आकर के मेरा, निकट बुलादे काल ॥३१३॥
क्रोधी नरसे बात न करना, चाहूँ जो निज खैर।
ऐक क्षणिक भी नहीं ठहरना, चली तुरत उस बैर ॥३१४॥
राणी पे पहुँची वह दासी, राणी झट बतलाय।
अरी ? उदासी छाई मुखपे, आई क्यों ? घबराय। ३१५॥
निर्भय होके हाल सुनादे, क्यों तू होय अधीर।
हाल कहूँ क्या दासी कहती, बात बडी गम्भीर ॥३१६॥
आप हुकुम से गई वहां पे, लेटे थे लंकेश।
जल बिन मछली जैसे तड़पे, पाय रहैं अति क्लेश ॥३१७॥
कौन रोग है गम नहिं पड़ता, कोई दास न पास।
पडे अकेले तड़प रहे हैं, चहरा अधिक उदास ॥३१८॥
क्या है इतनी ताक़त मेरे, करलू उनसे बात।
घबराई मैं पीछी लौटी, शुध बुध सभी नशात ॥३१९॥
सुनते ही घबराई राणी, सुनके पतिका हाल।
पिया चैन में चैन हमारा, मैं बैठी खुशहाल ॥३२०॥

॥ मंदोदरी का पति पे जाना ॥

पति ढिग आई चाल तुरतसे, शून्य चित्त बेभान।
देख कथको कहे विनय से, बैठे क्यों बे शान ॥३२१॥
बात साथ नहिं राज काज नहिं, नहीं पुष्प तंबोल।
भोजन जलसे रुची हटादी, सुनत चहो नहिं बोल ॥३२२॥
भोग योग नहिं रम्मत गम्मत, क्रीड़ा हंसी मजाक़।
नहिं जिंदे नहिं हो मरने में, मन क्यों है ? नापाक ॥३२३॥
पड़ी बिमारी कौन आनके, अकड़ गया सब अंग।
नहीं किसीसे सीधा बोलो, हुआ रग में भंग ॥३२४॥
जो कुछ चित में होसो कहिये, पूछे दासी खास।
कृष्ण पक्षमें शशि घट जाता, मिटता तेज प्रकाश ॥३२५॥

बडे बडे लाखों को जीते, लिया राजमें छीन।
दीन हीन मुजको क्या मारे, जो है पर आधीन ॥३५४॥
दिलसे सिया बिछल नहिं सक्ती, कहदे लाख हजार।
विना सियाके व्यथा न मिटती, औषध नहिं संसार ॥३५५॥

॥ रावणको राणीका मुंहतोड़ जवाब ॥

राणी कहती नाथ ? आपका, पुण्य गया पाताल।
घात पूर्वकी याद करो मत, भूलो उसका ख्याल ॥३५६॥
जीते थे तुमने राजाको, जब थे नीतीवान।
बीत गया अब पुण्य आपका, चित्त हुआ बेमान ॥३५७॥
सीता सत्य कभी ना तजती, पश्चिम ऊगे सूर।
पति हित सारा सुखको तजने, समझ लिया था धूर ॥३५८॥
बढे हुए गौरव पे स्वामिन् ?, वृथा लगाते दाग।
ऐक आप के लिए लकपे, लग जावेगी आग ॥३५९॥
जान बूझ गड्डे मे गिरते, होकर के मतिमान।
विपत समयमें हीन बुद्धि हो, देखा मैंने छान ॥३६०॥
मुखकी लाली काली होती, जबलाए परनार।
जो खुश थे वे आप नाम पर, घृणा करे इसवार ॥३६१॥

॥ राणीसे रावणका कहना ॥

रावण कहता मुखसे ज्यादा, मत कर तू बकवाद।
आई प्रेम दिखाने कारण, किन्तु किया विषवाद ॥३६२॥
मुजपे डाले क्या तूं जादू तू, है भोली नार।
तेरा जादू चले न हम हैं, जग भरके हुशियार ॥३६३॥
मैं याचक भीखा सीताकी, मांगू तेरे धाम।
उससे बस संयोग मिलादे, यह है तेरा काम ॥३६४॥
राणी कहती आप हुक्म से, जाती सीता पास।
चित्त न चाहैं किन्तु मुजे हा ? नीति सिखाती खास ॥३६५॥
ना मालूम क्या होने वाला, कार्य यही बेकार।
जान बूझके विषका प्याला, पीती हूं इसवार ॥३६६॥

॥ सीताको समझाने राणीका जाना ॥

देवरमण उद्यान जहां था, आई राणी चाल।
कैसे सीताको समझाना, दिलमें हुआ खयाल ॥३६७॥
उधर सिया बैठी थी गममें, राम तरफ था ध्यान।
सोच रची थी विपत अचानक, पड़ी सीसपे आन ॥३६८॥
प्रियतम देवर कहां हमारे, भामंडलसे भ्रात।
किसे सुनाऊ कौन सुनेगा, मेरे मन की बात ॥३६९॥
कहां रहा परिवार हमारा, पडी पराये हाथ
सुध नहिं लीनी आकर किनने, छूटा सारा साथ ॥३७०॥
अय ? अशोक तूं शोक छुड़ादे, करले सार्थक नाम।
मुझे पियाका दर्श करादे, यह हैं तेरा काम ॥३७१॥
देखी मंदोदरी सिया को, इकदम अचरज पाय।
चन्द्रानन छवि अनुपम शोभित, शचि सम रही विभाय ॥३७२॥
सोचे ऐसी रूपवती नहिं, देखी जगमें नार।
जैसा रूप सुना था वैसा, प्रकट लखा इसवार ॥३७३॥
इसके जैसी विरत्ते जगमें, होगा कोई नार।
धन्य ईश्वरी सिया विश्वमें, धन्य राम भरतार ॥३७४॥
रूप रत्नके साथ इसीने, धर्म रत्न भी पाय।
शील रत्नके धारक पति भी, जोडी अचल सुहाय ॥३७५॥
जिस कारणसे आई उसका, मुजको है धिक्कार।
किन्तु सिया का दर्शन करके, सफल हुआ अवतार ॥३७६॥
सिया चरणमें सीस झुकादू, खुलजावे तकदीर।
शीलवानको वदन करने, सुर नर इन्द्र सधीर ॥३७७॥
प्रथम रही है घबरावट मन, चिन्ता तन अति क्लेश।
कैसे कहूं मतीको अवतो, जो लाई संदेश ॥३७८॥
मानो या नहि मानो मेरी, कहदू पति आदेश।
तुरत निकट सीता पे आई, मनमें जप परमेश ॥३७९॥
सविनय मधुर वचनसे बोली, हे सुभगे ? मह भाग।
वटी कुशलमें होगी ? तुमने, भोग किया क्यों त्याग ॥३८०॥

बडे बडे लाखों को जीते, लिया राजमें छीन।
दीन हीन मुजको क्या मारे, जो हैं पर आधीन ॥३५४॥
दिलसे सिया निकल नहि सकती, कहदे लाख हजार।
विना सियाके व्यथा न मिटती, औषध नहि संसार ॥३५५॥

॥ रावणको राणीका मुंहतोड़ जवाब ॥

राणी कहती नाथ ? आपका, पुण्य गया पाताल।
बात पूर्वकी याद करो मत भूलो उसका ख्याल ॥३५६॥
जीते थे तुमने राजाको, जब थे नीतीवान।
बीत गया अब पुण्य आपका, चित्त हुआ बेभान ॥३५७॥
सीता सत्य कभी नां तजती, पश्चिम ऊगे सूर।
पति हित सारा सुखको उनने, समझ लिया था धूर ॥३५८॥
बडे हुए गौरव पे स्वामिन् ?, वृथा लगाते दाग।
ऐक आप के लिए लकपे, लग जावेगी आग ॥३५९॥
जान बूझ गड्ढे में गिरते, होकर के मतिमान।
विपत समयमें हीन बुद्धि हो, देखा मैंने छान ॥३६०॥
मुखकी लाली काली होती, जबलाए परनार।
जो खुश थे वे आप नाम पर, घृणा करें इसवार ॥३६१॥

॥ राणीसे रावणका कहना ॥

रावण कहता मुखसे जादा, मत कर तू बकवाद।
आई प्रेम दिखाने कारण, किन्तु किया विषवाद ॥३६२॥
मुजपे डाले क्या तूं जादू तू, है भोली नार।
तेरा जादू चले न हम हैं, जग भरके हुशियार ॥३६३॥
मैं याचक भीख सीताकी, मांगू तेरे धाम।
उससे बस संयोग मिलादे, यह है तेरा काम ॥३६४॥
राणी कहती आप हुक्म से, जाती सीता पास।
चित्त न चाहें किन्तु मुजे हा ? नीति सिखाती खास ॥३६५॥
ना मालूम क्या होने वाला, कार्य यही बेकार।
जान बूझके विषका प्याला, पीती हूं इसवार ॥३६६॥

॥ सीताको समझाने राणीका जाना ॥

देवरमण उद्यान जहां थां, आई राणी चाल।
कैसे सीताको समझाना, दिलमें हुआ खयाल ॥३६७॥
उधर सिया बैठी थी गममें, राम तरफ था ध्यान।
सोच रची थी विपत अचानक, पडी शीसपे आन ॥३६८॥
प्रियतम देवर कहां हमारे, भामंडलसे भ्रात।
किसे सुनाऊं कौन सुनेगा, मेरे मन की बात ॥३६९॥
कहां रहा परिवार हमारा, पडी पराये हाथ
सुध नहि लीनी आकर किनने, छूटा सारा साथ ॥३७०॥
अय ? अशोक तू शोक छुडादे, करले सार्थक नाम।
मुझे पियाका दर्श करादे, यह है तेरा काम ॥३७१॥
देखी मंदोदरी सिया को, इकदम अचरज पाय।
चन्द्रानन छवि अनुपम शोभित, शशि सम रही विभाय ॥३७२॥
सोचे ऐसी रूपवती नहि, देखी जगमें नार।
जैसा रूप सुना था वैसा, प्रकट लखा इसवार ॥३७३॥
इसके जैसी विरली जगमें, होगा कोई नार।
धन्य ईश्वरी सिरजन-विधमें, धन्य राम भरतार ॥३७४॥
रूप रत्नके साथ इसीने, धर्म रत्न भी पाय।
शील रत्नके धारक पति भी, जोडी अचल सुहाय ॥३७५॥
जिस कारणसे आई उसका, मुजको है धिक्कार।
किन्तु सिया का दर्शन करके, सफल हुआ अवतार ॥३७६॥
सिया चरणमें सीस झुकादूं, खुलजावे तकदीर।
शीलवानको वंदन करने, सुर नर इन्द्र रुधीर ॥३७७॥
प्रथम रही है घबरावट मन, चिन्ता तन अति क्लेश।
कैसे कहूं सतीको अबतो, जो लाई संदेश ॥३७८॥
मानो या नहि मानो मेरी, कहदूं पति आदेश।
तुरत निकट सीता पे आई, मनमें जप परमेश ॥३७९॥
सविनय मधुर वचनसे बोली, हे सुभगे ? महभाग।
बडी कुशलमें होगी ? तुमने, भोग किया क्यों त्याग ॥३८०॥

रावण की सुन वात सिया का, उछला तनका खून।
यह शठ मेरे लगा साथमें, जैसे लकडी घूण ॥४०८॥
वर्णती अति ज़ोर शोरसे, वचन रूप दृढ तीर।
पूठ दिखाके सती वैठती, नीचे दृग धर धीर ॥४०९॥
तु अरु तुज नारी व्यभिचारी, रात दिवस यह काम।
शूर्पनखा भी है व्यभिचारण चाही पति श्रीराम ॥४१०॥
यही रीत है तेरे कुलमें, धिक् धिक् है यह वश।
धिक् धिक् है तुज आशा ऊपर, किया धर्मको ध्वश ॥४११॥
ताडन करने पर कुत्ता ज्यों, आता वारम्वार।
ऐसे मेरे ताडन पर भी, आता तू हरवार ॥४१२।
सिंहनी गीदड़ से नहिं डरती, जुगनूसे नहिं भान।
नाहक धमकी वता वता के, पाता क्यों अपमान ॥४१३॥
तीन खंडपति वना है किन्तु, हो तेरा शत खंड।
राम लखन का चक्र चलेगा, जिनका तेज प्रचड ॥४१४॥
घूम रहा सिर काल निरंतर, मत रह तू वेभान।
दशों दिशामें दश सिर होंगे, भूल जाय तोफान ॥४१५॥

॥ सीताको तलवारसे डराना ॥

सीता कथनी यों सुन रावण, क्रोध हुआ भरपूर।
खड्ग निकाली तुरत म्यानसे, ज्यों जमराज करूर ॥४१६॥

जिसके तन सुशील सनाही, क्या ? कर सकते क्रूर।
इन्द्रादिक भी चरणे पड़ते, दुर्जन के मुख धूर ॥४१७॥
कहन लगा भयको दिखलाके, देख यही तलवार।
इससे दो टुकडे कर डालू, पहुँचा दू यमद्वार ॥४१८॥
वोल रही अपशब्द कभी की, निर्लज सी वटकार।
नहिं तमीज किसको क्या ? कहना, जिसका नहीं विचार ॥४१९॥
करें नम्रता हम तेरे से, इतनी तू इतराय।
हम तो तेरा हित सोचे हैं, उलटी अहित जताय ॥४२०॥
नहिं जा सकती मुज फंदे से, करले क्रोड उपाय।
जो है आशा तेरे दिलमें, मिट्टी में मिल जाय ॥४२१॥
तेरी मैंने वहुत सुनी है, अव वस चुप होजाय।
वचन न माना तेने उसका, देऊं दंड सवाय ॥४२२॥
पहुँचाऊं यमद्वार खड्गसे, सिर धड़ जूदा होय।
यों कहके तलवार उठाई, अपना आपा खोय ॥४२३॥
लख यों मदोदरी तुरतसे, लपक लई तलवार।
अय स्वामिन् ? तुम निर्दोषी पे, करते वृथा प्रहार ॥४२४॥
क्या कर देते स्वामी तुमतो, अजव गजव की वात।
उत्तम क्षत्री अवलाओं की, करे न कवही घात ॥४२५॥
प्रवल प्रतापी तीन खडपति, करते ऐसा क्रोध।
अन्तर क्या छूटे मोटे में, धन्य आपका वोध ॥४२६॥

पति विरहणी यह वाला है, इसका पति पे ध्यान।
पतिव्रता को सता कभी नहिं, पाओगे कल्यान ॥४२७॥
उधर सिया तलवार देखके, घवराई नहिं लेश।
मानूंगा उपकार सीख धड, जूदा कर लकेश ॥४२८।
छुट जाऊंगा तेरे दुखसे, धर्म लिये यह प्राण।
अमर नाम होवेगा जगमें, परभवमें कल्याण ॥४२९॥
खून पिलादे मेरा असिको, तुज पीयेगा वाद।
तुजे नरक में जाना होगा, मुजे स्वर्ग आवाद ॥४३०॥
राज पाट को मैं ठुकराती, नहीं किसी की चाह।
पतिव्रता निज पति को चाहे, छोड़ सभी परवाह ॥४३१॥
सिया शब्द सुन रावण सोचे, खड़ा खड़ा उसवार।
यह तो मरने से नहिं डरती, हे मरने को त्यार ॥४३२॥
अधिक कहैं से सिया आप ही, खो देवेगा प्राण।
अत. मधुर वचनों के द्वारा, समझाना हित जाण ॥४३३॥
वोला अय प्यारी ? क्यों होती, गुस्से में अंगार।
मेरे द्वारा दु ख हुआ तो, क्षमा चहूं इसवार ॥४३४॥
मिष्ट कटुक वचनों के द्वारा, समझाता हरवार।
इसका कारण क्या है उसका, सुन लो सारासार ॥४३५॥
मैंने नियम लिया मुनिवर से, परनारी का त्याग।
जो नारी मुज को चाहेगा, वाद धरू अनुराग ॥४३६॥

मुज को समझो अपना भाई, नहिं लज्जा की बात।
दूंगा कुछ भी साध्य शक्ति युत, धर्म वहिन साक्षात ॥४६५॥
तभी सिया मृदु मधुर शब्द सुन, पर उपकारी जान।
सज्जन कोई है हितकारी, क्रिया काण्ड विद्वान ॥४६६॥
नत मस्तक कर लज्जा धरके, बोले बोल रसाल।
वेदर कहती सुन अय भाई ?, मेरा सारा हाल ॥४६७॥
समय एकसा रहे न किसका, सभी कर्म आधीन।
पड़ी पराये हाथ यहांपे, हो करके अति दीन ॥४६८॥
जनक पिता भामण्डल भाई, सीता मेरा नाम।
पति मेरे श्री रामचन्द्रजी, नीतिवान अभिराम ॥४६९॥
लषमणजी देवर है मेरे, शरणागत प्रतिपाल।
पिता हुक्मसे बनमें जाते, राम लखन तत्काल ॥४७०॥
मैं भी उनके चली साथ थी, सेवामें दिन रात।
दण्डक बनमें फिरते आए, बना वहाँ उत्पात ॥४७१॥
भ्रमण करे लषमणजी बनमें, आते वंशा जाल।
चन्द्रहास तलवार लटकती, देख सुमित्रा लाल ॥४७२॥
तुरत मोद युत हाथ बढ़ाया, लेते वह तलवार।
करन परिक्षा वंश जालपे, फेर दई उसवार ॥४७३।
वंश जालमें शूर्पनखा का, शंबुक नाम कुवार।
विद्या साध रहा उस वटप, नीचा मस्तक धार ॥४७४॥

कटा सीस शंबुक का तबही, पड़ा जमीं पे आय।
लखन देख चिंता अति कीनो, गए हृदय घबराय ॥४७५॥
राजकवर ये मेरे द्वारा, मरा अदोषित बाल।
राम पास जा जिकर सुनाया, राम हुए मुख लाल ॥४७६॥
करुणा निधि लषमणसे बोले, कटुक वचन अति तान।
विद्या साधक बाल अदोषित, मारा क्यों ? बेभान ॥४७७॥
बिना विचारे काम करे सो, पद पद आपति पाय।
क्या होगा इसके बदले में, दु:ख नहीं समझाय ॥४७८॥
शूर्पनखा इतने में आई, देख पांव अनुसार।
किस्सा भूल गई वह पिछला, जब ही राम निहार ॥४७९॥
रूप देख वह काम विवश हो, आई राघव पास।
मुझे बनालो चरण सेविका, बहुत करी अरदास ॥४८०॥
नहीं स्विकारी राम लखनने, उस नारी की बात।
अपमानित हो चली वहां से, हृदय हुआ आघात ॥४८१॥
खरदूषण के पास गई वह, हो गुस्से में पूर।
अपना किस्सा कहा कंथको, होता क्रोध करूर ॥४८२॥
दल बादल ले आए लड़ने, लषमण भी रण खेत।
चले तभी यों कहा रामने कष्ट पडे संकेत ॥४८३॥
सिंहनाद को तुम तब करना, आऊंगा तुम पास।
शूर्पनखा जाती रावणपे, लंक करण को नाश ॥४८४॥

सिंहनाद रावण ने छलसे, किया सुना तब राम।
उसी समयमें गए लखन तट, लिया न कुछ विश्राम ॥४८५॥
देख अकेली तब रावणने, किया मेरा अपहार।
मुजको पक्षी समझ उसीने, करता बधिक सिकार ॥४८६॥
रावण व्यभिचारीने मुजको, यहां बिठाई लाय।
लंकाके व्यभिचारी सारे, मुज तट आए धाय ॥४८७॥
नहीं किसीने सतोशमृत, पाया मुझको आय।
जो आते सो मुजे सताते, धर्म बात बिसराय ॥४८८॥
दश मस्तक को काटन कारण, करवत सम असिधार।
लंक जलाने मे बल वल ती, खैर झाल अगार ॥४८९॥
तेज उसीका पीलण के हित, घाणी सम मुज लाय।
पैर पनोती लगी उसीके, दु:ख अचिंता आय ॥४९०॥
राजा हो अन्याई होता, रहता कैसे राज।
वाड़ ऊठ खावे खेती को, कैसे सुधरे काज ॥४९१॥
नारी नहिं में नागन काली, रावण के हित मौत।
धर्म शर्म को छोड लगाया, निर्मल कुलमें छोत ।॥४९२॥
मेरा धर्म कभी नां छोडू, करदूं तन पे वार।
रहा सहायक मेरे निश्चय, धर्म सदा सुखकार ॥४९३॥
सुख दुख बातें पूछी मुजसे, सुनी आपने आज।
आदि अन्त में कही समझके, आप श्रेष्ट गुण राज ॥४९४॥

बडे २ का मान हराया, क्या ताक़त सुग्रीव।
मेरी फीकर करो मत कुछभी, मेरी शक्ति अजीव ॥२२३।
यदि जानकी जान साथ है, नहीं जानकी जाय।
कभी जानकी जाय तभी मुज, साथ जान चल जाय ॥२२४॥
रावणकी सुन वात विभिषण, अधिक हुए हैरान।
कहन लगे अय ? भ्राता सोचो, क्यों होते बेभान ।२२५॥
सती सताके पछताओगे, पाओगे दुख घोर।
वृद्ध पनेमें अपयश लेते, करके काम कठ र ॥२२६॥
मत धोलेमें धूल डलाओ, निर्फल खो नररत्न।
कीर्ति कमाई सभी जिंदगी, आखिर कीजे यत्न ॥२२७॥
करनी जैसी पार उतरनी, बोया जैसा पाय।
इस करणीसे नींव आपकी, पड़ी नरकके माय ॥२२८॥
रावण कहता वक २ करते, धकती नहीं जवान।
क्या तू शीक्षा देगा मुजको, मैं क्या कम विद्वान ॥२२९॥
कहै विभिषण जैसी इच्छा, वैसा करिये आप।
रहे तो सच्ची कहने वाला, क्या बेटा क्या बाप ॥२३०॥

॥ पुनः सीताके पास रावणका जाना ॥

चला विभीषण स्थान आपके, उधर दशानन राय।
आया सीधा सिया पासमें, काम सर्प डस जाय ॥२३१॥
सीता ध्याती पच प्रमेष्टी, राम चरण उर धार।
रावण बोला जनक सुता त, दीजे भर्म विहार ॥२३२॥
कृष क्यों कीनी कोमल काया, दुख क्या कहो सुनाय।
देख दुखी तुमको मन मेरा, दुखी अधिक हो जाय ॥२३३॥
शुद्ध हवामें ले जाता हूं, बैठो आप विमान।
शान्ति होयगी जरा चितमें, लखके विध २ स्थान ॥२३४॥
पुष्पक नाम विमान उसीमें, कीड़ा करने काज।
बिठलाके ले चला सियाको, कहता मधुर अवाज ॥२३५॥
बतलावे यह देख सु सुन्दर, रत्नोंकी वर खान।
नदन वनकी परम औपमा, नाना तरु उद्यान ॥२३६॥
निधि में लहरें उठती कैसी, कीड़ा करते हँस।
मयूर कोकिल मैना आदिक, विद्याधर अवतंस ॥२३७॥
फल फूलों से लदे हुए हैं, बेल लता सुख कद।
कहिं पे झरना मीष्ट नीर का, कोकिल स्वर आनद ॥२३८॥
षट्ऋतु का सुख सब इस वनमें, खेले बालक खेल।
विद्याध्ययन कराते पण्डित, करते सब जन केल ॥२३९॥
लकागढ़ की बाहर देखलो, उन्नत अति आवास।
सभी स्वर्ण के बने हुए हैं, चमके ज्यों रवि भास ॥२४०॥
किन्तु सिया को बिना राम के, लगते ज़हर समान।
बाग आग सा, भोग रोग सा, महिल लगा समसान ॥२४१॥
हसा सरवर मणि को अहिवर, सत्यवती निज शील।
कभी न छोडे प्राण जाय तो, समझें शील सुलील ॥२४२॥
किसी बात का एक न उत्तर, दिया सिया उसवार।
पुन लोट उद्यान सिधाया, हृदय निराशा धार ॥२४३॥
हस छोड़ के कभी हसणी, नहिं चाहेगा काग।
ऐसे सीता राम छोड़ के, परपे धरे न राग ।२४४॥
दासी थी त्रिजटा पास में, आए रावण राय।
समझा दी क्या सीता तेने, शुभ दे हाल सुनाय ॥२४५॥
कहन लगी दासी कर जोड़ी, चतुराई से बात।
आज्ञा धर के सिर पे हमने, कहा उसे अवदात ॥२४६॥
क्या कहूं हालत मैं उसकी, छोड़ा खान रु पान।
राम सिवा किस को नहि चाहै, ऐक उसीका ध्यान ॥२४७॥
मार नहीं उसको समझाते, होती मैं हैरान।
किन्तु टससे मस नहिं होती, निकली वज्र समान ॥२४८॥
मेरी येही अर्ज आप से, कहो न कुछ भी बात।
किंचित् दिन में खुदी समझ के, आजावेगी हाथ ॥२४९॥
निज महलों में जाता रावण, आशा होय निराश।
उधर विभीषण सोचे दिल में, भाई पाते त्राश ॥२५०॥

॥ विभीषण द्वारा सभा का होना ॥

घडे २ का मान हराया, क्या ताक़त सुग्रीव।
मेरी फीकर करो मत कुलभी, मेरी शक्ति अजीव ॥५२३।
यदि जानकी जान साथ है, नहीं जानकी जाय।
कभी जानकी जाय तभी मुज, साथ जान चल जाय ॥५२४॥
रावणकी सुन वात विभिषण, अधिक हुए हैरान।
कहन लगे अय ? भ्राता सोचो, क्यों होते बेभान ।५२५॥
सती सताके पछताओगे, पाओगे दुख घोर।
वृद्ध पनेमें अपयश लेते, करके काम कठ र ॥५२६॥
मत धोलेमें धूल डलाओ, निर्फल खो नररत्न।
कीर्ति कमाई सभी जिंदगी, आखिर कीजे यत्न ॥५२७॥
करनी जैसी पार उतरनी, बोया जैसा पाय।
इस करणीसे नींव आपकी, पड़ी नरकके माय ॥५२८॥
रावण कहता वक २ करते, थकती नहीं जवान।
क्या तू शीक्षा देगा मुजको, मैं क्या कम विद्वान ॥५२९॥
कहे विभिषण जैसी इच्छा, वैसा करिये आप।
रहे तो सच्ची कहने वाला, क्या बेटा क्या बाप ॥५३०॥

॥ पुनः सीताके पास रावणका जाना ॥

चला विभीषण स्थान आपके, उधर दशानन राय।
आया सीधा सिया पासमें, काम सर्प डस जाय ॥५३१॥
सीता ध्याती पंच प्रमेष्टी, राम चरण उर धार।
रावण बोला जनक सुता त, दीजे भर्म विहार ॥५३२॥
कृष क्यों कीनी कोमल काया, दुख क्या कहो सुनाय।
देख दुखी तुमको मन मेरा, दुखी अधिक हो जाय ॥५३३॥
शुद्ध हवामें ले जाता हूं, बैठो आप विमान।
शान्ति होयगी जरा चितमें, लखके विध २ स्थान ॥५३४॥
पुष्पक नाम विमान उसीमें, कीड़ा करने काज।
बिठलाके ले चला सियाको, कहता मधुर अवाज ॥५३५॥
बतलावे यह देख सु सुन्दर, रत्नोंकी वर खान।
नदन वनकी परम ओपमा, नाना तरु उद्यान ॥५३६॥
निधि में लहरें उठती कैसी, कीड़ा करते हँस।
मयूर कोकिल मैना आदिक, विद्याधर अवतंस ॥५३७॥
फल फूलों से लदे हुए हैं, वेल लता सुख कंद।
कहिं पे झरना मीष्ट नीर का, कोकिल स्वर आनंद ॥५३८॥
षट्ऋतु का सुख सब इस वनमें, खेले बालक खेल।
विद्याध्ययन कराते पण्डित, करते सब जन केल ॥५३९॥
लकागढ़ की बाहर देखलो, उन्नत अति आवास।
सभी स्वर्ण के बने हुए हैं, चमके ज्यों रवि भास ॥५४०॥
किन्तु सिया को बिना राम के, लगते जहर समान,
बाग आग सा, भोग रोग सा, महिल लगा समसान ॥५४१॥
हंसा सरवर मणि को अहिवर, सत्यवती निज शील।
कभी न छोडे प्राण जाय तो, समझें शील सुलील ॥५४२॥
किसी बात का एक न उत्तर, दिया सिया उसवार।
पुन लोट उद्यान सिधाया, हृदय निराशा धार ॥५४३॥
हंस छोड़ के कभी हंसणी, नहिं चाहेगा काग।
ऐसे सीता राम छोड़ के, पर पे धरे न राग ।५४४॥
दासी थी त्रिजटा पास में, आए रावण राय।
समझा दी क्या सीता तेने, शुभ दे हाल सुनाय ॥५४५॥
कहन लगी दासी कर जोड़ी, चतुराई से बात।
आज्ञा धर के सिर पे हमने, कहा उसे अवदात ॥५४६॥
क्या कहूं हालत मैं उसकी, छोड़ा खान रु पान।
राम सिवा किस को नहि चाहें, ऐक उसीका ध्यान ॥५४७॥
मार नही उसको समझाते, होती मैं हैरान।
किन्तु टससे मस नहिं होती, निकली वज्र समान ॥५४८॥
मेरी येही अर्ज आप से, कहो न कुछ भी बात।
किंचित् दिन में खुदी समझ के, आजावेगी हाथ ॥५४९॥
निज महलों में जाता रावण, आशा होय निराश।
उधर विभीषण सोचे दिल में, भाई पाते त्राश ॥५५०॥

॥ विभीषण द्वारा सभा का होना ॥

सीताकी सुध लेना अवतो, धरता नहिं मन धीर।
ऐसा न होकि विना खबरसे, सीता तजे शरीर ॥५८०॥
प्राण तजे यदि सिया तो अपनी, निष्फल हो तदवीर।
क्या करना यह समय विकट है, सुनिये लक्ष्मण वीर? ॥५८१॥
नीर न जाता कभी तृषितपे, प्यासा जल तट जाय।
अत शीघ्र सुग्रीव पास जा, कहो हाल समझाय ॥५८२॥
वन्धु वचन सुन धनुष हाथले, नमन करे श्रीराम।
मैं जाता अब जल्दी स्वामी, सिद्ध करूं सब काम। ५८३॥
आश पराई करें तभी तो, सीता कभी न पाय।
ठढाई से काम न चलता जहां शीत अधिकाय ॥५८४।
सूर्यहास तलवार हाथ ले, चले वीर उस वार।
मुखपे लाली दृगमें लाली, लाल लाल तन धार ॥५८५॥
वल ललाटपे दन्त पीसते, भूप कर फटकार।
जमीं धुजाते वृक्ष हिलाते, कंपित हो नग्नार ॥५८६॥
काल रूप आ खड़े सभामें, देख सभी घवराय।
खड़ा हुआ सुग्रीव जोड़कर, थर हर कपे काय ॥५८७।
खडे चित्रवत् होंस भूलके, निकले नहिं आवाज।
समय देख हिम्मत मन धरके, बोला तव कपिराज ॥५८८
गिरा चरण मे विनय भावसे, क्षमा करो अब नाथ।
हुआ कौन अपराध हमारा, दास सदा है साथ। ५८९॥

सिंहासनपे बैठो भगवन्! आए हो किस काम।
दोनों पगका पकड़ कहैं तुम, क्षमा निधी गुणधाम ॥५९०॥
धन्य आपको किए कृतारथ, दरशन दीने आय।
किया आप उपकार उसीका, मुज से कहा न जाय ॥५९१॥
सेवक जैसा काम होय सो, फरमाओ हुमवार।
कौन अचानक काम बना सो, आए चल दरबार ॥५९२॥
कहने करने में हैं अंतर, मनमें अन्य विचार।
यही धूर्तके लक्षण समझो, मैं हूं तावेदार ॥५९३॥
धन्य आपकी है कुल जाती, धन्य सु दशरथ नन्द।
भगवन्? जो उद्गार हृदयका, प्रकट करो सानंद ॥५९४॥
वोल उठे झुंझलाके लक्ष्मण, वड़ी अनोखी चाल।
डालदिया धोखेमें हमको, खूब विछाई जाल ॥५९५॥
वृथा नैनसे नीर गिराता, रहा ढोंग दिखलाय।
समय हमारा व्यर्थ गमाया, रहा सुखों के माय ॥५९६॥
कटक जैसा लगे खटकने, निकल गया जब काम।
तू सोचे अकुलाके आखिर, चले जायगें राम। ५९७।
बगुला जैसी भक्ति बताता बाहर भीतर ओर।
झूठा दे विश्वाश हमीको, भरमाया वदखोर ॥५९८॥
मुज विन सीता पता न पाता, तेरे दिल यह ख्याल।
हम करके विश्वाश वचन पे, बैठे इतने काल ॥५९९॥

बड़ा कृतघ्नी समझा अवतो, निकला तूं बदकार।
अवतो सच्चा सच्चा कहदे, तजके हृदय विकार ।६००॥
इसमें अपना भला समझले, चल रघुवर के तीर।
दोनों चल आए रघुवर पे, कंपा सकल शरीर ॥६०१॥
नमन करें सुग्रीव रामको, कहन लगे तव राम।
क्यों रे? मुजसे चित्त चुराया, बैठ गया निज धाम ॥६०२॥
स्वामी सेवामें हाजीर हूं, भूला नहिं मैं बात।
किन्तु आ नहिं सका पासमें, यही गुन्हा जगतात? । ६०३॥
अधिक आपसे ख्याल मुजे हैं भूला खान रु पान।
नीच नहीं मैं भूलूं भगवन्! जो मुजपे अहसान ॥६०४॥
लिया पता यदि नहीं लगे तो, माता दूध हराम।
जबका चाकर बना चरनका, हृदय आपका नाम ॥६०५॥
राज पाट धन धाम आपका, ऋणी आयु पर्यंत।
जवतक सुध सीताकी नहिं तो, तबतक सुखका अंत ॥६०६॥
सुन करके सुग्रीव वचन यों, खुश होते तब राम।
मिष्ट वचन बोले रघुनंदण, पाते मन आराम ॥६०७॥
दक्षिण भुज सुग्रीव हमारी, वामी लक्ष्मण जान।
तुम्हीं मित्र हो सच्चा मेरा, जीवन प्राण समान ॥६०८॥
सिद्ध करोगे काम सभी तुम, वीर तुम्हारा साज।
सभी विजय की तुम पहनोगे, यशका सिरपे ताज। ६०९॥

सीताकी सुध लेना अवतो, धरता नहिं मन धीर।
ऐसा न होकि बिना खबरसे, सीता तजे शरीर ॥५८०॥
प्राण तजे यदि सिया तो अपनी, निष्फल हो तदवीर।
क्या करना यह समय विकट है,सुनिये लक्ष्मण वीर? ॥५८१॥
नीर न जाता कभी तृषितपे, प्यासा जल तट जाय।
अत शीघ्र सुग्रीव पास जा, कहो हाल समझाय ॥५८२॥
बन्धु वचन सुन धनुर हाथले, नमन करे श्रीराम।
मैं जाता अब जल्दी स्वामी, सिद्ध करूं सब काम। ५८३॥
आश पराई करें तभी तो, सीता कभी न पाय।
ठढाई से काम न चलता जहां शीत अधिकाय ॥५८४॥
सूर्यहास तलवार हाथ ले, चले वीर उस वार।
मुखपे लाली दगमें लाली, लाल लाल तन धार ॥५८५॥
बल ललाटपे दन्त पीसते, भूप कर फटकार।
जमीं धुजाते वृक्ष हिलाते, कपित हो नग्नार ॥५८६॥
काल रूप था खडे सभामें, देख सभी घबराय।
खड़ा हुआ सुग्रीव जोड़कर, थर हर कपे काय ॥५८७॥
बड़े चिन्नयत् होंस भूलके, निकले नहिं आवाज।
समय देख हिम्मत मन धरके, बोला तब कपिराज ॥५८८
[illegible]रा चरण मे विनय भावसे, क्षमा करो अब नाथ।
[illegible]आ कौन अपराध हमारा, दास सदा है साथ। ५८९॥

सिंहासनपे बैठो भगवन्! आए हो किस काम।
दोनों पगका पकड़ कहैं तुम, क्षमा निधो गुणधाम ॥५९०॥
धन्य आपको किए कृतारथ, दरशन दीने आय।
किया आप उपकार उसीका, मुज से कहा न जाय ॥५९१॥
सेवक जैसा काम होय सो, फरमाओ इसवार।
कौन अचानक काम बना सो, आए चल दरबार ॥५९२॥
कहने करने में है अंतर, मनमें अन्य विचार।
यही धूर्तके लक्षण समझो, मैं हूं तावेदार ॥५९३॥
धन्य आपकी है कुल जाती, धन्य सु दशरथ नन्द।
भगवन्? जो उद्‌गार हृदयका, प्रकट करो सानंद ॥५९४॥
बोल उठे झुंझलाके लक्ष्मण, बड़ी अनोखी चाल।
डालदिया धोखेमें हमको, खूब बिछाई जाल ॥५९५॥
वृथा नैनसे नीर गिराता, रहा ढोंग दिखलाय।
समय हमारा व्यर्थ गमाया, रहा सुखों के माय ॥५९६॥
कटक जैसा लगे खटकने, निकल गया जब काम।
तूं सोचे अकुलाके आखिर, चले जायगें राम ॥५९७।
बगुला जैसी भक्ति बताता बाहर भीतर ओर।
झूठा दे विश्वाश हमीको, भरमाया बदखोर ॥५९८॥
मुज बिन सीता पता न पाता, तेरे दिल यह ख्याल।
हम करके विश्वाश वचन पे, बैठे इतने काल ॥५९९॥

बड़ा कृतघ्नी समझा अबतो, निकला तू बदकार।
अबतो सच्चा सच्चा कहदे, तजके हृदय विकार ।६००॥
इसमें अपना भला समझले, चल रघुवर के तीर।
दोनों चल आए रघुवर पे, कम्पा सकल शरीर ॥६०१॥
नमन करें सुग्रीव रामको, कहन लगे तब राम।
क्यों रे? मुजसे चित्त चुराया, बैठ गया निज धाम ॥६०२॥
स्वामी सेवामें हाजीर हूं, भूला नहिं मैं बात।
किन्तु आ नहिं सका पासमें, यही गुन्हा जगतात? ।६०३॥
अधिक आपसे ख्याल मुजे हैं भूला खान रु पान।
नीच नहीं में भूलू भगवन्! जो मुजपे अहसान ॥६०४॥
सिया पता यदि नहीं लगे तो, माता दूध हराम।
जबका चाकर बना चरनका, हृदय आपका नाम ॥६०५॥
राज पाट धन धाम आपका, ऋणी आयु पर्यंत।
जबतक सुध सीता की नहिं तो, तबतक सुखका अंत ॥६०६॥
सुन करके सुग्रीव वचन यों, खुश होते तब राम।
मिष्ट वचन बोले रघुनंदण, पाते मन आराम ॥६०७॥
दक्षिण भुज सुग्रीव हमारी, वामी लक्ष्मण जान।
तुम्हीं मित्र हो सच्चा मेरा, जीवन प्राण समान ॥६०८॥
सिद्ध करोगे काम सभी तुम, वीर तुम्हारा साज।
सभी विजय की तुम पहनोगे, यशका सिरपे ताज। ६०९॥

भटक रहे थे सीता सुध हित, सफल किया सब काम।
पूर्ण महा उपकारी तुम हो, चलो राम के धाम ॥६३९॥
खुशी होंयगे राम तुम्हीं पे, सुन सीता का हाल।
झटसे तभी विमान चलाया, मानो मिला रसाल ॥६४०॥
रत्नजटी सुग्रीव, रामको, नमन किया करजोड़।
काम सिद्ध हम करके, जल्दी, आए तुमपे दोड़ ॥६४१॥
हाल सियाका रत्नजटी यह, देगा सभी सुनाय।
सिया सिंहकी दाढ़ बीच में, फंसी विकट से आय ॥६४२॥

॥ राम के पास हनुमान का आना ॥

इतने में हनुमान पधारे, ले सेना सब साथ।
स्वागत हित सुग्रीव सिधारे, मिले प्रेम भर बाथ ॥६४३॥
किए राम के दर्शन कपिपति, सफल गिना अवतार।
सिर पे हाथ धरा रघुवर ने, अपना भक्त विचार ॥६४४॥

॥ रत्नजटी से सीता का हाल पूछना ॥

हृदय लगाया रत्नजटी को, पूछे हालत राम।
हे प्यारे ! विरतत सुनाओ, सीता हाल तमाम ॥६४५॥
कहता रत्नजटी हे स्वामिन् ?, जो लंका भूपाल।
अन्यायी व्यभिचारी दुष्टी, बड़ी बिछाई जाल ॥६४६॥
रावण हर सीता जाता था, आता कम्बूद्वीप।
उसी समय में मैं निकला था, आया उसी समीप ॥६४७॥
उड़ता जाता था तेजी से, बाला रूदन अपार।
राम लखन अरु भामंडल का, करती नाम उचार ॥६४८॥
मुझे छुटादो इस पापी से, कोई वीर दयाल।
उछल उछल कर नीचे गिरती रावण रहा सभाल ॥६४९॥
मैंने रुदन सुना कानों से, हृदय गया घबराय।
सन्मुख जाके लड़ा उसीसे, दोनों हाथ दिखाय ॥६५०॥
आखिर मेरी विद्या छीनी, दीना तोड़ विमान।
गिरि कन्दर में पड़ा आनके, भूल गया सब भान ॥६५१॥
कर सकता क्या जोर न चलता, देता उसको मार।
क्षत्राणी का दूध लजाया, मरना खाय कटार ॥६५२॥
सुनके यह वृतान्त रामजी, पाए परम प्रमोद।
रत्नजटी को कंठ लगाया, बिठा लिया निज गोद ॥६५३॥
गूंज उठा चहुँ ओर सभा में, धन्यवाद का शोर।
पूर्ण हुआ सतोष लखन मन, जैसे चंद चकोर ॥६५४॥
खबर सिया की तब रघुवर जी, पूछे बारम्बार।
भक्ती वश हो रत्नजटी भी, कहता कर विस्तार ॥६५५॥
भामण्डल सुन सिया व्यथा को, पाए दुःख अपार।
अपना प्यारा रत्नजटी से, मिलते बाँह पसार ॥६५६॥

॥ सीता को लाने के लिए सलाह ॥

सभा एकत्रित करी रामने, आए सब मिल वीर।
सीता लाना उसकी अबतो, क्या करना तदबीर ॥६५७॥
कहे राम– सुग्रीव अरे ! क्या, लंका कितनी दूर।
आलसियों को दूर अधिक हैं, हिम्मतवान हजूर ॥६५८॥
दूर निकट का प्रश्न नहीं है, विकट समस्या एक।
रावण अतुल बली है उससे, हारे वीर अनेक ॥६५९॥
एक हजार विद्या का स्वामी, तीन खण्ड का नाथ।
तेज प्रतापी ईश पुरन्दर, सब राजों पे हाथ ॥६६०॥
रावण सा बलवान भूमि पे, नहीं किसीका राज।
कपटी धूर्त बड़ा व्यभिचारी, रहा सिंह ज्यों गाज ॥६६१॥
कुम्भकरण अरु वीर विभीषण, दोय भुजा ये खास।
इन्द्रजीत सुत मेघसुवाहन, किया जगत को दास ॥६६२॥
राम कहे मैं जान लिया है, उसका तेज प्रताप।
कायर कपटी निर्लज ढोंगी, मन परदारा पाप ॥६६३॥
खास वही भुज चोर कहाया, छाने हर परनार।
लक्ष्मण की तलवार देखके, हो रावण की हार ॥६६४॥
लक्ष्मण कहते रावण खेचर, समझो श्वान समान।
चोरी करता शून्य द्वारपे, धिक् उसका अभिमान ॥६६५॥

उसी समय सुग्रीव भूपने, कीनी सभा विशाल।
सबकी लेते राह प्रेमसे, कहते निज निज हाल ॥६६४॥
जिसको जैसा योग्य समझके, पदवी करे प्रदान।
भरती करते मनुज शैन्यमें बडे बडे बलवान ॥६६५॥
दारू गोला अस्त्र शस्त्र को, करते नये तयार।
बडे दडे सुविमान बनाये, तोप तीर तलवार ॥६६६॥
वृद्ध ऐक मन्त्री तब बोला, बात एक सुन स्वाम।
सीता लेना इससे सरल नहीं, कर रावणका नाश ॥६६७॥
किन्तु प्रथम भेजो रावण पे, दूत एक सदेश।
सीता वापिस देना चाहैं, तो मिट जावे क्लेश ॥६६८॥
चतुर एक विद्वान दूतको, भेजें रावण पास।
सभी बातका निर्णय करले, सोच समझके खास ॥६६९॥
प्रथम सुनादे जनक सुताको, जो रघुवर सदेश।
बाद दशानन पास जायके, सच्चा दे उपदेश।७००॥
ज्यों त्यों कर रावण समझावे, यदि माने नहिं बात।
बाद उसीको युद्ध सूचना, निर्भय दे साक्षात ॥७०१॥
राक्षस कुल सागरमें पैदा, हो अमृत सम वीर।
नाम विभीषण सब गुण लायक, बुद्धिवत मतिधीर।७०२॥
पास उसीके जाय सुनावें, रावण का सब हाल।
तो वह रावण को समझावे, मेटे सब जंजाल ॥७०३॥

न्याय मार्गपे ला देवेगा समझेगा लकेश।
कौन भेजना लका अदर, जाकर दे सदेश ॥७०४॥
रावण से हो परिचय जिनका, गुप्त भेदका जान।
अनुभव होवे सभी स्थानका, सभी बातकी छान ॥७०५॥
वृद्ध सचिवकी बात सभीके, मनमें गई समाय।
बोला तब सुग्रीव खड़ा हो, श्रेष्ट बात बतलाय ॥७०६॥
जा सकते लका में सब पर, जावें कोई वीर।
वीर एक हनुमान दिखाता, करता कार्य सधीर ॥७०७॥
ये जामातृ है रावण के, गुप्त भेदके जान।
रावणको सब विधि समझावे, कटु मृदु कही जबान ॥७०८॥
प्रेम विभीषणसे है पूरा, एक जीव दो काय।
बिन हनुमत के कार्य सिद्ध यह, होना कठिन दिखाय ॥७०९॥
यही भार है तुमके ऊपर, विजय तुम्हारी होय।
साहस धारी धीर वीर तुम, कलिमल ढोगे धोय ॥७१०॥
सभी सभा के हृदय समाई, हनुमन है बलवान।
कहन लगे रघुवर तब हनु से, काम करो आसान ॥७११॥
सब की दृष्टी पड़ी तुम्हीं पे, करते योद्धा काम।
कायर प्राणी क्या कर सकता डरता लख सग्राम ॥७१२॥
पर दुख काटन सज्जन लेते दुनियां में अवतार।
सार्थक है वज्रांग नाम तुम, सब विधि गुण आगार ॥७१३॥

राम वचन सुन हनुमत बोले, विनय युक्त करजोड़।
पूर्ण कृपा सुग्रीव भूप की, बुला लिया हम ठोड़ ॥७१४॥
इसीलिए लाया जगत में, बड़े बडे बलवान।
कठिन काम भी तुरत फुरत से, कर देंगे आसान ॥७१५॥
गव गवाक्ष-अगज ने शरभज-जामवन्त-नल-नील।
द्विविध-गवय अरु गधसुमाधन योद्धा-मेघ-सलील ॥७१६॥
इन वीरों से मेरी सख्या, आखिर समझो राम ?।
इन से मैं तो तुच्छ कहाता, पूर्ण वीर ये स्वाम ॥७१७॥
शत्रु देख के इन वीरों से, भागे जैसे श्याल।
थर्रा जाते नाम सुनत ही, समझे निज का काल ॥७१८॥
मुज को हुक्म दिया इस कारण, मैंने किया प्रमाण।
काम करूं इतना लका में, सुनो राम भगवान ? ॥७१९॥
लक सहित राक्षस को लाऊं रावण बंधु समेत।
आप कहो सीता को लाऊं, होय हुक्म सकेत ॥७२०॥
भीम भयानक रावण उसको, बाध धरूं तुम पास।
पीले घाणी बीच सभी को, करे काम ये दास ॥७२१॥
सत्य वचन ये हनुमत तेरे, कर सकता सब काम।
इतना नहिं अब है करने का, किन्तु एक पेगाम।७२२॥
प्रथम करो यह काम सियाको, खबर दियो झट जाय।
उनको सारा हाल सुनाओ, राम चैन के माय ॥७२३॥

बुगल बजादी वीर समर भी, चौंक उठे नरनार।
पहुँच गया सब ठौर शब्द रव, जहाँ राज दरबार ॥७५३।
बिना समयकी बुगल बजाई, आया वैरी कौन।
हृदय गया घबराय श्रवण सुन, चला दुखों का पौन ॥७५४॥
सजधज के बख्तर तन धारा, उधर हुई रण भेर।
लगा नकारे पर जय ढंका, हाथ लही समसेर ॥७५५॥
शत भाई लड़ने को आते, पिता बिठा निज ठौर।
छिड़ा युद्ध दोनों बाजूसे, चले बाण घन घोर ॥७५६।
हनुमत ने तब निज छातीपे, झेल लिए सब बाण।
तेज देख घबराए सब जन, छोड़ खड़े सामान ॥७५७॥
हनु सोचे मन क्या ? मैं करता, मामा सब दुख पाय।
कहन लगे मैं दुश्मन तुमका, मुझको समझो नाथ ॥७५८॥
नाग पास में बँधे हुए को, छोड़ दिए तत्काल।
हाथ जोड़ आए हनु पासे, नीची दृष्टि, निहाल ॥७ ६।
मात अजनी का मैं जाया, तुमको करूं प्रणाम।
दुख पाई थी मात तुम्हीं से, किया क्रोध वह काम ॥७६०॥
नाना थे श्री महिन्द्र भूपती, सुना कि हे हनुमान।
आए मिलने पास तुरतसे, हनुमत दे सन्मान ॥७६१॥
कण्ठ लगाया नानाजीने, बिठा लिया निज गोद।
कहते ? भाई यह क्या कीना, ऐसी क्या मनमोद ॥७६२॥

खबर नहीं क्या मुज माताको, पाया था नहिं नीर।
जब आता तब हृदय खटकता, करता यह तदवीर ॥७६३॥
मुज स्वामी श्री रामचन्द्र हित, जाना लका माय।
आदि अन्तसे बात सुनाई, रावण की दुरसाय ॥७६४॥
मिलो आप जाकर रघुवरसे, छोड़ दुष्ट लकेश।
न्याय विचारे छोड़ अनीती, सोही श्रेष्ठ नरेश ॥७६५॥
हुए मुदित मन महिन्द्र भूपती, नहीं खुशीका पार।
देते आशिर्वाद सदा हो, तेरी जय जयकार ॥७६६॥

॥ हनुमान द्वारा दो मुनिऔर तीन बालाकी रक्षा ॥

शुभाशीष ले नानाजी की, चले तुरत हनुमान।
सिया निकट में जाने कारण, छोड़ा तेज विमान ॥७६७॥
आए दधिमुखदीप जहाँ था, जिसका सुनो हवाल।
लगी आग उस वनमें भारी, बढ़ती ज्वालो ज्वाल। ७ ८॥
खड़े हुए थे दो मुनि बनमें, धरके स्थिर मन ध्यान।
उसी निकटमें राजकुमारी, बाला तीन महान ॥७६९॥
विद्या साधन हित तप करती, देख दृश्य हनुमान।
हृदय विचारा बने अभी मे, जलके खाक समान ॥७७०॥
वृथा प्राण ये खो बैठेंगे, करना अब उपचार।
सागर से जल लाकर ज्वाला, शान्त करी उसबार ॥७७१।

किया साधुको वन्दन हनुने, आए कन्या पास।
तब कन्या की विद्या सारी, सधनी बिना प्रयास ॥७७२॥
खुश हो बोली राजकुमारी, आया कोई वीर।
विद्या सिद्धी अल्प समय में, होती बिन तदवीर ॥७७३॥
प्रेम युक्त बोली हनुवर से, आए आप दयाल।
बिना समय तरु फूले फलते, यह गुनियों की चाल ॥७७४॥
और हमारे प्राण बचाए, किया बड़ा उपकार।
बड़े तपस्वी भी जल जाते, दावानल विस्तार ॥७७५॥
ठीक हुआ जल्दी चल आए, रखे पांच के प्राण।
देर लगा आते यदि होता, हम सिर पाप महान ॥७७६॥
लिए हमारे मुनिवर जलते, मुनि वधका सब पाप।
होता हमको भव २ अन्दर, अधिक बड़ा सन्ताप ॥७७७॥
हनु बोले ? तुम कौन ? कहांसे, आए कहो बयान।
मुनि हत्याका पाप सीस तुम, कैसे लगता आन ॥७७८॥
राजकुमारी बोली तब तो, अय उपकारी वीर ?
दधिमुखपुर अति सुंदर सबमें, नृप गंधर्व सधीर ॥७७९॥
कुसुम माल है राणी जिनकी, हम पट् कन्या जान।
रूप देख खेचर हो मोहित, धरा हमारा ध्यान ॥७८०॥
खेचर याचन करे हमारी, भूप सुने नहिं बात।
अंगारक खेचर वह कामी, मचा दिया उत्पात ॥७८१॥

रजनी कालीमें से निकले, जैसे सूर्य बहार।
ऐसे निकले वीर तुरतसे, धैर्य हृदयमें धार ॥८११॥

॥ वज्रमुखासे हनुमानका युद्ध ॥

वज्रमुखा था गढ़का रक्षक, रहता था दिनरात।
रोका उसने वज्रांगी को, अरे बाल ? अज्ञात ॥८१२॥
फँसे मृत्यु के मुखमें आके, फूटी तुज तकदीर।
अन्दर अन्य नहीं जा सकता, कहता तुज आखीर ॥८१३।
चोर ढोर वत् अन्दर घुसता, हुक्म नहीं लंकेश।
पीठ दिखा तू भगजा ! जलदी, जो चाहैं सुख ऐश ॥८१४॥
हनु सुन कहते अय मेंढ़क तू ! उछल रहा बेकार।
तुजे बोलना याद नहीं हैं, अरे ढोर ! बदकार । ८१५॥
स्वाद चखादू यमद्वारे का, निपट मूर्ख नादान।
श्याल सिंह को रोक न सकता, हम रावण महिमान ॥८१६॥
गुप चुप रह के क्षमा मागले, जो चाहें आराम।
वृथा दीन को जान सताना, नहीं हमारा काम ॥८१७॥
वज्रमुखा तब बोला निर्भय, धर के शल्य ललाट।
तुजे सदा के लिए सुलादें, पहुंचे यम के घाट ॥८१८॥
रुधिर तुम्हारे से ही तुमको, नहलादेंगे आज।
अय बदमाश ? करू महिमानी, भूले सभी अकाज ।८१९।
हनु कहते में आखिर कहता, सच्ची बात सुनाय।
कार्य करन में आया तुज पे, कैसे करू प्रहार ॥८२०॥
दूत राम का अब रावण को, देना है संदेश।
दूत कहां रोके नहि जाते, यह है नीति विशेष ॥८२१॥
दूत भूत से तुजे समजते, चिर की भरी कशार।
जो है रघुके दूत उसी को, मारे झट तलवार ॥८२२॥
वज्रमुखा ले शस्त्र हाथ में, आया हनु के तीर।
वार किया तो झट हनुमत ने, काट दिए अवसीर ॥८२३।
पवनपुत्र ने हाथ उठाई, अपनी तेज कृपाण।
विद्युत् जैसी गिरी उसी पे छिन में खोए प्राण ॥८२४॥
रणभूमि में मचता रौरव, सेना में हाकार।
वज्रमुखा की कन्या यह सुन, छाया क्रोध अपार ॥८२५॥
शस्त्र कलाकी जान कन्य का, लंकासुंदर नाम।
अस्त्र शस्त्र सज रन में आई, भूल सभी विश्राम ॥८२६॥
वीरों से वह बोली ऐसी, लेय हाथ समसेर।
इसी दीन से डर क्यों ? भगते, भरा भर्म अधेर। ८२७॥
जिसने मारा पिता हमारा, उससे लेना वैर।
किन्तु सेना ऐक न सुनती, चाहे अपनो खैर ।८२८॥
बोली कन्या मेरे सन्मुख, आजारे ? कगाल।
बेवश हो मुज पिता मार के, फूल गया चडाल ॥८२९॥
नारी अबला जात कहाती, सोचे मन हनुमान।
दाग लगे कुल में त्रिय बध से, यह है शास्त्र बयान ॥८३०॥
सच्चे क्षत्री शूरवीर वे, करे न त्रिय पे वार।
सहन करे अपमान आप ही, नहीं प्राण दरकार ॥८३१॥
शस्त्र कला लख हनु कन्याकी, अचरज हुआ महान।
तेजवीर्य लख शचि शरमावे, सब ही रूप निधान ॥८३२॥
जितने छोडे शस्त्र उसी को, दिए बीच में काट।
जोर हटा तब सब कन्या का, मन में हुआ उचाट ॥८३३॥
क्या ? कारण विद्या नहि चलती, मन में होय विहाल।
तभी क्रोध को तज के सुंदर, शान्त हुई तत्काल ।८३४॥
दग पसार देखे हनुमत को, रूप तेज बलवीर।
लगा कलेजे बाण काम का, होती हृदय अधीर ॥८३५॥
छोड़ शस्त्र आ गिरी चरण में, नैनों नीर बहाय।
तब हनुवर ने उस कन्या को, बोले अभय सुनाय ॥८३६।
हाथ जोड़ सुविनय दरसा के कन्या बोले बोल।
क्षमा करो अपराध हमारा, आप पुरुष अनमोल ॥८३७॥
ऐक सुनो अरदास हमारी, बीती कहूं सुनाय।
ऐक समय में ऐक ज्योतषी, पास पिता के आय ॥८३८॥
कन्या का वर कौन होयगा, पूछी पितु ने बात।
तुज को मारन वाला होगा, रुशय नहि तिलमात ॥८३९॥

रजनी कालीमे से ......, ..स सून पहार।
ऐस निरखे वीर तुरतमे, धैर्य हृदयमें धार ॥८११॥

॥ वज्रमुखासे हनुमानका युद्ध ॥

वज्रमुखा था गढ़का रक्षक, रहता था दिनरात।
रोका उसने वज्रांगी को, अरे बाल ? अज्ञात ॥८१२॥
फसे मृत्यु के मुखमे आके, फूटी तुज तकदीर।
अन्दर प्रन्य न..ी जा सकता, कहता तुज आखीर ॥८१३।
चोर ढोर वत अन्दर घुसता, हुक्म नहीं लकेश।
पीठ दिखा तू भगजा ! जलदी, जो चाहें सुख ऐश ॥८१४॥
हनु सुन कहते अय मेंढक तू ! उछल रहा बेकार।
तुजे बोलना याद नहीं हैं, अरे ढोर ? बदकार। ८१५॥
स्वाद चखादूं यमद्वारे का, निपट मूर्ख नादान।
श्याल सिंह को रोक न सकता, हम रावण महिमान ॥८१६॥
चुप चुप रह के क्षमा मांगले, जो चाहे आराम।
वृथा दीन को जान सताना, नहीं हमारा काम ॥८१७॥
वज्रमुखा तब बोला निर्भय, घर के शल्य ललाट।
तुजे सदा के लिए सुलादूँ, पहुचे यम के घाट ॥८१८॥
रुधिर तुम्हारे से ही तुमको, नहलादेंगे आज।
अय बदमाश ? करू महिमानी, भूले सभी अकाज ॥८१९।

हनु कहते मे आखिर कहता, सच्ची बात सुनाय।
कार्य करन में आया तुज पे, कैसे करू प्रहार ॥८२०॥
दूत राम का अब रावण को, देना है सदेश।
दूत कहां रोके नहिं जाते, यह है नीति विशेष ॥८२१॥
दूत भूत से तुजे समज ते, विष की भरी कटार।
जो है रघुके दूत उसी को, मारे झट तलवार ॥८२२॥
वज्रमुखा ले शस्त्र हाथ में, आया हनु के तीर।
वार किया तो झट हनुमत ने, काट दिए अक्सीर ॥८२३।
पवनपुत्र ने हाथ उठाई, अपनी तेज कृपाण।
विद्युत् जैसी गिरी उसी पे छिन में खोए प्राण ॥८२४॥
रणभूमि में मचता रौरव, सेना में हाकार।
वज्रमुखा की कन्या यह सुन, छाया क्रोध अपार ॥८२५॥
शस्त्र कलाकी जान कन्य का, लकासुदर नाम।
शस्त्र शस्त्र सज रन में आई, भूल सभी विश्राम ॥८२६॥
वीरों से वह बोली ऐसी, लेय हाथ समसेर।
इसी दीन से डर क्यों ? भगते, भरा अमं अधेर। ८२७॥
जिसने मारा पिता हमारा, उससे लेना वैर।
किन्तु सेना ऐक न सुनती, चाहे अपनी खैर ।८२८॥
बोली कन्या मेरे सन्मुख, आजारे ? कगाल।
बेवश हो मुज पिता मार के, फूल गया चडाल ॥८२९॥

नारी अबला जात कहाती, सोचे मन हनुमान।
दाग लगे कुल में त्रिय वध से, यह है शास्त्र बयान ॥८३०॥
सच्चे क्षत्री शूरवीर वे, करे न त्रिय पे वार।
सहन करे अपमान आप ही, नही प्राण दुरकार ॥८३१॥
शस्त्र कला लख हनु कन्याकी, अचरज हुआ महान।
तेजवीर्य लख शचि सरमावे, सब ही रूप निधान ॥८३२॥
जितने छोडे शस्त्र उसी को, दिए बीच में काट।
जोर हटा तब सब कन्या का, मन में हुआ उचाट ॥८३३॥
क्या ? कारण विद्या नहिं चलती, मन में होय विहाल।
तभी क्रोध को तज के सुदर, शान्त हुई तत्काल ॥८३४॥
दृग पसार देखे हनुमत को, रूप तेज बलवीर।
लगा कलेजे बाण काम का, होती हृदय अधीर ॥८३५॥
छोड़ शस्त्र आ गिरी चरण में, नैनों नीर बहाय।
तब हनुवर ने उस कन्या को, बोले अभय सुनाय ॥८३६।
हाथ जोड़ सुविनय दरसा के कन्या बोले बोल।
क्षमा करो अपराध हमारा, आप पुरुष अनमोल ॥८३७॥
ऐक सुनो अरदास हमारी, बीती कहूं सुनाय।
ऐक समय में ऐक ज्योतषी, पास पिता के आय ॥८३८॥
कन्या का वर कौन होयगा, पूछी पितु ने बात।
तुज को मारन वाला होगा, संशय नहि तिलमात ॥८३९॥

॥ हनुमान का सीतापै जाना ॥

आप पधारें सिया मिलन को, तड़प रही विन राम ।
रघुवर का सदेश सुनाओ, पावे परमाराम ॥८६९॥
जिस दिन से आई है सीता, छोड़ा खान रु पान ।
बीते दिन इक्वीस आज तक, ऐक राम में ध्यान ॥८७०॥
पता बताऊ उत्तर दिशिमें, देवरमण इक वाग ।
अशोच वृक्ष तल वैठी सीता, धरती सदा विराग ॥८७१॥
सिया कथन सुन तुरत चले है, देवरमण उद्यान ।
पहरेदार खड़ा था लखके, सोचा मन में ज्ञान । ८७२॥
खबर पड़े यदि शोर मचावे, वृथा समय टल जाय ।
देर लगे सीता मिलने में, सोचा ऐक उपाय ॥८७३॥
नभमें उड़के सिया पास में, जाना अभी जरूर ।
छिनमें सब झझट मिट जावे, होती अड़चन दूर ॥८७४॥
उड़के नभ मे आए झटपट, बैठे वृक्ष अशोक ।
सिया देख मन मोद हुआ है, दिया वहीं से धोक ॥८७५ ।
छुपे वृक्ष की डाल आड़ में, सिया सके नहि देख ।
सीता के सब हाल देखते रखके दृष्टी ऐक ॥८७६॥
जिन गुण गाती मन हर्षाती, करे राम गुण गान ।
देह हुई दु खों से दुर्बल, धरा तदपि मन ज्ञान ॥८७७॥
कब ही मस्तक हाथ लगा के, बैठे चिंताग्रस्त ।
नैनों से कब नीर बहाती, ज्ञान ध्यान कर अस्त ॥८७८॥
सिया मातके हाल देख हनु, करे सिया गुन गान ।
शीलवान ये सती पवित्रा, शील तेज छवि भान ॥८७९॥
नैन सफल हो दर्शन करते, जीवन हुआ पवित्र ।
प्रथम किए दर्शन माताके, देखा भाव विचित्र ॥८८०॥
राम विरह में करी तपस्या, होते दिन इकवीस ।
पति आशा में जीवन अपना, धरा धर्म पे सीस ॥८८१ ।
पति हित ठोकर दीनी सुखपे, विपदा सही अपार ।
शील रत्न की खान गुणाकर, विरली जगमें नार । ८८२॥
फिर उच्चारण करे जोर से, सीता निज उद्‌गार ।
बिना राम के घड़ी वर्ष सम, जाती हैं बेकार ॥८८३॥
गुन्हा नहीं है नाथ ? किस का, ये मेरे सब काम ।
क्यों भिजवाती रणमें पति को, जिसका यह अजाम । ८८४॥
लक जेलमें आकर बैठी, सुध ले आकर कौन ? ।
किसे सुनाऊं ? बात हृदय की, लेनी पड़ती मौन ॥८८५ ।
मेरे हित पति फिरते होंगे, कष्ट बड़ा सिर झेल ।
इधर लकपति मुझे सतावे, समझ बाल का खेल ॥८८६ ।
सता रहे हैं राम हृदय को, उधर सदा लकेश ।
दोनों बाजूसे दुख मुजको, टलता कब परमेश ? ॥८८७॥
तन पिंजरमें जीवन मेरा, रहा रामके काज ।
इस आशामें कौन सुने मुज, दुखकी भरी अवाज । ८८८॥
राम कहां पे बैठे होंगे, मेरा सोचे हाल ।
सिया कहांपे होगी उसको, हरी किसे चडाल ॥८८९॥
अब जो देर करे पति मुज हित, रहे न जीवन डोर ।
लिखी कर्म में विपत घोर मुज, चले न उससे जोर ॥८९०॥

॥ सीताकी गोदमें मुद्रीका डालना ॥

इसी प्रकार हनु देख सियाको, गद गद होता चित्त ।
धन्य धन्य श्री रामचन्द्रजी, सीता धन्य चरित्त ॥८९१॥
विना पुण्य के ऐसी नारी, मिले न कोटि उपाय ।
सुखमय करना अभी सियाको, दु ख दूर भगजाय ॥८९२॥
राममुद्रिका करमें लेके, डाले सीता गोद ।
देख सिया मन लगी सोचने, सहसा धार प्रमोद ॥८९३॥
उसे उठाके करे निरीक्षण, लिखा रामका नाम ।
यही मुद्रिका खुद पतिवरकी, पाई लील ललाम । ८९४॥
खिला फूल सा चहरा अदभुत, छाया मुखपे तेज ।
रखी अगूठी हाथ बीचमें, कहँ उसे धर हेज ॥८९५॥
कैसे आई लका अन्दर, पति प्यारी थी खूब ।
मैं प्यारी थी राम हृदय की, तू करकी महबूब । ८९६॥

अय कुलटा ? तेरे अव पति का, आया काल नजीक।
खो बैठेगा लक हाथ से, मत रह तूं निर्भीक ॥६२६॥
जिसने खर को मारा वह नर, आने वाले लक।
तुज को विधवा दाग देंयगे, यह है वात निशक ॥६२७॥
कठिन कुठारी वात सिया की, सुन जाती पटनार।
नारी नागन को छेडे से, दिखता नहिं कुछ सार ॥६२८॥

॥ सीता को डिगाने रावण का आना ॥

आया रावण पास सिया के, लेय हाथ तलवार।
कहन लगा तू क्यों ? कलपाती, लख तू नैन पसार ॥६२६॥
भला इसी में तेरा प्यारी, कर रावण से प्यार।
अपनी हट को छोड़ अभी भी, नहिं खींचे में सार ॥६३०॥
मेरी तू पटराणी होगी, करले मुझे स्विकार।
वरना तुज पे खंजर चलता, किया जरा इन्कार ॥६३१॥
नाहक प्यारे प्राण खोयगी, कहां रहेंगे राम।
जरा शान्ति से समझ स्यानी, पावेगी आराम ॥६३२॥
सीता बोली अय गीदड़ तू ?,किस को रहा सुनाय।
तेरी भभकी से नहिं डरती, तुज जैसे लख आय ॥६३३॥
गर्व तुजे लका सोने की, तीन खड का राज।
इसको मैं तो तुच्छ समझती, साज तेरा बेम्राज ॥६३४॥
मुजे चुराकर लाया लका, सचा मेरा चोर।
लाया क्यों नहिं जीत स्वयवर, सचा था राठोर ॥६३५॥
इन्द्र चन्द्र की मुझे न परवाह, चन्द्र झरे शृंगार।
पश्चिम ऊगे सूर्य कदापी, रूठ जाय ससार ॥६३६॥
तदपी मेरा शील न चलता, तुज गिनती क्या ख्याल।
सहस अठारह राणी होते, करता काम छिनाल ॥६३७॥
सिवा राम के मैं नहि चाहूं, तू समझे निज खैर।
राम पास में रखदे रावण ?, मिट जावें सब वेर ॥६३८॥
सिह पुरुष की नार कभी नहिं,करे स्याल से प्यार।
मुझे दिखाता भभकी खाली, लिए हाथ तलवार ॥६३६॥
हाथी घोड़े रथ दल पैदल, किधर रहेंगे दूर।
लषमण के बाणों से सिर दश, होंगे चकना चूर। ६४०॥
हीरा पन्ना माणक मोती, नहिं आवेगे काम।
रह जावेगा शस्त्र हाथ में, होगा काम तमाम। ६४१॥
किया बुरे से बुरा काम तैं, कूकर जैसे आय।
मरना तुजको लषमण करसे, चिह्न रहा दरसाय ॥६४२॥
सिया वचन सुन दशकधर मन, छाया क्रोध कराल।
जल्दी अपने स्थान सिधाया, चली न कुछ भी चाल ॥६४३॥

॥ सीता को हनुमान का नमस्कार ॥

रावण अरु सवाद सिया का, सुना वीर हनुमान।
समझ गया यह सिया शील में, सची अटल महान ॥६४४॥
कैसे आई यह अगूठी, रघुपति करसे आज।
सिया विचारे विध २ दिलमें, हुआ काज बेकाज ॥६४५॥
पती लेकर यह जाता था, पड़ी बीच में आय।
इसे चुराई किस पापी ने, या छल बल दिखलाय ॥६४६॥
राम लखन की ताकत भारी सब विधि से बलवान।
किसी दुष्ट ने या हर लीनो, हरके उनके प्राण। ६४७॥
अन्य कष्ट क्या आन वाला, जाती खूब सताय।
हुय गई अति कर्म सरित् में, दुख हो प्रतिपल आय ॥६४८॥
इससे मरना बहतर मुजको,क्यों? नहिं निकले प्राण।
मेरे प्यारे पतिवर की यों, देय खबर मुज आन ॥६४६॥
भर्म न जावे बिन पतिवर के, कौन देय धीर।
शका मेटे मेरे मन की, वह नर गुण का कोप ॥६५०॥
आशा मेरी हुई निराशा, कौन करे सभाल।
चित्त उदासी देख सिया की, तब हनुमत तत्काल ॥६५१॥
उतर वृक्ष से नीचे आए, नमन करे करजोड़।
राम लखन सब कुशल क्षेम है, मेरे शिर के मोड़ ॥६५२॥
उनका भेजा मैं आया हूं, लाया साथ निशान।
पड़ी मुद्रिका गोद आप के, डाली मै हनुमान ॥६५३॥

अय कुलटा ? तेरे अब पति का, आया काल नजीक।
खो वैठेगा लंक हाथ से, मत रह तूं निर्भीक ॥६२६॥
जिसने खर को मारा वह नर, आगे वाले लंक।
तुज को विधवा दान देंयगे, यह है बात निशंक ॥६२७॥
कठिन कुठारी घात सिया की, सुन जाती पटनार।
नारी नागन को छेडे से, दिखता नहिं कुछ सार ॥६२८॥

॥ सीता को डिगाने रावण का आना ॥

आया रावण पास सिया के, लेय हाथ तलवार।
कहन लगा तू क्यों ? कलपाती, लख तू नैन पसार ॥६२९॥
भला इसी में तेरा प्यारी, कर रावण से प्यार।
अपनी हट को छोड अभी भी, नहिं खींचे में सार ॥६३०॥
मेरी तू पटराणी होगी, करले मुझे स्विकार।
वरना तुज पे खंजर चलता, किया जरा इन्कार ॥६३१॥
नाहक प्यारे प्राण खोयगी, कहां रहेंगे राम।
जरा शान्ति से समझ स्यानी, पावेगी आराम ॥६३२॥
सीता बोली अय गीदड़ तू ?, किस को रहा सुनाय।
तेरी भभकी से नहिं डरती, तुज जैसे लख आय ॥६३३॥
गर्व तुजे लंका सोने की, तीन खंड का राज।
इसको मैं तो तुच्छ समझती, साज तेरा वेसाज ॥६३४॥

मुजे चुराकर लाया लंका, सच्चा मेरा चोर।
लाया क्यों नहिं जीत स्वयंवर, सच्चा था राठोर ॥६३५॥
इन्द्र चन्द्र की मुझे न परवाह, चन्द्र करे श्रृंगार।
पश्चिम ऊगे सूर्य कदापी, रूठ जाय संसार ॥६३६॥
तदपी मेरा शील न चलता, तुज गिनती क्या श्याल।
सहस अठारह राणी होते, करता काम छिनाल ॥६३७॥
सिवा राम के मैं नहिं चाहूं, तू समझे निज खैर।
राम पास में रखदे रावण ?, मिट जावें सब वैर ॥६३८॥
सिंह पुरुष की नार कभी नहिं, करे श्याल से प्यार।
मुझे दिखाता भभकी खाली, लिए हाथ तलवार ॥६३९॥
हाथी घोडे रथ दल पैदल, किधर रहेंगे दूर।
लक्ष्मण के वाणों से सिर दश, होंगे चकना चूर। ६४०॥
हीरा पन्ना माणक मोती, नहिं आवेंगे काम।
रह जावेगा शस्त्र हाथ में, होगा काम तमाम। ६४१॥
किया बुरे से बुरा काम तैं, कूकर जैसे आय।
मरना तुजको लक्ष्मण करसे, चिह्न रहा दरसाय ॥६४२॥
सिया वचन सुन दशकंधर मन, छाया क्रोध कराल।
जल्दी अपने स्थान सिधाया, चली न कुछ भी चाल ॥६४३॥

॥ सीता को हनुमान का नमस्कार ॥

रावण अरु संवाद सिया का, सुना वीर हनुमान।
समझ गया यह सिया शील में, सच्ची अटल महान ॥६४४॥
कैसे आई यह अंगूठी, रघुपति करसे आज।
सिया विचारे विध २ दिलमें, हुआ काज वेकाज ॥६४५॥
पक्षी लेकर यह जाता था, पड़ी बीच में आय।
इसे चुराई किस पापी ने, या छल बल दिखलाय ॥६४६॥
राम लखन की ताकत भारी सब विधि से बलवान।
किसी दुष्ट ने या हर लीनो, हरके उनके प्राण। ६४७॥
अन्य कष्ट क्या आने वाला, जाती खूब सताय।
डूब गई अति कर्म सरित् में, दुख हो प्रतिपल आय ॥६४८॥
इससे मरना बहतर मुजको, क्यों ? नहिं निकले प्राण।
मेरे प्यारे पतिवर की क्यों, देय खबर मुज आन ॥६४९॥
भर्म न जावे विन पतिवर के, कौन देय संतोर।
शंका मेटे मेरे मन की, वह नर गुण का कोष ॥६५०॥
आशा मेरी हुई निराशा, कौन करे संभाल।
चित्त उदासी देख सिया की, तब हनुमत तत्काल ॥६५१॥
उतर वृक्ष से नीचे आए, नमन करे करजोड़।
राम लखन सब कुशल क्षेम है, मेरे शिर के मोड़ ॥६५२॥
उनका भेजा मैं आया हूं, लाया साथ निशान।
पड़ी मुद्रिका गोद आप के, डाली मैं हनुमान ॥६५३॥

अय कुलटा ? तेरे अब पति का, आया काल नजीक।
सो बैठेगा लक हाथ से, मत रह तू निर्भीक ॥६२६॥
जिसने खर को मारा वह नर, आने वाले लक।
तुज को विधवा दान देंयगे, यह है बात निशक ॥६२७॥
कठिन कुठारी बात सिया की, सुन जाती पटनार।
नारी नागन को छेडे से, दिखता नहिं कुछ सार ॥६२८॥

॥ सीता को डिगाने रावण का आना ॥

आया रावण पास सिया के, लेय हाथ तलवार।
कहन लगा तू क्यों ? कलपाती, लख तू नेन पसार ॥६२९॥
भला इसी में तेरा प्यारी, कर रावण से प्यार।
अपनी हट को छोड अभी भी, नहि खींचे में सार ॥६३०॥
तेरी तू पटरायी होगी, करले मुझे स्विकार।
वरना तुज पे खंजर चलता, किया जरा इन्कार ॥६३१॥
नाहक प्यारे प्राण खोयगी, कहां रहेंगे राम।
जरा शान्ति से समझ स्यानी, पावेगी आराम ॥६३२॥
सीता बोली अय गीदड तू ?, किस को रहा सुनाय।
तेरी भभकी से नहिं डरतीं, तुज जैसे लख आय ॥६३३॥
गर्व तुजे लका सोने की, तीन खड का राज।
इसका मैं तो तुछ समझती, साज तेरा बेसाज ॥६३४॥

मुजे चुराकर लाया लका, सच्चा मेरा चोर।
लाया क्यों नहिं जीत स्वयवर, सच्चा था राठोर ॥६३५॥
इन्द्र चन्द्र की मुझे न परवाह, चन्द झरे अगार।
पश्चिम ऊगे सूर्य कदापी, रूठ जाय ससार ॥६३६॥
तदपी मेरा शील न चलता, तुज गिनती क्या श्याल।
सहस अठारह राणी होते, करता काम छिनाल ॥६३७॥
सिवा राम के मै नहि चाहूं, तूं समझे निज खैर।
राम पास में रखदे रावण ?, मिट जावें सब वैर ॥६३८॥
सिंह पुरुष की नार कभी नहिं, करे श्याल से प्यार।
मुझे दिखाता भभकी खाली, लिए हाथ तलवार ॥६३९॥
हाथी घोड़े रथ दल पैदल, किधर रहेंगे दूर।
लक्ष्मण के बाणों से सिर दश, होंगे चकना चूर ॥६४०॥
हीरा पन्ना माणक मोती, नहिं आवेगे काम।
रह जावेगा शस्त्र हाथ में, होगा काम तमाम ॥६४१॥
किया बुरे से बुरा काम तें, कूकर जैसे आय।
मरना तुजको लक्ष्मण करसे, चिह्न रहा दरसाय ॥६४२॥
सिया वचन सुन दशकधर मन, छाया क्रोध कराल।
जल्दी अपने स्थान सिधाया, चली न कुछ भी चाल ॥६४३॥

॥ सीता को हनुमान का नमस्कार ॥

रावण अरु सवाद सिया का, सुना वीर हनुमान।
समझ गया यह सिया शील मे, सच्ची अटल महान ॥६४४॥
कैसे आई यह अगूठी, रघुपति करसे आज।
सिया विचारे विध २ दिलमें, हुआ काज बेकाज ॥६४५॥
पक्षी लेकर यह जाता था, पडी बीच में आय।
इसे चुराई किस पापी ने, या छल बल दिखलाय ॥६४६॥
राम लखन की ताकत भारी सब विधि से बलवान।
किसी दुष्ट ने या हर लीनो, हरके उनके प्राण ॥६४७॥
अन्य कष्ट क्या आने वाला, जाती खूब सताय।
डूब गई अति कर्म सरित् में, दुख हो प्रतिपल आय ॥६४८॥
इससे मरना बहतर मुजको, क्यों? नहिं निकले प्राण।
मेरे प्यारे पतिवर की क्यों, देय खबर मुज आन ॥६४९॥
भर्म न जावे बिन पतिवर के, कौन देय सतोष।
शका मेटे मेरे मन की, वह नर गुण का कोष ॥६५०॥
आशा मेरी हुई निराशा, कौन करे सभाल।
चित्त उदासी देख सिया की, तब हनुमत तत्काल ॥६५१॥
उतर वृक्ष से नीचे आए, नमन करे करजोड़।
राम लखन सब कुशल क्षेम है, मेरे शिर के मोड़ ॥६५२॥
उनका भेजा मैं आया हूं, लाया साथ निशान।
पड़ी मुद्रिका गोद आप के, डाली मैं हनुमान ॥६५३॥

कहे पवनसुत सुनिये माता, आप वचन मुज सीस ।
किन्तु मेरी, अरज मानलो, वचन करो बकसीस ॥९८२॥
हे माता ? भोजन को त्यागे, होता कितना काल ।
कृष हुआ दुर्बल तन सारा, पड़ी फिकर की झाल ॥९८३॥
सोते दिन इकवीस कहूँ क्या? रहा ऐक मन ध्यान ।
खाती पीती नहीं जरा भी, रामामृत कर पान ॥९८४॥
चिंता तजके कीजे भोजन, बाद निशानी आप ।
मुजको दीजे, जाता जलदी, हरू राम संताप ॥९८५॥
सीता सोचे होता मेरा, पूर्ण नियम यह आज ।
खबर मिली राघव की सारी, रहती मेरी लाज ॥९८६॥
फल फूलादिक लाया हनुमत, वृक्ष डाल से तोड़ ।
करो पारणा, माता अववो, यही अर्ज करजोड़ ॥९८७॥
किया पारणा सती सिया ने, बाद दिया सन्देश ।
चूड़ामणी निज कर से खोले, होय प्रेम आवेश ॥९८८॥
लेओ हनुमत? चूड़ामणि को, देना पति को जाय ।
हाथ जोड़ के अर्ज सुनाना, जो मैं कहूँ सुनाय ॥९८९॥
तुम दर्शन की प्यासी खासी, दासी नित तरसाय ।
कब होगे दर्शन तुम मुजको, भूल गए रघुराय ॥९९०॥
दीन दुखी की खबर शीघ्र लो, तुम बिन नहिं आराम ।
देवर लक्ष्मण को भी कहना, जपती निशदिन नाम ॥९९१॥

कब लोगे सुध ध्यान सिया की, अब नहीं करना देर ।
योगी ईश्वर भजे ऐक मन, लगता जग अंधेर ॥९९२॥
माता मन विश्वास करो तुम, दुख होगा सब दूर ।
आने वाले राम लखन भी, लेगा सुधी जरूर ॥९९३॥
जाता हूँ मैं पास राम के, हुक्म आपका पाय ।
सैन्य सहित लेकर के राघव, थोड़े दिन में आय ॥९९४॥
वीरा जाओ ? जल्दी अब तो, यदि राक्षस आजाय ।
महादुष्ट तुमको दुख देंगे, वृथा कष्ट हो जाय ॥९९५॥
माताजी तुम क्या ? कहते हो, चिंता दो मुज छोड़ ।
मेरी कुछ भी फिकर करो मत, कौन करे मुज होड़ ॥९९६॥
जो विजयी है तीन खण्ड का, उनका मैं हूँ दूत ।
मुजको लखके डरे सुरासुर, जख राक्षस क्या भूत ॥९९७॥
तो क्या ? रावण चीज बिचारा, हो आज्ञा इसवार ।
लंक सहित रावण पुरजन को, पहुँचाऊं यमद्वार ॥९९८॥
लंक सिंधुमें डुबा आपको, बिठलाऊं निज स्कंध ।
तुरत रामके पास छोड़ दूं, मिलता राम सबंध ॥९९९॥
सीता सुन खुश होकर बोली, सच्चे हैं तुम बैन ।
कर सकते हो काम तथापी, चलो शान्ति की लेन ॥१०००॥
मुझे हुआ विश्वास तुम्हारा, कर सकते सब काम ।
किंतु मेरा यह नियम अटल यदि, पलटे विश्व तमाम ॥१००१॥

हो नहिं सकता ग्रहन रामके, अन्य पुरुष का काय ।
कंध तुम्हारे क्यों कर बैठू, यह होने का नाय ॥१००२॥
कहे वचन जो मुखसे तुमने, कीजे जाकर काज ।
चूड़ामणि देओ रघुवर को, मिटे राम मन दाज ॥१००३॥
काम इसी में हुआ तुम्हारा, वृथा करो नहिं वार ।
हे माता ? जाता रघु तट पर, मनमें हुआ विचार ॥१००४॥
इच्छा है मुज देना चाहूँ, परिचय जाने लंक ।
क्या समझेगा रावण कोई, आया होगा रंक ॥१००५॥
अत आज कुछ बल दिखलाता, समझ जाय लंकेश ।
दूत चलो है ऐसा फिरतो, कैसे राम नरेश ॥१००६॥
अरे वीर ? हो विजय तुम्हारी, देती आशिर्वाद ।
करी नमन हनुमान सिधाया, सिया हृदय आबाद ॥१००७॥

॥ हनुमान और माली में तकरार ॥

लगे बागमें फिरने इत उत, खावे तरु फल फूल ।
मूल सहित तरु तोड़ उखाड़े, बाग किया प्रतिकूल ॥१००८॥
जहाँ हजारी कटली चंपा, थे मेवों के झाड़ ।
तोड़ २ के सभी गिराए, दिए समूल उखाड़ ॥१००९॥
दृश्य देख यह माली अनुचित, करता जोर पुकार ।
अरे मूर्ख ? नादान निपट तू, करता बाग उजार ॥१०१०॥

अय निर्भागी ! निपट मूर्ख तू ? चोर बड़ा बदमाश ।
क्षमा मांगले प्राण चहे तो, वरना हो यमग्रास । १०४० ॥
हनु बोले बदजात अरे तूं ? मुखसे बोल विचार ।
मूर्खों के सुत मूर्ख बने हैं, समझा मैंने सार ।।१०४१।
तुझे बोलना याद नहीं है, भूंका ज्यों खर राज ।
अय दिवाने ? देकर औषध, करदूं अभी इलाज ॥१०४२॥
राम नारको चुरा छिपाई, तस्कर तेरा बाप ।
अबतो तेरा भरा हुआ यह, फूटेगा घट पाप ॥१०४३॥
अपने भुज बलसे में आया, सीताके हितकाज ।
मंढक वत् तू टर टर टर्रा, रहा जोरसे गाज ॥१०४४॥
वाक् युद्ध के बाद परस्पर, होन लगी तकरार ।
दोनों रणमें लड़ने लागे, मचती हाहाकार ।।१०४५॥
लगे सुभट लड़ने को उस दम, देते अक्षय साथ ।
बाण सभी झट काटे हनुने, सैन्य भगी घबराय ॥१०४६॥
अक्षयने जब बाण चलाया, उसे दिया फिर छेद ।
अक्षयने तलवार उठाई, अपना लखके भेद ॥१०४७॥
बचा लिया तन हनुने अपना, दिया वज्र तब डाल ।
गिरा भूमि तल अक्षय आके, गया कालकी गाल ॥१०४८॥
सुभट भाग जाकर रावण से, कहते अक्षय हाल ।
रावण घरपे छाई चिंता, होता रावण लाल ॥१०४९॥

लघु भ्राताका मरण श्रवणकर, इन्द्रजीत उसवार ।
धड़क गया मन बला कौन ये, लहैं हाथ तलवार ॥१०५०॥
रावण कहता बैठा जाओ ! आया कौन गिवार ।
उसे बांधके लाओ मुझपे, सजलो सब हथियार ॥१०५१॥

॥ इन्द्रजीत द्वारा हनुमानको नागपाश बांध ॥ रावणपे ले जाना

पिता हुक्मसे इन्द्रजीत भी, पहुंचा बाग मझार ।
हालत लख वैरान बागकी, जलभुन होता छार ।।१०५२॥
इन्द्रजीत बोला यों हनुसे, करता क्यों अन्याय ।
खड़ा अकेला साथ न कोई, देगा प्राण गॅमाय ॥१०५३॥
वश वने निर्वंश पवन का, ज़िंदा कभी न जाय ।
वज्रमुखा अरु अक्षय वधसे, कैसे तू सुख पाय ॥१०५४॥
हाथ पहिन लोहेकी कड़िया, चाल लंक दरबार ।
बात पवनसुत सुनके होते, लाल लाल अंगार ॥१०५५॥
क्या तुझको मालूम नहीं है, दिए वीर दो मार ।
इसी वज्रसे तुही मरेगा, होजा अब हुशियार ॥१०५६॥
इसी पावसे रावणका भी, उड़ जावेगा ताज ।
पहने नहिं जंजीर जमाई, हो सिरका सिरताज ॥१०५७॥

तेरी सेखी मिट जावेगी, सभी धूल में आज ।
इन्द्र कहैं ? आ जरा सामने, करदूं पूर्ण इलाज ॥१०५८॥
जुड़ते दोनों वीर युद्धमें, वर्षा होती बाण ।
चलें तभी तलवार तेजसे, कैसे रहते प्राण ॥१०५९॥
हनुमत का लख तेज इन्द्रका, उतरा मुखका नूर ।
पड़ा बड़ी आफत मे आके, हो चिंता में चूर ॥१०६०॥
कहते हनु कैसी हो चिंता, करा न तुझपे वार ।
तुझ मन होतो चले हर्ष से, रावण के दरबार ॥१०६१॥
इन्द्र उछल बोला तब क्या है, तेरी तेज जबान ।
कूद रहा मेंढक वत् कबका, आखिर तूं नादान ॥१०६२॥
तेरी आई मौत इसीमें, क्या है मेरा दोष ।
रिश्तेदारी का अब नाता, गया हजारों कोष ॥१०६३॥
बड़ा वृक्ष था उसको हनुने, लिया समूल उखाड़ ।
दृश्य देख के सेना भगती, देते कई पछाड़ ॥१०६४॥
इन्द्रजीत लख के घबराया, करके लोचन लाल ।
करे बाण की वर्षा बहु विधि, युद्ध बड़ा विकराल ॥१०६५॥
काट गिराए हनु ने सारे, युद्ध कला यह देख ।
पाए अचरज सारे दिलमें, मिटे न भावी लेख ॥१०६६॥
दाव देख हनुमत पे इन्द्र हु, डाला तब अहि बाण ।
नाग पासमें जकड़ बधसे, बांध लिया शैतान ॥१०६७॥

अय निर्भागी ! निपट मूर्ख तू ? चोर बडा बदमाश।
क्षमा मांगले प्राण चहैं तो, वरना हो यमग्रास। १०४० ॥
हनु बोले बदजात अरे तू ? मुखसे बोल विचार।
मूर्खा के सुत मूर्ख बने हैं, समझा मैंने सार ।।१०४१।
तुजे बोलना याद नहीं है, भू का ज्यों खर राज।
अय दिवाने ? देकर औषध, करदूं अभी इलाज ॥१०४२॥
राम नारको चुरा छिपाई, तस्कर तेरा बाप।
अबतो तेरा भरा हुआ यह, फूटेगा घट पाप ॥१०४३॥
अपने भुज बलसे में आया, सीताके हितकाज।
मेंडक वत् तू टर टर टर्रा, रहा जोरसे गाज ॥१०४४॥
वाक् युद्ध के बाद परस्पर, होन लगी तकरार।
दोनों रणमें लडने लागे, मचती हाहाकार ॥१०४५॥
लगे सुभट लडने को उस दम, देते अक्षय साथ।
बाण सभी झट काटे हनुने, सैन्य भगी घबराय ॥१०४६॥
अक्षयने जब बाण चलाया, उसे दिया फिर छेद।
अक्षयने तलवार उठाई, अपना लखके भेद ॥१०४७॥
बचा लिया तन हनुने अपना, दिया वज्र तब डाल।
गिरा भूमि तल अक्षय आके, गया कालको गाल ॥१०४८॥
सुभट भाग जाकर रावण से, कहते अक्षय हाल।
रावण घरपे छाई चिंता, होता रावण लाल ॥१०४९॥

लघु भ्राताका मरण श्रवणकर, इन्द्रजीत उसवार।
धड़क गया मन बला कौन ये, लहैं हाथ तलवार ॥१०५०॥
रावण कहता बैटा जाओ ! आया कौन गिवार।
उसे बांधके लाओ मुजपे, सजलो सब हथियार ॥१०५१॥

॥ इन्द्रजीत द्वारा हनुमानको नागपाश बांध ॥ रावणपे ले जाना

पिता हुक्मसे इन्द्रजीत भी, पहुंचा बाग मझार।
हालत लख वैरान बागकी, जलभुन होता छार ॥१०५२॥
इन्द्रजीत बोला यों हनुसे, करता क्यों अन्याय।
खडा अकेला साथ न कोई, देगा प्राण गमाय ॥१०५३॥
वश बने निर्वंश पवन का, जिंदा कभी न जाय।
वज्रमुखा अरु अक्षय वधसे, कैसे तू सुख पाय ॥१०५४॥
हाथ पहिन लोहेकी कड़िया, चाल लंक दरबार।
वात पवनसुत सुनके होते, लाल लाल अंगार ॥१०५५॥
क्या तुजको मालूम नहीं है, दिए वीर दो मार।
इसी वज्रसे तुही मरेगा, होजा अब हुशियार ॥१०५६॥
इसी पांवसे रावणका भी, उड़ जावेगा ताज़।
पहने नहिं जंजीर जमाई, हो सिरका सिरताज ॥१०५७॥

तेरी सेखी मिट जावेगी, सभी धूल मे आज।
इन्द्र कहै ? आ ज़रा सामने, करदूं पूर्ण इलाज ॥१०५८॥
जुडते दोनों वीर युद्धमें, वर्षा होती बाण।
चलें तभी तलवार तेजसे, केसे रहते प्राण ।१०५९॥
हनुमत का लख तेज इन्द्रका, उतरा मुखका नूर।
पडा बड़ी आफत मे आके, हो चिंता मे चूर ॥१०६०॥
कहते हनु कैसी हो चिंता, करूं न तुजपे वार।
तुज मन होतो चले हर्ष से, रावण के दरबार ॥१०६१॥
इन्द्र उछल बोला तब क्या है, तेरी तेज ज़बान।
कूद रहा मेंडक वत् कबका, आखिर तूं नादान ॥१०६२॥
तेरी आई मौत इसीमें, क्या है मेरा दोष।
रिश्तेदारी का अब नाता, गया हजारों कोष ॥१०६३॥
बड़ा वृक्ष था उसको हनुने, लिया समूल उखाड़।
दृश्य देख के सेना भगती, देते कई पुछाड़ ॥१०६४॥
इन्द्रजीत लख के घबराया, करके लोचन लाल।
करे बाण की वर्षा बहु विधि, युद्ध बना विकराल ॥१०६५॥
काट गिराए हनु ने सारे, युद्ध कला यह देख।
पाए अचरज सारे दिलमें, मिटे न भावी लेख ॥१०६६॥
दाव देख हनुमत पे इन्द्र हु, डाला तब अहि बाण।
नाग पासमें जकड बंधसे, बांध लिया शैतान ॥१०६७॥

मैं हूँ बोलन वाला पहले, सब लूँगा सम्भाल ।
मेरे बैठे रावण यश का, पूर्ण मुझे है ख्याल ॥१०९८॥
कठिन सकोमल दूत बोलता, मालिक हुक्म बजाय ।
कहता रावण बात विभीषण, सच्ची कही सुनाय ॥१०९९॥
रावण कहता जिसकी जैसी, सगत का फल पाय ।
बनचर जैसे राम लखन हैं, वैसा दूत कहाय ॥११००॥
शक्ति हीन बन देते गाली, चले न कुछ भी जोर ।
जरा बातमें बिगड़ गए तुम, मचा दिया अति शोर ॥११०१॥
किन्तु तेरी बातें ऊपर, आता मन अति रोष ।
हनुमत कहते अय राक्षस ? हा, अभी छिपालो दोष ॥११०२॥
रघुदल में आऊँगा लड़ने, करना मुजसे युद्ध ।
मनकी हवस निकालो जबही, क्यों होते अब क्रुद्ध ॥११०३॥
अरे भूप ? मत जुल्म अधिक कर, अच्छा नहिं अन्याय ।
सता, नहीं तू धर्मी जनको, इसका फल दुखदाय ॥११०४॥
कठिन बहुत ये नरतन पाया, रख निज कुलका मान ।
कुछ संपति पाकर इतराता, छोड़ वृथा अभिमान ॥११०५॥
बड़े बड़े नर गए छोड सब, तेरी क्या है शान ।
निज कर्तव्य पिछान छानके, तोल जरा सज्जान ॥११०६॥
इस, ईशका हुक्म यही है, चहैं नहिं तकरार ।
नर्फ, सियाको अर्चं पूज्य के, देओ रघु दरबार ॥११०७॥

जो नहिं देना चाहो तो तुम, हो, जाओ हुशियार ।
जीवन की छोड़ो सब आशा, आओ युद्ध मझार ॥११०८॥
रावण कहता बक बक मतकर, अपनी ले सभाल ।
तेरी जान बचे किस विधसे, सोच उपाय निकाल ॥११०९॥
अरे ? जानकी रही जानमें, जान सिया के साथ ।
बोल कपी ? कैसे हो सकता, धरूं राम के हाथ ॥१११०॥

॥ हनुमान द्वारा रावण का ताज गिराना ॥

मरण दिवस अब आया रावण, किसकी सुने न कान ।
छाया दिलमें क्रोध भयकर, रूठ गए हनुमान ॥११११॥
भ्रकुटि चढ़ा दग लाल कालहो, वेष किया विकराल ।
ओष्ट फाड़ कल कल रव करते, कड़के बीज कराल ॥१११२॥
केल ततुवत् नाग पासको, दिया तोड़ उसवार ।
धोका देकर बांधा मुजको, यह क्षत्री ? आचार ॥१११३॥
रावण कहता अय हनु ? तू तो, बना राम का दूत ।
अपनी सारी भूल भालके, होता जैसे भूत ॥१११४॥
मूड मुडा करके बिठलावे, खर पे कर असवार ।
मुह काला कर गली २ में, फेरें वे दरकार ॥१११५॥
कहते तभी विभीषण ऐसा, पूंछ वस्त्र लिपटाय ।
तैल डाल अगनी लगवादो, बिना मौत मरजाय ॥१११६॥

खुश हो सुनके किया उसी विध, दीनी आग लगाय ।
तब फलांग किलकार लगाके, रावण के ढिग आय ॥१११७॥
तान लात से सिरपे दीनी, मुकुट पड़ा उसवार ।
होंस उड़े लख दश पत्थर के, टुकड़े हो दश धार ॥१११८॥
हुआ भयकर क्रोध हृदय में, कहते यों ललकार ।
मारो २ मूर्ख दुष्ट ये, काम किया बदकार ॥१११९॥
दल निशिचर का मारण कारण, धाया हनु के सग ।
महिल महिलपे उछल २ के, जला दिए वे ढंग ॥११२०॥
ऐसे घर २ सभी लंक में, मचता हाहाकार ।
घबराते नर नारी पुरके, रोते करें पुकार ॥११२१॥
खुश होके बजरंग तुरतसे, आए सागर पास ।
तब विमान में बैठ सिधाए, किष्किंधा शुभ वास ॥११२२॥
ताज गिरा रावण का भूपर, शूर वीर सरदार ।
शोर मचाया पकड़ो २, दुष्ट निपट बदकार ॥११२३॥
हाथ न आया भाग गया जब, रावणपे सब आय ।
इन्द्रजीत से लगे कहन यों, रावण दुःख जनाय ॥११२४॥
बड़ी लाज की बात आज सुन, देख रहें अपमान ।
पकड़ सके नहिं, छोटा बदर, सेखी रहते छान ॥११२५॥
भानुकर्ण यों कहे पिताजी, करो जरा नहिं भूल ।
बध कर देते उसी दुष्ट का, पड़ती सिरपे धूल ॥११२६॥

मैं हूं बोलन वाला पहले, सब लूंगा सम्भाल।
मेरे बैठे रावण यश का, पूर्ण मुझे है ख्याल ॥१०९८॥
कठिन सकोमल दूत बोलता, मालिक हुक्म बजाय।
कहता रावण बात विभीषण, सच्ची कही सुनाय ॥१०९९॥
रावण कहता जिसकी जैसी, सगत का फल पाय।
बनचर जैसे राम लखन हैं, वैसा दूत कहाय ॥११००॥
शक्ति हीन बन देते गाली, चले न कुछ भी जोर।
जरा बातमें बिगड़ गए तुम, मचा दिया अति शोर ॥११०१॥
किन्तु तेरी बातें ऊपर, आता मन अति रोष।
हनुमत कहते अय राक्षस ? हां, अभी छिपालो दोष ॥११०२॥
रघुदल में आऊं गा लड़ने, करना मुझसे युद्ध।
मनकी हवस निकालो जबही, क्यों होते अब क्रुद्ध ॥११०३॥
अरे भूप ? मत जुल्म अधिक कर, अच्छा नहिं अन्याय।
सता नहीं तू बर्सी जनको, इसका फल दुखदाय ॥११०४॥
कठिन बहुत ये नरतन पाया, रख निज कुलका मान।
कुछ सपति पाकर इतराता, छोड़ वृथा अभिमान ॥११०५॥
बड़े बड़े नर गए छोड़ सब, तेरी क्या है शान।
निज कर्तव्य पिछान छानके, तोल जरा सज्ज्ञान ॥११०६॥
राम, ईशका हुक्म यही है, चहैं, नहिं तकरार।
सिर्फ सियाको अर्च पूज्य के, देओ रघु दरबार ॥११०७॥
जो नहिं देना चाहो तो तुम, हो, जाओ हुशियार।
जीवन की छोड़ो सब आशा, आओ युद्ध मझार ॥११०८॥
रावण कहता बक बक मतकर, अपनी ले सभाल।
तेरी जान बचे किस विधसे, सोच उपाय निकाल ॥११०९॥
अरे ? जानकी रही जानमें, जान सिया के साथ।
बोल कपी ? कैसे हो सकता, धरूं राम के हाथ ॥१११०॥

॥ हनुमान द्वारा रावण का ताज गिराना ॥

मरण दिवस अय आया रावण, किसकी सुने न कान।
छाया दिलमें क्रोध भयकर, रूठ गए हनुमान ॥११११॥
भ्रकुटि चढ़ा दृग लाल कालहो, वेष किया विकराल।
ओष्ट फाड़ कल कल रव करते, कड़के बीज कराल ॥१११२॥
केल ततुवत नाग पासको, दिया, तोड़ उसवार।
धोका देकर बांधा मुजको, यह चत्री ? आचार ॥१११३॥
रावण कहता अय हनु ? तू तो, बना राम का दूत।
अपनी सारी भूल भालके, होता जैसे भूत ॥१११४॥
मूड मुड़ा करके घिटलावे, खर पे कर असवार।
मुह काला कर गली २ में, फेरें वे दरकार ॥१११५॥
कहते तभी विभीषण ऐसा, पूछ वस्त्र लिपटाय।
तैल डाल अगनी लगवादो, बिना मौत मरजाय ॥१११६॥
खुश हो सुनके किया उसी विध, दीनी आग लगाय।
तब फलांग किलकार लगाके, रावण के ढिग आय ॥१११७॥
लात लात से सिरपे दीनी, मुकुट पड़ा उसवार।
हीरा उड़े लख दश पत्थर के, टुकड़े हो दश धार ॥१११८॥
हुआ भयकर क्रोध हृदय में, कहते यों ललकार।
मारो २ मूर्ख दुष्ट ये, काम किया बदकार ॥१११९॥
दल निशिचर का मारण कारण, धाया हनु के सग।
महिल महिलपे उछल २ के, जला दिए वे ढंग ॥११२०॥
ऐसे घर २ सभी लक में, मचता हाहाकार।
घबराते नर नारी पुरके, रोते करें पुकार ॥११२१॥
खुश होके बजरग तुरतसे, आए सागर पास।
तब विमान में बैठ सिधाए, किष्किंधा शुभ वास ॥११२२॥
ताज गिरा रावण का भूपर, शूर वीर सरदार।
शोर मचाया पकड़ो २, दुष्ट निपट बदकार ॥११२३॥
हाथ न आया भाग गया जब, रावणपे सब आय।
इन्द्रजीत से लगे कहन यों, रावण दुःख जनाय ॥११२४॥
बड़ी लाज की बात आज मुज, देख रहैं अपमान।
पकड़ सके नहिं, छोटा बदर, सेखी रहते छान ॥११२५॥
भानुकर्ण यों कहें पिताजी, करो जरा नहिं भूल।
वध कर देते उसी दुष्ट का, पड़ती सिरपे धूल ॥११२६॥

मुद्रा सब सुग्रीव हाथ में, देते हैं उमवार।
जिसको जैसा योग्य समझके, दिया गया अधिकार ॥११५५॥
विराध सैन्य पति भवे सबके, वानर दल बलवन्त।
जामवन्त भामण्डल अगद, निज २ सैन्य सजन्त ॥११५६॥
प्रबल पवनजय पुत्र कहाते, सब में सो सिरदार।
वडवानर–नल–नील वीरथे, हुए सभी तैयार ॥११५७॥
भूचर खेचर राजा राणा, बड़े बड़े दुर्दंत।
रथ सम्रामिक पवन वेग हय, बड़े २ राजदन्त ॥११५८॥
नभ गामी सब सजे विमानों, शस्त्र शास्त्र भण्डार।
लोहे गोले दारू भरते, सब में जोश अपार ॥११५९॥
नोबत बाजा बजे नकारा, चढ़ा वीर रस पूर।
अलग २ दल नाद सादले, धरा धुजाते शूर ॥११६०॥
नादोंसे अंबर गर्जाता, सुना शब्द नहिं जाय।
नभमें रजसे सूर्य ढका है, कायर जन घबराय ॥११६१॥
शकुन महुर्त शुभ देख सैन्य युत, राम किया प्रस्थान।
गगन पथमें चलते कितने, लंका जीतन ध्यान ॥११६२॥
उदधि कलोल ज्यों दलबल सेना, वाहन विविध प्रकार।
विविध भूपती विविध वेशमें, विविध २ थे हथियार ॥११६३॥
डेरा तबू विविध तरह के, करते हय हिंसार।
गुल गुलाट रव करते हाथी, रथके हो भनकार ॥११६४॥

सिंहनाद से शोर मचाते, बैठे कई विमान।
कोई गज रथ घोड़े बैठे, मन उत्साह महान ॥११६५॥
लगी धून यही रावण जीते, होय सत्य की जीत।
बोल रहे जय रामचन्द्र की, एक ध्वनी धर प्रीत ॥११६६॥

॥ रामका लंकाको प्रस्थान और शेतु-समुद्र राजाको जीतना ॥

वेलंधर गिरि आए चलते, थे पुरके दो भूप।
सेतु और समुद्र नामसे, वीर विकट बल रूप ॥११६७॥
रोका था करके लश्कर को, किया मार्ग सब बंध।
आगे नांहि जाने दें किसको, मचा दिया अति द्वंद ॥११६८॥
राम पठाया दूत उन्हींपे, समझाने के काज।
आज्ञा होते दूत सिधाया, आया जहाँ दो राज ॥११६९॥
नम्र वचन से अर्ज सुनाता, मुजको भेजा राम।
यह संदेशा लाया तुमपे, सबको हो आराम ॥११७०॥
क्यों रोका है हमको तुमने, कहो हृदय के भाव।
तुमसे नहिं तकरार हमारी, करते वृथा दबाव ॥११७१॥
सीता के हित लंक पुरी में, जाते है इसवार।
रास्ता देदो यही चाहते, रोकन में क्या सार ॥११७२॥
वैर बढ़ाना ठीक नहीं है, इस में तुमकी हान।
इधर हमे भी क्षणिक देर में, भारी हो नुकसान ॥११७३॥

सेतुनृप सुन वचन दूत के, धरता कोप प्रचण्ड।
वनवासी दो भील भयंकर, मचा रखा उद्दंड ॥११७४॥
निज नारी संभाल सके ना, है जिनको धिक्कार।
अब दिखलाते बड़ी वीरता, मरजाना अयकार ॥११७५॥
रास्ता देकर क्या? रावण से, बढ़ा लेय हम वैर।
कहना यही हमारा तुमको, सेना लेओ फेर ॥११७६॥
सभी हीजड़े मिलके आये, लंका जीत न काज।
उन योद्धाओं के आगे तुमका चले न एक इलाज ॥११७७॥
कहो राम को जावे पीछे, यदि होवे बलवान।
आकर सन्मुख लड़े हमारे, उतरे पुर अभिमान ॥११७८॥
सेतुभूप से दूत भूत हो, कहन लगा समझाय।
अपना चाहो भला आज तो, पड़ो राम के पाय ॥११७९॥
आखिर आया दूत राम पे, कहा आदि से अन्त।
उसी समय में नील बुलाके, राम कहा विरतंत ॥११८०॥
उसे जीत के आओ जल्दी, गए जभी नल नील ॥११८१॥
रण भूमी में दोनों आये, कहैं शब्द अश्लील ॥१
चले शस्त्र तलवार बाण अरु, अग्नि बाण वर्षाय।
दिए काट नल नील वीर ने, दोनों नृप घबराय ॥११८२॥
नल ने पकड़ा नृप समुद्र को, इधर सेतु को नील।
बांध निकट लाए रघुवर के, जो कहता था भील ॥११८३॥

॥ रावण को विभीषण की राय ॥

रावण आज्ञा धरे सीस सब, छोड़ विभीषण ऐक।
हृदय विचारे कैसे करना, निश्चय रावण टेक ॥१२११॥
मृद वाणी से हाथ जोड़के, करे नम्र अरदास।
शीघ्र काम नहिं कीजे कोई, जिसमें अपना नाश ॥१२१२॥
जबसे लाये सिया हरन कर, तबसे अबतक हान।
देखो चिन्ता होती आई, समझ कहूँ सब छान ॥१२१३॥
सबही होते राम पक्ष में, ताकत बढ़ी अपार।
अबही मानों सोच समझ के, लंक करो मत छार ॥१२१४॥
निर्दोषित कुल किया कलंकित, आप कहाए चोर।
मुँह बतलाने लायक हम नहिं, कहलाए बदखोर ॥१२१५॥
जीत न सकते राम सामने, अधिक शक्ति है आज।
ऐक राम का दूत उसी ने, गिरा दिया तुम ताज ॥१२१६॥
वृथा सीस कटवाते अपना, दो सच्चे पथ पैर।
सिया सोंप दो शीघ्र राम को, मिट जावे सब वैर ॥१२१७॥
ऐक सिया हित वे आये है, नहीं राज से काम।
मिलो प्रेमयुत जाय हर्ष से, सबको हो आराम ॥१२१८॥
स्वागत कर लंका में लाओ, खूब देय सत्कार।
कहता हितकी बात आप पर, करते नहीं स्विकार ॥१२१९॥

साहसगति अरु खरको मारा, वह गति हो तुम खास।
पीछे हो पछतावा रखिये, शिक्षा पे विश्वास ॥१२२०॥
सुनके रावण बात विभीषण, सिरसे पगतक फेर।
चढ़ा क्रोध रावण को सहसा, समझा आता गैर ॥१२२१॥
करता रूप कराल लाल मुंह, भाल चढ़ा शल तीन।
अपना आपा अलग हुआ वश, ज्यों मदिरामें लीन ॥१२२२॥
इन्द्रजीत बोला अय कायर!, मूर्ख निपट नादान।
बात नपुंसक सी कर तूने, कायर किए महान ॥१२२३॥
प्रथम पिता को छला तुम्हींने, अबभी छलते आज।
दशरथ मारण हित भेजे थे, किया न कुछभी काज ॥१२२४॥
बिन मारा मारा बतलाया, दिया भर्म मे डाल।
लेते अब भी पक्ष भील का, समझ लिया इस हाल। २२२५॥
हुऐ रामकी रक्षा! ऐसी, तुम चाहो दिन रात।
विजय राम की होवे ऐसी, इच्छा है दरसात ॥१२२६॥
गुण गाते हो सदा राम के, रिपु जो विष धर नाग।
समझ गऐ छल छन्द तुम्हारे, भभकी दिलमें आग ॥१२२७॥
भ्रात नहीं तुम शत्रु कहाते, चहो न आता खैर।
ताज पिताका पड़ा उसीमें, हुई खुशी की लैर ॥१२२८॥
प्रथम किया अपमान हमारा, अब भी यह तूफान।
वैरी आग खड़ा सिर ठसका, चाहो तुम कल्याण ॥ २२२९॥

समझ लिया छल चले न तुमका, इन्द्रजीत मुज नाम।
बड़े बड़े डगते भभकी से, कौन विचारा राम ॥१२३०॥
छुप जाओ तुम दूम दबाके, काम करे हम वीर।
पहन चूड़ियाँ नारी बनिये, पाँव धार नजीर ॥१२३१॥
इसी हाथ से राम हनूगा, समझ रखा क्या! खेल।
वश करलूगा उन बैलों को, देकर नाक नकेल ॥१२३२॥

॥ रावण और विभीषण में तकरार ॥

कहै विभीषण! पक्ष न मेरा, धरूं सत्य का साथ।
जो चाहो सो कहदो मुजको, सुन लूगा मैं बात ॥१२३३॥
वैरी समझे हितकी कहते, यही बड़ा अन्याय।
प्रेम नहीं राघव से बेटा!, सांच कहूँ दरशाय ॥१२३४॥
रावण क्षेम चहूं निश दिन मैं, रहो अखण्डित राज।
बाल न बांका कर सकता है, वैरी जग में आज ॥१२३५॥
देखा जैसा कहना पड़ता, कैसे हो दिल शान्त।
तू क्या! जाने बेटा! तेरे, अभी दूध के दाँत ॥१२३६॥
काम अघ लंकेश कहाते, तू तो है जनमांध।
मत उछले तू जरा ठहर जा, बन तू मत मोहांध ॥१२३७॥
बात विभीषण की सुन रावण, कोप किया बेभान।
चल चल पापी नीच अधर्मी, क्या? देता है ज्ञान ॥१२३८॥

मत्ता सब सुग्रीव हाथ में, देते हैं उमवार।
जिसको जैसा योग्य समझके, दिया गया अधिकार ॥११५५॥
विराध सैन्य पति बने सबके, वानर दल बलवन्त।
जामवन्त भामण्डल अग्रद, निज २ सैन्य सजंत ॥११५६॥
प्रबल पवनजय पुत्र कहाते, सब में सो सिरदार।
वडवानर–नल–नील धीरथे, हुए सभी तैयार ॥११५७॥
भूचर खेचर राजा राणा, वड़े वढे दुर्दंत।
रथ सम्रामिक पवन वेग हय, बढे २ राजदन्त ॥११५८॥
नभ गामी सब सजे विमानों, युद्ध शस्त्र भण्डार।
लोहे गोले दारू भरते, सब में जोश अपार ॥११५९॥
नोबत बाजा बजे नकारा, चढा वीर रस पूर।
अलग २ दल नाद सादसे, धरा धुजाते शूर ॥११६०॥
नादोंसे अम्बर गर्जाता, सुना शब्द नहिं जाय।
नभमें रजसे सूर्य ढका है, कायर जन घबराय ॥११६१॥
शकुन महु'त शुभ देख शौरय युत, राम किया प्रस्थान।
गगन पथमें चलते कितने, लंका जीतन ध्यान ॥११६२॥
दधि कल्लोल ज्यों दलवल सैना, वाहन विविध प्रकार।
विविध भूपती विविध वेशमें, विभ्र २ थे हथियार ॥११६३॥
डेरा तंबू विविध तरह के, करते हय हिंसार।
गुल गुलाट रव करते हाथी, रथके हो झनकार ॥११६४॥

सिंहनाद से शोर मचाते, बैठे कई विमान।
कोई गज रथ घोडे बैठे, मन उत्साह महान ॥११६५॥
लगी धून यही रावण जीते, होय सत्य की जीत।
बोल रहे जय रामचन्द्र की, एक ध्वनी घर प्रीत ॥११६६॥

॥ रामका लंकाको प्रस्थान और शेतु-समुद्र राजाको जीतना ॥

वेलधर गिरि आए चलते, थे पुरके दो भूप।
सेतु और समुद्र नामसे, वीर विकट वल रूप ॥११६७॥
रोका था करके लस्कर को, किया मार्ग सब बंध।
आगे नहिं जाने दे किसको, मचा दिया अति द्वंद ॥११६८॥
राम पठाया दूत उन्हींपे, समझाने के काज।
आज्ञा होते दूत सिधाया, आया जहाँ दो राज ॥११६९॥
नम्र वचन से अर्ज सुनाता, मुजको भेजा राम।
यह सदेशा लाया तुमपे, सबको हो आराम ॥११७०॥
क्यों रोका है हमको तुमने, कहो हृदय के भाव।
तुमसे नहिं तकरार हमारी, करते वृथा दवाव ॥११७१॥
सीता के हित लंक पुरी में, जाते हैं इसवार।
रास्ता देदो यही चाहते, रोकन में क्या सार ॥११७२॥
वैर बढाना ठीक नहीं है, इस में तुमकी हान।
इधर हमे भी चणिक देर में, भारी हो नुकसान ॥११७३॥

सेतुनृप सुन वचन रूप कर, परत काप प्रचण्ड।
वनवासी दो भील भयंकर, मचा रखा उद्दंड ॥११७४॥
निज नारी संभाल सके ना, है जिनको धिक्कार।
अब दिखलाते बडी वीरता, मरजाना श्रयकार ॥११७५॥
रास्ता देकर क्या ? रावण से, बढा लेय हम वैर।
कहना यही हमारा तुमको, सेना लेओ फेर ॥११७६॥
सभी हींजडे मिलके आये, लंका जीत न काज।
उन योद्धाओं के आगे तुमका, चले न एक इलाज ॥११७७॥
कहो राम को जावे पीछे, यदि होवे बलवान।
आकर सन्मुख लडे हमारे, उतरे पुर अभिमान ॥११७८॥
सेतुभूप से दूत भूत हो, कहन लगा समझाय।
अपना चाहो भला आज तो, पडो राम के पाय ॥११७९॥
आखिर आया दूत राम पे, कहा आदि से अन्त।
उसी समय में नील बुलाके, राम कहा विरतंत ॥११८०॥
उसे जीत के आओ जल्दी, गए जभी नल नील ॥१२३९॥
रण भूमी में दोनों आये, कहैं शब्द अश्लील ॥१
चले शस्त्र तलवार बाण अरु, अग्नि बाण वर्षाय।
दिए काट नल नील वीर ने, दोनों नृप घबराय ॥११८२॥
नल ने पकड़ा नृप समुद्र को, इधर सेतु को नील।
बांध निकट लाए रघुवर के, जो कहता था भील ॥११८३॥

॥ रावण को विभीषण की राय ॥

रावण आज्ञा धरे सीस सब, छोड़ विभीषण ऐक ।
हृदय विचारे कैसे करना, निश्चय रावण टेक ॥१२११॥
मृद वाणी से हाथ जोड़के, करे नम्र अरदास ।
शीघ्र काम नहिं कीजे कोई, जिसमें अपना नाश ॥१२१२॥
जबसे लाये सिया हरन कर, तबसे अबतक हान ।
देखो चिन्ता होती आई, समझ कहूँ सब छान ॥१२१३॥
सबही होते राम पक्ष में, ताकत बड़ी अपार ।
अबही मानों सोच समझ के, संक करो मत छार ॥१२१४॥
निर्दोषित कुल किया कलंकित, आप कहाए चोर ।
मुंह बतलाने लायक हम नहिं, कहलाए बदखोर ॥१२१५॥
जीत न सकते राम सामने, अधिक शक्ति है आज ।
ऐक राम का दूत उसी ने, गिरा दिया तुम ताज ॥१२१६॥
वृथा सीस कटवाते अपना, दो सच्चे पथ पैर ।
सिया सौंप दो शीघ्र राम को, मिट जावे सब वैर ॥१२१७॥
ऐक सिया हित वे आये हैं, नहीं राज से काम ।
मिलो प्रेमयुत जाय हर्ष से, सबको हो आराम ॥१२१८॥
स्वागत कर लंका में लाओ, खूब देय सत्कार ।
कहता हितकी बात आप पर, करते नहीं स्विकार ॥१२१९॥

साहसगति अरु खरको मारा, वह गति हो तुम खास ।
पीछे हो पछतावा रखिये, शिक्षा पे विश्वास ॥१२२०॥
सुनके रावण वात विभीषण, सिरसे पगतक फेर ।
चढ़ा क्रोध रावण को सहसा, समझा भ्राता गैर ॥१२२१॥
करता रूप कराल लाल मुंह, भाल चढ़ा शल तीन ।
अपना आपा अलग हुआ वश, ज्यों मदिरामें लीन ॥ १२२२॥
इन्द्रजीत बोला अय कायर !, मूर्ख निपट नादान ।
वात नपुंसक सी कर तूने, कायर किए महान ॥१२२३॥
प्रथम पिता को छला तुम्हीने, अबभी छलते आज ।
दशरथ मारण हित भेजे थे, किया न कुछभी काज ॥१२२४॥
बिन मारा मारा बतलाया, दिया भर्म मे डाल ।
लेते अब भी पक्ष भील का, समझ लिया इस हाल । १२२५॥
हुऐ रामकी रक्षा ! ऐसी, तुम चाहो दिन रात ।
विजय राम की होवे ऐसी, इच्छा है दरसात ॥१२२६॥
गुण गाते हो सदा राम के, रिपु जो विप धर नाग ।
समझ गऐ छल छन्द तुम्हारे, भभकी दिलमें आग ॥१२२७॥
भ्रात नहीं तुम शत्रु कहाते, चहो न भ्राता खैर ।
ताज पिताका पड़ा उसीमें, हुई खुशी की लैर ॥१२२८॥
प्रथम किया अपमान हमारा, अब भी यह तूफान ।
बैरी आन खड़ा सिर ठसका, चाहो तुम कल्याण ॥ १२२९॥

समझ लिया छल चले न तुमका, इन्द्रजीत मुज नाम ।
बड़े बड़े डगते धमकी से, कौन विचारा राम ॥१२३०॥
छुप जाओ तुम दूम दबाके, काम करे हम वीर ।
पहन चूड़ियां नारी बनिये, पाँव धार नजीर ॥१२३१॥
इसी हाथ से राम हनूंगा, समझ रखा क्या ! खेल ।
वश करलूगा ठन बैलों को, देकर नाक नकेल ॥१२३२॥

॥ रावण और विभीपण में तकरार ॥

कहै विभीपण ! पक्ष न मेरा, धरू सत्य का साथ ।
जों चाहो सो कहदो मुजको, सुन लूंगा मैं बात ॥१२३३॥
बैरी समझे हितकी कहते, यही बड़ा अन्याय ।
प्रेम नहीं राघव से वेटा !, सांच कहूँ दरशाय ॥१२३४॥
रावण क्षेम चहूँ निश दिन मैं, रहो अखंडित राज ।
बाल न बांका कर सकता है, बैरी जग में आज ॥१२३५॥
देखा जैसा कहना पड़ता, कैसे हो दिल शान्त ।
तू क्या ! जाने वेटा ! तेरे, अभी दूध के दाँत ॥१२३६॥
काम अध लकेश कहाते, तूं तो है जनमांध ।
मत उछले तू जरा ठहर जा, बन तूं मत मोहांध ॥१२३७॥
वात विभीपण की सुन रावण, कोप किया बेभान ।
चल चल पापी नीच अधर्मी, क्या ? देता है ज्ञान ॥१२३८॥

॥ रावण को विभीषण की राय ॥

रावण आज्ञा धरे सीस सब, छोड़ विभीषण ऐक।
हृदय विचारे कैसे करना, निश्चय रावण टेक ॥१२११॥
मृदु वाणी से हाथ जोड़के, करे नम्र अरदास।
शीघ्र काम नहिं कीजे कोई, जिसमें अपना नाश ॥१२१२॥
जबसे लाये सिया हरन कर, तबसे अबतक हाल।
देखो चिन्ता होती आई, समझ कहूँ सब छान ॥१२१३॥
सबही होते राम पक्ष में, ताकत बड़ी अपार।
अबही मानों सोच समझ के, शंक करो मत छार ॥१२१४॥
निर्दोषित कुल किया कलंकित, आप कहाए चोर।
मुह बतलाने लायक हम नहिं, कहलाए बदखोर ॥१२१५॥
जीत न सकते राम सामने, अधिक शक्ति है आज।
ऐक राम का दूत उसी ने, गिरा दिया तुम ताज ॥१२१६॥
वृथा सीस कटवाते अपना, दो सच्चे पथ पैर।
सिया सौंप दो शीघ्र राम को, मिट जावे सब वैर ॥१२१७॥
ऐक सिया हित वे आये हैं, नहीं राज से काम।
मिलो प्रेमयुत जाय हर्ष से, सबको हो आराम ॥१२१८॥
स्वागत कर लंका में लाओ, खूब देय सत्कार।
कहता हितकी बात आप पर, करते नहीं स्विकार ॥१२१९॥
साहसगति अरु खरको मारा, वह गति हो तुम खास।
पीछे हो पछतावा रखिये, शिक्षा पे विश्वास ॥१२२०॥
सुनके रावण बात विभीषण, सिरसे पगतक फेर।
चढ़ा क्रोध रावण को सहसा, समझा भ्राता गैर ॥१२२१॥
करता रूप कराल लाल मुह, भाल चढ़ा शल तीन।
अपना आपा अलग हुआ वश, ज्यों मदिरामें लीन ॥१२२२॥
इन्द्रजीत बोला अय कायर !, मूर्ख निपट नादान।
बात नपुंसक सी कर तूने, कायर किए महान ॥१२२३॥
प्रथम पिता को छला तुम्हीने, अबभी छलते आज।
दशरथ मारण हित भेजे थे, किया न कुछभी काज ॥१२२४॥
बिन मारा मारा बतलाया, दिया भर्म में डाल।
लेते अब भी पक्ष भील का, समझ लिया इस हाल ॥१२२५॥
हुऐ रामकी रक्षा ! ऐसी, तुम चाहो दिन रात।
विजय राम की होवे ऐसी, इच्छा है दरसात ॥१२२६॥
गुण गाते हो सदा राम के, रिपु जो विप धर नाग।
समझ गऐ छल छन्द तुम्हारे, भभकी दिलमें आग ॥१२२७॥
भ्रात नहीं तुम शत्रु कहाते, चहो न भ्राता खैर।
ताज पिताका पड़ा उसीमें, हुई खुशी की लैर ॥१२२८॥
प्रथम किया अपमान हमारा, अब भी यह तूफान।
बैरी आग खड़ा सिर उसका, चाहो तुम कल्याण ॥१२२९॥
समझ लिया छल चले न तुमका, इन्द्रजीत सुज नाम।
बड़े बड़े डगते भभकी से, कौन विचारा राम ॥१२३०॥
छुप जाओ तुम दूम दबाके, काम करे हम वीर।
पहन चूड़ियाँ नारी बनिये, पांव धार जंजीर ॥१२३१॥
इसी हाथ से राम हनूंगा, समझ रखा क्या ! खेल।
वश करलूंगा उन बैलों को, देकर नाक नकेल ॥१२३२॥

॥ रावण और विभीषण में तकरार ॥

कहे विभीषण ! पक्ष न मेरा, धरू सत्य का साथ।
जो चाहो सो कहदो मुजको, सुन लूंगा मैं बात ॥१२३३॥
बैरी समझे हितकी कहते, यही बड़ा अन्याय।
प्रेम नहीं राघव से बेटा !, सांच कहूँ दरशाय ॥१२३४॥
रावण क्षेम चहूं निश दिन मैं, रहो अखंडित राज।
बाल न बांका कर सकता है, बैरी जग में आज ॥१२३५॥
देखा जैसा कहना पड़ता, कैसे हो दिल शान्त।
तू क्या ! जाने बेटा ! तेरे, अभी दूध के दांत ॥१२३६॥
काम अंध लंकेश कहाते, तूं तो है जनमांध।
मत उछले तू जरा ठहर जा, बन तू मत मोहांध ॥१२३७॥
बात विभीषण की सुन रावण, कोप किया बेभान।
चल चल पापी नीच अधर्मी, क्या ? देता है ज्ञान ॥१२३८॥

तुरत राम के पास आयके, कहता सभी बयान।
रावण और विभीषण वातें, भेद सुनो धर ध्यान ॥१२६८॥
सिया भेजना चहे विभीषण, दिल में थी यह लाग।
वात २ में भ्रात भ्रात के, भभक गई है आग ॥१२६९॥
हुआ युद्ध उनके आपस में, कुम्भकरण छुटवाय।
लंक छोड़ के निकल दुष्ट तूँ, रावण कहा सुनाय ॥१२७०॥
वचन तीर से लगे उन्हीं को, तुरत लंक को छोड़।
अक्षौहिणी ले तीस सैन्य को, रावण से मुंह मोड़ ॥१२७१॥
शरण आपकी आय रहे हैं, छोड़ भ्रात से प्रेम।
होने वाली विजय आपकी, पाओगे सुख क्षेम ॥१२७२॥
खबर हुई यों राम सैन्य में, पड़ी लंक में फूट।
खुशी मनाने लगे सब जन, रघुवर पुण्य अखूट ॥१२७३॥
सुन सुग्रीव बात यह सोचे, आए रघुवर पास।
नीति कुटिल रावणकी समझो, कूट कपट में खास ॥१२७४॥
कौन पता ! देने को धोखा, आया अपने पास।
दशरथ नृप मारन आया था, यही विभीषण खास ॥१२७५॥
कैसे हो विश्वास इन्हींका, दुश्मन है यह मित्र।
क्यों ! ये सेन्या लेकर आता, या है चित्त पवित्र ॥१२७६॥
इधर विभीषण दूत आयके, नमें चरण रघुवीर।
कहन लगा जो कही विभीषण, बनी बात गंभीर ॥१२७७॥

अर्ज विभीषण की ये स्वामिन् !, सेवा चहुँ दिन रात।
मेरी लज्जा आप हाथ में, सत्य कहूँ मैं वात ॥१२७८॥
दुख से मैं छुटवाऊँ तुमको, दिया सिया को बैन।
इस कारण मैं भ्रात छोड़के, समझो तुमको सैन ॥१२७९॥
राम कहे अय दूत ! सुनो ये, प्रेमयुक्त सब बात।
कहो विभीषण से तुम जाके, सत्य सभी अवदात ॥१२८०॥
आप और रावण का मैं तो, चाहूँ भला हमेश।
ऐक सिया के सिवा न लेना, चाहूँ यह हृदयेश ? ॥१२८१॥
मेरे सिर के ताज तुम्ही हो, होगे दुख को काट।
समझाओगे हित की सारी, मेट सभी उचाट ॥१२८२॥
भले पधारो अब चाहे हैं, बड़े हमारे आप।
सच्चे के हम दास कहाते, सदा हरे सन्ताप ॥१२८३॥
दूत विभीषण से जा कहता, जो था रघुवर हाल।
बात विभीषण सुनके सारी, तत्क्षण हुआ खुशाल ॥१२८४॥
कपिपति कहता राक्षस जनका, आता नांहि विश्वास।
लेने जाता भेद आज मैं, होगा प्रकट प्रकाश ॥१२८५॥
तभी एक खेचर यों बोला, यही विभीषण खास।
धर्म पक्ष के लेने वाले, ऐक धर्म में आश ॥१२८६॥
तभी ऐक विद्याधर जाके, निर्णय किया तमाम।
राम भक्त अब निश्चय जाना, हो सबको आराम ॥१२८७॥

पुन आयके बात सुनाई, भर्म गया सब दूर।
स्वागत हित सुग्रीव सिधाए, प्रेमभाव भरपूर ॥१२८८॥
जहाँ राम की सभा जुड़ी थी, योध्दा खड़े अनेक।
राम शरण लेने को आए, सत्य विभीषण टेक ॥१२८९॥
निज सेना ले वीर विभीषण, आए रघुवर पास।
राम दिया सत्कार प्रेम से, हुए अधिक हुल्लास ॥१२९०॥
आओ नृप लंकेश ! वीर वर, क्षेम कुशल सानन्द।
वार वार पूछें रघुवरजी, अमल प्रेम सुखकन्द ॥१२९१॥
चरण कमल का मैं हूँ सेवक, खुले आज मुज भाग।
लगे चरण में शीस झुकाने, रघुवर पर अनुराग ॥१२९२॥
हाथ पकड़ के राम तुरतसे, लेते गले लगाय।
तुम मेरे सुग्रीव भरत सम, भ्रात सखा कहलाय ॥१२९३॥
कहे विभीषण कृपा आपकी, पूज्य सदा आनन्द।
देखे दर्शन देव आपके, धन्य दिवस सुखकन्द ॥१२९४॥
पास बिठाके पूछे रघुवर, क्यों दुर्बल तुम काय।
क्या चिंता मन हृदय खोल के, हमें कहो दरसाय ॥१२९५॥
अब चिन्ता नहिं स्वामी ! मुजको, पूर्ण हुई मुज आश।
शरण आपकी आया भगवन्!, समझो मुजको दास ॥१२९६॥
आज्ञा होगी वही करूंगा, सेवा में दिन रात।
सत्य पक्ष को धारन करके, तजा-सगा मैं भ्रात ॥१२९७॥

दशकंधर के पास भेजते, अंगद को उपचार।
आया अंगद राम वचन से, रावण के दरबार ॥१३२५॥
तुम्हें हकीकत देने आया, भेजा राम नरेश।
हित की बात कहूँ सो सुनिये, समझो अब लंकेश ॥१३२६॥
भला आपका हम चाहें हैं, मिट जावे यह युद्ध।
दे दो सीता सौंप राम को, मान हमारी बुद्ध ॥१३२७॥
इसमें हित है सभी प्रजा का, बचता नर-संहार।
मानो शीघ्र अभी समय है, पछताओगे हार ॥१३२८॥
छिड़ जावे संग्राम अगर फिर, हाथ रहे नहि बात।
यह अंगद की शिक्षा सुनके, प्रजला रावण गात ॥१३२९॥
क्यारे अंगद उन भीलों की, करे प्रशंसा आय।
बिन सख्या के तृणवत् उड़ते, जिंदे अर नहिं जाय ॥१३३०॥
समझा मुझको साहसगति सा, या खर दूषण राय।
बंदर सारे भग जावेंगे, क्या बंदर दे साथ ॥१३३१॥
सिर्फ अकेला इन्द्रजीत ही, देगा मार भगाय।
जा कहद तुज अौल भूप को, भग जा दूम दबाय ॥१३३२॥
अंगद कहता झूठ झूठ ही, बातें रहें बनाय।
बल देखा है सभी तुम्हारा, कहता सभी सुनाय ॥१३३३॥
बाली बल के आगे हारे, उतर गया था नूर।
जब आके सुग्रीव छुड़ाया, हो जाते कञ्चूकर ॥१३३४॥
कहां गई थी ताकत तबतो, झूठा सभी घमण्ड।
अभी दिखादो कैसा गौरव, तुमका जोर प्रचण्ड ॥१३३५॥
लो मैं पैर जमीं पे रखता, इसे उठालो आप।
जो मुज चरण उठाले उसका, समझू अतुल प्रताप ॥१३३६॥
जुड़े सभी बलवान आनके, उठा सके नहिं पैर।
घबराए जो वीर बली हैं, निकला थे सो सेर ॥१३३७॥
उठा रोष खा रावण तबतो, अंगद किया विचार।
मेरे चरण उठाने आया, अन्धा ये मतवार ॥१३३८॥
अंगद चरण उठाकर बोला, अय रावण लंकेश।
छू ने पग मेरा क्यों ? आया, क्या है लाभ विशेष ॥१३३९॥
करो चरण यदि स्पर्श राम के, दुख होंगे सब दूर।
यों कहके उस समय वहां से, चलते अंगद शूर ॥१३४०॥

॥ राम और रावण का प्रथम युद्ध ॥

राम पास जा हाल सुनाया, रहा दशानन तान।
तभी राम दल लड़ने कारण, सज धज हुआ महान ॥१३४१॥
इधर दशानन सेना आई, शस्त्र छत्र कर धार।
लिया शस्त्र त्रयशूल हाथ में, कुंभकरण हुशियार ॥१३४२॥
सारण-शुक-मारीच-सुंदादिक, बड़े दक्ष सामंत।
सैंस अक्षौहिणी सेना दल था, मुंह में निकले दंत ॥१३४३॥
सिंह अष्टापद चमर अश्व गज, मणिधर श्वान मयूर।
यही चिह्न थे सभी ध्वजा पे, उड़े गगन में शूर ॥१३४४॥
भिन्न भिन्न थे शस्त्र सभी के, आए युद्ध स्थान।
रावण के पहिले सब लड़ने, आए तेग कृपाण ॥१३४५॥
दोनों दल के समर बीच में, आए वीर महान।
जोर जोर गुंजारव करते, आगे किया प्रयाण ॥१३४६॥
बिजली जैसी तेग चमकती, होय शस्त्र आवाज।
श्वेत पताका उड़े गगन में, घोर रहा नभ गाज ॥१३४७॥
वर्षा ऋतु सम जोर जोर से, बर्छे रहे हैं घाय।
गज घोड़े पे मुद्गर पड़ते, पड़े जमीं पे आन ॥१३४८॥
आया रावण लोक डरावण, नहिं सेना का मान।
निज पर की कुछ खबर न होती, छाया गगन विमान ॥१३४९॥
सिंह चिह्नकी ध्वजा उसी पे, लड़े सिंह ध्वज धार।
जैसा जिसका चिह्न उसी से, लड़े चिह्न अनुसार ॥१३५०॥
अष्टापद गज कुर्कट अहिसे, मयूर अरु मजार।
विजय चाहते निज स्वामी की, लड़ते होय निकार ॥१३५१॥
दण्ड खड्ग मुद्गर मुष्टी से, अर्गल उपल कुठार।
जिसपे जैसा शस्त्र वही नर, करता शस्त्र प्रहार ॥१३५२॥
निज स्वामी की करे प्रशंसा, वैरी निन्दा भाख।
अरे कौन तूं ! अरे कौन तू !, ठहर रे फल चाख ॥१३५३॥

कायर पीठ दिखावे भागे, दिए वीरवर प्राण।
दुर्जयमाली पवनपुत्र से, बोला तान कमान ॥१३८१॥
कहे पवनसुत बूढ़े ! तुजको, सूझी क्या ! इसवार।
बूढ़पने में शस्त्र उठाया, दीनो लाज बिहार ॥१३८२॥
गई जवानी थी लड़ने की, बैठ स्थान एकांत।
क्यों आया मरने को रणमें, भजले अब भगवन्त ॥१३८३॥
उमर गमाई लड़ने में सब, अब ले जन्म सुधार।
दुर्जयमाली बोला बचा, तेरा कर उपचार ॥१३८४॥
अभी दूध के दन्त तुमारे, वृथा दिखाता जोर।
यही जवानी पल में मिटती, आया मरने छोर ॥१३८५॥
में बूढ़ा पर आजा ! सन्मुख, निकले तेरी होस।
बात बनाता बड़ी २ क्या, देख लिया तुज जोश ॥१३८६॥
अय मुर्दा तू क्या मारेगा, कहते यों बजरंग।
अपने घर पे जाओ सुख से, देख लिया तुम ढ़ग ॥१३८७॥
पवनपुत्र कर क्रोध उसी पर, करते वार अटूट।
शस्त्र सभी बूढ़े के खोसे, छक्के जाते छूट ॥१३८८॥
अय बूढे ! वह जोर कहां है, उछल रहा था खूब।
अबतो मन सन्तोष हुआ क्या, सूखी जैसे दूब ॥१३८९॥
तब पहुँचा वज्रोदर आके, बोला हनु से बोल।
अय मूर्ख क्यों ? वृद्ध पुरुष से, बोला बोल अतोल ॥१३९०॥

क्यों मेंढक सा टर्राता है, धमकी रहा दिखाय।
जिंदा हर्गिज रह नहिं सकता, कहता सत्य सुनाय ॥१३९१॥
तुजे मिटाके बाद मिटाऊं, लछमण-कपिपति-राम।
दम है जबतक उछल कूद ले, अय बदजात ! हराम ! ॥१३९२॥
रामलखन सुग्रीव उन्हीं की, क्या करता रे ! बात।
शक्ति देख बजरंगबली की, करदे ठंडा गात ॥१३९३॥
वज्रोदर ने वज्र बाण को, छोड़ा हनु पे तान।
काट दिए हनुमान बाण सब, अपना छोड़ा बाण ॥१३९४॥

हनुमान से रावण पुत्र जंबूमाली का मरना

वज्रोदर के प्राण गए जब, मचता हा हा कार।
रावण सुत सुन जंबूमाली, आया झट उसवार ॥१३९५॥
झुंझलाया वह जोश खाय के, छोड़ा जब हथियार।
पवनपुत्र भी लड़ा सामने, देकर के ललकार ॥१३९६॥
एक वारमें हनुमत सारा, किया जंबु का अंत।
शोर मचा जब रावण दल में, बाण मेघ वर्षन्त ॥१३९७॥
हाल महोदर, देख जोश भर, आया हो विकराल।
घेर लिए चहुँ ओर सुभट मिल, बीच अजानालाल ॥१३९८॥
प्रबल बाण की बर्षा कारण, दिन में हो अंधेर।
उन बाणों में घिरे हुए भी, करता हनुमत केर ॥१३९९॥

रूप भयानक कालराज ज्यों, लड़े डटे मजबूत।
दिए सभी के बाण काटके, जैसे कच्चा सूत ॥१४००॥
कट २ निशिचर पड़े पृथ्वी पे, किसके कटते पैर।
घुमा किसीके बाण हृदय में, रही न किस की खैर ॥१४०१॥

युद्ध में कुंभकरण का मूर्छित होना।

राक्षस सेना भंग देख के, वर्षे दग से खून।
कुंभकरण लाशों की ढेरी, देख हुआ जल भून ॥१४०२॥
टूट पड़ा राघव के दल पे, मृग पे ज्यों मृगराज।
खलबल मचती अति घबराए, तब वानर साम्राज ॥१४०३॥
राघव सेना सब घबराई, सिवा अजनालाल।
झुका जिधर वह उधर साफ सब, करते कुंभ कराल ॥१४०४॥
छिन्न भिन्न हो सेना सारी, लखा हाल सुग्रीव।
सेना सज चल दिए तुरत से, आए पास करीब ॥१४०५॥
कुमुद सु अगद नृप भामंडल, दधिमुख राय महेन्द्र।
निज २ सेना सज के आए, छोटे बड़े नरेन्द्र ॥१४०६॥
पद् राजा आए चढ़ करके, कुंभ करण थे एक।
चढ़ा क्रोध विकराल कालयुत, लेके सैन्य अनेक ॥१४०७॥
हुआ घोर संग्राम खून की, बहती नदियां धार।
दोनों में से एक न हारे, लड़ते खारोखार ॥१४०[illegible]॥

विकट बली हनुमंत अमर है, सोचे रावण नंद ।
सिवा हमारे लड़ नहिं सकता, देखा आज अमंद ॥१४३८॥
कुंभकरण जब हुए सचेतन, किया शत्रु पे वार ।
यही सोच मरुत सुत झपटे, करते गदा प्रहार ॥१४३९॥
मूर्छित होके पड़ा पवन सुत, शुद्ध गए विसराय ।
दवा बगल में लेकर चलता, लंका तरफ सिधाय ॥१४४०॥
अंगद ने आ करके रोका, नहिं जाने को पाय ।
करते तभी प्रहार गदा का, कुंभकरण घबराय ॥१४४१॥
अंगद के हित कुंभकरण जब, तारन हाथ उठाय ।
पवनपुत्र तब दुख कोत से, उछले नभ में जाय ॥१४४२॥
तीतर बीतर हुआ राम दल, आवे राघव पास ।
स्वामी ! सेना सभी आपकी, भगती पाकर त्रास ॥१४४३॥
रावणसुत ने बहुत अधिक ही, किया सैन्य संहार ।
भामण्डल सुग्रीव बंध हैं, आखिर हो लाचार ॥१४४४॥
सिर्फ अकेला जूझ रहा है, अंगद वीर महान ।
अंगद कब तक लड़ा करेगा, क्यों कर राखे शान ॥१४४५॥
मिट जावेगी सारी सेना, पलभर में इसवार ।
जो कुछ करना जल्दी करिये, अस्त्र शस्त्र तैयार ॥१४४६॥
सीतों यदि ले गए लंका में, फिर क्या ? अपनी खैर ।
बिन सीतों के हो जावेगा, यहीं यहां अंधेर ॥१४४७॥

अभी दु:ख है एक विभा का, होगा बाद अनेक ।
सुनके हाल विभीषण सारा, बोले स्वर सब एक ॥१४४८॥

॥ युद्ध में विभीषण का जाना ॥

जाता अब मैं रण भूमी में, क्या ? होता है रंग ।
आज्ञा पाकर चले राम की, मग में चढ़ा उमंग ॥१४४९॥
जोश बढ़ा वानर सेना में, मुख पे आया तेज ।
खड़ा समरमें वीर विभीषण, समझ काम को तेज ॥१४५०॥
घनवाहन ने देखा तब तो, काकाजी चल आय ।
पिता तुल्य ये लड़ें किसीसे, विद्या गुरु कहलाय ॥१४५१॥
यही भाव मन हुआ कुंभ के, नहिं लड़ने में सार ।
उलटी हानी होय हमारी, बुरा कहै संसार ॥१४५२॥
रावण दल तब पीछा हटता, करे न इनसे युद्ध ।
नाग पासमें बंधे हुए हैं, वैरी दो बेशुद्ध ॥१४५३॥
इनको यहीं पर पड़े रहन दें, मर जावेंगे आप ।
यों सुविचारी काका के तट, खड़े छोड़ संताप ॥१४५४॥

॥ भामण्डल और सुग्रीव को छुड़ाने देव को बुलाना ॥

नाग पास में बंधे हुए को, इधर लहें रघुवीर ।
किसी तरह से छूट जावे तो, मन में होय सधीर ॥१४५५॥
छुड़वाने की करते महिनत, सफल हुई नहिं एक ।
लछमण भी चिंता में होके, सोचे दाव अनेक ॥१४५६॥
ध्यान किया रघुवर ने तब तो, पूर्व मित्र था देव ।
खड़ा महालोचन आ करके, उसी समय ततखेव ॥१४५७॥
राम वचन में बंधा हुआ था, संकट समय बुलाय ।
आपति दूर हुए समयसर में, जिनके देव सहाय ॥१४५८॥
खड़ा सामने हाथ जोड़ के, किस कारण बुलवाय ।
आज्ञा दीजे तुम सेवक को, मुज लायक दरसाय ॥१४५९॥
सेवक हो के तुम्हें बुलाए, करो कष्ट सब दूर ।
पड़े वीर दो नागपाश में, पावें दुख भरपूर ॥१४६०॥
विद्या गारुडी यह लीजे, कहे देव उसवार ।
दूर भगेगा नाग पास सब, यह उसका प्रतिकार ॥१४६१॥
गारुडी विद्या लछमण को, देवे देव महान ।
सिंहनाद रथमूसल हल को, करता राम प्रदान ॥१४६२॥
अग्नि और वायव्य अस्त्र को, दिया छत्र अनमोल ।
इक विमान गारुडी देते, अद्भुत शक्ति अबोल ॥१४६३॥
विद्या देकर देव सिधाता, मैं हूँ तावेदार ।
कभी समय पर याद करो तो, हाजिर हूँ हर वार ॥१४६४॥
सामक विमान गारुडी लछमण, हो उसपे असवार ।
भामंडल सुग्रीव पास में, आए हो हुशियार ॥१४६५॥

बिकर बली हनुमंत अग्र है, सोचे रावण जेंद।
सिवा हमारे लड़ नहिं सकता, देखा आज अमंद ॥१४३८॥
कुंभकरण जब हुए सचेतन, किया शत्रु ने वार।
यही सोच कट ऊठ हलूपे, करते गदा प्रहार ॥१४३९॥
मूर्छित होके पड़ा पवन सुत, शुद्ध गए बिसराय।
दवा बगल में लेकर चलता, लंका तरफ सिधाय ॥१४४०॥
अंगद ने आ करके रोका, नहिं जाने को पाय।
करते तभी प्रहार गदा का, कुंभकरण घबराय ॥१४४१॥
अंगद के हित कुंभकरण जब, मारन हाथ उठाय।
पवनपुत्र तब त्रास कोप से, उछले नभ में जाय ॥१४४२॥
तीतर बीतर हुआ राम दल, आते राघव पास।
स्वामी ! सेना सभी आपकी, भगती पाकर त्रास ॥१४४३॥
रावणसुत ने बहुत अधिक ही, किया सैन्य संहार।
भामण्डल सुग्रीव बंध हैं, आखिर हो लाचार ॥१४४४॥
सिर्फ अकेला झूम रहा है, अंगद वीर महान।
अंगद कब तक लड़ा करेगा, क्यों कर राखे शान ॥१४४५॥
मिट जावेगी सारी सेना, पलभर में इसबार।
जो कुछ करना जल्दी करिये, अस्त्र शस्त्र तैयार ॥१४४६॥
तीनों यदि ले गए लंका में, फिर क्या ? अपनी खैर।
मिल तीनों के हो जावेगा, ऐसी यहां अंधेर ॥१४४७॥

अभी दु सह है एक सिम्रा का, होगा बाद अनेक।
सुनके हाल विभीषण सारा, बोले स्वर सब एक ॥१४४८॥

॥ युद्ध में विभीषण का जाना ॥

जाता अब मैं रण भूमी में, क्या होता है रंग।
आज्ञा पाकर चले राम की, मन में बड़ी उमंग ॥१४४९॥
जोश बढ़ा वानर सेना में, मुख पे आया तेज।
खड़ा समर में वीर विभीषण, समझ काम को सेज ॥१४५०॥
घनवाहन ने देखा तब तो, काकाजी चल आय।
पिता तुल्य ये लड़ें किसीसे, विद्या गुरु कहलाय ॥१४५१॥
यही भाव मन हुआ कुंभ के, नहिं लड़ने में सार।
उलटी हानी होय हमारी, बुरा कहैं संसार ॥१४५२॥
रावण दल तब पीछा हटता, करे न इनसे युद्ध।
नाग पासमें बंधे हुए हैं, वैरी दो बेशुद्ध ॥१४५३॥
इनको यहीं पर पड़े रहन दे, मर जावेंगे आप।
यों सुविचारी काका के तट, खड़े छोड़ संताप ॥१४५४॥

॥ भामण्डल और सुग्रीव को छुड़ाने देव को बुलाना ॥

नाग पास में बंधे हुए को, उधर लखैं रघुवीर।
किसी तरह से छूट जावे तो, मन में होय सधीर ॥१४५५॥
छुड़वाने की करते मसिलत, सफल हुई नहिं एक।
लक्ष्मण भी चिंता में होके, सोचे दाव अनेक ॥१४५६॥
ध्यान किया रघुवर ने तब तो, पूर्व मित्र था देव।
खड़ा महालोचन आ करके, उसी समय ततखेव ॥१४५७॥
राम वचन में बंधा हुआ था, संकट समय बुलाय।
आपत्ति दूर हुए क्षणभर में, जिनके देव सहाय ॥१४५८॥
खड़ा सामने हाथ जोड़ के, किस कारण बुलवाय।
आज्ञा दीजे तुम सेवक को, गुन लायक दरसाय ॥१४५९॥
बेवश हो के तुम्हें बुलाए, करो कष्ट सब दूर।
पड़े वीर दो नागपाश में, पावें दुख भरपूर ॥१४६०॥
विद्या गारुडी यह लीजै, कहैं देव उसवार।
दूर भगेगा नाग पास सब, यह उसका प्रतिकार ॥१४६१॥
गारुड़ी विद्या लक्ष्मण को, देवे देव महान।
सिंहनाद रथमूसल हल को, करता राम प्रदान ॥१४६२॥
अग्नि और वायव्य अस्त्र को, दिया छत्र अनमोल।
इक विमान गारुडी देते, अद्भुत शक्ति अतोल ॥१४६३॥
विद्या देकर देव सिधाता, मैं हूँ तावेदार।
कभी समय पर याद करो तो, हाजिर हूँ हर वार ॥१४६४॥
समझ विमान गारुडी लक्ष्मण, हो उसपे असवार।
भामण्डल सुग्रीव पास में, आए हो हुशियार ॥१४६५॥

बिकट बली हनुमंत अजर है, सोचे रावण नंद।
सिवा हमारे लड़ नहिं सकता, देखा आज अमंद ॥१४३८॥
कुंभकरण जब हुए सचेतन, किया शत्रु ने वार।
यही सोच भट उठ हनुपे, करते गदा प्रहार ॥१४३९॥
मूर्छित होके पड़ा पवन सुत, शुद्ध गए बिसराय।
दबा बगल में लेकर चलता, लंका तरफ सिधाय ॥१४४०॥
अंगद ने आ करके, रोका, नहिं जाने को पाय।
करते तभी प्रहार गदा का, कुंभकरण घबराय ॥१४४१॥
अंगद के हित कुंभकरण जब, मारन हाथ उठाय।
पवनपुत्र तब आंख खोल से, उछले नभ में जाय ॥१४४२॥
तीतर बीतर हुआ राम दल, आते राघव पास।
स्वामी ! सेना सभी आपकी, भगती पाकर त्रास ॥१४४३॥
रावणसुत ने बहुत अधिक ही, किया सैन्य संहार।
भामण्डल सुग्रीव बंध हैं, आखिर हो लाचार ॥१४४४॥
सिर्फ अकेला झूझ रहा है, अंगद वीर महान।
अंगद कब तक लड़ा करेगा, क्यों कर राखे शान ॥१४४५॥
मिट जावेगी सारी सेना, पलभर में इसबार।
जो कुछ करना जल्दी करिये, अस्त्र शस्त्र तैयार ॥१४४६॥
सीता जदि ले गए लंकमें, फिर क्या ! अपनी खैर।
बिन तीनों के हो जावेगा, सभी यहां अंधेर ॥१४४७॥

अभी दु:ख है एक सिया का, होगा बाद अनेक।
सुनके हाल विभीषण द्वारा, बोले स्वर सब एक ॥१४४८॥

॥ युद्ध में विभीषण का जाना ॥

जाता अब मैं रण भूमी में, क्या ! होता है रंग।
आज्ञा पाकर चले राम की, मन में बड़ा उमंग ॥१४४९॥
जोश भरा वानर सेना में, मुख पे आया तेज।
खड़ा समरमें वीर विभीषण, समझ काम को तेज ॥१४५०॥
घनवाहन ने देखा तब तो, काकाजी चल आय।
पिता तुल्य ये लड़ें किसीसे, विद्या गुरु कहलाय ॥१४५१॥
यही भाव मन हुआ क्षोभ के, नहिं लड़ने में सार।
उलटी हानी होय हमारी, बुरा कहें संसार ॥१४५२॥
रावण दल तब पीछा हटता, करे न इनसे युद्ध।
नाग पासमें बंधे हुए हैं, बैरी दो बेशुद्ध ॥१४५३॥
इनको यहीं पर पड़े रहन दे, मर जावेंगे आप।
यों सुविचारी काका के तट, खड़े छोड़ संताप ॥१४५४॥

॥ भामण्डल और सुग्रीव को छुडाने देव को बुलाना ॥

नाग पास में बंधे हुए को, अधर बहे रघुवीर।
किसी तरह से छूट जावे तो, मन में होय सधीर ॥१४५५॥

छुड़वाने की करते मद्दित, सफल हुई नहिं एक।
लक्ष्मण भी चिंता में होके, सोचे दाव अनेक ॥१४५६॥
ध्यान किया रघुवर ने तब तो, पूर्व मित्र था देव।
खड़ा महालोचन आ करके, उसी समय ततखेव ॥१४५७॥
राम वचन से बंधा हुआ था, संकट समय बुलाय।
आपत्ति दूर हुए क्षणभर में, जिनके देव सहाय ॥१४५८॥
खड़ा सामने हाथ जोड़ के, किस कारण बुलवाय।
आज्ञा दीजे तुम सेवक को, मुज लायक दरसाय ॥१४५९॥
बेवश हो के तुम्हें बुलाए, करो कष्ट सब दूर।
पड़े वीर दो नागपाश में, पावें दुख भरपूर ॥१४६०॥
विद्या गारुडी यह लीजे, कहें देव उसवार।
दूर भगेगा नाग पास सब, यह उसका प्रतिकार ॥१४६१॥
गारुड़ी विद्या लक्ष्मण को, देवे देव महान।
सिंहनाद, रथमूसल हल को, करता राम प्रदान ॥१४६२॥
अग्नि और वायव्य अस्त्र को, दिया अस्त्र अनमोल।
इक विमान गारुडी देते, अद्भुत शक्ति अतोल ॥१४६३॥
विद्या देकर देव सिधाता, मैं हूँ तावेदार।
कभी समय पर याद करो तो, हाजिर हूँ हर बार ॥१४६४॥
समझ विमान गारुडी लक्ष्मण, हो उस पे असवार।
भामण्डल सुग्रीव पास में, आए हो हुशियार ॥१४६५॥

आजाऊं गा फिर लंका में, जो मुज मानो बात।
आज्ञा सीस उठाऊं सारी, सेवामें दिन रात ॥१४९५॥
लाखों प्राणी मरजावेंगे, निर्थक करके युद्ध।
आप देखते रह जावेंगे, करो रुष्ट मत बुद्ध ॥१४९६॥
राम लखन जब पैर धरेगा, रहे न प्यारे प्राण।
कुल क्षय होगा राज मिटेगा, मत ज्यादा को तान ॥१४९७॥
एक त्रिया के लिए सभी को, करते हो बर्बाद।
आप विचक्षण कहलाते हो, रखो नीति मर्याद ॥१४९८॥
सिया न दे सकते तुम जाकर, मैं दे आऊं रास।
जो कुछ आज्ञा दीजे मुजको, मनपे धरो लगाम ॥१४९९॥
सिय देने की कही विभीषण, सुनी बात लंकेश।
उठी सिरसे पग तक ज्वाला, प्रकटा दिलमें द्वेष ॥१५००॥
भूला अब तक नहीं पोछला, फिर भी रहा सुनाय।
तू कायर निर्बुद्धी मूरख, मुझे रहा समझाय ॥१५०१॥
उचित नहीं इतना भाई को, अब कुछ बोले बोल।
तुरत उतारूं सीस खड्ग से, भूले सभी मखोल ॥१५०२॥
कहैं विभीषण रावण से यों, क्यों डर रहा दिखाय।
तेरी धमकी से नहिं डरते, गीदड़ ज्यों भभकाय ॥१५०३॥
एक बार क्या लाख बार हम, कहते साफ पुकार।
दे दो सीता फिर हम कहते, देते लाख धिक्कार ॥१५०४॥

तब तो रावण खड्ग उठाई, उधर विभीषण वीर।
दोनों योद्धे लगे युद्ध में, चली तेज समसीर ॥१५०५॥
भूज गई जब पृथ्वी थर थर, शस्त्र मेघ की धार।
वर्द रहे हैं दोनों याजू, करते रोष करार ॥१५०६॥
पड़े धड़ा धड़ खून कीच हो, लगे धुना धुन बाण।
भाई २ युद्ध उसीमें, मराण का घमसान ॥१५०७॥

॥ इन्द्रजीत और कुम्भकरणको नागपाशमें बांधना ॥

कुम्भकरण अरु इन्द्रजीत भ, कूदे था मैदान।
आए झट सुग्रीव उधरसे, बड़े २ बलवान ॥१५०८॥
कुम्भकरण कर रूप भयानक, टूट पड़ा चहुं ओर।
राघव दलमें हल चल मचती, लखके शस्त्र कठोर ॥१५०९॥
हाल भयकर देखा राघव, लक्ष्मण झट चल आय।
कुम्भकरण से लड़ते रघुवर, अपनी शक्ति बताय ॥१५१०॥
इन्द्रजीत से लड़ते लक्ष्मण, करके सिंह अवाज।
नैन लाल कर इन्द्रजीत यों, बोला सुन वनराज ! ॥१५११॥
भील जगली ! मेरी कब की, देख रहा था राह।
खड्ग खून बिन तरस रही थी, रही तुम्हारी चाह ॥१५१२॥
लकपुरी में आए जिसका, देगा मजा चखाय।
सुनके लक्ष्मण कुपित हुए—क्यों, वृथा रहा चिल्लाय ॥१५१३॥

मुझे मारने वाला जन्मा—नहीं जगत के बीच।
निज बचनेकी क्यों नहिं करता, अरे? अधम नर नीच ॥१५१४॥
ऐसे दोनों दलके मिलके, लड़ते वीर महान।
अलग २ है नाम सभी का, देखो राम पुरान ॥१५१५॥
इन्द्रजीत ने वीर लखन पे, छोड़ा तामस बाण।
जब लक्ष्मण ने पवन तीरसे, काट दिया आसान ॥१५१६॥
इन्द्रजीत को नागपाश में, बांधा लक्ष्मण वीर।
भूला अपना भान सभी के, डाले पग जंजीर ॥१५१७॥
रथ धर लाए राघव दल में, पहिरा दिया बिठाय।
कुम्भकरण को नागपाश में, बांधा राघव राय ॥१५१८॥
भामण्डल के द्वारा उसको, दलमें दिया पठाय।
दृश्य देख घनवाहन तबतो, विकट रोष में आय ॥१५१९॥
खड़ा सामने लड़े अटल हो हनुमत समझा खेल।
उसको बांध लिया बजरंगी, धरा राम की जेल ॥१५२०॥

विभीषण पे शक्तिबाण छोड़ने का रावण का विचार

निज सेना का हाल भयंकर, देखा लंकानाथ।
इन्द्रजीत अरु कुम्भकरण भी, पड़े पराये हाथ ॥१५२१॥
हुआ जिगर में घाव भयकर, दर्द सहा नहिं जाय।
रावण और विभीषण दोनों, लड़ते शस्त्र चलाय ॥१५२२॥

हुई न चिंता तभी रामको, छाया जोश कराल।
धनुष बाण ले गर्ज चले हैं रावण-तट ततकाल ॥१५५१॥
ऐक बाण से करते राघव, रावण का रथ चूर।
रावण बैठा दूजे रथ तब, मन भय लाया पूर ॥१५५२॥
किया दूसरे का भी चूरा, रथ तीजे पर जाय।
प्राण बचाना कठिन हुआ अति, रथका चूर्ण बनाय ॥१५५३।
सहा न जाता तेज राम का, राघव रोष महान॥
भ्रात विरह में हुए विकल चित, भान हुआ बे भान॥१५५४॥
अच्छा रहना दूर इन्हीं से, सोच समझ उसवार।
प्राण बचाना मुश्किल समझो, करदे अब ही हार ॥१५५५॥
पीठ दिखा लंकेश सिधाया, रणभूमी को छोद।
राघव तबतो बोले कायर ? जाता क्यों मुह मोद़ ॥१५५६॥
अय अनाड़ी ? चोर लबाड़ी, क्यों दिखलाता पीठ।
क्षत्री होकर शुद्र कहाता, यह है काम अनीठ ॥१५५७॥
हुआ दृष्टि से अस्त राम के, फिर निज रथ को फेर।
आ पहुँचे निज धाम तुरत से, चाहें लक्ष्मण खेर ॥१५५८॥

॥लक्ष्मण को शक्ति लगने पर राम का विलाप॥

लखन हाल लख चक्कर खाते, गिरे जमीं पर आय॥
करे पवन से सीतलता अति, सुग्रिवादिक जाय ॥१५५९॥
हो सचेत उठे रघुवरजी, लिया गोद में भ्रात।
रोते तब तो जोर जोर से, करके आंशुपात ॥१५६०।
अय लघु बंधव क्यों सोते हो, मुख से कहिये बैन।
समय नहीं सोने का अब तो, जल्दी खोलो नैन ॥१५६१॥
तेज विहीन बनी सब सेना, सभी आप आधीन॥
क्यों गुस्से में हुए हमीं पे, मन को किया मलीन ॥१५६२॥
आप भरोसे आए लंका, लेकर सारी फोज॥
अभिमानी दुश्मन की तुम बिन, कौन मिटावे खोज ॥१५६३॥
सीता बंधन में रावण के, कौन छुड़ावे जाय।
मेरा रक्षक कौन बनेगा, दुश्मन देय भगाय ॥१५६४॥
लड़ने की नहिं इच्छा हो तो, चलें विपिन के साथ।
क्या है ? इच्छा तुरत फुरत से, देओ हमें सुनाय ॥१५६५।
ज़िंदा रावण इसकी चिंता, रही हृदय मे आय।
उस दुश्मन को मैं मारूंगा, तीक्ष्ण तीर चलाय ॥१५६६॥
पूछेगी जब माता कैसा दूंगा उन्हें जवाब।
सुनके रो रो मर जावेगी, मेरी गती खराब ॥१५६७॥
छोड़ो अपनी हठ को प्यारे, उठिये आलश मोड़।
इतनी कहते क्यों नहिं उठते, मेरी तुम लग दौड़॥१५६८॥
मेरे भ्राता को दुश्मन ने, मुर्छित दिया बनाय।
उस वैरी को मारूं जाके, मैं भी तीर लगाय ।१५६९॥
उठे मोह वश धनुष बाण ले, चले राम उसवार।
तेरा सीस उड़ाकर देऊं, लक्ष्मण को इसवार ॥१५७०॥
रूठ मेरा भ्रात मनाऊं, अभी मार लंकेश।
ठहर ठहर ऐसा कह करके, चलते राम नरेश ॥१५७१॥
क्रोधातुर हो चले झटसे, सुग्रीवादिक देख।
सन्मुख आके खड़े विनय से, धन्य आपकी टेक ॥१५७२॥
हे प्रभु ? सूर्य छिपा है अब तो, छिपा लंक लंकेश।
किसको जीतन जाते रघुवर, हमको दो आदेश ॥१५७३॥
अब तो ऐसा सोच स्वामिन ? चिंता करके दूर।
लक्ष्मण मूर्छा मिटे इसीकी, औषध करो जरूर ॥१५७४॥
राम कहे मैं करूं काम क्या, ? कष्ट भयंकर आय।
बुद्धी काम न देती मेरी, भ्रात रहा मुरझाय ॥१५७५।
इधर भ्राता का उधर प्रिया का, दुःख रहा है शाल।
मेरे द्वारा मेरा भाई, फंसा काल की गाल ॥१५७६॥
मरजाऊँ मैं पहले अब तो, हृदय कटारी खाय।
कहे लखन से अय भाई ! तू, देखो दृष्टि उठाय ॥१५७७॥
बीती आधी रात तभी तो, बना नहीं उपचार।
दवा किसी की कार न कीनी, सभी वैद्य लाचार ॥१५७८॥
भरत सुनेगा पागल होके, फूट फूट मर जाय।
माता पूछेगी लक्ष्मण की, फिर क्या कहूँ सुनाय ॥१५७९॥

सूर्योदय के पहले लक्ष्मण, हो जावेंगे ठीक।
रावण का कर्तव्य बुरा है, उसका काल नजीक ॥१६१०॥
शीघ्र मिलोगे राम लखन से, धरिये मन सन्तोष।
करो प्रमेष्ठी जाप भाव से, हो सब सुख के कोष ॥१६११॥
सूर्योदय हो कभी शीघ्रसे, करती सिया विचार।
कब लक्ष्मणकी खबर मिलेगी, यही भाव दिल धार ॥१६१२॥

॥ रावण को मंदोदरी का उपदेश ॥

इधर दशानन शक्ति लगाके, पाया मोद अपार।
लक्ष्मण मारा एक बाणमें, प्रबल शक्ति का धार ॥१६१३॥
दुख होता यदि यही हृदय में, इन्द्रजीत सुज नंद।
पड़ा उन्हीं के कारागृह में, कैसे मुज आनंद ॥१६१४॥
कुंभकरण की यही दशा है, बिगड़ा मेरा काज।
घनवाहन भी पड़ा कैद में, मेरा शून्य समाज ॥१६१५॥
क्या ? दुख देते होंगे दुश्मन, करके बहुत खराब।
उनके जैसा और न दूजा, नहिं पूजा में भाव ॥१६१६॥
यदि लक्ष्मण का हुआ खातमा, सिद्ध मेरे हो काज।
जिंदा यदि वह रहावो मेरे, नहिं फिर पास इलाज ॥१६१७॥
कैसे छूटे भ्रात बंध से, खटक रहा है नंद।
विरह वेदना हृदय बड़ी अति, बिगड़ गया आनंद ॥१६१८॥

सुनके मंदोदरी खबर यह, भूल गई सब रंग।
आती पति के पास सुनाती, काम हुआ बे ढंग ॥१६१९॥
स्वामी दुखको छोड़ चित्तसे, धरो आप संतोष।
मेरा लाला कहां सिधाया, लिया किसीने खोस ॥१६२०॥
बोलो ! प्रियतम हाल सुनाओ, क्यों भूले हो भान।
देवर मेरे प्यारा नंदन, छुपा दिया किस स्थान ॥१६२१॥
अय राणी ? दुश्मन ने उनको, पकड़ किया है कैद।
एसी विपदा कभी न देखी, हुआ पूर्ण मन खेद ॥१६२२॥
दुष्ट अकेले ने लाखों का, शीघ्र किया संहार।
दिया विभीषण धोखा मुजको, फूट किया बेजार ॥१६२३॥
कहती मंदोदरी नाथ ? मैं, पहले से समझाय।
नाग पिटारे हाथ न डालो, देगा प्राण गँवाय ॥१६२४॥
पकड़ पछाड़ेगा हा ! तुमको, फर्क न समझो नाथ।
आप अनीति कुपंथी बनते, वह है नीति साथ ॥१६२५॥
पतिव्रता नारी की जग में, आह ! बुरी कहलाय।
चोर पराई लाए नारी, क्यों नहिं हो दुख दाय ॥१६२६॥
इज्जत आप गमाई सारी, सब जन दे धिक्कार।
इसको धिधवापन देने में, समझा तुमने सार ॥१६२७॥
अब तो मान गवांया तुमने, आंसू रहे बहाय।
जुदा लुके नहिं पुत्र भ्रात को, सिर को रहे झुकाय ॥१६२८॥

अब भी अन्तिम अपना अच्छा, सोचो श्री लंकेश।
सीता देदो बात रहेगी, मिटे दुःख हृदयेश ॥१६२९॥
रावण कहता अरी बदरी ? बोल रही क्या बोल।
तेरे सुत कायर ने सारा, मचा दिया झक झोल ॥१६३०॥
तूँ कायर तुज सुत कायर है, कायर हमें बताय।
पैदा होते ऐसे सुत को, मारा क्यों न गिराय ॥१६३१॥
खटक रही तेरी आंखों में, जब की सीता आय।
तू विषयों की त्यमी होती, सीता आड लगाय ॥१६३२॥
राम सिया को करे प्रशंसा, कायर हमें बताय।
वह तो तुमको अच्छे लगते, कितनी वार सुनाय ॥१६३३॥
उसको तेरी शोक बनाऊं, दूं पटराणी ताज।
जिंदी जबतक दुख पावेगी, देख करूं सब काज ॥१६३४॥
जैसा भाई वैसी तू है, निकली कुल अंगार।
पार न पाता त्रिया चरित का, देखा दृष्टि पसार ॥१६३५॥
कहती मन्दोदरी पियाजी, इच्छा सो दरसाय।
धर्म पतिव्रत मैं पालूंगा, पतिपद में सिरनाय ॥१६३६॥
कष्ट आपका देख न सकती, प्रबल प्रतापी आप।
सदा आपकी विजय बने यों, प्रतिपल जपती जाप ॥१६३७॥
क्यों तूँ मन्दोदरी फिकर ये, करती आशूँ डार।
एक रात का कष्ट समझ ले, फिर है बेड़ा पार ॥१६३८॥

हुई निरोगी मेरी काया, जब से अचरज पाय।
महिमा अगोदक की पूछी, तब भरतेश सुनाय ॥१६७०॥

॥ गंधोदक का हाल ॥

महिपाल का व्यापारी आया, गजपुरसे वह चाल।
भैंसा रोगी होगा पथ में, कोसी नहिं सम्भाल ॥१६७१॥
बल विहीन वह पड़ा पथ में, उठा चला नहिं जाय।
उसपे पग दे चलें पथिक जन, अज्ञानी दर्पाय ॥१६७२॥
उसे सताये लगे दुष्ट जन, दे दुखसे दुख घोर।
सहके होता पवनदेव सो, सहके कष्ट कठोर ॥१६७३॥
अवधिज्ञान से पूर्व जन्म लख, प्रकटा मनमें वैर।
व्याधी जनपदमें फैलाई, पुर पुरमें नहिं खैर ॥१६७४॥
द्रोणमेघ की नगरी माहीं, हुआ रोगका अन्त।
थे मामाजी मेरे उनसे, पूछा मैं विरतन्त ॥१६७५॥
द्रोणमेघ ने हाल सुनाया, सुन सु प्रियकर नार।
पड़ा हुआ था रोग भयङ्कर, औषध हो सब छार ॥१६७६॥
गर्भ रहा जिस दिनमें पुरकी, व्याधी होती दूर।
जहाँ धरा रानी ने पगको, सकट मिटा कूरूर ॥१६७७॥
जन्म लिया कन्या ने जबसे, मिटा सभी का रोग।
स्नान नीर कन्या का छांटा, सुखी हुए सब लोग ॥१६७८॥

नाम वैशल्या रखा उसीका, सचित गुण भण्डार।
जल छांटा था जहाँ जहाँ पे, नीरोगी नरनार ॥१६७९॥
एक समय पे साधु पधारे, सत्यभूति अणगार।
इसका कारण पूछा मुनिसे, दीजे संशय टार ॥१६८०॥
मुनिवर बोले मीठी वाणी, प्रकट ज्ञान दरसाय।
उग्र तपस्या ईस कन्याने, करी पूर्व भव में य ॥१६८१॥
हुआ सुभीका रोग शमन झट, वैशल्या शुभ नाम।
दशरथ सुत लषमणजी होंगे, पतिवर गुण के धाम ॥१६८२॥
प्रकट पुण्य की यही पु जिका, स्नान नीर है सार।
प्रकृत से भी अधिक गुण कर, नहिं महिमा का पार ॥१६८३॥
मुनि कहने से होता सबको, मनमें अति विश्वास।
प्रकटा नीर प्रभाव सभीमें, पूर्ण होय सब आश ॥१६८४।
मामाजी से करी याचना, मुझे दिया वह नीर।
स्वच्छ हुआ मैं छांटत जलको, वह औषध अक्सीर ॥१६८५।
वह जल छांटा देश सभी में, हुआ निरोगी देश।
तुम पर भी वह जल छिटकाना, रहै रोग नहिं लेश ॥१६८६॥
चोट शक्ति सब घाव सुकावें, कैसा हो तन माय।
पानी की महिमा नहिं होती, सब दे रोग गमाय ॥१६८७॥
जल प्रभाव देखा भरतेश्वर, मेरा गुणों का कन्द।
कहा हाल राघव को ऐसा, जलका सर्व प्रतिचन्द ॥१६८८॥

अब अपूर्व है तुरत भरतको, लेओ आप बुलाय।
तुरत फुरत से रोग मिटेगा, छोड़ो अन्य उपाय ॥१६८९॥
कोई भेजो चतुर विचक्षण, जाय जहाँ भरतेश।
लषमण की व्याधी मिट जावे, देओ अब आदेश ॥१६९०॥
देर नहीं करने की स्वामिन्! निकल जायगी रात।
कुछ भी होगा नहीं याद मे, समझो सच्ची बात ॥१६९१॥
सुन प्रचन प्रतिचन्द, सभीने, राघव दल हर्षाय।
लिए सभी को पास बुलाके, बोले तब रघुराय ॥१६९२॥
बात सुनाई जल की सारी, करो काम आसान।
जाओ जलदी अंगद कपिपति, भामडल हनुमान ॥१६९३॥
अर्धरात से अधिक गई है, शीघ्र करो यह काम।
पहले जाओ भरत भूप पे, बनता काम तमाम ॥१६९४।
इतने दिन सेवक थे मेरे, अब तुम होते भ्रात।
भाई भीखा मुजको दीजे, जग जस हो विख्यात ॥१६९५॥

॥ वैशल्या को लेने हनुमान और भामण्डल का जाना॥

जब तक जिंदा रहूँ वहाँ तक, भूलूं नहि उपकार।
मेरे सिरके ताज कहाओ, प्राण दान दातार ॥१६९६॥

लघु भगनी में प्रज्ञप्ती की, देवी मे साक्षात।
महाशक्ति मुज नाम विख्याता, करती अति उत्पात ॥१७२५॥
जिस प्राणी के मैं लगजाती, रहे न उसके प्राण।
किन्तु वैशल्या देख भगी मैं, ताप विकट बलवान ॥१७२६॥
धरणेन्द्र ने रावण को दी, सब विधि से समझाय।
बना काम था रावण का पर, लक्ष्मण भाग्य सवाय ॥१७२७॥
वैशल्या का पुण्य तपोबल, देख गई थर्राय।
जाती अब मैं रहि नहि सकती, मेरी शक्ति विलाय। १७२८।
प्रबल पुण्य है राम लखन का, जो न हुई परभात।
वैशल्या को देखत मेरा, जलता सारा गात ॥१७२९॥
तेज सहा नहिं जाता इसका, देखो मुजको छोड़।
फिर नहिं आऊ पास आपके, जाती मैं मुँह मोड़ ॥१७३०॥
स्वामी आज्ञा सेवक करता, इसमें मुज नहिं दोष।
शक्ति छोड़ दी दीन वचन सुन, करके प्रबल सरोष ॥१७३१॥
धिक्कारें सब लोग उसीको, गई अधिक शर्माय।
जूती दंत उठाके लीनो, स्थान निजी भगजाय ॥१७३२॥
इधर वैशल्या ज्यों कर स्पर्शे, त्यों त्यों शांति दिखाय।
बावन चदन लेप लगाया, देते घाव रुंझाय ॥१७३३॥
आलश तजके ऊठे लक्ष्मण, देखे सन्मुख राम।
क्यों स्वामी ! दृग नीर बहाते, चित्त नहीं आराम ॥१७३४॥

यहाँ कोट क्यों, क्यों ! रखवाले, खड़ी सैन्य सब आय।
बाला रूप रसाला क्यों कर, रहै सभी हर्षाय ॥१७३५॥
नींद अवस्था क्या है मेरी, या मैं स्वप्न निहार।
मुझे गोद में क्यों ले बैठे, करते कौन विचार ॥१७३६॥
कंठ लगा बोले रघुवर जी, शक्ति लगी मुज भ्रात।
पड़े जमीं पे मुर्छित होके, समझा तुम्हें निपात ॥१७३७॥
उदासीनता छाई सबके, रोते आंसू डार।
मेघद्रोण की कन्या आकर, दीनी विपत निवार ॥१७३८॥
हनुमानादिक योद्धा मिलके, मिला दिया संयोग।
स्वप्न नहीं है तुमको भाई, मिटा तुम्हारा रोग ॥१७३९॥
इस कारण हम खुशी मनाते, चढ़ा सभी मुख नूर।
तुम रक्षा हित कोट रचाया, रावण दैत्य करूर ॥१७४०॥
पुनर्जन्म अब हुआ आपका, पुण्य हमारा तेज।
मिला सभी संयोग आपके, तुरत फुरत ही सेज ॥१७४१॥
दुःख गया लक्ष्मण का तब तो, कपिदल जाते फूल।
जय जयकार करे मिल मुख से, रावणके सिर धूल ॥१७४२।
धन वैशल्या राजकुमारी, किया सभी दुख दूर।
जय जय हो माता वैशल्या, उपकारी भरपूर। १७४३॥
सत्य धर्म का नाद बजाओ, मेटो जग अन्याय।
कष्ट मिटादो सिया सतीका, अय लक्ष्मण ? वर राय ॥१७४४॥

सिंह जैसे लक्ष्मणजी ऊठे, लेकर धनुष कमान।
लंका से रावण का डेरा, लगता अब श्मशान ॥१७४५॥
वचन भ्रात का पूर्ण होयगा, मिले विभीषण राज।
रावण ताज गिराता पग से, अपमानित कर आज ॥१७४६॥
भ्रात सियाका दर्श करेंगे, पग मे सीस झुकाय।
शक्ती का बदला शक्ती से, देंगे आज दिखाय ॥१७४७॥
रघुवर बोले अय भ्राता ! तुम, कर सकते सब काम।
पहिले वैशल्या को परणो, पावे वह आराम ॥१७४८॥
उपकारी हे पूर्ण तुम्हींपे, मानो इनकी कैन।
ठान चुकी वर पहिले तुमको, सत्य इन्हीं के बैन ॥१७४९॥
वैशल्या से व्याह कराया, कन्या एक हजार।
जैसे सीता है रघुवर के, ऐसे लक्ष्मण नार ॥१७५०॥

लक्ष्मण के जीवित पर पुनः रावणका दरबार

लगा पता रावण को ऐसा, मरा न लक्ष्मणवीर।
शक्ति निकल के भगी दूर से, क्या करना तदबीर ॥१७५१॥
निज मत्री को बुला पास में, कहता लेकर साँस।
क्या करना अब सोच बताओ, दुश्मन होंवे नाश ॥१७५२॥
शक्ती कुछ नहिं किया देखलो, लक्ष्मण का नुकसान।
पूर्ण भरोसा था की मुजको, रहे न लक्ष्मण जान ॥१७५३॥

किन्तु राजकी इच्छा हो तो, देता अपना राज।
शरण हमारी तुम आजाओ, सुधर जाय सब काज ॥१७८३॥
अर्धराज लंका का देता, निश्चय सत्य जबान।
छुट जावेगा बन २ फिरना, बनो आप महिमान ॥१७८४॥
बात छोड़ दो अब सीता की, हुई पुरानी बात।
एक बतादा मार्ग अपका, आप बनो जामात ॥१७८५॥
मेरी कन्या आप ब्याहलो, जो है तीन हजार।
प्रीत अखंडित रहे आपसे, घरते जय जयकार ॥१७८६॥
देखा होगा मेरा, जुता दासी नहीं नरेश।
नगर तारपे इतना, अब क्या कहूँ विशेष ॥१७८७॥
माफ किया से गुनहा पूर्व का, बात करो मंजूर।
फिर तुम जैसा नहीं अभागी, चिन्तामणि दो दूर ॥१७८८॥

॥ रामका रावणको उत्तर ॥

कहे राम तब छान बीन के, खूब कही लंकेश।
हम नहिं चाहें लंका लेना, लोभ नहीं लवलेश ॥१७८९॥
सुर ही राज अवध का छोड़ा, धरा हृदय संतोष।
कन्या लेना चहें नहीं हम, नहीं तुम्हीं पे रोष ॥१७९०॥
नित्य चहें हम कुशल आपकी, करो अखंडित राज।
वस्तु हमारी हम लेते हैं, अपर नहीं दूतराज ॥१७९१॥
पूजा अर्चा कर सीताको, दे दो हमको ठीक।
फिर जावेंगे हम लंकासे, आप रहो निर्भीक ॥१७९२॥
कहन लगा तब दूत रामसे, होकर तुम विद्वान।
वचन आपके हास्य पात्र है, ज्यों बालक नादान ॥१७९३॥
एक त्रिया हित प्राण गमाते, अतुल बली लंकेश।
जिंदा तुमको कभी न छोड़े, छोड़ो उनसे द्वेष ॥१७९४॥
लछमण जिंदा रहा उसीसे, समझ रहे हो जीत।
अब तो सब ही मुख मृत्यू के, होगी खूब फजीत ॥१७९५॥
रावण बलके आगे सारे, हारे सुरनर इन्द्र।
विश्वविजेता वह कहलाता, तिमिर भगे लख चन्द्र ॥१७९६॥
लखन कहें अयदूत ! भूत तू, बोल रहा क्या बोल।
बेतुक बातें बना रहा तू, जैसा फूटा ढोल ॥१७९७॥
कुत्ता के सम सुकी देता, छिप २ के अन्याय।
सूर्य समय उल्लू छिप जाता, ऐसा रावण राय ॥१७९८॥
यदि वह अतुल बली कहलाता, भूल क्यों तुज राय।
रघुवर डर से क्यों भागा था, अपनी पूंछ दबाय ॥१७९९॥
जिसके प्यारे नन्दन भाई, पड़े हमारे कैद।
क्यों न छुड़ाता यदि बल होतो, क्यों न उसे दिल खेद ॥१८००
अरे दूत ! कहदे रावण से, बात कही रघुनाथ।
अब मूषक ! तू दर को तजके, दिखलादे दो हाथ ॥१८०१॥
फिर भी कहते दूत चढ़ा था, कण्ठ पकड़ हनुमान।
बाहिर काढ़ा धक्का देकर, अधिक किया अपमान ॥१८०२॥
आया सीधा रावण के ढिग, कहा आदि से अन्त।
सुन के जलती आग दशानन आया आखिर तन्त ॥१८०३॥

मंत्रि से रावण की राय लेना।

फिर भी जो थे अपने मंत्री, बुलवाए सब खास।
कहो मंत्री ! अब क्या करना जो, पूर्ण बने सब आश ॥१८०४॥
मंत्री कहते सिया सोंपदो, राघव तट्पे जाय।
तो झगड़ा सब मिट सकता है, सच्चा यही उपाय ॥१८०५॥
सिया चुराने से पाए हो, आप अधिक दुख घोर।
आप मित्रता करो राम से, मित्रता कष्ट कठोर ॥१८०६॥
फिर भी रावण हुआ क्रोधमय, सुन मंत्री की बात।
पड़े एक ही सभी पाठ, ये मर्म बात अज्ञात ॥१८०७॥
आशा क्यों कर ! करे निराशा, सीता दी नहिं जाय।
कैसे जीते राम लखन को, निकले अधिक सवाय ॥१८०८।
चिंता चित में सुत आई की, पड़े पराये पाश।
जलता जोर जरा नहिं अब तो, फिर क्या ! छूटन आश ॥१८०९
विजय अमोघा शक्ती से भी, सुधरा सका नहिं काज।
मरा न लछमण जहां जीवता, रहती कैसे लाज ॥१८१०॥

॥ रामजी रावणको आखिरी संदेश ॥

करखे रज्ञा तू राणी की, ये तेरी पटनार।
अब ले जाता मेरे घरपे, मार मार फटकार ॥१८३९॥
चोटा पकड़ी खूब घुमाता, देता लात प्रहार।
तभो रुदन कर राणी कहती, सुनलो अब भरतार ॥१८४०॥
रामचन्द्रका अंगद दुष्टी, नीच चोर चण्डाल।
मुजे पकड़ कर घर ले जाता, सुनता नहीं सवाल ॥१८४१॥
मुजे खींच महिलों से लाया, पटक २ दे मार।
प्यारी मंदोदरी आपकी, करती आज पुकार। १८४२॥
इस दुष्टी से मुजे छुड़ाओ, तुम सन्मुख अन्याय।
होता सहन आपको कैसे, लीनी मौन सहाय ॥१८४३॥
इस पापीका वध करने में, लगे न तुम को देर।
जरा जोर से कुछ फटकारो, जो चाहो मुज खेर ॥१८४४॥

॥ रावण की विद्या सिद्ध होना ॥

रावण को यों वचन सुनाए, डिगा नहीं लवलेश।
अंगद आखिर हार सिधाया, वृथा हुआ उपदेश ॥१८४५॥
ध्यान अखण्डित धरा लंकपति, पूर्ण हुआ सब जाप।
तब तो नभमें तेज दिखाया, विद्या प्रबल प्रताप ॥१८४६।
देवी आय खड़ी बहुरूपी, जोड़े दोनों हाथ।
किस कारणसे याद किया मुज, आज्ञा दो अब नाथ ॥१८४७॥
चितकी चिन्ता चूरे चाकर, खड़ी समने आय।
जगको वशमें कर सकती हूँ, दुश्मन दूर पलाय ॥१८४८॥
एक रूप के करूं हजारों, बहुतरूपणी नाम।
बढे २ को छिन में मारू, कौन विचारे राम ॥१८४९॥
मानस कज खिला रावणका सुन के देवी वच।
भले पधारे देवी मेरे, टले सभी उपत ॥१८५०॥
सत्य आपके वचन समझता, ऐसी शक्ति महान।
छेहन देना समय पायके, रखना सत्य जबान ॥१८५१॥
रण भूमी में कल ही जाना, बुलवाता जिस वार।
उसी समयमें हाजिर होना, अब जाओ ? निजद्वार ॥१८५२॥
देवी जाती स्थान आपके, हुआ हर्ष लंकेश।
अब तो कुछ भी कमी नहीं है, होते कार्य विशेष ॥१८५३।
ध्यान समय निज राणी बातें, सुनी हुई हो याद।
चढ़ा रोष ज़ोरों से दिलमें, करन लगा बकवाद ।१८५४॥
जब आया महिलों के अन्दर, देखी निज पटनार।
क्षेम कुशल वह लगी पूछने, अचरज हुआ अपार ॥१८५५॥
जान लिया मन मुजे डिगाने, किसने रचा प्रपंच।
खुशी २ हो लगा कूदने, दुःख रहा नहि रंच। १८५६॥
तैल सुगंधित अंग लगाते, अंजन मंजन स्नान।
भोजन गृहमें तबतो आया, विध २ से मस्थान ॥१८५७॥
सजे सभी श्रृंगार सुशोभित, पट भूषण को धार।
मान करें विद्या म साधी, मेरा पुण्य अपार ॥१८५८॥

॥ रावणका पुनः सीतापै जाना और नकांयु का बांधना ॥

निज गौरव बतलाने कारण, पहुँचा सीता स्थान।
कहन लगामें विद्या साधी, सभी काम आसान ।१८५९॥
अबतो मानो लिया हमारी, देओ हटको छोड़।
सहज मारना राम लखन को, मिटती उनकी दौड़ ॥१८६०॥
नियम भंग मेरा करदूंगा, तेरा भी हो भंग।
जब मत खंडन भाव हुआ मन, बनता एक प्रसंग ॥१८६१॥
अशुभ गतीका बन्धन करता, चौथी नरक मझार।
नियम भंग मत करिये प्राणी, अधिक पडे संसार ॥१८६२॥
सती बात सुन मूर्छित होती, सुनके जहर जबान।
कर सीतलता उसे उठाई, करती तभी निदान ॥१८६३॥
राम लखन के मरण बाद ही, अनशन लेना ठाय।
जीवित काया ममत त्यागना, लेना धर्म सहाय ॥१८६४॥
सिया कहेरे ? फूल रहा क्यों, मेंढक ज्यों वर्षात।
तेरा गर्व मिटादे देवर, अब तक तू अज्ञात ॥१८६५॥
रावण कहता धर्म कर्म पे, दीनी ठोकर मार।
इतने दिन मैं था बन्धन में अब तुजपे हूँ वार ॥१८६६॥

सोचे रावण कब निशि बीते, कब होवे परभात ।
कब जीतूं मैं राम लखन को, कैसी आई रात ॥१८९५॥

॥ युद्ध में जाते रावण को अशकुन होना और मन्दोदरी का समझाना ॥

यों मन सोचत रात बिताई, होता उदय दिनेश ।
अब जा करना युद्ध राम से, सोचे लंक नरेश ॥१८९६॥
अस्त्र शस्त्र सज समर भवर में, जाने को हो त्यार ।
लेके दर्पण अपने मुख को, देखे दृष्टि पसार ॥१८९७॥
मुख नहिं दिखता जब दर्पण में, कहती तब पटनार ।
स्वामी जाओ ? नहीं युद्ध में, अशकुन हुए अपार ॥१८९८॥
पड़ती तब तलवार हाथ से, सीस मुकुट गिरजाय ।
ठोकर खाके गिरते नीचे, चोट विकट लगजाय ॥१८९९॥
मारग काट दिया मंजारी, सन्मुख होती छींक ।
फिर भी मन्दोदरी सुनाती, शकुन हुए नहिं ठीक ।१९००॥
भुजा जीमणी नेत्र फड़कते, राणी का उसवार ।
आकर आगे खड़ी कथ के, स्वामी सुनो पुकार ॥१९०१॥
दृष्टि न आया मुख दर्पण में, चलत गिरी तलवार ।
मुकुट सीस से पड़ा मही पे, काटा पथ मजार ॥१९०२॥
धड़क रहा दिल चैन नहीं है, सोच समझ कर आप ।
जाओ रण में शकुन देखके, फिर ना हो सन्ताप ॥१९०३॥

शयनालय में स्वप्न लिया मैं, सुनो नाथ ! प्राणेश ।
आज स्वप्न में विधवा होती, सिया लही रानेश ॥१९०४॥
ऐसा आया स्वप्न नाथजी ! अशकुन परतख आज ।
आप पधारो आज युद्ध में, कुशल नहीं पतिराज ॥१९०५॥
वीर शकुन नहिं गिनते प्यारी, रखे हाथ में प्राण ।
शस्त्र सटे सन्मुख सब शूरे, कायर कांपे जान ।१९०६॥
कैसे ! रोती प्रिय प्यारी ! तूं स्वप्न सत्य मतमान ।
हुआ स्वप्न में कोई राजा, जागे भूठ निदान ॥१९०७॥
अयवीरा क्यों ! बनती कायर, कायरता दरसाय ।
चढ़ें युद्ध में विजय प्राप्त हो, वीर भाव बतलाय ॥१९०८॥
अयपति ! अबतक एक न मानी, पहले भी अरदास ।
अब तो अन्तिम सुनो अर्ज को, करिये नहीं निराश ॥१९०९॥
कहे दशानन अयप्यारी ! अब, मानी तेरी बात ।
परदारा नागनसी काली, समझी अब साक्षात ॥१९१०॥
सिया सौंपना जा रघुवर को, निश्चय किया विचार ।
प्रथम उन्हें अपमानित करके, मेटे फिर तकरार ॥१९११॥
इस कारण में युद्ध करन को, जाता हूँ इस बार ।
बदल गया अब मेरा दिल तो, शिक्षा तेरी धार ॥१९१२॥
एक बात नहीं मानी किसकी, समझाते मन्त्रीश ।
उनको भी इस विध समझाया, मानो विश्वावीस ॥१९१३॥

समझाते समझे नहिं भूपति, आया आज विनाश ।
एक किसी की ध्यान न धरते, एक युद्ध की आश ॥१९१४॥

आखिरी युद्ध में रावण का जाना

उसी समय चल दिए समर में, सेना सजी अपार ।
रहे धुजाते गिरिगह्वर को उग्र देवता धार ॥१९१५॥
राक्षस दल आनन्दित होते, वीर देख नीज ईश ।
रण मुख आया सिंह केशरी, क्रोधित दैत्य खवीश ॥१९१६॥
प्रबल प्रतापी समझ आप को, किया नाद रणतूर ।
चूर चूर अब करें शत्रुदल, सब ही होय सनूर ॥१९१७॥
रावण राघव दोनों दल में, जोश चढ़ा जलपूर ।
हँस के बोला रावण अब ही, करे शत्रु दल चूर ॥१९१८॥
राम कहें देखें हम अब तो, किसका पुण्य सवाय ।
तेरा खूटा पुण्य जभी से, लाया नार चुराय ॥१९१९॥
मुझे चोर या ढोर बतादो, करूं आज इन्साफ ।
मुझे कहेगा चोर बाद में, उसका सिर हो माफ ॥१९२०॥
सन्मुख हो कर बोला निर्भय, तभी सुमित्रा लाल ।
राजा ! मेरे सन्मुख तेरा, आया काल कराल ॥१९२१॥
जो कुछ करना हो सो करलो, पुन. समय नहिं पाय ।
आखिर का ये युद्ध समझ लो, मन में नहिं रहजाय ॥१९२२॥

सोचे रावण कब निशि बीते, कब होवे परभात।
कब जीतूं म राम लखन को, कैसी आई रात ॥१८९५॥

॥ युद्ध में जाते रावण को अशकुन होना और मन्दोदरी का समझाना ॥

यों मन मोचत रात बिताई, होता उदय दिनेश।
अब जा करना युद्ध राम से, सोचे लङ्क नरेश ॥१८९६॥
अस्त्र शस्त्र सज समर नगर में, जाने को हो त्यार।
देखे दर्पण अपने मुख को, देखे दृष्टि पसार ॥१८९७॥
मुख नहिं दिखता जब दर्पण में, कहती तब पटनार।
स्वामी जाओ? नहीं युद्ध में, अशकुन हुए अपार ॥१८९८।
पड़ती तब तलवार हाथ से, सीस मुकुट गिरजाय।
ठोकर खाके गिरते नीचे, चोट बिकट लगजाय ॥१८९९॥
मारग काट दिया मजारी, सन्मुख होती छींक।
फिर भी मन्दोदरी सुनाती, शकुन हुए नहिं ठीक। १९००॥
सुनो जीमणी नेत्र फड़कते, राणी का डरवार।
आकर आगे खड़ी पथ के, स्वामी सुनो पुकार ॥१९०१॥
दृष्टि न आया मुख दर्पण में, चलत गिरी तलवार।
मुकुट सीस से पड़ा मही पे, काटा पथ मजार ॥१९०२॥
धड़क रहा दिल घन नहीं है, सोच समझ कर आप।
जाओ रण में शकुन उसके, फिर ना हो सन्ताप ॥१९०३॥
शयनालय में स्वप्न लिया मैं, सुनो नाथ! प्राणेश।
आज स्वप्न में विधवा होती, सिया लही रानेश ॥१९०४॥
ऐसा आया स्वप्न नाथजी! अशकुन परतख आज।
आप पधारो आज युद्ध मे, कुशल नहीं पतिराज ।'१९०५॥
वीर शकुन नहिं गिनते प्यारी, रखे हाथ मे प्राण।
शस्त्र सहे सन्मुख सब शूरे, कायर कम्पे जान ।१९०६॥
कैसे! रोती प्रिय प्यारी! तूं स्वप्न सत्य मतमान।
हुआ स्वप्न मे कोई राजा, जागे झूठ निदान ॥१९०७॥
अयवीरा क्यों! बनती कायर, कायरता दरसाय।
चढ़ें युद्ध में विजय प्राप्त हो, वीर भाव बतलाय ॥१९०८॥
अयपति! अबतक एक न मानी, पहले भी अरदास।
अब तो अन्तिम सुनो अर्ज को, करिये नहीं निराश ॥ ९०९॥
कहे दशानन अयप्यारी! अब, मानी तेरी बात।
परदारा नागनसी काली, समझी अब शाक्षात ॥१९१०,
सिया सोंपना जा रघुवर को, निश्चय किया विचार।
प्रथम उन्हें अपमानित करके, मेटे फिर तकरार ॥१९११।
इस कारण मे युद्ध करन को, जाता हूँ इस बार।
बदल गया अब मेरा दिल तो, शिक्षा तेरी धार ॥१९१२॥
एक बात नहीं मानी किसकी, समझाते मन्त्रीश।
उनको भी इस विध समझाया, मानो विश्वावीस ॥१९१३॥
समझाते समझे नहिं भूपति, आया आज विनाश।
एक किसी की ध्यान न धरते, एक युद्ध की आश ॥१९१४॥

आखिरी युद्ध में रावण का जाना

उसी समय चल दिए समर में, सेना सजी अपार।
रहे धुजाते गिरिगह्वर को ... देवता धार ॥१९१५॥
राक्षस दल आनन्दित होते, वीर देख नीज ईश।
रण मुख आया सिंह केशरी, क्रोधित दैत्य खवीश ॥१९१६॥
प्रबल प्रतापी समझ आप को, किया नाद रणतूर।
चूर चूर अब करें शत्रुदल, सब ही होय सनूर ॥१९१७॥
रावण राघव दोनों दल मे, जोश चढ़ा जलपूर।
हँस के बोला रावण अब ही, करे शत्रु दल चूर ॥१९१८॥
राम कहें देखें हम अब तो, किसका पुण्य सवाय।
तेरा खूटा पुण्य जभी से, लाया नार चुराय ॥१९१९॥
मुझे चोर या ढोर बतादो, करू' आज इन्साफ।
मुझे कहेगा चोर बाद मे, उसका सिर हो साफ ॥१९२०।
सन्मुख हो कर बोला निर्भय, तभी सुमित्रा लाल।
आजा! मेरे सन्मुख तेरा, आया काल कराल ॥१९२१॥
जो कुछ करना हो सो करलो, पुन. समय नहि पाय।
आखिर का ये युद्ध समझ लो, मन मे नहिं रहजाय ॥१९२२॥

सभी ठोरके रावण, मारे छोड़ २ के बाण।
वानर सेनान भी अपना, चलका दे उत्थान ॥१६५२॥
मूल रूप जब हुआ दशानन, चला न कुछ प्रतिकार।
थीता रावण पुण्य जिन्हास, सब विधिहो बेकार ॥१६५३॥

॥ रावणका चक्र लक्ष्मणके हाथपे बैठना ॥

एक शस्त्र रखा भरोसा उसके शिवा न और।
अब छुटे उसकी नहि चिंता, दिलके भाव कठोर ॥१६५४॥
चक्रसुदर्शन सुमरा रावण, जो था आयुध शाल।
एक सेन सुर रजा करते, शस्त्र बड़ा विकराल ॥१६५५॥
चक्रसुदर्शन आया झटपट, रावण हुआ खुशाल।
हाथ उठाया चक्रसुदर्शन, फेरे अगुल डाल ॥१६५६॥
[illegible] ज्यों पलकारा होता, तरड तरड आवाज।
[illegible] टिकतो नहीं सामने, मेघ रहा ज्यों गाज ॥१६५७॥
वर्णन होता नहीं उसीका, भीम भयानक रूप।
देख सभी घबराए उसको, सुग्री वानिक भूप ॥१६५८॥
वानर सेना उसी शस्त्रपे छोड़ा बाण अनेक।
कुछ हानी नहि पहुची उसको, भय पाए सब देख ॥१६५९॥
सभी निराशा होते मनमें, हो लषमणका नाश।
टाला जाता नहीं शस्त्र ये, सबको था विश्वाश ॥१६६०॥

राघव अरु भामडल कपे, सुमरण श्रीनवकार।
मन वच काया ध्यान लगाया, राघव दल उसवार ॥१६६१॥
चक्र चलाया रावण तब तो, नभमें हुआ प्रयाण।
लषमणके ढिग उडके आया, खड़ा सीसपे आन ॥१६६२॥
हाहाकार हुआ कपिदलमें, होनहार बलवान।
सबको भय था लषमणके अब, निकल जायगें प्राण ॥१६६३॥
देख चक्र तब कहा लखनने, हो तुम नीति निधान।
बैठो मेरे हाथ आनके, कर मच्चे की छान ॥१६६४॥
जो हम नीति पथसे हटते, बेशक लहिये प्राण।
सच्चे के सब होय सहायक, सत्य एक भगवान ॥१६६५॥
वासुदेव लषमणको जाना, देय प्रदक्षण तीन।
बैठा दक्षिण हाथ आयके, हुआ लखन आधीन ॥१६६६॥

॥आखिरी रावणका पछताना ॥

जिसके पुण्य सखाई होते, वैरी हितु हो जाय।
किया काम नहिं दशकधरका, वैरी पास सिधाय ॥१६६७॥
घबराया दशकधर तबतो, दिलमें किया विचार।
एक साधुने प्रथम कहाथा, मिला जोग इसवार ॥१६६८॥
परनारी से मरना होगा, होती व्यथा अपार।
फूटगई तकदीर हमारी, मिला लाख धिक्कार ॥१६६९॥

प्रथम विभीषणने समझाया, नहिं मानी मैं बात।
उलटा उसको दुःख दियामें, छाया मन उसात ॥१६७०॥
समझाया मुजको मत्रीने, उनको दुश्मन जान।
राणी मंदोदरी बातपे, दिया न कुछ भी ध्यान ॥१६७१॥
सीता लाया काम बना नहिं, हुआ जगत बदनाम।
भाई बेटे पडे कैदमे, विगड़ा काम तमाम ॥१६७२॥
मेरी वेरण शूर्पनखाने, कहा सिन्ना का रूप।
मोह मुग्ध हो गया लेनको, पडा प्रेमके कूप ॥१६७३॥
होता मुजको प्रथम ख्याल ये, नहि करता कब-काम।
विपदा सिर नहिं आती मेरे, पाता सब आराम ॥१६७४॥
अमोघ विजया बहुत रूपणी, विद्या जाती छोड़।
चक्रसुदर्शन गया हाथसे, किसपे मेरी दोड ॥१६७५॥
अधिक पुण्य है राम लखन के, बेशक जाना आज।
राणी बैन मिले सब सांचे, जो थी आन्त अवाज ॥१६७६॥

॥ रावणको आखिरी रामलक्ष्मणका समझाना॥

रावण चितामें लख बोले, लषमण सोच विचार।
कहो लंकपति? सोच रहे क्या, कुलका अब आचार ॥१६७७॥
सब ही शक्ति गमा कर बैठे, फिर कुटुम्ब से वैर।
चक्रसुदर्शन ने भी चाही, नही आपकी खैर ॥१६७८॥

चाक चला आया रावण तट, हुआ क्रोधमें जोश।
रावण मुक्का ऐक लगाया, ताक़त भरके रोप ॥२००७॥
खंड हुए दो उसी चक्रके, फिर आए दो पास।
दोनों को तब-जोय हाथसे, करते चक्र विनाश ॥२००८॥
हुए चक्रके चार खंड तब, निकलो चक्री एक।
पुण्य विना कुछ काम न आता, करिये यत्न अनेक ॥२००६॥
लगी फठके चक्री आकर, दीना सीस उतार।
समर भूमिके रक्त रगम, सोया पांव पसार ॥२०१०॥
जेष्ट कृष्णकी ग्यारस जाने, दिनका था तब अत।
आयुक्षय कर मरण चतुर्दश, पाप उदय अत्यत ॥२०११॥
गए नर्क चौथीमें मरके, निज कृत फलको पाय।
एक नारके इज्जत खोई, दीने प्राण गमाय ॥२०१२॥
जय जयकार करे सुर नभम, पुष्प वृष्टि वर्षाय।
विजय हुई है रामलखनकी, जगत दिव्य यश छाय ॥२०१३॥
गए प्राण प्रतिवासुदेव के, वासुदेवके हाथ।
रामचन्द्र बलदेव कहाते पुण्य पुञ्ज है साथ ॥२०१४॥
धन्य सियाजी शील धर्मको, पाला खूब अखड।
धन्य लखनजी अन्याईको, दीना दृढ प्रचड। २०१५॥
धन्य पवनसुत सिया खबर ली, कीना काम कमाल।
धन्य २ हे सभी वीरको, धरी सत्यकी ...

मगल छाया राघव दलमें, जय जय रहें पुकार।
रावण मरने बाद दैत्य दल, हो भयभीत-अपार ॥२०१७॥
भाग रहे दश दिशिमें सारे, खाना पीना भूल।
जोर २ स्वामी हित रोते, जाता जीवन मूल ॥२०१८॥
दिया दिलासा वीर विभीषण, धरो न मनमें त्रास।
निजी समक्ष विश्वाश लाय के, गए विभीषण पास॥२०१६॥
सब जन पाए पास रामके नमते, सीस झुकाय।
दिया अतुल विश्वाश रामने, लेते कठ लगाय ॥२०२०॥

॥ रावण विरहमें विभीषणका विलाप ॥

पड़ा जमींपे भ्राता लखके, होता कष्ट महान।
चिन्ता करने लगे विभीषण, हा भाई ? सुन गाथा ॥२०२१॥
जोर जोरसे रुदन मचाया, छोट गया मुझ भ्रात।
सदा लिए अब हुई जुदाई, जन्मे एक ही मात ॥२०२२॥
बिन भ्राताके सूना जगये, मरता लक्ष्मण हाथ।
लाख सुनाया वचन भ्रात हित रखा न मुजको साथ ॥२०२३॥
अरे वीर तेरी शक्तीसे, हिलता महि आकाश।
कहां छिपे तन छोड़ सिधाके, था तुम का विश्वाश ॥२०२४॥
बिना भ्रात के जिंदा रहना, जीवन सब बेकार
कमरसे, मरना चहा तिवार ॥२०२५॥

पकड़ा करको रघुवर आके, दिया धैर्य हो शान्त।
अहो बुद्धिवर ? यह क्या करते, अन होनी एकान्त॥१०२६॥
हाल एकदिन सबका ऐसा, अपनी अपनी वार।
कोई जगमें स्थिर नहिं रहता, छोड़ो समझ कहार ॥२०२७॥
रोने धोने से क्या होता होना वह हो जाय।
चिंता निर्थक करके भारी, पाप पुज बढजाय ॥२०२८॥
रणभूमिमें योद्धे मरते पीछे धरे न पैर।
इतना था सयोग तुम्हारे, चहो भ्रातकी खेर ॥२०२६॥
रणभूमि में देवों को भी, दीनी इनने हार।
लीनी अपनी टेक निभाई, कीना मरण स्विकार ॥२०३०॥
जीते जबतक सिया न दीनी, रखा अखंडित मान।
नाम अमर अपना कर जगमें, दिया समरमें प्राण ॥२०३१॥
धरा विभीषण धैर्य शान्त मन, सुना राम उपदेश।
चरणोंमें तब सीस झुकाया, समझ राम परमेश ॥२०३२॥
कहे विभीषण अययोद्धो ? तुम, क्यों डरते भय खाय।
राम लखन वैरी नहिं अपने, देखो सीस झुकाय ॥२०३३॥
नर उत्तमये वैरी पर भी, करते दया विशेष।
तुम हम रघुवर दास कहाते, रखो भर्म मत लेश ॥२०३४॥
नहीं राजकी इनके इच्छा, वृथा हुआ ये जंग।
सीताको यदि रावण देते, होता मगल रंग ॥१०३५॥

चक्र चला आया रावण तट, हुआ क्रोधमें जोश ।
रावण मुक्का ऐंठ लगाया, ताकत भरके रोष ॥२००७॥
खंड हुए दो उसी चक्रके, फिर आए दो पास ।
दोनों को तब दोय हाथसे, करते चक्र विनाश ॥२००८॥
हुए चक्रके चार खंड तब, निकलो चक्री एक ।
पुण्य विना कुछ काम न आता, करिये यत्न अनेक ॥२००९॥
लगी कठके चक्री आकर, दीना सीस उतार ।
समर भूमिके रक्त रंगमें, सोया पांव पसार ॥२०१०॥
जेठ कृष्णकी ग्यारस जाने, तिनका था तब अंत ।
आयुक्षय कर सहस्र चतुर्दश, पाप उदय अत्यंत ॥२०११॥
गए नर्क चौथीमें मरके, निज कृत फलको पाय ।
एक नारसे इज्जत खोई, दीने प्राण गमाय ॥२०१२॥
जय जयकार करे सुर नभमें, पुष्प वृष्टि वर्षाय ।
विजय हुई है रामलखनकी, जगत दिव्य यश छाय ॥२०१३॥
गए प्राण प्रतिवासुदेव के, वासुदेवके हाथ ।
रामचन्द्र बलदेव कहाते, पुण्य पुंज है साथ ॥२०१४॥
धन्य सियाजी शील धर्मको, पाला खूब अखंड ।
धन्य लखनजी अन्याईको, दीना दंड प्रचंड ।२०१५॥
धन्य पवनसुत सिया खबर ली, कीना काम कमाल ।
धन्य २ है सभी वीरको, धरी सत्यकी ढाल ॥२०१६॥

मंगल छाया राघव दलमें, जय जय रहैं पुकार ।
रावण मरने बाद दैत्य दल, हो भयभीत अपार ॥२०१७॥
भाग रहे दश दिशिमें सारे, खाना पीना भूल ।
जोर २ स्वामी हित रोते, जाता जीवन मूल ॥२०१८॥
दिया दिलासा वीर विभीषण, धरो न मनमें त्रास ।
निजो समझ विश्वास लाय के, गए विभीषण पास॥२०१९॥
सब जन आए पास रामके नमते, सीस झुकाय ।
दिया अतुल विश्वास रामने, लेते कंठ लगाय ॥२०२०॥

॥ रावण विरहमें विभीषणका विलाप ॥

पड़ा जमींपे भ्राता लखके, होता कष्ट महान ।
चिन्ता करने लगे विभीषण, हा भाई ? सुन प्राण ॥२०२१॥
जोर जोरसे रुदन मचाया, छोट गया मुझ भ्रात ।
सदा लिए अब हुई जुदाई, जन्मे एक ही मात ॥२०२२॥
बिन भ्राताके सूना जगये, मरता लक्ष्मण हाथ ।
लाख सुनाया वचन भ्रात हित रखा न मुझको साथ ॥२०२३॥
अरे वीर तेरी शक्तीसे, हिलता महि आकाश ।
कहां छिपे तन छोड सिधाके, था तुम का विश्वास ॥२०२४॥
विना भ्रात के जिंदा रहना, जीवन सब बेकार
तुरत कटारी खोल कमरसे, मरना चहा तियार ॥२०२५॥

पकड़ा करको रघुवर आके, दिया धैर्य हो शान्त ।
अहो युधिवर ? यह क्या करते, अब होनी एकान्त॥१०२६॥
हाल एकदिन सबका होगा, अपनी अपनी वार ।
कोई जगमें स्थिर नहिं रहता, छोडो समझ करार ॥२०२७॥
रोने धोने से क्या होता होना वह हो जाय ।
चिंता निर्थक करके भारी, पाप पुंज बढजाय ॥२०२८॥
रणभूमिमें योद्धे मरते पीछे धरे न पैर ।
इतना था सयोग तुम्हारे, चहो भ्रातकी खैर ॥२०२९॥
रणभूमि में देवों को भी, दीनी इनने हार ।
लीनी अपनी टेक निभाई, कीना मरण स्विकार ॥२०३०॥
जीते जबतक सिया न दीनी, रखा अखंडित मान ।
नाम अमर अपना कर जगमें, दिया समरमें प्राण ॥२०३१॥
धरा विभीषण धैर्य शान्त मन, सुना राम उपदेश ।
चरणोंमें तब सीस झुकाया, समझ राम परमेश ॥२०३२॥
कहै विभीषण अययोद्धौ ? तुम, क्यों डरते भय खाय ।
राम लखन वैरी नहिं अपने, देओ सीस झुकाय ॥२०३३॥
नर उत्तमये वैरी पर भी, करते दया विशेष ।
तुम हम रघुवर दास कहाते, रखो भर्म मत लेश ॥२०३४॥
नहीं राजकी इनके इच्छा, वृथा हुआ ये जंग ।
सीताको यदि रावण देते, होता मंगल रंग ॥१०३५॥

चक्र चला आया रावण तट, हुआ - क्रोधमें जोश ।
रावण मुक्का एक लगाया, ताकत भरके रोष ॥२००७॥
खंड हुए दो उसी चक्रके, फिर आए दो पास ।
दोनों को तब दोय हाथसे, करते चक्र विनाश ॥२००८॥
हुए चक्रके चार खंड तब, निकलो चक्री एक ।
पुण्य बिना कुछ काम न आता, करिये यत्न अनेक ॥२००९॥
लगी फटके चक्री आकर, दीना सीस उतार ।
समर भूमिके रक्त रयभ, सोया पांव पसार ॥२०१०॥
जेठ कृष्णकी ग्यारस जाने, तिनका था तब अत ।
आयुष्य कर सहस चतुर्दश, पाप उदय अत्यंत ॥२०११॥
गए नर्क चौथीमें गरके, निज कृत फलको पाय ।
एक नारसे इज्जत खोई, दीने प्राण गमाय ॥२०१२॥
जय जयकार करे सुर नभमें, पुष्प वृष्टि वर्षाय ।
विजय हुई है रामलखनकी, जगत दिव्य यश छाय ॥२०१३॥
गए प्राण प्रतिवासुदेव के, वासुदेवके हाथ ।
रामचन्द्र बलदेव कहाते, पुण्य पुंज है साथ ॥२०१४॥
धन्य सियाजी शील धर्मको, पाला खूब अखंड ।
धन्य लखनजी अन्याईको, दीना दंड प्रचंड ॥२०१५॥
धन्य पवनसुत सिया खबर ली, कीना काम कमाल ।
धन्य २ है सभी वीरको, धरी सत्यकी ढाल ॥२०१६॥

मंगल छाया राघव दलमें, जय जय रहैं पुकार ।
रावण मरने बाद दैत्य दल, हो भयभीत-अपार ॥२०१७॥
भाग रहे दश दिशिमें सारे, खाना पीना भूल ।
जोर २ स्वामी हित रोते, जाता जीवन-मूल ॥२०१८॥
दिया दिलासा वीर विभीषण, धरो न मनमें त्रास ।
निजो समक्ष विश्वाश लाय के, गए विभीषण पास ॥२०१९॥
सब जन आए पास रामके नमते, सीस झुकाय ।
दिया अतुल विश्वाश रामने, लेते कंठ लगाय ॥२०२०॥

॥ रावण विरहमें विभीषणका विलाप ॥

पडा जमींपे भ्राता लखके, होता कष्ट महान ।
चिन्ता करने लगे विभीषण, हा भाई ? मुज प्राण ॥२०२१॥
जोर जोरसे रुदन मचाया, छोड गया मुझ भ्रात ।
सदा लिए अब हुई जुदाई, जन्मे एक ही मात ॥२०२२॥
बिन भ्राताके सूना जगये, मरता लक्ष्मण हाथ ।
लाख सुनाया वचन भ्रात हित रखा न मुजको साथ ॥२०२३॥
अरे वीर तेरी शक्तीसे, हिलता महि आकाश ।
कहां छिपे तन छोड सिधाके, था तुम का विश्वाश ॥२०२४॥
बिना भ्रात के जिंदा रहना, जीवन सब बेकार
तुरत कटारी खोल कमरसे, मरना चहा तिवार ॥२०२५॥

पकडा करको रघुवर आके, दिया धैर्य हो शान्त ।
अहो बुद्धिवर ? यह क्या करते, अन होनी एकान्त ॥१०२६॥
हाल एकदिन सबका ऐसा, अपनी अपनी वार ।
कोई जगमें स्थिर नहिं रहता, छोडो समझ कटार ॥२०२७॥
रोने धोने से क्या होता, होना वह हो जाय ।
चिंता निर्थक करके भारी, पाप पुंज बढजाय ॥२०२८॥
रणभूमिमें योद्धे मरते पीछे धरे न पैर ।
इतना था सयोग तुम्हारे, चहो भ्रातकी खेर ॥२०२९॥
रणभूमि में देवों को भी, दीनी इनने हार ।
लीनी अपनी टेक निभाई, कीना मरण स्विकार ॥२०३०॥
जीते जबतक सिया न दीनी, रखा अखंडित मान ।
नाम अमर अपना कर जगमें, दिया समरमें प्राण ॥२०३१॥
धरा विभीषण धैर्य शान्त मन, सुना राम उपदेश ।
चरणोंमें तब सीस झुकाया, समझ राम परमेश ॥२०३२॥
कहै विभीषण अययोद्धों ? तुम, क्यों डरते भय खाय ।
राम लखन वैरी नहिं अपने, हेओ सीस झुकाय ॥२०३३॥
नर उत्तमये वैरी पर भी, करते दया विशेष ।
तुम हम रघुवर दास कहाते, रखो भर्म मत लेश ॥२०३४॥
नहीं राजकी इनके इच्छा, वृथा हुआ ये जंग ।
सीताको यदि रावण देवे, होता मंगल रंग ॥१०३५॥

विषम विपत विष दाई इससे, रहना सबको दूर।
उदाहरण ये सो प तख, करते ज्ञानी शूर ॥२०६४॥
अगर तगर घनसार अगंजा, उसमें भरा शरीर।
दहन किया विधि करे सर्व मिल राम लखन नर वीर॥२०६५॥
आए आखिर स्थान आपके, चिंता चित्त विडार।
पूर्ण हुआ यों रावण वध का, राम विजय अधिकार ॥२०६६॥

॥ राम विजय से लंका में आनन्द ॥

जीते रघुपति दशकंधर को अ लषमण गुणवंत।
सत्य शील से विजय हुई है महिमा शील अनंत ॥२०६७॥
पुरजन घर घर मंगल गावे, घर घर तोरण माल।
घर घर गूढी गेंद उछाले, घर घर दीप रसाल ॥२०६८॥
घर घर गाते जीत नकारा, गुणियों के गुण गान।
धन्य सिया अरु धन्य रामजी, लच्मण धन्य महान ॥२०६९॥
शील न छोड़ा यद्यपि सीता, रहते रावण तीर।
इस कारण से धन्य सिया है, निर्मल गंगा नीर ॥२०७०॥
रखी हठीला से हठ अपनी, रखा त्रिया से प्यार।
इस कारणसे धन्य रामजी, पर उपकार उदार ॥२०७१॥
धोका काटा था सब जन का, अभिमानी सिरदार।
धन्य लखन इस कारण कीना, रावण का संहार ॥२०७२॥

सूर्योदय के समय सभी को, राघव लिये बुलाय।
आप्र विभीषण बैठे नजके, आज्ञा क्या ? फरमाय ॥२०७३॥
धीर वीर गंभीर राम ने, सबसे कहा सुनाय।
भूप विभीषण करो लंक का, सब जन प्रेम बढ़ाय ॥२०७४॥
मृत्यु दशा को हुए दशानन, राज काज का भार।
डार गए तुमके ऊपर, करो नीति व्यवहार॥२०७५॥
रावण जैसा सुयश कमाके, करो विश्व में नाम।
कुंभकरण अरु इन्द्रजीत ये सुनिये बात तमाम॥२०७६॥
निज निज राज करो सब जाके, आज्ञा लषमण धार।
पहले जैसे प्रजा पालिये, सुख से निज निज द्वार ॥२०७७॥
सभा मिष्ट मधु वचन वधकर, नैना नीर बहाय।
सभी सभा संतोष युक्त हो, सुना वचन रघुराय ॥२०७८॥

॥ कुंभकरण का दीक्षित होना ॥

कुंभकरण तब उठकर बोले हाथ जोड़ सिरनाय।
गद गद वाणी कहैं विनययुत, सुनिये श्री रघुराय ॥२०७९॥
राज काज की है नहि इच्छा, दुख पूरित संसार।
देख लिया हमने आँखों से, कुछ नहिं पाया सार ॥२०८०॥
तीर्थंकर अरु चक्रवर्त भी, त्यागे जगत असार।
मिले न बारबार मनुज भव, सुर दुर्लभ अवतार ॥२०८१॥

शिव साधन हित काम करेंगे, छोड़ जगत जंजाल।
मोक्ष नगर में पांव धरेंगे, मेटें काल कराल ॥२०८२॥

॥ इन्द्रजीत और मेघवाहनका वैराग्य ॥
और उनके पूर्व भवका जिकर ॥

उसी समय कुसुमायुध वनमें, उग्र सजमी शूर।
अप्रमेयबल मुनिवर आए, करें कम मल दूर ॥२०८३॥
उसी रात्रि में कर्म हटाके, पाए केवल ज्ञान।
ज्ञानोत्सव के कारण आए, सुरकोटी उस स्थान ॥२०८४॥
प्रात समयमें रामलखन अरु, कुंभकरण भी साथ।
आए मुनि तट दर्शन कारण, अन्य साथ नर नाथ ॥२०८५॥
अस्थिर जग रचना दरशाई, मुनिवर दे उपदेश।
तब जग संजम सार दिखाया, पावें सुर शिव ऐश ॥२०८६॥
केवल ज्ञानी की सुन वाणी, प्राणी हुए हुलास।
विषया भविका हृदय दयामय, झूठा जग विश्वास ॥२०८७॥
इन्द्रजीत घनवाहन दिलमें, होता प्रबल विराग।
इन्द्रजीत करजोड़ कहैं तब, सुनिये गुरु बड़ भाग ॥२०८८॥
हे प्रभु ? मेरा पूर्व जन्म का, हाल कहो समझाय।
ज्ञानी उत्तम प्राणी ज्ञानी, पूर्व हाल बतलाय ॥२०८९॥
कौशांबीनगरी में निर्धन, थे तुम दोनों भ्रात।
प्रथम और पश्चिम नामक थे, हुए नगर विख्यात ॥२०९०॥

॥ रामका लंकामें प्रवेश ॥

कहे विभीषण अब लंकामें, चलिये श्री रघुराय।
भुवनालंकृत गज सजवा के, राम पास में लाय ॥२११६॥
राम सिया बैठे हाथीपे, और सुमित्रानंद।
रत्नत्रय की जोड़ सुशोभित, देख लजें सुर इन्द ॥२१२०॥
लंका नगरी को सिनगारे, तोरण मण्डप स्थंभ।
घर २ ललना गीत गावती, गुंजित रवसे अभ ॥२१२१॥
श्रेष्ट समयमें लंकापुरमें, करते राम प्रवेश।
चतुरंगी सेना थी भारी, जैसे शक्र सुरेश ॥२१२२
गोख २ में वनिता बैठी, देखे छटा रमेश।
दर्शन कर सब जन हर्षाते, पुरमें मोद विशेष ॥२१२३॥
दीन हीन अरु याचक जनको, दिया मेघवत् दान।
कारागृहसे कैदी छोड़े, सज्जनको सन्मान ॥२१२४॥
करे प्रजाजन स्वागत राघव, जय २ नाद सुछन्द।
परोपकारी धन्य धन्य तुम कौशल्या के नन्द ॥२१२५॥
धन्य हमारा भाग्य प्रबलवर, आज दर्श शुभ पाय।
लंकागढ़ को पावन कीना, हम सब रहें बधाय ॥२१२६॥
नाथ हमारे बनिये स्वामिन्‌ ? धरो सीसपेहाथ।
आश्वासन दीजे जनता को, रखो शरणमें नाथ ? ॥२१२७॥

सच्चे भ्राता लखन आपके, धीर वीर गम्भीर।
सभी समयपे सेवा साधी, सहके कष्ट शरीर ॥२१२८॥
राज महिलमें पहुँचे रघुवर, खास राज दरबार।
रत्नजड़ित के सिंहासन पे, विठलाए उसवार ॥२१२६॥
पदाधिकारी बैठ गए हैं, अपने अपने स्थान।
नाटक होते मंगल गाते, राग रंग गुलतान ॥२१३०॥

॥ विभीषणका राज्याभिशेक ॥

श्रेष्ट समय सब समक्ष विभीषण, खड़े हुए उसवार।
सभी सभा के सन्मुख अपना, कहते मन उद्गार ॥२१३१॥
नमन किया रघुवरको पहले, कोमल बैन उचार।
हे स्वामी ? अब इस लंकाके, बनो आप भरतार ॥२१३२॥
रावण की ठकुराई सारी, आप करो स्वाधीन।
राज तिलक अभिशेक करे हम, जबहो पूर्ण यकीन ॥२१३३॥
हीरा पन्ना मणि माणिक ये, जेवर रत्न जड़ाव।
भरे खजाने धनके सारे, धरिये इसपे भाव ॥२१३४॥
हयगय रथ पट भूषण विध विध, हम हैं तावेदार।
सब राजों की यह इच्छा है, बनो लंक सरदार ॥२१३५॥
प्रेम विभीषणका लख राघव, हँसकर बोले बैन।
एक हमारी बात समझलो, रहे अखण्डित ऐन ॥२१३६॥

पहले वचन दिया था हमने, वही निभाना आज।
बैठो आकर आप सिंहासन, धरो लंकका ताज ॥२१३७॥
मित्र ? तुम्हींने मेरे कारण, अर्पण किया शरीर।
राज ताज क्या ? है बढ़करके, समझो मेरे वीर ॥२१३८॥
हाथ पकड़ के सिंहासन पे, बैठाये रघुराय।
किया तिलक खुदराम हाथसे, मंगल नाद बजाय ॥२१३६॥
आमंत्रण भोजन का देते, आग्रह किया सवाय।
द्वारे विभीषण राम पधारे, पूरण प्रेम जनाय ॥२१४०॥
सहस स्थंभ आवास शोभता, करे गगनसे नाद।
रावण के ये महिल अनोपम, देखत मिटे विषाद ॥२१४१॥
नाना विध भोजन बनवाए, जिनका नाम अनेक।
खुद हाथों से राय विभीषण, भोजन धरे विवेक ॥२१४२॥
रुच रुच करके भोजन खाया, बाद दिया तम्बोल।
परिजन को पहिराए अम्बर, मौक्तिक हार अमोल ॥२१४३॥
इन्द्र भवन में राम इन्द्र सम, सुखसे करे निवास।
निज परिजनके साथ रहे नित भोगे भोग विलास ॥२१४४॥
सिंहोदर आदिक सब राजा, कन्या निज परणाय।
कितनी राघव को परणाई, कितनी लक्ष्मण राय ॥२१४५॥
इन्द्र स्वर्ग सम सुखको भोगे, बीते तब षट् वर्ष।
राघव दर्शनकी माताको, इच्छा हो उत्कर्ष ॥२१४६॥

करे गर्भ से पालन पोषण, दोष गर्भ के टाल।
सुत हित देती प्राण कुरंगी, गिये सिंह को श्याल ॥२१७५।
माता गंगा माता जमुना, माता तीर्थ स्वरूप।
माता जग में बड़ी कहाती, माता दया अनूप ॥२१७६॥
देर करोगे मात मिलन में, तो तज देगी प्राण।
सोच करना फर्ज आपका, आप बड़े विद्वान ॥२१७७॥
नारद से कहते रघुवरजी, सत्य आपके बैन।
मेरी भी यह इच्छा कब की, दिल नहिं पाता चैन ॥२१७८॥

अयोध्या की ओर राम का प्रस्थान

तुरत राम ने बुला वभीषण, कहा उन्हें सब हाल।
हम जावेंगे माता दर्शन, सुनो लंक भूपाल ॥२१७९॥
देओ हमको आज्ञा अब तो, नहीं देर का काम।
नहिं भूले उपकार आपका, जितने किये तमाम ॥२१८०॥
करो कुशल से राज लंक का, यह मेरी आशीष।
अब माता के चरण शरण में, धरे तुरत से शीस ॥२१८१॥
पूर्ण आपकी भक्ति द्वारा, अधिक बिताया काल।
बहुत यहाँ रहने से होगा, माता हाल विहाल ॥२१८२॥
प्रिय वाणी सुन तभी विभीषण, आया नैना नीर।
जाने का क्या ? कहा आपने, लगा हृदय में तीर ॥२१८३॥

हे प्रभु! निश्चय मिलो मात से, पूरो मन की आश।
किन्तु हमारी एक विनय सुन, दीजे कुछ विश्वाश ॥२१८४।
सोलह दिन तक नाथ यहाँ पे, करो आप विश्राम।
बहुत गई, मांगा नहिं कुछ भी, सोचा मैंने काम ॥२१८५॥
इन्द्रपुरी सम अवध बनाऊं, होय अयोध्या लंक।
कारीगर लंका से भेजूं, जो हो चातुर,बंक ॥२१८६॥
पन्द्रह दिन में हो जावेगी, सब विधि से तैयार।
चलते बाद विमान आप हम, साथ सभी दरबार ॥२१८७॥
लीनी रघुवर मान बात को, खुश होते लंकेश।
भेजे कारीगर लंका से, करते काम विशेष ॥२१८८।
उधर अयोध्या नारद जाते, देते सब संदेश।
होती खुश कौशल्या माता, मन का मिटा कलेश ॥२१८९॥

॥ रामसे भरत और माताओंका मिलाप ॥

दिवस सोलवें पुष्पक नामा, सज्जित किया विमान।
सभी राणियां राम लखन युत, बैठे इन्द्र समान ॥२१९०॥
चलते तब सुग्रीव विभीषण, भामडयल हनुमान।
रघुवर पहले आप चले हैं, अपने बैठ विमान ॥२१९१॥
प्रथम अयोध्या में जा पहुँचे, सबको कहा सुनाय।
सब जन सुन मन मुदित हुए हैं, गया हर्ष मन छाय ॥२१९२॥

भरत भूप तब पवनपुत्र को, लेते गले लगाय।
शुभ संदेशा परम सुनाया, तुम गुण कहा न जाय ॥२१९३॥
स्वागत हित सब करे तयारी, सेना सर्व सजाय।
चले नगर के बाहर हिल मिल, हर्ष नीर वर्षाय ॥२१९४॥
भरत भूप के दिल में उमड़ा, प्रेम प्रेम मस्तान।
हाथी पर से उतरे, भ्राता, देखा जभी विमान ॥२१९५॥
देख भरत को राम तुरत से, नीचा लिया विमान।
छुप नहिं सकता प्रेम परस्पर, भ्राता भाव महान ॥२१९६॥
उतर यान से राम तुरत ही, गए भरत के पास।
उधर भरत शत्रुघ्न ने आकर, नमन किया सोल्लास ॥२१९७॥
राम लखन जब भरत उठाके, लेते गले लगाय।
मस्तक फेरा हाथ प्रेम से, दे सन्मान सवाय ॥२१९८॥
शत्रुघ्न को भी इसी तरह से, बहुत दिया सन्मान।
खुशी यथा हो मिला रंक को, सहसा आय निधान ॥२१९९॥
राम लखन अरु भरत शत्रुघ्न, बैठे एक विमान।
दान शील तप भाव चार से, शोभित ज्यों सुलतान ॥२२००॥

॥ रामका अयोध्यामें प्रवेश ॥

प्रथम अयोध्या सिनगारी थी, फिर भी सब सजवाय।
पुष्प सुगन्धित पथ में डाला, धूप गंध प्रकटाय ॥२२०१॥

करे गर्भ से पालन पोषण, दोष गर्भ के टाल।
सुत हित देती प्राण कुरंगी, गिये सिंह को श्याल ॥२१७५।
माता गंगा माता जमुना, माता तीर्थ स्वरूप।
माता जग में बड़ी कहाती, माता दया अनूप ॥२१७६॥
देर करोगे मात मिलन में, तो तज देगी प्राण।
सोच करना फर्ज़ आपका, आप बड़े विद्वान ॥२१७७॥
नारद से कहते रघुवरजी, सत्य आपके बैन।
मेरी भी यह इच्छा कब की, दिल नहिं पाता चैन ॥२१७८॥

अयोध्या की ओर राम का प्रस्थान

तुरत राम ने बुला वभीषण, कहा उन्हें सब हाल।
हम जावेंगे माता दर्शन, सुनो लंक भूपाल ॥२१७९॥
देओ हमको आज्ञा अब तो, नहीं देर का काम।
नहिं भूले उपकार आपका, जितने किये तमाम ॥२१८०॥
करो कुशल से राज लंक का, यह मेरी आशीष।
अब माता के चरण शरण में, धरे तुरत से शीस ॥२१८१॥
पूर्ण आपकी भक्ति द्वारा, अधिक बिताया काल।
बहुत यहाँ रहने से होगा, माता हाल विहाल ॥२१८२॥
प्रिय वाणी सुन तभी विभीषण, आया नैना नीर।
जाने का क्या ? कहा आपने, लगा हृदय में तीर ॥२१८३॥

हे प्रभु! निश्चय मिलो मात से, पूरो मन की आश।
किन्तु हमारी एक विनय सुन, दीजे कुछ विश्वाश ॥२१८४।
सोलह दिन तक नाथ यहाँ पे, करो आप विश्राम।
बहुत गई, माँगा नहिं कुछ भी, सोचा मैंने काम ॥२१८५॥
इन्द्रपुरी सम अवध बनाऊं, होय अयोध्या लंक।
कारीगर लंका से भेजू, जो हो चातुर,बक ॥२१८६॥
पन्द्रह दिन में हो जावेगी, सब विधि से तैयार।
चलते बाद विमान आप हम, साथ सभी दरबार ॥२१८७॥
लीनी रघुवर मान बात को, खुश होते लंकेश।
भेजे कारीगर लंका से, करते काम विशेष ॥२१८८।
उधर अयोध्या नारद जाते, देते सब सदेश।
होती खुश कौशल्या माता, मन का मिटा कलेश ॥२१८९॥

॥ रामसे भरत और माताओंका मिलाप ॥

दिवस सोलवें पुष्पक नामा, सज्जित किया विमान।
सभी रानियाँ राम लखन युत, बैठे इन्द्र समान ॥२१९०॥
चलते तब सुग्रीव बिभीषण, भामण्डल हनुमान।
रघुवर पहले आप चले हैं, अपने बैठ विमान ॥२१९१॥
प्रथम अयोध्या में जा पहुँचे, सबको कहा सुनाय।
सब जन सुन मन मुदित हुए हैं, गया हर्ष मन छाय ॥२१९२॥

भरत भूप तब पवनपुत्र को, लेते गले लगाय।
शुभ सदेशा परम सुनाया, तुम गुण कहा न जाय ॥२१९३॥
स्वागत हित सब करे तयारी, सेना सर्व सजाय।
चले नगर के बाहर हिल मिल, हर्ष नीर वर्षाय ॥२१९४॥
भरत भूप के दिल में उमड़ा, प्रेम प्रेम मस्तान।
हाथी पर से उतरे, भ्राता, देखा जभी विमान ॥२१९५॥
देख भरत को राम तुरत से, नीचा लिया विमान।
छुप नहिं सकता प्रेम परस्पर, भ्राता भाव महान ॥२१९६॥
उतर यान से राम तुरत ही, गए भरत के पास।
उधर भरत शत्रुघ्न ने आकर, नमन किया सोल्लास ॥२१९७॥
राम लखन जब भरत उठाके, लेते गले लगाय।
मस्तक फेरा हाथ प्रेम से, दे सन्मान सवाय ॥२१९८॥
शत्रुघ्न को भी इसी तरह से, बहुत दिया सन्मान।
खुशी यथा हो मिला रंक को, सहसा आय निधान ॥२१९९॥
राम लखन अरु भरत शत्रुघ्न, बैठे एक विमान।
दान शील तप भाव चार से, शोभित ज्यों सुलतान ॥२२००॥

॥ रामका अयोध्यामें प्रवेश ॥

प्रथम अयोध्या सिनगारी थी, फिर भी सब सजवाय।
पुष्प सुगन्धित पथ में डाला, धूप गंध प्रकटाय ॥२२०१॥

करे गर्भ से पालन पोषण, दोष गर्भ के टाल।
सुत हित देती प्राण कुरंगी, गिये सिंह को श्याल ॥२१७५।
माता गंगा माता जमुना, माता तीर्थं स्वरूप।
माता जग में बड़ी कहाती, माता दया अनूप ॥२१७६॥
देर करोगे मात मिलन में, तो तज देगी प्राण।
सोच करना फर्ज़ आपका, आप बड़े विद्वान ॥२१७७॥
नारद से कहते रघुवरजी, सत्य आपके बैन।
मेरी भी यह इच्छा कब की, दिल नहिं पाता चैन ॥२१७८॥

अयोध्या की ओर राम का प्रस्थान

तुरत राम ने बुला वभीषण, कहा उन्हें सब हाल।
हम जावेंगे माता दर्शन, सुनो लंक भूपाल ॥२१७६॥
देओ हमको आज्ञा अब तो, नहीं देर का काम।
नहिं भूले उपकार आपका, जितने किये तमाम ॥२१८०॥
करो कुशल से राज लक का, यह मेरी आशीष।
अब माता के चरण शरण में, धरें तुरत से शीस ॥२१८१॥
पूर्ण आपकी भक्ति द्वारा, अधिक विताया काल।
बहुत यहाँ रहने से होगा, माता हाल विहाल ॥२१८२॥
प्रिय वाणी सुन सभी बिभीषण, आया नैना नीर।
जाने का क्या ? कहा आपने, लगा हृदय में तीर ॥२१८३॥

हे प्रभु! निश्चय मिलो मात से, पूरो मन की आश।
किन्तु हमारी एक विनय सुन, दीजे कुछ विश्वाश ॥२१८४।
सोलह दिन तक नाथ यहाँ पे, करो आप विश्राम।
बहुत गई, मांगा नहिं कुछ भी, सोचा मैंने काम ॥२१८५॥
इन्द्रपुरी सम अवध बनाऊं, होय अयोध्या लंक।
कारीगर लका से भेजूं, जो हो चातुर,बक ॥२१८६॥
पन्द्रह दिन में हो जावेगी, सब विधि से तैयार।
चलते बाद विमान आप हम, साथ सभी दरबार ॥२१८७॥
लीनी रघुवर मान बात को, खुश होते लकेश।
भेजे कारीगर लंका से, करते काम विशेष ॥२१८८॥
उधर अयोध्या नारद जाते, देते सब सदेश।
होती खुश कौशल्या माता, मन का मिटा कलेश ॥२१८६॥

॥ रामसे भरत और माताओंका मिलाप ॥

दिवस सोलवें पुष्पक नामा, सज्जित किया विमान।
सभी राणियां राम लखन युत, बैठे इन्द्र समान ॥२१६०॥
चलते तब सुग्रीव बिभीषण, भामण्डल हनुमान।
रघुवर पहले आप चले हैं, अपने बैठ विमान ॥२१६१॥
प्रथम अयोध्या में जा पहुंचे, सबको कहा सुनाय।
सब जन सुन मन मुदित हुए हैं, गया हर्ष मन छाय ॥२१६२॥

भरत भूप तब पवनपुत्र को, लेते गले लगाय।
शुभ सदेशा परम सुनाया, तुम गुण कहा न जाय ॥२१६३॥
स्वागत हित सब करें तयारी, सेना सर्व सजाय।
चले नगर के बाहर हिल मिल, हर्ष नीर वर्षाय ॥२१६४॥
भरत भूप के दिल में उमड़ा, प्रेम प्रेम मस्तान।
हाथी पर से उतरे, भ्राता, देखा जभी विमान ॥२१६५॥
देख भरत को राम तुरत से, नीचा लिया विमान।
छुप नहिं सकता प्रेम परस्पर, भ्राता भाव महान ॥२१६६॥
उतर यान से राम तुरत ही, गए भरत के पास।
उधर भरत शत्रुघ्न ने आकर, नमन किया सोल्लास ॥२१६७॥
राम लखन जब भरत उठाके, लेते गले लगाय।
मस्तक फेरा हाथ प्रेम से, दे सन्मान सवाय ॥२१६८॥
शत्रुघ्न को भी इसी तरह से, बहुत दिया सन्मान।
खुशी यथा हो मिला रंक को, सहसा आय निधान ॥२१६६॥
राम लखन अरु भरत शत्रुघ्न, बैठे एक विमान।
दान शील तप भाव चार से, शोभित ज्यों सुलतान ॥२२००॥

॥ रामका अयोध्यामें प्रवेश ॥

प्रथम अयोध्या सिनगारी थी, फिर भी सब सजवाय।
पुष्प सुगन्धित पथ में डाला, धूप गंध प्रकटाय ॥२२०१॥

पड़ता प्रबल प्रताप राम का, लखो चरित्र आदर्श ।
यश प्रकाशित किया आपने, दिखा आर्य उत्कर्ष ॥२२३२॥
भरी हुई थी सभा राम की, बैठे सब सरदार ।
उसी समय में भरत जोड़ कर, बोला सिर उचार ॥२२३३॥
अहो कृपानिधि ! दीन हीन का, देओ भार उतार ।
अपना राज-काज पे सारा, आप करो अधिकार ॥२२३४॥
धन्य लखन बलिहारी तुमको, सत्य सुमित्रानन्द ।
बड़े भाई की सेवा कीनी, छोड़ सभी आनन्द ॥२२३५॥

मैं दुर्भागी करी न सेवा, वृथा मनुज अवतार ।
क्षमा करो पितु तुल्य आपहो, दास विनय अवधार ॥२२३६॥
लिया राम ने गले लगाकर, कहैं भरत से बात ।
पूर्ण तुम्हीं से पिता वचन हो, मिटा सभी उत्पात ॥२२३७॥
जीवित लक्ष्मण रखा आपने, विशल्या भिजवाय ।
पुण्यवती माता कैकैयी ने, जाया रत्न सवाय ॥२२३८॥
भरत वचन पे ध्यान राम ने, दिया नहीं लवलेश ।
कुछ दिन ठहरो सोच समझ के, देवें फिर आदेश ॥२२३९॥

रहे सदा मन मुदित होय के, सीता लक्ष्मण राम ।
पुत्र देख माता निज न्यारी, पाई परमाराम ॥२२४०॥
पूर्ण हुआ यों भाग तीसरा, आय अयोध्या राम ।
श्रोताजन सुन सार समझलो, छोड़ो वाद निकाम ॥२२४१॥
पूज्यनंद गुरु देव सेव से, होता वर कल्याण ।
तस पद किंकर शिष्य 'सूर्यमुनि', नित्य करे गुणगान ॥२२४२॥
दो हजार दो के संवत में, सहर लीवडी खास ।
भक्तिवंत श्रावक है सारे, किया पूर्ण चौमास ॥२२४३॥

॥ इति श्री 'सूर्यमुनिजी' म० कृत रावण वध, राम लक्ष्मण विजय और अयोध्या प्रवेशादि तृतीय भाग समाप्तम् ॥

॥ इति तृतीय भाग ॥

पड़ता प्रबल प्रताप राम का, लखो चरित्र आदर्श ।
यश प्रकाशित किया आपने, दिखा कार्य उत्कर्ष ॥२२३२॥
भरी हुई थी सभा राम की, बैठे सब सरदार ।
उसी समय में भरत जोड़ कर, बोला मिष्ट उचार ॥२२३३॥
अहो कृपानिधि ! दीन हीन का, देखो भार उतार ।
अपना राजकाज ये सारा, आप करो अधिकार ॥२२३४॥
धन्य लखन बलिहारी तुमको, सत्य सुमित्रानन्द ।
बड़े भाई की सेवा कीनी, छोड़ सभी आनन्द ॥२२३५॥

मैं दुर्भागी करी न सेवा, वृथा मनुज अवतार ।
क्षमा करो पितु तुल्य आपहो, दास विनय अवधार ॥२२३६॥
लिया राम ने गले लगाकर, कहैं भरत से बात ।
पूर्ण तुम्ही से पिता वचन हो, मिटा सभी उत्पात ॥२२३७॥
जीवित लक्ष्मण रखा आपने, वैशल्या भिजवाय ।
पुण्यवती माता कैकैयी ने, जाया रत्न सवाय ॥२२३८॥
भरत वचन पे ध्यान राम ने, दिया नहीं लवलेश ।
कुछ दिन ठहरो सोच समझ के, देगें फिर आदेश ॥२२३९॥

रहे सदा मन मुदित होय के, सीता लक्ष्मण राम ।
पुत्र देख माता निज सारी, पाई परमाराम ॥२२४०॥
पूर्ण हुआ यों भाग तीसरा, आय अयोध्या राम ।
श्रोताजन सुन सार समझलो, छोड़ो वाद निकाम ॥२२४१॥
पूज्यनंद गुरु देव सेव से, होता वर कल्याण ।
तस पद किंकर शिष्य 'सूर्यमुनि', नित्य करे गुणगान ॥२२४२॥
दो हजार दो के संवत में, सहर लींबडी खास ।
भक्तिवंत श्रावक है सारे, किया पूर्ण चौमास ॥२२४३॥

॥ इति श्री 'सूर्यमुनिजी' म० कृत रावण वध, राम लक्ष्मण विजय और अयोध्या प्रवेशादि तृतीय भाग समाप्तम् ॥

॥ इति तृतीय भाग ॥

किसी समय भरतेश किया था, ध्यान शुद्ध एकान्त।
अथिर विचारे जग की रचना, चित्त किया उपशान्त ॥ ११ ॥
भवनिधि तारण कारण जिनवर, कहा ज्ञान वैराग।
पर पुद्गल से ममत मिटाना, समझ विषय विष नाग ॥ १२ ॥
झूठे जगके खेल स्वप्नवत्, काराग्रह संसार।
दीक्षा लेते चक्रवर्ति भी, तज के जगत असार ॥ १३ ॥
क्या सुख इसमें पाया जाता, सभी स्थान है क्लेश।
अतः करे दीक्षा को धारण, जैनामृत उपदेश ॥ १४ ॥
राज ताज देना रघुवर को, निश्चय मन में धार।
राघव तट आए भरतेश्वर, कहते दिल उद्गार ॥ १५ ॥
नमन करे रघुवर पदपकज, विनय युक्त दरसाय।
हे स्वामिन्! मुज अर्ज ध्यान लो, सुनो सत्य रघुराय ॥ १६ ॥
आज्ञा पालन करी आपकी, दिया वचन को मान।
जैसा तैसा राज निभाया, सेवक ने हित जान ॥ १७ ॥
सब बातों से बनी अरुची, विर मय जगत विचार।
लीजे अपना राज काज ये, मुज सिर का सब भार ॥ १८ ॥
पिता साथ में प्रथम भाव थे, लेना दीक्षा धार।
जबरन मुजको दिया आपने, राज काज का भार ॥ १९ ॥
अबतक मैंने राज चलाया, किया खूब सभाल।
जिसकी वस्तु जिसको देवे, यह उत्तम की चाल ॥ २० ॥

गया समय पीछा नहीं आता, जाता समय अमोल।
तन छाया सम काल साथ है, बुद बुद चचल तोल ॥ २१ ॥
काल राज की दवा नहिं है, जाया सो ही जाय।
भक्षक जग का काल कहाता, काल किसे वश पाय ॥ २२ ॥
जब तक रोग न होवे तन में, वृद्ध न होवे काय।
शक्ति इन्द्रियां तवतक करिये, धर्म कार्य चितलाय ॥ २३ ॥
शीघ्र निकाले सार वस्तु को, लगी झोंपड़ी आग।
सागर पल आयु क्षय होता, क्या! अल्पायू राग ॥ २४ ॥
भरत वचन सुन राम नैन से, जल भर कहते बैन।
वचन तीर मुज लगे हृदय में, पल भर पड़े न चैन ॥ २५ ॥
कैसी भोली बात सुनाई, भ्रमित हुआ तूं वीर।
किसके धोखे में आकर के, दिया हृदय मम चीर ॥ २६ ॥
चौदह वर्षों में दर्शन कर, अभी बुझाई प्यास।
लिए तुम्हारे तड़प रहा था, मच्छी ज्यों जल आश ॥ २७ ॥
विरह तुम्हारा सहन न होता, क्षण भरका सुन भ्रात!।
पहले जैसा राज करो तुम, सत्य कहूँ अवदात ॥ २८ ॥
पहले जैसी अब भी आज्ञा, कीजै आप स्वीकार।
तुमकी आज्ञा पर में आया, अब क्या रहै उचार ॥ २९ ॥
खड़े हुए सुग्रीव लखन ये, करते हुक्म प्रमाण।
सभी आपको दिल से चाहें, अर्पण सब के प्राण ॥ ३० ॥

कहैं भरत करजोड़ विनय से, सुने आपके वैन।
पहले माना वचन आपका, धरी सीस पे ऐन ॥ ३१ ॥
प्रेम जाल में मुझे फसाना, यह भ्राता का धर्म!।
अबतो एक न मानूं भ्राता, लहू अचल शिव शर्म ॥ ३२ ॥
पहले जैसा भरत न समझो, फंसे प्रेम के जाल।
जिनवाणी का हुआ उजाला, लीनी ज्ञान मशाल ॥ ३३ ॥
उठके चलते तभी, भरत नृप, करके राम प्रणाम।
तभी लखन झट दौड़ भरत को, देते प्रिय विश्राम ॥ ३४ ॥
बिठलाकर आश्वाशन देते, क्या! कहते हो भ्रात?।
संजम लेना भला समझते, हमको भी कुछ ज्ञात ॥ ३५ ॥
दिलवाऐंगे खुद हम दीक्षा, उत्सव कर श्रयकार।
कुछ दिन बीते बाद अवश ही, लेना संजम धार ॥ ३६ ॥
कब दिन ऐसा होय हमारे, चढे हृदय वैराग।
धन्य आपको बने विरागी, सजम से अनुराग ॥ ३७ ॥
भरत कहैं आज्ञा अब होती, किंतु आपके वैन।
कुछ ही दिन के लिए भ्रात तुम, धरी सीस पे कैन ॥ ३८ ॥

॥ जल क्रीड़ा को भरत का जाना और मदोन्मत्त हाथी का छूटना ॥

सिया विशाल्या राणी आदिक, देवर को समझाय।
भ्रात कहाते पितु सम मोटे, क्यों ना रहैं निभाय ॥ ३९ ॥

चन्द्रोदय अर-गजपुर जन्मा, नृप भानू का नन्द।
उदर चन्द्रलेखा के आया, नाम कुलकर चंद ॥ ६६ ॥
विश्वभूति की अगनीकुंडा, नार उदर अवतार।
सूर्योदय भी गजपुर जन्मा, श्रुतिरति नाम उदार ॥ ७० ॥
राजा होता जभी कुलकर, करे न्याय से काम।
एक दिवस सो जाता वन में, देख रहा आराम ॥ ७१ ॥
मिले एक ज्ञानी मुनि वन में, नमन किया कर जोड़।
मुनि ने अपना धर्म सुनाया, जग बंधन दो छोड़ ॥ ७२ ॥
मुनिवर कहते परोपकारी, करो काम तुम एक।
तापस तपता है इस वन में, सहता कष्ट अनेक ॥ ७३ ॥
जला रहा वह लकड़ उसमें, जलता एक भुजंग।
उसको जाकर जल्दी बचाओ, यही धर्म का रंग ॥ ७४ ॥
पहले भव का पिता तुम्हारा लेओ उन्हें बचाय।
तापस पास गया तब भूपति, जलता काष्ट फड़ाय ॥ ७५ ॥
काष्ट फड़ाया निकला अहि जब, लेते उसे बचाय।
सच्चा कहना निकला मुनि का, है सच्चे मुनि राय ॥ ७६ ॥
धिक् ऐसे तापस को जग में, लेते पर के प्राण।
ढोंग बनाया वृथा साधु का, दिल नहिं दया निशान ॥ ७७ ॥
हुआ कुलंकर दिल में पैदा, दया धर्म का भाव।
मिथ्यामत को जाना मिथ्या, जग से हुआ अभाव ॥ ७८ ॥

श्रीदामा थी नृप की राणी, कुलटा भ्रष्टाचार।
श्रुतिरति से वह लगी हुई थी, कपट रूप अंगार ॥ ७९ ॥
पति का सारा हाल नार ने, जाना अन्तरभेद।
पति तो मुनि के पास गये थे, होता मन में खेद ॥ ८० ॥
ज्ञानी गुरु के द्वारा मेरा, पता इन्हें लग जाय।
आपत्ति सिर पे आ जावेगी, प्यारा भी छुट जाय ॥ ८१ ॥
पाप छुपाने कारण रचती, कपट कला धर दाव।
कथ मारना जहर देयके, बढ़िया यही उपाय ॥ ८२ ॥
बेडर होके सुख भोगूंगा, सोचे कुलटा नार।
कपट निपट धर जहर देयके, मारा निज भरतार ॥ ८३ ॥
आर्त ध्यान से मरकर जाता, रुला अमित संसार।
राजगृह में कपिल विप्र घर, आय लिया अवतार ॥ ८४ ॥
देते नाम विनोद उसीका, सुनिये श्रुतिरति हाल।
संवर भमते उसने भी आ, जन्म लिया उस काल ॥ ८५ ॥
हो विनोद का छोटा भाई, "रमण" रखा तस नाम।
रमण गया पढ़ने के कारण विद्वानों के धाम ॥ ८६ ॥
विनोद की थी शाखा नारी, दत्तविप्र से प्रेम।
धन्य वही जग में कहलाते, धरे शील का नेम ॥ ८७ ॥
शाखा नारी इधर दत्त से, करती ओं संकेत।
यक्षालय में आना निशि में, तुम हम होगा हेत ॥ ८८ ॥

शाखा जाती यक्षालय में, विकट काम का भाव।
पति विनोद को भेद लगा कुछ, किससे सुना प्रपाव ॥ ८९ ॥
चला नार के पीछे पीछे, बनता उधर बनाव।
रमणक वर विद्या को पढ़के, आया माबी भाव ॥ ९० ॥
कल घर आना शुभ महुरत है, समझ रात अंधार।
वह सोया था यक्षालय में, निर्भय पांव पसार ॥ ९१ ॥
इतने शाखा आ पहुंची है, सूता सोचा यार।
विस्मय भोगती 'रमण' साथ में, नहीं कर्म का पार ॥ ९२ ॥
तब विनोद क्रोधातुर हो दिया रमण को मार।
शाखा तब घबराई यह तो, आये मुज भरतार ॥ ९३ ॥
जान लिया मुज भेद इन्होंने, लेकर झट तलवार।
कपट रूप से पति को मारा, किया काम ने ख्वार ॥ ९४ ॥
शाखा मरके गई नरक में, भमते दोनों भ्रात।
विनोद आके हुआ सेठ सुत, नाम धनद विख्यात ॥ ९५ ॥
इधर रमण मर हुआ धनद सुत, भूषण नाम कहाय।
भूषण को परणाई कन्या, बत्तिस रूप सवाय ॥ ९६ ॥
उसी नगर के बाहिर वन में, श्रीधर थे मुनिराय।
प्राए केवलज्ञान अमर सिल, ज्ञानोत्सव को आय ॥ ९७ ॥
जाता भूषण भी मुनि दर्शन, बनता बीच बनाव।
विषधर आन मिला रास्ते में, सिद्ता नहीं मिटाव ॥ ९८ ॥

बढ़े बडे नृप सुग्रीवादिक, अन्य सभी परिवार।
पुरजन सारे हुए इकट्ठे, सभा भरी उसवार ॥ १२७ ॥
खेचर भूचर मिलके करते, रघुवर से अरदास।
राजताज खुद लीजे स्वामिन्, पूरो सब की आश ॥ १२८ ॥
राम दिया आदेश नगर में, उत्सवे करो अपार।
घर घर बाजे वाज रहे हैं, मगल गावे नार ॥ १२९ ॥
बोले राघव अवधपुरी का, लक्ष्मण हैं भूपाल।
वासुदेव ये महान आठवें, सबके थे प्रतिपाल ॥ १३० ॥
सबने माना हर्षयुक्त से, रघुवर का आदेश।
सिंहासन पर बैठे लक्ष्मण, मुहूर्त दख सुविशेष ॥ १३१ ॥
कलश सुगंधित जल का लेके, डाला लक्ष्मण सीस।
सभा गूंजती जयर ध्वनि से, धन्य अवध के ईश ॥ १३२ ॥
बाद कलश डाला रघुवर पे, यह अष्टम बलदेव।
बने हमारे ताज आज से, करें आपकी सेव ॥ १३३ ॥
भामडल सुग्रीव पवन सुत, और विभीषण राय।
सोलसेंस राजों के राजा, हुए त्रिखडी साय्य ॥ १३४ ॥
सेवा में नित हाजर रहते, देव आठ हज्जार।
रहें सदा बलदेव सेव मे, देव सहस सब चार ॥ १३५ ॥
सोलसेंस देशों के मालिक, सेवामें सब भूप।
सोलसेंस में बड़ी विशल्या, पटराणी गुण रूप ॥ १३६ ॥

हय गगवर रथ सारे जिनके, लाख सु बैंतालीस।
पैदल सेना समझो सारी, क्रोड सु अडतालीस ॥ १३७ ॥
रत्नों का है ताज शीश पे, सुरनर माने आन।
दयामूर्ति श्रीरामचन्द्रजी, उपकारी भगवान ॥ १३८ ॥
सबके मालिक राम उन्हें हैं, नहीं राज से काम।
निज हाथों से राज-भाव को, दिया आप अभिराम ॥ १३९ ॥
रामचन्द्र की धर्म नीति से, हुए सुखी नरनार।
वर्षा होती थी सुखदाई, सरवर भरे अपार ॥ १४० ॥
धन जन कण होता था पूरण, रहते सुखी किसान।
फल फूलों से लदे हुए थे, पल्लव वृक्ष महान ॥ १४१ ॥
गाय दूध देती मन चाही, पृथ्वी स्निग्ध दिखाय।
लाभ अधिक होता वाणिज्य में, वणिक रहे सुखमाय ॥ १४२ ॥
क्रीड़ा करती घर घर कमला, पुत्र प्रिया परिवार।
रहें सदा आनन्द मनाते, पुर के सब नरनार ॥ १४३ ॥
चोर ढोर डाकू नहिं दिखते, राघव तेज प्रचण्ड।
बिना हुक्म से चीज न लेते, रहती वस्तु अखण्ड ॥ १४४ ॥
जाति पाति में प्रेम बरसता, सदाचार में लीन।
गुरुकुल मे जन विद्या पढ़के, होते प्राय प्रवीन ॥ १४५ ॥
दान शील तप भाव अराधे, दे दुखियों को दान।
सामायिक अरु पौषध करते, श्रावक थे गुणवान ॥ १४६ ॥

कायर क्रूर न कपटी कोई, लपट नहिं व्यभिचार।
पर की निंदा से डरते थे, हिंसा का प्रतिकार ॥ १४७ ॥
सत्यवन्त नरनारी पुर के, जहाँ राम का राज।
यह गुण पाते थे अधिकों में, उत्तम रीति रिवाज ॥ १४८ ॥
पुण्य सितारा चढ़ा राम का, जैसे दूजा चन्द।
ज्ञानी ध्यानी चित्त उदारी, वरत रहा आनन्द ॥ १४९ ॥

॥ राम के द्वारा सभी राजा को राज्य प्रदान ॥

दिया सभी को राज राम ने, सो सब कहूँ सुनाय।
प्रथम विभीषण को लका का, दीना तिलक लगाय ॥ १५० ॥
वानरद्वीप दिया कपिपति को, श्रीपुर का हनुमान।
पहले थे मालिक जिस पुर के, करते पुन. प्रदान ॥ १५१ ॥
नृप विराध को लकपयाला, ऋक्षनगर नृप नील।
हनुपुर दे प्रतिसूर्य भूप को, समझे बडे सुशील ॥ १५२ ॥
रथनूपुर दे भामण्डल को, रूपाचल गिरि खास।
नगर दिया देवोपगीत को, रत्नजटी रहवास ॥ १५३ ॥
यथायोग्य सबको खुश करते, दे करके जागीर।
परिजन को संतोषित करते, करते कई वजीर ॥ १५४ ॥
ग्रामिणजन को गांव दिए हैं, खेतीजन को दे खेत।
जिसकी जैसी इच्छा उसको, दिया राम धर हेत ॥ १५५ ॥

बात समझ मामूली टाला, पत्र फाड़ उसवार।
दूत निकाला अपमानित कर, देकर गाल हजार ॥ १८५ ॥
पहुंचा आन के हाल दूत ने, किया शत्रुघ्न विचार।
गुप्तचरों को भेजा पुर में, देखे छिद्र करार ॥ १८६ ॥
कहा आन के गुप्तचरों ने, समय मिला अनुकूल।
मधुभूपति अरु मधुरा राणी, रहे गर्व में फूल ॥ १८७ ॥
धनकुबेर में केली करने, गया साथ परिवार।
फिरते वन वन राग रंग में, मस्त हुए इकबार ॥ १८८ ॥
दुश्मन की नहिं फिकर जिन्हों को, क्योंकि शक्ति भरपूर।
पड़ा हुआ तिरशूल शस्त्रगृह, रहा भूप से दूर ॥ १८९ ॥
मिला आपको समय ठीक ये, जरा करो मत देर।
पड़े समर यदि मधुराजा को, हो जावे अंधेर ॥ १९० ॥
सुन ये सारा हाल शत्रुघन, दलबल झट सजवाय।
मथुरा घेरी चारों बाजू, रोका पंथ सवाय ॥ १९१ ॥
आयुधशाला में जाकर के, जमादिया अधिकार।
सत्ता करदी उगपे अपनी, मन का हुआ विचार ॥ १९२ ॥
दौड़ा आया मधु तब सुन के, वैरी दल चढ़ आय।
लवणअंवर था मधु का नंदण, गया युद्ध के माय ॥ १९३ ॥
हुआ विकट संग्राम परस्पर अस्त्र शस्त्र बोछार।
दाव देख शत्रुघ्न तुरत से, मारा लवणकंवार ॥ १९४ ॥

लक्ष्मण जैसे प्रथम युद्ध में, करते खर संहार।
ऐसे मारा लवण शत्रुघन, लीना सीस उतार ॥ १९५ ॥
मधुनृप ने यह सुनाकि मेरा, मार दिया है नंद।
तुरत क्रोध कर दलबल लेके, मचा दिया अति द्वंद ॥ १९६ ॥
सन्मुख आया लड़ने कारण, लेकर तीर कमान।
मधु को तब शत्रुघ्न सुनाया, आओ वीर ? महान ॥ १९७ ॥
तन शक्ति तिरशूल तुम्हारी, गई कहाँ अब दूर।
फूले जिसपे नहीं समाते, आज गर्व काफूर ॥ १९८ ॥
दूत भेज हमने समझाया, किया बड़ा अपमान।
परवा करते नहीं हमारी, अस्त अजीरण आन ॥ १९९ ॥
मिला उसीका दुःख आपको, अब भी समय विचार।
क्षमा मांगलो आज्ञा पालो, होगा सर्व सुधार ॥ २०० ॥
रखना चाहो जान पियारी, करलो शर्त प्रमाण।
त्रिशूल देलो शरण हमारी, रहें तुम्हारी शान ॥ २०१ ॥
मधु बोला अय कपटी ? धूरत, नीच निपट नादान।
आयुध गृह में आय घुसा ज्यों, सूना घर में श्वान ॥ २०२ ॥
सिंह कभी गीदड़ के जैसा, नहीं करता है काम।
बातें मुखसे बड़ी बनाता, नाम किया बदनाम ॥ २०३ ॥
त्रिशूल लेने आया ऊपर, जमा रहा अधिकार।
तुझे न जिन्दा छोड़ूं बेशक, होजा अब हुशियार ॥ २०४ ॥

शत्री हाथों से मर प्यारे ? झट जाओ सुरलोक।
आज्ञा कायर कपटी पहिले, कहता छाती ठोक ॥ २०५ ॥
क्या ? देरी थी फिर लड़ने में, भिड़ते दोनों वीर।
कटाकटी होती दोनों में, खून बहै नदि नीर ॥ २०६ ॥
मधु का आता देख बाण को, लेते रथ की ओट।
वैरी बचता देख मधु नृप, दिया धैर्य को छोड़ ॥ २०७ ॥
वज्रावर्त्त ... अग्निबाण को, ले शत्रुघ्न चढाय।
सन्मुख मधु के खड़ा आन के, दीना घन गर्जाय ॥ २०८ ॥
सेना भगने पर भी मधुनृप, निर्भय खड़ा अडोल।
आखिर छोड़ा धनुष तान के, दिया कलेजा छोल ॥ २०९ ॥
मारा मधु को व्याध होय के, मृग को ज्यों मृगराज।
पड़ा भूमि पे हुआ सचेतन, गया कलेजा दाज ॥ २१० ॥
पड़ा २ दिल सोच रहा है, मधुराजा उसवार।
राज गमाया शूल न पाया, खोया नर अवतार ॥ २११ ॥
पृथ्वी साथ न जाती किसके, गए मरण सुखमाय।
रहे एकसी कभी किसी की, यह तो नहीं दिखाय ॥ २१२ ॥
दुःख यही कि नर-भव पाके, किया न कुछ शुभ काम।
खाली हाथों चला अंत में, भोग विषय आराम ॥ २१३ ॥
तप जप संजम में नहिं पाला, दिया न कर से दान।
सेवें नहिं जिनदेव अदोषित, कैसे हो कल्याण ॥ २१४ ॥

बड़े बड़े नृप सुग्रीवादिक, अन्य सभी परिवार।
पुरजन सारे हुए इकट्ठे, सभा भरी उसवार॥ १२७॥
खेचर भूचर मिलके करते, रघुवर से अरदास।
राजताज खुद लीजे स्वामिन्, पूरो सब की आश॥ १२८॥
राम दिया आदेश नगर में, उत्सव करो अपार।
घर घर बाजे बाज रहे हैं, मगल गावे नार॥ १२६॥
बोले राघव अवधपुरी का, लक्ष्मण हैं भूपाल।
वासुदेव ये महान आठवें, सबके ये प्रतिपाल॥ १३०॥
सबने माना हर्षयुक्त से, रघुवर का आदेश।
सिंहासन पर बैठे लक्ष्मण, मुहूर्त देख सुविशेष॥ १३१॥
कलश सुगंधित जल का लेके, डाला लक्ष्मण सीस।
सभा गूंजती जयर ध्वनि से, धन्य अवध के ईश॥ १३२॥
बाद कलश डाला रघुवर पे, यह अष्टम बलदेव।
बने हमारे ताज आज से, करें आपकी सेव॥ १३३॥
भामडल सुग्रीव पवन सुत, और विभीषण राय।
सोलसैंस राजों के राजा, हुए त्रिखंडी साय॥ १३४॥
सेवा मे नित हाजर रहते, देव आठ हज्जार।
रहें सदा बलदेव सेव में, देव सहस्र सब चार॥ १३५॥
सोलसैंस देशों के मालिक, सेवामें सब भूप।
सोलसैंस में बड़ी विशल्या, पटराणी गुण रूप॥ १३६॥

हय गयवर रथ सारे जिनके, लाख सु बैंतालीस।
पैदल सेना समझो सारी, क्रोड सु अडतालीस॥ १३७॥
रत्नों का है ताज शीश पे, सुरनर माने आन।
दयामूर्ति श्रीरामचन्द्रजी, उपकारी भगवान॥ १३८॥
सबके मालिक राम उन्हें है, नहीं राज से काम।
निज हाथों से राज-भाव को, दिया आप अभिराम॥ १३९॥
रामचन्द्र की धर्म नीति से, हुए सुखी नरनार।
वर्षा होती थी सुखदाई, सरवर भरे अपार॥ १४०॥
धन जन कण होता था पूरण, रहते सुखी किसान।
फल फूलों से लदे हुए थे, पल्लव वृक्ष महान॥ १४१॥
गाय दूध देती मन चाहो, पृथ्वी स्निग्ध दिखाय।
लाभ अधिक होता वाणिज्य में, वणिक रहे सुखमाय॥ १४२॥
क्रीडा करती घर घर कमला, पुत्र प्रिया परिवार।
रहें सदा आनन्द मनाते, पुर के सब नरनार॥ १४३॥
चोर ढोर डाकू नहिं दिखते, राघव तेज प्रचण्ड।
बिना हुक्म से चीज न लेते, रहती वस्तु अखण्ड॥ १४४॥
जाति पाति में प्रेम बरषता, सदाचार में लीन।
गुरुकुल में जन विद्या पढ़के, होते प्राय प्रवीन॥ १४५॥
दान शील तप भाव अराधे, दे दुखियों को दान।
सामायिक अरु पौषध करते, श्रावक थे गुणवान॥ १४६॥

कायर क्रूर न कपटी कोई, लपट नहिं व्यभिचार।
पर की निंदा से डरते थे, हिंसा का प्रतिकार॥ १४७॥
सत्यवन्त नरनारी पुर के, जहां राम का राज।
यह गुण पाते थे अधिकों मे, उत्तम रीति रिवाज॥ १४८॥
पुण्य सितारा चढ़ा राम का, जैसे दूजा चन्द।
ज्ञानी ध्यानी चित्त उदारी, बरत रहा आनन्द॥ १४९॥

॥ राम के द्वारा सभी राजा को राज्य प्रदान ॥

दिया सभी को राज राम ने, सो सब कहूँ सुनाय।
प्रथम विभीषण को लका का, दीना तिलक लगाय॥ १५०॥
वानरदीप दिया कपिपति को, श्रीपुर का हनुमान।
पहले थे मालिक जिस पुर के, करते पुन. प्रदान॥ १५१॥
नृप विराध को लकपयाला, ऋक्षनगर नृप नील।
हनुपुर द प्रतिसूर्य भूप को, समझे बडे सुशील॥ १५२॥
रथनूपुर दे भामण्डल को, रूपाचल गिरि खास।
नगर दिया देवोपगीत को, रत्नजटी रहवास॥ १५३॥
यथायोग्य सबको खुश करते, दे करके जागीर।
परिजन को संतोषित करते, करते कई वजीर॥ १५४॥
ग्रामियाजन को गांव दिए हैं, खेतीजन को दे खेत।
जिसकी जैसी इच्छा उसको, दिया राम धर हेत॥ १५५॥

धा समझ मामूली हाला, पत्र फाड़ उसवार।
दूत निकाला अपमानित कर, देकर गाल हजार ॥ १८५ ॥
कहा आन के हाल दूत ने, किया शत्रुघ्न विचार।
गुप्तचरों को भेजा पुर में, देखे छिद्र करार ॥ १८६ ॥
कहा आन के गुप्तचरों ने, समय मिला अनुकूल।
मधुभूपति अरु मधुरा राणी, रहे गर्व में फूल ॥ १८७ ॥
धनकुबेर म केली करने, गया साथ परिवार।
फिरते वन वन राग रंग में, मस्त हुए असवार ॥ १८८ ॥
दुश्मन की नहिं फिकर जिन्होंको, क्योंकि शक्ति भरपूर।
पड़ा हुआ तिरशूल शस्त्रगृह, रहा भूप से दूर ॥ १८९ ॥
मिला आपको समय ठीक ये, जरा करो मत देर।
पड़े खबर यदि मधुराजा को, हो जावे अंधेर ॥ १९० ॥
सुन ये सारा हाल शत्रुघन, दलबल झट सजवाय।
मधुरा घेरी चारों बाजू, रोका पथ सवाय ॥ १९१ ॥
आयुधशाला में जाकर के, जमादिया अधिकार।
सत्ता करदी उसपे अपनी, मन का हुआ विचार ॥ १९२ ॥
दौड़ा आया मधु तब सुन के, वैरी दल चढ़ आय।
लवणांकुर था मधु का नंदण, गया युद्ध के साथ ॥ १९३ ॥
हुआ विकट संग्राम परस्पर अस्त्र शस्त्र वौछार।
दाव देख शत्रुघ्न तुरत से, मारा लवणकंवार ॥ १९४ ॥

लक्ष्मण जैसे प्रथम युद्ध में, करते खर संहार।
ऐसे मारा लवण शत्रुघन, लीना सीस उतार ॥ १९५ ॥
मधुनृप ने यह सुनाकि मेरा, मार दिया है नंद।
तुरत क्रोध कर दलबल लेके, मचा दिया अति द्वंद ॥ १९६ ॥
सन्मुख आया लड़ने कारण, लेकर तीर कमान।
मधु को तब शत्रुघ्न सुनाया, आओ वीर ? महान ॥ १९७ ॥
तव शक्ति तिरशूल तुम्हारी, गई कहाँ अब दूर।
फूले जिसपे नहीं समाते, आज गर्व काफूर ॥ १९८ ॥
दूत भेज हमने समझाया, किया बड़ा अपमान।
परवा करते नहीं हमारी, अक्कल अजीरण आन ॥ १९९ ॥
मिला उसीका दुःख आपको, अब भी समय विचार।
क्षमा मांगलो आज्ञा पालो, होगा सर्व सुधार ॥ २०० ॥
रखना चाहो जान पियारी, करलो शर्त प्रमाण।
त्रिशूल दे-लो शरण हमारी, रहे तुम्हारी शान ॥ २०१ ॥
मधु बोला अय कपटी ? धूरत, नीच निपट नादान।
आयुध गृह में आय घुसा ज्यों, सूना घर में श्वान ॥ २०२ ॥
सिंह कभी गीदड़ के जैसा, नहीं करता है काम।
बातें मुखसे बड़ी बनाता, नाम किया बदनाम ॥ २०३ ॥
त्रिशूल लेने आया ऊपर, जमा रहा अधिकार।
तुझे न जिन्दा छोड़ूं बेशक, होजा अब हुशियार ॥ २०४ ॥

सत्री हाथों से मर प्यारे ? झट जाओ सुरलोक।
आजा कायर कपटी पहिले, कहता छाती ठोक ॥ २०५ ॥
क्या ? देरी थी फिर लड़ने में, भिड़ते दोनों वीर।
कटाकटी होती दोनों में, खून बहैं नदि नीर ॥ २०६ ॥
मधु का आता देख बाण को, लेते रथ की ओट।
वैरी बचता देख मधु नृप, दिया धैर्य को छोड़ ॥ २०७ ॥
वज्रावर्त रु अग्निवाण को, ले शत्रुघ्न चढाय।
सन्मुख मधु के खड़ा आन के, दीना धन गर्जाय ॥ २०८ ॥
सेना भगने पर भी मधुनृप, निर्भय खड़ा अडोल।
आखिर छोड़ा धनुष तान के, दिया कलेजा छोल ॥ २०९ ॥
मारा मधु को व्याध होय के, मृग को ज्यों मृगराज।
पड़ा भूमि पे हुआ सचेतन, गया कलेजा दाझ ॥ २१० ॥
पड़ा २ दिल सोच रहा है, मधुराजा उसवार।
राज गमाया शूल न पाया, खोया नर अवतार ॥ २११ ॥
पृथ्वी साथ न जाती किसके, गए मरण सुखमाय।
रहें एकसी कभी किसी की, यह तो नहीं दिखाय ॥ २१२ ॥
दुःख यही कि नर-भव पाके, किया न कुछ शुभ काम।
खाली हाथों चला अंत में, भोग विषय आराम ॥ २१३ ॥
तप जप संजम में नहिं पाला, दिया न कर से दान।
सेवें नहिं जिनदेव अदोषित, कैसे हो कल्याण ॥ २१४ ॥

सभी प्रजा व्याधी मय होती, करे न औषध कार ।
यत्न किए नृप ने उससे तो, बढ़ता रोग अपार ॥ २४४ ॥
तप तेला का किया शत्रुघन, एक चित्त दृढ़ ध्यान ।
कुलदेवी आ खड़ी सामने, कहती सर्व बयान ॥ २४५ ॥
चमर इन्द्र का मित्र पियारा, दीना तुमने मार ।
रोग बढ़ाया क्रोध धारके, बदला लिया विचार ॥ २४६ ॥
रोग यह नहिं मिट सकता है, मेरा चले न जोर ।
धर्माराधन करो उसीसे, मिटे सभी दुख घोर ॥२४७॥
महत् पुरुष के द्वारा होगा, इस व्याधी का अंत ।
देवी जाती स्थान-भूप मन, होता दुख अत्यंत ॥ २४८ ॥
उसी समय नृप पुरी अयोध्या, आया रघुवर पास ।
तभी सुनाई कथा व्यथा की, होकर चित्त उदास ॥ २४९ ॥
हे स्वामिन् ? दुख कैसे मिटता, बतलाओ उपचार ।
धैर्य देय के पास बिठाया, रघुवर करें विचार ॥ २५० ॥

॥ मधुराजा और शत्रुघ्न का पूर्व भव ॥

तभी पधारे अवधपुरी में, धारक केवलज्ञान ।
कुलभूषण अरु देश विभूषण, पूज्य परम भगवान ॥ २५ ॥
मुनि दर्शन हित राम पधारे, लेकर सब परिवार ।
चरण कमलमें वंदन कीना, मुनि गुण रहें उपचार ॥ २५२ ॥

संशय मेटो नाथ ? हमारा, तुम सर्वज्ञ महान ।
रिपुघनने क्यों आग्रह करके, मांगा मथुरा स्थान ॥ २५३ ॥
मुनिवर कहते मथुरा नगरी, जन्मावार अनेक ।
इस कारण से मथुरा सब में, नगरी प्यारी एक ॥ २५४ ॥
पूर्व जन्म का हाल सुनाते, सुनो एक चित धार ।
रहता था मथुरा मे ब्राह्मण, श्रीधरकासकंवार ॥ २५५ ॥
रूप देख उसका मोहित हो, नृपराणी उसवार ।
बुलवाते ही गया महिल मे, श्रीधर मूढ़ गिवार ॥ २५६ ॥
राणी भोग किया आमन्त्रण, किन्तु समय बलवान ।
राजा आय गया महलों में, भूले दोनों भान ॥ २५७ ॥
थर २ दोनों लगे धूजने, राणी समय विचार ।
अपनी जान बचाने कारण, किया कपट तैयार ॥ २५८ ॥
जोर २ चिल्लाने लगती, रूप भयानक धार ।
कौन छुपा महलों मे आके, चोर बड़ा बदकार ॥ २५९ ॥
जेवर दे दे मुजको कहता, खोल तुरत इस वार ।
वरना तुझको मैं मारूंगा, दिखा रहा तलवारा ॥ २६० ॥
डरा रहा था कबका मुजको, देकर धौंस महान ।
बगुला जैसा दिखता ब्राह्मण, अन्दर पाप खदान ॥ २६१ ॥
आयुष बल था अधिक जिन्होंसे, आ पहुंचे भरतार ।
विप्र देख यह दृश्य विकट सा, सोचे चित्त मंझार ॥ २६२ ॥

कपट किया मेरे से राणी, क्या ? नारी विश्वास ।
गुन्हा किया खुद मुजपे डारा, निकली ये बदमास ॥ २६३ ॥
राजा हुक्म दिया शूली का, ले जाते वध स्थान ।
मिले मार्ग में पुण्य योग से, मुनिवर श्री कल्याण ॥ २६४ ॥
करुणा निधि ने उसे बचाया, देकर के उपदेश ।
छोड़ दिया जीवित राजाने, सुन मुनि का आदेश ॥२६५॥
श्रीधर ने जग दृश्य देखके, आया मन वैराग ।
धर्म सखा को समझ सहायक, ले मुनिव्रत अनुराग ॥ २६६ ॥
मरके जहां से गए स्वर्ग मे, बाद मनुज अवतार ।
मथुरा का था चन्द्रप्रभा नृप, हरिकान्ता पटनार ॥ २६७ ॥
जन्म लिया आकरके तब ही, नामक अचलकुमार ।
सोकेली माता के जाए, भाई आठ विचार ॥ २६८ ॥
सभी अचल पे द्वेष धरे पर, बाहिर प्रेम अपार ।
मता सभी का अचलकंवर को, करें सभी संहार ॥ २६९ ॥
पता लगा मत्री को झट से, अचल बुला निज पास ।
समझा करके बात कंवर को, तुरंत दिया वनवास ॥ २७० ॥
प्राण बचाकर गया विपत में, घोर स्थान उसवार ।
कांटा लगता एक पांव में, चलने से लाचार ॥ २७१ ॥
सावत्थी का एक वैश्य था, अंक कुंवर था नाम ।
मात पिता ने उसे निकाला, करके अति बदनाम ॥ २७२ ॥

सुर-नन्दण-श्रीनन्द-दूसरा, तीजा 'तिलक' कवर।
चौथा था जयनन्द नामले, पचम-सुन्दर-धार ॥ ३०२ ॥
छटा चमर-जयमित्र सातवा, सातों यही कवार।
सात कवर युत नृप वैरागी, लेता सजम-धार ॥ ३०३ ।
एक मास के सुत को पट दे, प्रीतीकर गुरु पास।
नंदण राजा तपजप धरके, करते मोक्ष निवास ॥ ३०४ ॥
सातों भ्राता सजम पाले, धारे पचाचार।
जघाचारण लब्धि सु पाए, घोर तपोधन धार ॥ ३०५ ॥
सातों मुनि मथुरा मे आए, रहें यहां चौमास।
अष्टम द्वादश तपको करते, सदा ज्ञान अभ्यास ॥ ३०६ ॥
मुनिवर ठहरे सातों जिनमे, मथुरा का सब रोग।
नष्ट हुआ ज्यों सर्प गरुड से, सुखी हुए सब लोग । ३०७ ॥
घर घर मंगल होने लगते, मिटा चरम का फन्द।
मुनि के द्वारा क्या ? नहिं होता, सगत स आनन्द ॥ ३०८ ॥
लघुशका मल श्वेद थूंक अरु, रोमराय नख केश।
तपोधना के औषध सम ये, व्याधी मिटे विशेष ॥ ३०९ ॥
लब्धिवन्त मुनि के पग धोवे, पीवे जो नर नीर।
तनवायु का स्पर्श लगे से, मिटे रोग ज़जीर ॥ ३१० ॥
तप के पारण दिन मथुरा में, शुद्ध अशन नहिं पाय।
सातों भोजन लने कारण, नगर अयोध्या आय ॥ ३११ ॥

अर्हद्दत्त था सेठ उसी घर, आय खडे अणगार।
कैसे फिरते शका होती, चौमासा इसवार ॥ ३१२ ॥
विना भाव से वदन करता, देता शुद्ध आहार।
दिल में सोचे इन मुनियों का, कैसा है आचार ॥ ३१३ ॥
भेष साधु का दिखता है पर, छोड दिया आचार।
कौन ? काम के ऐसे साधू, आगम आण: बहार ॥ ३१४ ॥
द्युतीवर आचार्य यहां थे, सत साधु उस थान।
आहार भोगने कारण आये, लब्धिवत भगवान ॥ ३१५ ॥
नमन क्रिया आचार्य ऊठके, दिया सु रहने स्थान।
अन्य साधु वदन नहि कीना, मनमें संशय आन ॥ ३१६ ॥
पूछा जब आचर्य साधु से, आने का विरतांत।
सुना दिया सब हाल सप्तऋषि, माप्त वडे उपशान्त ॥ ३१७ ॥
यों कहके उडगये गगन मे, शुद्ध सजमी वंत।
मथुरा मे जाकर के ठहरे, जंघाचारण सत ॥ ३१८ ॥
अर्हद्दत्त मुनि दर्शन आए, जब ये सब मुनिराज।
तब गुरु वर से शिष्य पूछते, सुनो गरीब निवाज ॥ ३१९ ॥
वह मुनि कौन ? आयेथे कैसे ?, गए अभी किस ? थान।
गुरु कहते वे जिनमत दीपक, त्यागी सत महान् ॥ ३२० ॥
तपोधना ये घोर कहाते, लब्धी वत महंत।
अशन शुद्ध के कारण आए, मथुरा से भगवन्त ॥ ३२१ ॥

शिष्य श्रवण कर क्षमा याचते, विनय भाव दरसाय।
अर्हद्दत्त श्रावक सुनकर के, रहा-रहस्य पछताय ॥ ३२२ ॥
श्रावक मथुरा नगरी जाता, क्षमा मांगने काज।
कातिक शुक्ला दिवस सप्तमी आया सब विधि साज॥ ३२३ ॥
वदन कर गुण गाथा गाता, वार २ शिरनाय।
क्षमो सभी अपराध हमारा, गुण सागर मुनिराय ॥ ३२४ ॥
सभी हाल तब केवल ज्ञानी, कहते सुनिये राम ?।
वही साधु अब मथुरा अदर, उनमे हो आराम ॥ ३२५ ॥
किया रोग चमरेन्द्र सर्व हो, हो जावेगा शान्त।
पहले जैसा समय आयगा, मिटे व्यथा भय भ्रांत ॥ ३२६ ॥
सुना सभी विरतत सभाने, पाए भेद महान।
मुनि वन्दन कर राम लखन जब, जाते अपने स्थान ॥ ३२७ ॥
नृप शत्रुघ्न सुनि मुनि वाणी, होते खुशी अपार।
कितने दिन तक रहे अयोध्या, उधर सुनो अधिकार ॥ ३२८ ॥
मथुरा म था रोग जिन्होंसे, गए सभी घबराय।
वैद्यों की औषधि नहि चलती, कर्म कथा प्रकटाय ॥ ३२९ ॥
कई मनावे भूत प्रेत को, डाकन अरु फकाल।
पढी मढी चढी सीतला, भैरव मे भमाल ॥ ३३० ॥
चतुर्मास जब रह मुनीश्वर, इस कारण पुर माय।
हुआ रोग उपशांत सभी का, पता किसे नहिं पाय ॥ ३३१ ॥

अनुपम रचना जिनवाणी मे, सब आगम का सार।
बता दिया प्रत्यक्ष सभी को, नृप कन्या उसवार ॥ ३६१ ॥
चित्र रूप सुन सारे होते, अचरज मय विद्वान।
नारदमुनि के खुले नैन तब, सुनके शास्त्र बयान ॥ ३६२ ॥
बड़ी विदूषी कन्या देखी, पाए नारद मोद।
जिनवाणी में श्रद्धा धरते, पाते सब जन बोध ॥ ३६३ ॥
राजकुमारी नृप पद नम के, जाती अपने स्थान।
विविध तरह की कला दिखाई, शास्त्र शस्त्रकर ध्यान ॥ ३६४ ॥
नृप कहता कन्या गुणवन्ती, इन सम हो भरतार।
श्रेष्ठ शोभती जोडी दोनों, यदि हो राज कवार ॥ ३६५ ॥
अपनी अपनी राह दिखाते, सुनके नृप आदेश।
नारदमुनि कहते राजा से, देता मैं सन्देश ॥ ३६६ ॥
कन्या से भी अधिक बताता, तुमको राजकुमार।
दशरथनंदण, रघुवर भाई, लक्ष्मण नाम उदार ॥ ३६७ ॥
तीन खण्ड का वह स्वामी है, दीजे कन्या आप।
पछताओगे पर को देके, पाओगे संताप ॥ ३६[illegible] ॥
नारद की सुन बात क्रोध कर, बोले राजकुमार।
अय बूढेबाबा ? क्या कहता, बातें बिना विचार ॥ ३६९ ॥
हम खेचर हैं, वह भूचर है, होती कैसे जोड़।
उसको हम क्यों सीस झुकायें, लगे वश में खोड ॥ ३७० ॥

वैरी की तारीफ सुना कर, दिया कलेजा छेद।
टुकडे खातिर तू गुण गाता, क्या तुमसे उम्मेद ॥ ३७१ ॥
खूब बताने आया परको, भाग बचाकर जान।
बिना मौत से होगा मरना, बिगड जायगी शान ॥ ३७२ ॥
बकरे जैसी दाढीवाले, पकडे खेंच निकाल।
सीधा साधा क्यों नहिं जाता, बड़ा किया बंबाल ॥ ३७३ ॥
दिया निमन्त्रण किसने तुझको, बिना बुलाया आय।
बकता पागल जैसा बेतुक, लज्जा दई नशाय ॥ ३७४ ॥
तब तो बूढे नारद बोले, देखो खूब सुनाय।
कुछ भी दिल में तुम मत रखना, क्षत्रीपन बतलाय ॥ ३७५ ॥
जरा बात पे टेढे होते, गालों की बौछार।
याद रखो अय मूर्खो ! मेरो, कहता सत्य विचार ॥ ३७६ ॥
सत्य बनेगा मेरा कहना, हो लक्ष्मण से व्याह।
चाहे जितना नाच नाचलो, करलो मन की चाह ॥ ३७७ ॥
मनोरमा हो चुकी लखन की, यह लो निश्चय मान।
चढ़ा क्रोध सुन सब पुत्रों को, होते है बे भान। ३७८ ॥
लात धमूका देकर मारा, पड़ा भूमि पे ध्यान।
बुला तेरे लक्ष्मण काका को, अभी बचावे जान ॥ ३७९ ॥
छुडवाया राजाने आकर, नारदको उसवार।
जान बचाके भागे वहां से, पाते ही छुटकार ॥ ३८० ॥

॥ नारद का राम लक्ष्मण पे जाना ॥

सीध आए पुरी अयोध्या, करी न कुछ भी देर।
पूछे लक्ष्मण हाथ जोडके, आये क्यों ? इस बेर ॥ ३८१ ॥
क्यों घबराए चिन्ता चित में, दे आदर बिठलाय।
क्या ? कहता हालत मै, अपनी, चित्त रहा घबराय ॥ ३८२ ॥
आदत से लाचार बना मै, परहित लेता कष्ट।
मेरी आज पुकार सुनाने, आया मै चित भ्रष्ट ॥ ३८३ ॥
रत्नपुरी में गया हुआ था, कर्मयोग बलवान।
सभा भरी थी रत्नभूप की, मै जाता उस स्थान ॥ ३८४ ॥
मनोरमा थी नृप की कन्या, पढ़ी गुणी विद्वान।
सभा सामने कला दिखाई, सभी हुए हैरान ॥ ३८५ ॥
क्या कहता ? तारीफ उसीकी अनुपम दिव्य स्वरूप।
शक्ति नहीं मेरी जिह्वा मे, कहूं मै उसका रूप ॥ ३८६ ॥
शुभ चिह्नों से अंकित तन मे, इन्द्राणी साक्षात।
मनोरमा पटरूप बताया, जो कि लिखा निज हाथ ॥ ३८७ ॥
फिर हां उनने रघुकुल की यों, इज्जत की बेकार।
मै चाहता था वह कन्या हो, लक्ष्मण की पटनार ॥ ३८८ ॥
उसके जैसी त्रिया एक भी, मत समझो रणवास।
कहा तभी उस नृप से मैंने, कन्या है गुण रास ॥ ३८९ ॥

क्या ताकत थी चित्रकार की, देवे चित्र बनाय।
अतुल सिया की कला कहावे, आवे हूब हिसाब ॥ ४७२ ॥
ऊपर लाली प्रेम दिखाती, बड़ी छिनाली नार।
लिया चित्रपट तुरत सिया से, जाली कपट कटार ॥ ४७३ ॥
सिया सामने उसी चित्र पे, दे जूतों की मार।
तुम्हें दिया दुख इसी दुष्ट ने, लंपट चोर लबार ॥ ४७४ ॥
उसी चित्र पे दईं ठोकरें, फेंक दिया कुछ दूर।
अब तो सारी सोचें दिल में, हुई कामना पूर ॥ ४७५ ॥
चली प्रेम दिखलाती तब तो, गुपचुप चित्र उठाय।
आई अपने महिल सभी तब,—सोचा एक उपाय ॥ ४७६ ॥

॥ चित्र पट लेकर शोकों का राम पे जाना ॥

पूजन अर्चन किया चित्रपट, शोकें समय विचार।
गईं रामके पास सुनाती, ईर्ष्या भाव उचार ॥ ४७७ ॥
आप समझते सिया सयानी, शील सत्य आगार।
किन्तु वही व्यभिचारी दुष्टा, भ्रष्टा किया आचार ॥ ४७८ ॥
मिला हमें सब भेद सिया का, था रावण पे ध्यान।
अब भी उसका ध्यान उसी पे, देखा हमने छान ॥ ४७९ ॥
आप समझते सीता जैसी, नहीं पतिव्रत और।
धोका खाया बेशक पतिवर, सुनिये करके गौर ॥ ४८० ॥

रावण चरण चिह्न को, पूजे, देखो पतिवर ? खास।
सिया हाथ का लिखा हुआ-यह, देखो चित्त बिमास ॥४८१॥
पूर्ण आपकी सन्मानित का, देखो-ऐसा काम।
मानों चाहे या मत मानो, पति होंगे बदनाम ॥ ४८२ ॥
उधर प्रेम-रावण पे रखती, आप नामके कंथ।
दोधारी तलवार समझलो, अजब उसीका पथ ॥ ४८३ ॥
कथन सुना सब ही शोकों का, करते राम विचार।
जाल रचाई क्या ! यह इनने, नारी चरित अपार ॥ ४८४ ॥
होता आया है अबला में, ईर्षा भाव हमेश।
कभी सिया में दोष न देखा, अब तक मैं लवलेश ॥ ४८५ ॥
इन शोकों की बातों पे मैं, जरा न धरता ध्यान।
यह तो मुजको कहा करेगी, नाहि नारी में ज्ञान ॥ ४८६ ॥
वृथा इन्हें समझाना कुछ भी, नहिं मानेगी बात।
एक बात राघव जब कहते, हो नहिं दिल आघात ॥ ४८७ ॥
अरे प्रिये ! जो कही तुम्हींने, बिलकुल होगा ठीक।
पूछेंगे हम इसी बात को, सीता से निर्भीक ॥ ४८८ ॥
शिक्षा देंगे उस सीता को, तुम दो चिंता छोड।
अपना धर्म निभाओ? हम ही, लेंगे सभी निचोड ॥ ४८९ ॥
सुन के सब ही राणी सोचे, पति का पूरण प्रेम।
इन बातों पे ध्यान न देते, चहैं सिया की खेम ॥ ४९० ॥

ईर्षा धरती सभी राणियें, आई अपने स्थान।
राह मिलाई एक सभी ने, हो सीता अपमान ॥ ४९१ ॥
एसा करना इसी चित्र को, देकर सखियों साथ।
जाय अयोध्या में बतलावें, कर २ लंबे हाथ ॥ ४९२ ॥
यही चित्र पट सिया पूजती, कर प्यारे को याद।
बेशक लगता पता इसीसे, सिया तजी मर्याद ॥ ४९३ ॥
प्रेम किया रावण से इसने, सीता बड़ी छिनाल।
जाओ दासी ! यह ले जाओ, कहनो सारा हाल ॥ ४९४ ॥
फैलादो घर २ में चरचा, फिर कुछ देखा जाय।
लेकर दासी चली चित्र को, सब को रही दिखाय ॥ ४९५ ॥
पुरवासी को बता रही है, देखो चित्र अनूप।
किसका चित्र बता तू दासी, क्या ? अचरज करतूत ॥ ४९६ ॥
कहें दासिए यह रावण का, पांव चित्र है खास।
इसे सिया नित पूजे अरचे, निकली खो बदमास ॥ ४९७ ॥
समझ रहे थे ठीक सिया को, सब जन सती बताय।
धर्म गमाया दाग लगाया, बात अभी प्रगटाय ॥ ४९८ ॥
सुना २ के सबको बातें, करे सिया बदनाम।
सभी शहर मे फिरे दासिएं, किया दुष्ट ये काम ॥ ४९९ ॥

॥ सात नगर रक्षकों का राम पे आना ॥

सेवक सच्चे सात राम के, फिरते नगर मझार ।
नई खबर जो मिले उसीको, देते थे उसवार ॥ २२८ ॥
विजय सूर-सुरदेव-सुपिंगल, चोथा-था-मधु-मान ।
कालक्षेप-काश्यप सुधर से, रक्षक सात पिछान ॥ २२९ ॥
अधिकारी ये सात महाना, रखे हुए रघुवीर ।
आए राघव सन्मुख थर थर, धूजत रहे शरीर ॥ २३० ॥
घबराए निज हौंस भूलते, खडे रहे बेडोल ।
राघव इनको देख सोचते, क्या यह करे किलोल ॥ २३१ ॥
मन में निश्चय हुआ कि बेशक, भय से हो बेभान ।
पूछे रघुवर क्यों तुम भाई, होकर के बलवान ॥ २३२ ॥
आज काँपते थर २ तुमतो, रहे मौन मुख धार ।
बात बनी क्या ? मुझे सुनाओ, बेडर आज उचार ॥ २३३ ॥
क्या कपन का रोग हुआ है, ऐसा लखा न हाल ।
मेरे से मत डरो जरा भी, धरो साँच की ढाल ॥ २३४ ॥
पुर रक्षक कहते यों स्वामिन् ? कैसे करें उचार ।
बातें मोटी छोटे मुख से, कहने में क्या ! सार ॥ २३५ ॥
बडे कृतघ्नी हम कहलावे, जो हम कहें न बात ।
हमको होता दोनों बाजू, अबतो प्रत्याघात ॥ २३६ ॥

सर्प छछुंदर न्याय बना यह, अद्‌भुत भीम बनाव ।
माफ करो अपराध हमारा, कहते हो उर घाव ॥ २३७ ॥
राम कहें बेशक तुम कहिये, माफ किया अपराध ।
सत्य बात सुनने में मुजको, किंचत् है नहि बाध ॥ २३८ ॥
सुना हमींने सो दरसाते, एक बड़ी फरयाद ।
जगह २ सुनने में आया, सीता का अपवाद ॥ २३९ ॥
सुना न जाता है कानों से, जिह्वा से न बयान ।
थोडे ही में अधिक, समझिये, आप प्रौढ़ विद्वान ॥ २४० ॥
फल फूलों से सज्जित तरु को, पक्षी लख ललचाय ।
बिन खाए बिन सूंघे उसको, कौन विमुख नर जाय ॥ २४१ ॥
गन्ध लिए बिन रह सकता क्या ? भ्रमर पाय यदि फूल ।
मद को छोडे नहीं शराबी, यदि पड़ती मुख धूल ॥ २४२ ॥
जो नर प्यासा देख जलाशय, रखता क्यों कर प्यास ।
सिंह बकरी को पाकर निश्चय, क्यों ? नहिं करे विनाश ॥ २४३ ॥
नहि पिघले क्या ? आग धरेप, रहता घृत मजबूत ।
मांसाहारी मांस पायके, छोडे क्या ? करतूत ॥ २४४ ॥
पर हाथों से भ्रष्ट हुवे हैं, लेखन पुस्तक नार ।
कामी सुन्दर नार पायके, निश्चय भोगन हार ॥ ५४५ ॥
सिया हरी जिस कारण रावण, रहती क्या बिन भोग ।
आते ही रख लीनो घर में, नहीं साक्षी का योग ॥ २४६ ॥

अधिक समय तक रहा लंक में, लोगों का [illegible] ।
बिन भोगे रावण रह सकता, यही समझ नहिं पाय ॥ २४७ ॥
कैसे ? शील सिया रख सकती, किया शील का भंग ।
उसी वीर के आगे अबला, नहिं बचने का ढग ॥ २४८ ॥
छूत लगे नां बडे पात्र को, छोटे का परहेज ।
बडे घरों को छूत न लगती, छोटे हो निस्तेज ॥ २४९ ॥
नगर नाल आ सर्व अशूची, बहके उनमें जाय ।
तो भी उसको सायर कहते, वर गंभीर दिखाय ॥ २५० ॥
लघु धातु के पात्र उसी को, धोकर घर में लाय ।
सोना चांदी बिन धोये ही, रखदे घर के मांय ॥ २५१ ॥
बड करे खोटा भी उसको, देते सब ही मान ।
ठीक काम यदि छोटे करते, दूपण उसे पिछान ॥ २५२ ॥
कबही छोटा चना खाय तो, निर्धन उसे बताय ।
बडे खाय तो सब कहते हैं, यह इच्छा से खाय ॥ २५३ ॥
अधिक समय रावण घर रहती, तो भी सती कहाय ।
मोटे की राणी कहलाती, छोटे दास गिनाय ॥ २५४ ॥
आदिनाथ से वंश आज तक, निर्मल रहा हमेश ।
नहीं किसी ने धब्बा खाया, रघुकुल वश दिनेश ॥ २५५ ॥
ऐसा कीजे कार्य जिसीसे, मिट जावे अपवाद ।
ध्यान धरो रघुवीर इसीपे, यही आज फरियाद ॥ २५६ ॥

उसी सेठ की नारी दूजी, सुनके यही बयान।
तेजी से होकरके बोली, करलो बन्द जवान ॥ ५८४ ॥
रहने दो बस सेठ आप अब, खूब सुनाई बात।
गिर जावेगी तुप हम ऊपर, अभी महिल की छात ॥५८५॥
सीता जैसी महासती यदि, हो जावे दो चार।
तब तो क्षण में सभी जगत का, हो जावे उद्धार ॥५८६॥
समझ चुकी में सब सीता का, क्या कहने में सार।
रूप रंग में वह हैं बेशक, पर वह कुलटा नार ॥ ५८७ ॥
खबर आपकी जरा नहीं है, रहो- सेज पे लेट।
रावण के घर रहके, खेला, व्यभिचारी आखेट ॥ ५८८ ॥
ढोल पोल खुल गई सिया की, सुनो सेठ श्रुत खोल।
साथ फिरी जंगल में पति के, इंमसे क्या? अनमोल ॥५८९॥
प्रेम उसीका लकेश्वर से, अभी हुआ नहिं दूर।
चित्र बनाकर चरण पूजती, बात- नगर मशहूर ॥ ५९० ॥
पटराणी की घर घर चर्चा, फैल रही है आज।
किन्तु सिया की सुन्दरता पे, मुग्ध हुए रघुराज ॥ ५९१ ॥
आज राम ने सूर्यवंश पे, लगा दिया है दाग।
अन्ध हुए राघव सीता पे, धरा पूर्ण अनुराग ॥ ५९२ ॥
पाप कभी यह छिप नहिं सकता, होगा प्रकट निदान।
सिया प्रशसा करे उसीको, लगता पाप महान ॥ ५९३ ॥

बदनामी लेकर के मरना, पशु से भी बदकार।
धिक् पटराणी अभिमानी पे, धिक् राघव अवतार ॥ ५९४ ॥
यह बातें तब रघुवर सुन के, गया कलेजा चीर।
काया कपन लगी दुखित हो, होते हृदय अधीर ॥ ५९५ ॥
आए अपने महिल देखते, करते शोक महान।
राघव भेजे हुए गुप्तचर, आए रघुवर स्थान ॥ ५९६ ॥
कही बात सब गुप्तचरों ने, सीता का अपवाद।
सुन नहिं सकते हम कानों से, लोक करे बकवाद ॥ ५९७ ॥
सुनके राघव चित में सोचे, बड़ा कर्म चडाल।
सिया कर्म भोगे अब तक ही, फिर भी नहीं निकाल ॥५९८॥
साथ रही वन वन में घूमी, जाती रावण द्वार।
खून बहाया लाखों जनका, हो रावण सहार ॥ ५९९ ॥
पड हमीं प कष्ट भयकर, फिर भी रहा सताय।
प्राण पियारी का अब होता, अपयश पुर में छाय ॥ ६०० ॥
निर्दोषित है सिया हमे हम, कैसे करें बहार।
बिना निकाले दोष न मिटता, दो धारी तलवार ॥ ६०१ ॥
फंसा बध दोनों बाजू में, दुख सागर में आज।
अक्क काम नहिं करे हमारो, कैसे रहती लाज ॥ ६०२ ॥

॥ सीता के हित राम को, लक्ष्मण और विभीषण का समझाना ॥

उसी समय लक्ष्मण चल आए, देखें भ्रात उदास।
कहिये स्वामिन! क्या दुख दिल में, लेते ठण्डी सांस ॥६०३॥
भ्राता! तुम से आज कहूं क्या, बात बड़ी बेढंग।
कर्म शत्रु ने गजब किया है, घना रग में भग ॥ ६०४ ॥
सुनकर आया आज सहर में, सीता का अपवाद।
रघुकुल शान बचाओ लक्ष्मण! रहे सदा आबाद ॥ ६०५ ॥
इससे तो मर जाना अच्छा, समझ रखा इस हाल।
यह सुन लक्ष्मण हृदय पड़ा ज्यों, नभ से वज्र कराल ॥६०६॥
अरज करे कर जोड़ी लक्ष्मण, सोचो श्री रघुवीर।
सत्य सामने झूठ न चलती, सत्य अजब तासीर ॥ ६०७ ॥
जबतक प्यारा लखन आपका, कोन फिकर का काम।
किसकी ताकत सूर्यवंश को, कर सकता बदनाम ॥ ६०८ ॥
पुण्य तेज है अधिक आपका, किसकी नहीं मजाल।
दोष सिया पे धरे उसीका, समझो आया काल ॥ ६०९ ॥
राम कहे नहिं शक्ति द्वारा, मिट सकता अपवाद।
पत्थर भंजन लोक सभी है, औगुन में आस्वाद ॥ ६१० ॥
हे स्वामी? क्या दोष सिया में, देओ हमे बताय।
कैसे छोड़ो बिना गुन्हा से, नीति भग दरसाय ॥ ६११ ॥
अगनी मे ठढक हो जावे, झरे चन्द्र अगार।
पानी मे पत्थर तर जावे, सागर छोडे कार ॥ ६०२ ॥

सीता सस्ती नहीं समझिए, सीता मूल्य अपार।
सीता सम नहिं सती समझना, सिया पुण्य अवतार ॥ ६४३ ॥
लखन विभीषण बातें कुछ भी, रघुवर धरे न कान।
एक किसी की बात न माने, अपनी हट ली तान ॥ ६४४ ॥
तज सकते थे कब सीता को, करते कोटि उपाय।
सीता का अपयश को सुन के, राम गए उभराय ॥ ६४५ ॥
राम कहैं मैं सभी जानता, नहिं सीता में दोष।
पतिव्रता में सिया समझता, पूर्ण भरी गुण कोष ॥ ६४६ ॥
किंतु किसी के कर्म न टलते, देखो ध्यान लगाय।
ऋषभदेव भी एक वर्ष तक, भोजन जल नहिं पाय ॥ ६४७ ॥
मात पिता और सासु ससुरा, रूठ गए भरतार।
अपयश कारण वन में फिरती, पवन कँवर की नार ॥ ६४८ ॥
समय पलटने पर जग हितु भी, होते दुश्मन रूप।
किये कर्म किस योग न टलते, समझो कर्म स्वरूप ॥ ६४६ ॥
किया राम ने वज्र हृदय-सा, अजब कर्म का खेल।
करे राव को-रंक पलक में, देता कर्म धकेल ॥ ६५० ॥
उसी समय राघव ने अपना, सेनापती "कृतान्त"।
उसे बुलाकर अपना सारा, कहते निज वृतान्त ॥ ६५१ ॥
जाकर वन में छोड़ो सीता, सुनो लगा के ध्यान।
किसके आगे गुप्त बात का, करना नही बयान ॥ ६५२ ॥

भीम भयानक वन में रखना, खुद ही पाकर त्रास।
बिन मारे से मर जावेगी, कौन देय विश्वास ॥ ६५३ ॥
सिया बात पे ध्यान न देना, करना मुज फरमान।
कर्म सताते उसी समय में, कौन करे परित्राण ॥ ६५४ ॥
रथ से नीचे करके सारा, देना हाल सुनाय।
यदि कुछ कहे तो लिख देता हूं, देना पत्र बताय ॥ ६५५ ॥
राम हुक्म सेनापति सुन के, हो जाता हैरान।
बिना विचारे कैसे कहते, होकर के विद्वान ॥ ६५६ ॥
चला सैन्यपति सिया पास में, राघव आज्ञा पाय।
उधर लखन रघु तट पे आए, कहते विनय जताय ॥ ६५७ ॥
पड़े नैन से नीर बिंदुएं पाते कष्ट कराल।
हे स्वामिन्! कर रहें आप क्या? बालक जैसा ख्याल ॥ ६५८ ॥
सीता जैसी पती परायण, कैसे रहैं निकाल।
गर्भवती अबला को कैसे!, देते दुःख कराल ॥ ६५६ ॥
काल रूप हो रघुवर बोले, चल चल हटजा? दूर।
कहना अब ना मुज से कुछ भी, बात नहीं मंजूर ॥ ६६० ॥
नहीं लखन की मानी राघव, चली न किसकी बात।
लक्ष्मण अपने स्थान सिधाए, करते आंसू पात ॥ ६६१ ॥
अधिक बात बढ़ गई अभी ये, नहिं मानेंगे राम।
पिता तुल्य श्रीराम कहाते, बना विकट ये काम। ६६२ ॥

॥ सेनापति द्वारा सीता को वनवास ॥

सेनापति रथ सज के लाया, था सीता का स्थान।
अर्ज करे करजोड़ आज ये, रघुवर का फरमान ॥ ६६३ ॥
दोहद पूरण कारण जाओ, जहां वृक्ष वन छाँह।
सुनी सिया मन होय मुदित अति, देखन दिल उत्साह ॥ ६६४ ॥
सरल स्वभावी सुन यह सीता, पतिका वचन प्रमाण।
करे तयारी झटपट चलने, होती खुशी महान ॥ ६६५ ॥
रथ में बैठ गई सीताजी, रथी चला उसवार।
अशकुन होने लगे अनेकों, करती वे दरकार ॥ ६६६ ॥
अश्व पवनवत् चले तुरत से, जाते गंगा तीर।
भीम भयानक देख सैन्यपति, मनमें हुआ अधीर ॥ ६६७ ॥
आगे रथ नहिं चल सकता है, खड़ा किया उसवार।
सिया देखती विपिन भयानक, बोली मिष्ट उचार ॥ ६६८ ॥
हे भाई तू? इस जंगल में, रथ लाया किस काज।
जो कुछ तेरे मन की सच्चे, कहदे मुजको आज ॥ ६६६ ॥
पहले भी वनवास कष्ट का, अनुभव हुआ महान।
उस जंगल सा यही दिखाता, होता दिल हैरान ॥ ६७० ॥
क्या? दिल तेरे पाप समाया, कहदे सारा हाल।
कहां हमारे पति देवर हैं, पड़ी कर्म की जाल ॥ ६७१ ॥

सीता सस्ती नहीं समझए, साता मूल्य अपार। -
सीता सम नहिं सती समझना, सिया पुण्य अवतार ॥ ६४३ ॥
लखन विभीषण बातें कुछ भी, रघुवर धरे न कान।
एक किसी की बात न माने, अपनी हट ली तान ॥ ६४४ ॥
तज सकते थे कब सीता को, करते कोटि उपाय।
सीता का अपयश को सुन के, राम गए उभराय ॥ ६४५ ॥
राम कहैं मैं सभी जानता, नहिं सीता में दोष।
पतिव्रता में सिया समझता, पूर्ण भरी गुण कोष ॥ ६४६ ॥
किंतु किसी के कर्म न टलते, देखो ध्यान लगाय।
ऋषभदेव भी एक वर्ष तक, भोजन जल नहिं पाय ॥ ६४७ ॥
मात पिता और सासू ससरा, रूठ गए भरतार।
अपयश कारण वन में फिरती, पवन कँवर की नार ॥ ६४८ ॥
समय पलटने पर जग हितु भी, होते दुश्मन रूप।
किये कर्म किस योग न टलते, समझो कर्म स्वरूप ॥ ६४९ ॥
किया राम ने वज्र हृदय-सा, अजब कर्म का खेल।
करे राव को रंक क्षणिक में, देता कर्म धकेल ॥ ६५० ॥
उसी समय राघव ने अपना, सेनापती "कृतान्त"।
उसे बुलाकर अपना सारा, कहते निज वृतान्त ॥ ६५१ ॥
जाकर वन में छोड़ो सीता, सुनो लगा के ध्यान।
किसके आगे गुप्त बात का, करना नहीं बयान ॥ ६५२ ॥

भीम भयानक वन में रखना, खुद ही पाकर त्रास।
बिन मारे से मर जावेगी, कौन देय विश्वास ॥ ६५३ ॥
सिया बात पे ध्यान न देना, करना मुज फरमान। -
कर्म सताते उसी समय में, कौन करे परित्राण ॥ ६५४ ॥
रथ से नीचे करके सारा, देना हाल सुनाय।
यदि कुछ कह तो लिख देता हूं, देना पत्र बताय ॥ ६५५ ॥
राम हुक्म सेनापति सुन के, हो जाता हैरान।
बिना विचारे कैसे कहते, होकर के विद्वान ॥ ६५६ ॥
चला सैन्यपति सिया पास में, राघव आज्ञा पाय।
उधर लखन रघु तट पे आए, कहते विनय जताय ॥ ६५७ ॥
पड़े नैन से नीर बिंदुएं पाते कष्ट कराल।
हे स्वामिन्! कर रहें आप क्या! बालक जैसा ख्याल ॥ ६५८ ॥
सीता जैसी पती परायण, कैसे रहें निकाल।
गर्भवती अबला को कैसे!, देते दुःख कराल ॥ ६५९ ॥
काल रूप हो रघुवर बोले, चल चल हटजा? दूर।
कहना अब ना मुज से कुछ भी, बात नहीं मजूर ॥ ६६० ॥
नहीं लखन की मानी राघव चली न किसकी बात।
लक्ष्मण अपने स्थान सिधाए, करते आंसू पात ॥ ६६१ ॥
अधिक बात बढ़ गई अभी ये, नहिं मानेंगे राम।
पिता तुल्य श्रीराम कहाते, बना विकट ये काम ॥ ६६२ ॥

॥ सेनापति द्वारा सीता को वनवास ॥

सेनापति रथ सज के लाया, था सीता का स्थान।
अर्ज करे करजोड आज ये, रघुवर का फरमान ॥ ३६३ ॥
दोहद पूरण कारण जाओ, जहां वृक्ष वन छांह।
सुनो सिया मन होय मुदित अति, देखन दिल उत्साह ॥ ६६४ ॥
सरल स्वभावी सुन यह सीता, पति का वचन प्रमाण।
करे तयारी झटपट चलने, होती खुशी महान ॥ ६६५ ॥
रथ में बैठ गई सीताजी, रथी चला उसवार।
अशकुन होने लगे अनेकों, करती वे दरकार ॥ ६६६ ॥
अश्व पवनवत् चले तुरत से, जाते गंगा तीर।
भीम भयानक देख सैन्यपति, मनमें हुआ अधीर ॥ ६६७ ॥
आगे रथ नहिं चल सकता है, खड़ा किया उसवार।
सिया देखती विपिन भयानक, बोली मिष्ट उचार ॥ ६६८ ॥
हे भाई तू? इस जगल में, रथ लाया किस काज।
जो कुछ तेरे मन की सच्चे, कहदे मुजको आज ॥ ६६९ ॥
पहले भी वनवास कष्ट का, अनुभव हुआ महान।
इस जगल रा यही दिखाता, होता दिल हैरान ॥ ६७० ॥
क्या? दिल तेरे पाप समाया, कहदे सारा हाल।
कहां हमारे पति देवर है, पड़ी कर्म की जाल ॥ ६७१ ॥

सीता सस्ती नहीं समझिए, सीता मूल्य अपार ।
सीता सम नहिं सती समझना, सिया पुण्य अवतार ॥ ६४३ ॥
लखन विभीषण बातें कुछ भी, रघुवर धरे न कान ।
एक किसी की बात न माने, अपनी हट ली तान ॥ ६४४ ॥
तज सकते थे कब सीता को, करते कोटि उपाय ।
सीता का अपयश को सुन के, राम गए उमराय ॥ ६४५ ॥
राम कहैं म सभी जानता, नहिं सीता में दोष ।
पतिव्रता में सिया समझता, पूर्ण भरी गुण कोष ॥ ६४६ ॥
किंतु किसी के कर्म न टलते, देखो ध्यान लगाय ।
ऋषभदेव भी एक वर्ष तक, भोजन जल नहिं पाय ॥ ६४७ ॥
मात पिता और सासु समरा रूठ गए भरतार ।
अपयश कारण वन में फिरती, पवन कँवर की नार ॥ ६४८ ॥
समय पलटने पर जग हितु भी, होते दुश्मन रूप ।
किये कर्म किस योग न टलते, समझो कर्म स्वरूप ॥ ६४९ ॥
किया राम ने वज्र हृदय-सा, अजब कर्म का खेल ।
करे राव को रंक क्षणिक में, देता कर्म धकेल ॥ ६५० ॥
उसी समय राघव ने अपना, सेनापती "कृतान्त" ।
उसे बुलाकर अपना सारा, कहते निज वृतान्त ॥ ६५१ ॥
जाकर वन में छोड़ो सीता, सुनो लगा के ध्यान ।
किसके आगे गुप्त बात का, करना नहीं बयान ॥ ६५२ ॥

भीम भयानक वन में रखना, खुद ही पाकर त्रास ।
बिन मारे से मर जावेगी, कौन देय विश्वास ॥ ६५३ ॥
सिया बात पे ध्यान न देना, करना मुज फरमान ।
कर्म सताते उसी समय में, कौन करे परित्राण ॥ ६५४ ॥
रथ से नीचे करके सारा, देना हाल सुनाय ।
यदि कुछ कह तो लिख देता हूं, देना पत्र बताय ॥ ६५५ ॥
राम हुक्म सेनापति सुन के, हो जाता हैरान ।
बिना विचारे कैसे कहते, होकर के विद्वान ॥ ६५६ ॥
चला सैन्यपति सिया पास में, राघव आज्ञा पाय ।
उधर लखन रघु तट पे आए, कहते विनय जताय ॥ ६५७ ॥
पड़े नैन से नीर बिंदुए पाते कष्ट कराल ।
हे स्वामिन्! कर रहें आप क्या? बालक जैसा ख्याल ॥ ६५८ ॥
सीता जैसी पती परायण, कैसे रहैं निकाल ।
गर्भवती अबला को कैसे, देते दुःख कराल ॥ ६५९ ॥
काल रूप हो रघुवर बोले, चल चल हटजा ! दूर ।
कहना अब नां मुज से कुछ भी, बात नहीं मजूर ॥ ६६० ॥
नहीं लखन की मानी राघव, चली न किसकी बात ।
लक्ष्मण अपने स्थान सिधाए, करते आंसू पात ॥ ६६१ ॥
अधिक बात बढ़ गई अभी ये, नहिं मानेंगे राम ।
पिता तुल्य श्रीराम कहाते, बना विकट ये काम । ६६२ ॥

॥ सेनापति द्वारा सीता को वनवास ॥

सेनापति रथ सज के लाया, था सीता का स्थान ।
अर्ज करे करजोड आज ये, रघुवर का फरमान ॥ ३६३ ॥
दोहद पूरण कारण जाओ, जहां वृक्ष वन छाँह ।
सुनो सिया मन होय मुदित अति, देखन दिल उत्साह ॥ ६६४ ॥
सरल स्वभावी सुन यह सीता, पतिका वचन प्रमाण ।
करे तयारी झटपट चलने, होती खुशी महान ॥ ६६५ ॥
रथ में बैठ गई सीताजी, रथी चला उसवार ।
अशकुन होने लगे अनेकों, करती बे दरकार ॥ ६६६ ॥
अश्व प्रवनवत् चले तुरत से, जाते गंगा तीर ।
भीम भयानक देख सैन्यपति, मनमें हुआ अधीर ॥ ६६७ ॥
आगे रथ नहिं चल सकता है, खड़ा किया उसवार ।
सिया देखती विपिन भयानक, बोली मिष्ट उचार ॥ ६६८ ॥
हे भाई तूं ? इस जंगल में, रथ लाया किस काज ।
जो कुछ तेरे मन की सच्चे, कहदे मुजको आज ॥ ६६९ ॥
पहले भी वनवास कष्ट का, अनुभव हुआ महान ।
उस जंगल सा यही दिखाता, होता दिल हैरान ॥ ६७० ॥
क्या ? दिल तेरे पाप समाया, कहदे सारा हाल ।
कहां हमारे पति देवर हैं, पड़ी कर्म की जाल ॥ ६७१ ॥

प्रथम पहर की छाया जैसे, पल में घटती जाय ।
ऐसे प्रीत घटाई मुजसे, रघुवर छेह दिखाय ॥ ७०१ ॥
बिंदु का सागर दिखलावे, कोई विरले संत ।
सागर को बिंदु दिखलावे, ऐसे मेरे कंत ॥ ७०२ ॥
इतने औगुण में से कोई, लेते गुण को छान ।
लंकेश्वर से कुछ भी निर्णय, कर लेते मतिमान ॥ ७०३ ॥
लुच्चे कामी की सुन कथनी, मुझ से हृदय चुराय ।
बिन निर्णय से वनमें भेजी, बिन सोचे रघुराय ॥ ७०४ ॥
बड़ो बड़ाई कभी न छोड़े, गही निभावे टेक ।
सागर मर्यादा नहिं छोड़े, यदि दुख पड़े अनेक ॥ ७०५ ॥
प्रभु के था दिल संशय मोटा, कोनी क्यों न तपास ।
लग सकती क्या आंच सांच को, सत्य शील आवास ॥ ७०६ ॥
ऐसा कार्य किया क्यों ! प्रभु ने, जगमें हो उपहास ।
किए उपार्जन मैं भोगूंगा, रहकर के वनवास ॥ ७०७ ॥
राजा खुश हो ठीक समझलो, विरचा करे बिगाड़ ।
क्या ? राखेंगे प्रिया अन्यमें, करें प्रिया से राड ॥ ७०८ ॥
सुनो सैन्यपति जो जो विरहा, आवेगी लूं भोग ।
जाओ ! बेडर अपने घरपे, छोड़ो दिल का शोग ॥ ७०९ ॥
स्वामी आज्ञा पालन करना, धर्म तुम्हारा खास ।
रथ को अपने साथ लेय के, जाओ रघुवर पास ॥ ७१० ॥

पति चरणों में वन्दन कहना, देना मुज सन्देश ।
दोष किसी का है नहिं इसमें, मेरे कर्म विशेष ॥ ७११ ॥
आशा टूट गई इस भवकी, परभव दर्शन आश ।
बैर लिया वह अब मेरे से, पिछले भवका खास ॥ ७१२ ॥
सोच समझ के साथ हमारे, आप किया व्यवहार ।
सभी प्रतीक्षा टूट रही है, सुन हम को भरतार ॥ ७१३ ॥
एक सिया नहिं होतो तुमको, तो भी है सतोष ।
अन्य नारियां बहुत आपके, रूपवती गुणकोष ॥ ७१४ ॥
सदा विजय हो रघुवर तुमकी, यह मुज मनके कोड ।
जैसी मुजको छोड़ी वैसा, धर्म न देना छोड ॥ ७१५ ॥
दोष किसी का नहीं—सभी सुन, समझो दोष कराल ।
पूर्व जन्म के उदय हुए हैं, आज हुई बेहाल ॥ ७१६ ॥
सूर्योदय हो देवे सब पर, उल्लुक को क्या ।
जाय जवासा सूके घन सुन, यही कर्म व्यवहार ॥ ७१७ ॥
सभी सुखी हैं राम राज्य में, किन्तु मुझे ताप ।
फिरती जंगल यह हैं मेरे पूर्व भवों का पाप ॥ ७१८ ॥
अष्टादश पापों का सेवन, किया पूर्व मतिदीन ।
धर्म चतुर्विध शरण न सेवे, पर पुद्गल आधीन ॥ ७१९ ॥
पांचों इन्द्री वश नहिं कीनो भोगों में तल्लीन ।
शुद्ध न पाला शील धर्म को, हिंसा रत दयाहीन ॥ ७२० ॥

क्रिया वही फल मिले जीवको, अपना कृत्य विशेष ।
समता भाव रखो मन अपने, वीतराग उपदेश ॥ ७२१ ॥
मूर्छा खाय गिरी तब भूमी, बाद सचेतन होय ।
वचन कहे सुविचार सियाजी, जोर जोर से रोय ॥ ७२२ ॥
राम बिना मैं होती दुखिया, ऐसे सुन बिन राम ।
दिल में बुरा मत धरना स्वामिन् ! सब के सुख विश्राम ॥ ७२३ ॥
सूर्यवंश में दीपक तुम हो, शशिधर सूर्य समान ।
कामधेनु कल्प चिंतामणि सम महिमा मेरु महान ॥ ७२४ ॥
अचल रहो यह राज आपका, अचल रहो यशगान ।
देवर मेरा अचल भक्ति में, होय सदा कल्याण ॥ ७२५ ॥
विनय युक्त स्वामी को कहना, यह मेरा सन्देश ।
नहिं चलती अब ताकत मेरी, किया कर्म ने द्वेश ॥ ७२६ ॥
सीता भी मेरी लछमण से, कहना है आशीष ।
राम भक्ति में रहो हमेशा, धरो चरण में सीस ॥ ७२७ ॥
दिया दोष नहिं मैं रघुवर को, पर है मेरे दोष ।
एक बात यह खटके दिल में, किया न प्रभु संतोष ॥ ७२८ ॥
मेरे पतिका मुजपे अधिका, किया हुआ उपकार ।
उसका बदला कैसे देती, मैं कृतघ्नि अपार ॥ ७२९ ॥
कौन सुनेगा सुख दुख बातें, बिना राम के और ।
अब तो वन में वनचर प्राणी, रहना वन के ठौर ॥ ७३० ॥

सभी स्वरों से ज्ञाता नृप थे, कहा मंत्रि से वैन।
गर्भवती राणी रोती है, चिन्ता में वेचेन ॥ ७५८ ॥
आए भूपति खबर लेन को, तुरत सिया पे चाल।
आहट सुभटों की सुनं करके, मन में आया ख्याल ॥ ७६० ॥
समझा कोई इस वन आए, डाकू चोर महान।
मेरा जेवर लेने पर यदि, करे धर्म मुज हान ॥ ७६१ ॥
भूषण तन के खोल खोल के, दिए जमीं पे डाल।
नमुकार का ध्यान किया मन, मिट जावे जंजाल ॥ ७६२ ॥
उधर पास में आए भूपति, इधर सिया तत्काल।
भूषण फेंक दिए नृप सम्मुख, बोले मिष्ट रसाल ॥ ७६३ ॥
क्यों आए मुज पास सभी तुम, क्या इच्छा है भ्रात !
मेरे गहने ले लो सारे, कहती सच्ची बात ॥ ७६४ ॥
अपने अपने स्थान सिधाओ, यह जेवर अनमोल।
सभी उमर तक यह खाओगे, समझो नहीं कितोल ॥ ७६५ ॥
अन्य किसी को दुख देओगे, यह मेरा अनुरोध।
द्रव्य उठाओ सभी हर्ष से, मेरे दिल नहिं क्रोध ॥ ७६६ ॥
भला सभी मेरी टल जावे, देओ पंथ बताय।
भला होयगा सभी तुम्हारा, छुटकारा में पाय ॥ ७६७ ॥
दय देख जब भूप विचारे, यह दुखियारी नार।
हासती ये पडी विरत में, अधिक दुखों का मार ॥ ७६८ ॥

अपना शील रखन के कारण, जेवर दिए उतार।
कहन लगे जब वज्रजंघ नृप, मिष्ट मधुर सुविचार ॥ ७६९ ॥
अरी बहन ! क्यों पडी भरम में, चिन्ता चित्त विशेष।
जेवर सारे पहनो तन पे, अक्षय रहो हमेश ॥ ७७० ॥
कैसे आई सुंदर ? वन में, कहो आपका स्थान।
किस कारण से दुख पाती हो, पता बता गुणवान ॥ ७७१ ॥
बहिन ! आपका धर्म भ्रात मैं, मुजको समझो खास।
वचन हमारा कभी न पलटे, मैं जिनवर का दास ॥ ७७२ ॥
सदा करें उपकार अन्यपे, देवें सिर अपनाय।
परवाह जेवर की नहिं हमको, परधन को ठुकराय ॥ ७७३ ॥
मत्री तब विश्वास दिया है, सीता को उसवार।
वज्रजंघ ये भूप बडे हैं, सत्य शील सरदार ॥ ७७४ ॥
बारहव्रत धारक श्रावक, लखे मात परदार।
परहित कारण भाव भव्य है, नहिंप्राण दरकार ॥ ७७५ ॥
सभी गुणों से पूरण यह है, कैसे करूं बयान।
जिसको जैसा कहते वैसा, इनकी सत्य जबान ॥ ७७६ ॥
चंदन से भी शीतल समझो, दिल औदार्य महान।
दुखीजनों के दु.ख देखके, आप बने हैरान ॥ ७७७ ॥
आता था विश्वास सिया को सुनके भूप बयान।
नृप कहता अय बहनी! अपनी कथा कहो मतिमान ॥ ७७८ ॥

सीता कहती फिरती मारी, कर्मों के आधीन।
जनक भूप की मैं पुत्री हूँ, शील धर्म तल्लीन ॥ ७७९ ॥
भामंडल है भ्राता मेरा, सीता मेरा नाम।
पूर्व जन्म के कर्मोदय से, होती मैं बदनाम ॥ ७८० ॥
मेरे प्राण गए नहि तनसे, इतना पाई दु.ख।
रघुवर की मैं नार कहाती, सभी कंतका सुक्ख ॥ ७८१ ॥
पुण्यवन्त पति साथ कभी ना, दुख पाऊंगी घोर।
पूर्ण मुझे विश्वास यही था, निकले कर्म कठोर ॥ ७८२ ॥
मुझे चुरा रावण ले जाता, फिर पाया छुटकार।
बाद कर्म ने ऐसा घेरा, देता सिर फटकार ॥ ७८३ ॥
सिरपे दोष लगाया मेरे, दीनों ये वनवास।
किया कर्म ये भोग रही हूँ, जैन धर्म विश्वास ॥ ७८४ ॥
नृप कहता अय बहनी ! तुमको समझ लियामैं हाल।
बहिन रुदन मत करो जराभी, छोडो इस ख्याल ॥७८५॥
सत्य शील मजूष तुम्ही हो, गया कष्ट बिरलाय।
करो धर्म का साधन सुख से, सपंत्ति सौख्य सवाय ॥ ७८६ ॥
भामंडलसा मुझे समझलो, सच्चा भ्रात समान।
सदा आपकी सेवा करता, आज्ञा समय प्रमाण ॥ ७८७ ॥
पार न आता तुम सद्गुण का, जिह्वा थके महेश।
तुमचरणों की रज सिरधरता, मेरे भाग्य विशेष ॥ ७८८ ॥

राज पाट धन धाम सपती, मिलती वार अनंत ।
किन्तु धर्म ये नहिं मिल सकता, सोचो राम महंत ॥ ८१८ ॥
मेरे से अपराध बना यदि, भूल चूक किस वार ।
क्षमा करो अविनय सब मेरा, इस भव के भरतार ॥ ८१९ ॥
तुममें हममें प्रेम पास का, होता किस्सा अंत ।
भव २ में हो भला आपका, यह मुज भाव अनत ॥ ८२० ॥
करो न्याय नीति से पालन, अवधपुरी का राज ।
मेरे कृत में ही भोगूंगा, रखें लाज जिनराज ॥ ८२१ ॥

॥ सीता विरह में राम का विलाप ॥

सेनापति से सिया हाल यह, सुन के जब रघुवीर ।
मूर्छा खाकर गिरे जमीं पे, अजब प्रेम तासीर ॥ ८२२ ॥
किया बुरा से बुरा सिया को, दीनी आज निकाल ।
बिना गुन्हा से दंड दिया मैं, किया काम चंडाल ॥ ८२३ ॥
विपदा डाली उसके सिर पे, सहसा किया विचार ।
अपने पग पे जान बूझ के, धरी कुल्हाड़ी धार ॥ ८२४ ॥
अमित गुणों की धारक सीता, दीनी ठोकर मार ।
बड़ा कृतघ्नी मैं अन्याई, मरना खाय कटार ॥ ८२५ ॥
मेघ झडी वह नीर दृगों से, डाले तब ही राम ।
मानी हित की बात न किसकी, किया बदी का काम ॥ ८२६ ॥

प्रीत पलक में तोडी उससे, सुन करके अपवाद ।
पर घर भजन लोक कहाते, सुख में करे विषाद ॥ ८२७ ॥
दोरंगी दुनियां का मुज को, पता लगा है आज ।
निंदा कीर्ती करे अन्य की, हो या काज अकाज ॥ ८२८ ॥
मेरी प्यारी कहाँ सिधाई, गुण की बड़ी निधान ।
पर नर देखन में थी अंधी, बहरी निंदा कान ॥ ८२९ ॥
झूठ कहन में मूक बनी थी, लूली परधन काज ।
पर घर जाने में थी पंगू, ऐसी गुण साम्राज ॥ ८३० ॥
शिक्षा देने में भी मंत्री, कार्य करन में दास ।
माता सम थी भोज्य समय में, पुण्यवती गुणरास ॥ ८३१ ॥
हुई न होगा सीता जैसी, सतियों में सिरदार ।
था सुर इन्द्राणी से अधिका, सीता रूप उदार ॥ ८३२ ॥
देव योग से मिली तथापी, कर्महीन बिन भाग ।
रखी गई मुज से नहिं देवी, दाख मिले नहिं काग ॥ ८३३ ॥
है अंधेरा सब महिलों में, बिना सिया के आज ।
प्रिया गुणों का पार न पाता, क्यों मे किया अकाज ॥ ८३४ ॥
मधुर स्वरों से लक्ष्मण बोले, सुनिये अब सरकार ।
क्यों ? करते चिंता चित्त चंचल, बीती बात बिसार ॥ ८३५ ॥
चिंता से चिंतित नहिं होता, समझो बुद्धि निधान ।
गिरने पर जो होय सचेतन, सो समझो विद्वान ॥ ८३६ ॥

नहीं हमारी पहले मानी, अब क्या हो पछताय ।
जल के गिरने बाद किन्तु पर, पाक अधिक हो जाय ॥ ८३७ ॥
चलिये अब जंगल में स्वामी, ढूंढे बन २ जाय ।
प्रभु ! आशा से जीवित होगी, निश्चय मुझे जनाय ॥ ८३८ ॥
स्वामी ! तुम हम मिलके जावें, देवें अति विश्वास ।
सीता लाओ जलदी चलके, मिटे विरह की प्यास ॥ ८३९ ॥
आप गए बिन नहिं आ सकती, आलस दीजे छोड ।
नहिं लज्जा की बात इसी में, चलो सिया हित दौड ॥ ८४० ॥
क्यों कर प्राण बचावेगी वह, होने आई रात ।
बैठे रघुवर तब विमान में, खेचर लेकर साथ ॥ ८४१ ॥
लिया साथ उस सेनापति को, चलता तुरत विमान ।
जहाँ सिया को छोडी बन में, आये उस ही स्थान ॥ ८४२ ॥
सिया ढूंढते राम बहु विधि, मिलता नहीं निशान ।
चिंता करने लगे रामजी, होते हैं बेभान ॥ ८४३ ॥
बोले हाय पछाड़ जमीपे, हो सीता अवसान ।
सिंह चिता भालू फिरते हैं, बेशक जाते प्राण ॥ ८४४ ॥
जल थल गिरि कंदर में ढूंढे, पता कहीं न पाय ।
या अजगर गल लिया उसी का, या भारंड उठाय ॥ ८४५ ॥
उठा गया व्यभिचारी कोई, जो जाता पर दीप ।
ढूंढ २ सब थकते अबतो, मिलती नहीं समीप ॥ ८४६ ॥

कहन लगा श्रयवीर ! तुम्हारी, हुई हमें पहिचान ।
क्षमा करो अपराध हमारा, देश्रो जीवन दान ॥ ६३४ ॥
श्रब देता मैं सुता खुशी से, श्रर्ज करो मजूर ।
हुआ जहाँ था उसी - स्थान पे, बढ़ा प्रेम श्रंकूर ॥ ६३५ ॥
इसी समय नारद मुनि श्राए, देते सब सत्कार ।
नारद पूछे दोनों दल में, कैसे प्रेम अपार ॥ ६३६ ॥
पृथु नृप पूछे लवणांकुश ये, किसके राजकुमार ।
कौन वंश में जन्म हुआ है, कहो हाल इसवार ॥ ६३७ ॥
नारद कहते निज बुद्धि से, करो देख पहिचान ।
अब तक तुमको पता लगा नहिं, नभ में छिपे न भान ॥६३८॥
प्रथम तीर्थंकर आदीश्वर प्रभु, ऋषभदेव भगवान ।
जिनके नंदन भरत चक्रिवर, पगपग नवे निधान ॥ ६३९ ॥
भरत चक्रि के सूर्ययशा थे, पुन परम भूपाल ।
सूर्ययशा से सूर्यवंश हो, पूर्वज सभी दयाल ॥ ६४० ॥
उन्हीं वंश में प्रगट हुए हैं, पुरी अयोध्या माय ।
पुरुषपनौता राम लखन हैं, तीन खंड के राय ॥ ६४१ ॥
सीता है रघुवर पट राणी, सुना सिया अपवाद ।
सिया सगर्भा घर से काढे, रखवे कुल मर्याद ॥ ६४२ ।
महासती कुल वंश प्रदीपन, जिनके हैं ये नंद ।
बादल में रवि छिप नहिं सकता, ऐसे ये कुलचंद ॥ ६४३ ॥

तब पृथुनृप ने मदनांकुश को, निज कन्या परणाय ।
वज्रजंघ की जो थी इच्छा, होती पूर्ण सवाय ॥ ६४४ ॥
लवणांकुश ने नारद मुनि से, कहा हृदय उद्गार ।
हमें मिला दो राम लखन को, इच्छा हुई करार ॥ ६४५ ॥
पुरी अयोध्या दूर यहाँ से, कितनी कहो सुनाय ।
ऋषि कहते योजन शत ऊपर, साठ अधिक उच्चार ॥ ६४६ ॥
चलो मिलाद्‌ राम लखन से, पुरी अयोध्या जाय ।
किन्तु बड़े वह वीर रहते, कायर लख घबराय ॥ ६४७ ॥
कवर कहें मिलते हैं ऐसे, कायर पुन कहाय ।
तलवारों के तेज मिलेंगे, निज वीरत्व दिखाय ॥ ६४८ ॥
दु:ख दिया निर्दोष सतीको, दें उन सजा करवाय ।
जिम माता के बचे पूरे, पेना हुए सवाय ॥ ६४९ ॥
वज्रजंघ बोला कवरों से चलिये अपने स्थान ।
बदला लेंगे रामलखन से, धरो धैर्य मतिमान ॥ ६५० ॥
प्रथम बढाओ ताकत अपनी, सेना शस्त्र जुटाय ।
बाद रामको मिलने से ही, शान सभी रहजाय ॥ ६५१ ॥
चलने की अब करते त्यारी, जीते देश अनेक ।
दल बादलसे चले साधने, आशा मिलन एक ॥ ६५२ ॥
वज्रजंघ-पृथु राय चले हैं, सभी कवर के साथ ।
प्रथम गए लोंकाच पुरी से, था कुबेर नरनाथ ॥ ६५३ ॥

जीते भूप कुबेर छत्रिक में, गए नगर लपाक ।
करणभूप था उसको जीता, पड़ी सभी में धाक ॥ ६५४ ॥
विजयस्थलिका भूप भ्रातृशत, जेते उसको जीत ।
गंगानदि के पार उतरते, होता रघ संगीत ॥ ६५५ ॥
गिरि कैलास उलंघन करके, उत्तर दिशि में जाय ।
नन्दचारु देश अधिक थे, जित लिए छिन माय ॥ ६५६ ॥
सिंहलजल कुंतल को जीते, भूतलवाटी देश ।
कालांबु अरु नंदी नंदन, भीम स शूल विशेष ॥ ६५७ ॥
शलभानल जन पद को साधा, पल में बिना प्रयास ।
सिंधुनदी तट देश साधते, रघुकुल करे प्रकाश ॥ ६५८ ॥
आर्य अनार्य सुदेश साधते, छोटे मोटे भूप ।
सभी साथ में हुए कवरके, जिनका तेज अनूप ॥ ६५९ ॥

॥ राम से युद्ध करने को माता से आज्ञा मांगना ॥

देश दिशिनों साधन करके, सभी साथ भूपाल ।
आए पुंडरिक नगर मुदित हो, लवणांकुश तव चाल ॥६६०॥
लवणांकुश ने निजमाता को, नमन किया धर प्रेम ।
तेज देख निज पुत्र रत्नका, माता पाई क्षेम ॥ ६६१ ॥
माता दे आशीष पुत्रको, प्रतपो तेज दिनेश ।
दोनों भ्राताने मामा को, कहा हाल सुविशेष ॥ ६६२ ॥

कुछ दिन में विद्या सिखलाई, अस्त्र शस्त्र बतलाय।
कला बहोत्तर सीखे सारी, नम्र वचन दरसाय ॥ ८७६ ॥
मामाजी को प्रतिदिन नमते, दोनों राजकुमार।
सभी राणिए देख देख के, होती खुशी अपार ॥ ८७७ ॥
अपने प्यारे पुत्र देख के, सीता पाती मोद।
लाड प्यार करती थी प्रतिपल, धरती भव्य विनोद ॥ ८७८ ॥
अपने मन में उसी समय में, याद पूर्व की आय।
जब लंका से आई मैं तो, सासुचरण सिरनाय ॥ ८७९ ॥
उसी समय दी सासूजी ने, शुभाशीष हितकार।
पुत्र हमारे हैं वैसे ही, जनमेंगे सुखकार ॥ ८८० ॥
वचन हुए फल रूप सासु के, हो प्रत्यक्ष सवाय।
कोशल्या के हुए एक सुत, सीता सुत दो जाय ॥ ८८१ ॥
जरा अशुभ कर्मों के द्वारा, हुई सासु से दूर।
सासु चरण की मुज कर्मों में, सेवा कहां सपूर ॥ ८८२ ॥
भाग्यवती मैं तभी बनूंगी, मिले सासु की सेव।
बाद मिटे सिर दोष हमारा, मिल जावे पतिदेव ॥ ८८३ ॥

॥सिद्धार्थ पुत्र से लवणांकुश का विद्याभ्यास॥

उसी समय पुण्योदय से, सिद्ध पुत्र विद्वान।
खड़े सिया के द्वारे आकर, भिक्षावृत्ति महान ॥ ८८४ ॥
मुंह पे थी मुंहपत्ति बांधने, रजोहरण था हाथ।
बारहव्रत के धारक श्रावक, पात्र जिन्होंके साथ ॥ ८८५ ॥
गगन गामिनी विद्या द्वारा, स्वेच्छाचार विहार।
विदेह क्षेत्र से फिरके आए, चाहैं शुद्ध आहार ॥ ८८६ ॥
दिया सिया ने भोज उनको, बोली विनय जताय।
नाम ठाम शुभ काम आपका, दीजे मुजे बताय ॥ ८८७ ॥
हे बहनी! सिद्धार्थ नाम मुज, सिद्ध पुत्र भी खास।
उत्तम गुणिजन मुनि दर्शन हित, मेरा सदा प्रवास ॥ ८८८ ॥
सेवा करना आगम सुनना, करना सूत्राभ्यास।
अवद्य भिक्षा लेता घर घर, श्रावक हूँ मैं खास ॥ ८८९ ॥
हे बाई तुम कौन सुनाओ, चिन्ता क्यों चितछाय।
अपनी कहदो कथा व्यथा को, आदि अन्त समझाय ॥८९०॥
सुनके हृदय भराया दुख से, नैना नीर निकाल।
जैसे कर्म किये मैं वैसे, भोग रही दुख जाल ॥ ८९१ ॥
अपना सारा हाल सुनाया, आदि अंत बतलाय।
सो सो यत्न करे राजा भी, पर घर वास कहाय ॥ ८९२ ॥
इतने दर्शन करने तबतो, राज कुंवार चल आय।
कहे मात दोनो पुत्रों को, नमो सिद्ध पग जाय ॥ ८९३ ॥
ज्योतिष और निमित्तक ज्ञाता, कहते करुणा लाय।
लवण कुश से पुत्र तुम्हारे, फिर क्यों चिंता छाय ॥ ८९४ ॥
पडे सभी शुभ लक्षण तन में, बढे दिव्य मतिवान।
तीन खंडके नायक पतिवर, देवर लखन महान ॥ ८९५ ॥
करते चिंता यथा हृदय में, वृथा चिंता का काम।
आश्वासन सीता को देते, पाई परमाराम ॥ ८९६ ॥
सभी समय पे ठीक बनेगा, सुत दोनों रतिवान।
लक्षण सुन्दर पडे सभी शुभ, सामुद्रिक फरमान ॥ ८९७ ॥
करे प्रार्थना सीता तबतो, सुनो! सिद्ध दे ध्यान।
ज्ञान पढाओ मुझ नंदण को, हो जावे विद्वान ॥ ८९८ ॥
सीता की सिद्धार्थ मानके, दे विद्या का दान।
थोडे दिन में पढली सारी, पुत्र बढे गुणवान ॥ ८९९ ॥
विद्या वारिधि जान पुत्र को, देते सियको लाय।
हे बहनी! ये नंदण दोनों, हैं विद्वान सवाय ॥ ९०० ॥
कुछ ही दिन में पुण्य प्रकट हो, होगा सब संजोग।
सभी कला सिखला दी सुतको, वैधक ज्योतिष कोक ॥९०१॥
जीत सके ना इन्द्र इन्हें तो, मनुज विचारे कौन।
नहीं किसी से यह डर सक्ते, भागे शत्रु ज्यों पौन ॥९०२॥
सिद्ध पुरुष चलदिए वहां से, उडके तब आकाश।
युगलनन्द के पुण्य प्रकट हो, दिन २ तेज विकाश ॥ ९०३ ॥
वज्रजंघ की शशिचूला थी, कन्या रूप निधान।
माता रेवती द्वारा उपनी, पुण्य पुंज रतिवान ॥ ९०४ ॥

कहन लगा अयवीर ! तुम्हारी, हुई हमें पहिचान ।
क्षमा करो अपराध हमारा, देओ जीवन दान ॥ ६३४ ॥
अब देता मैं सुता खुशी से, अर्ज करो मंजूर ।
द्वेष जहाँ था इसी स्थान पे, बढ़ा प्रेम अंकूर ॥ ६३५ ॥
इसी समय नारद मुनि आए, देते सब सत्कार ।
नारद पूछे दोनों दल में, कैसे प्रेम अपार ॥ ६३६ ॥
पृथु नृप पूछे लवणांकुश ये, किसके राजकुमार ।
कौन वंश में जन्म हुआ है, कहो हाल इसवार ॥ ६३७ ॥
नारद कहते निज बुद्धि से, करो देख पहिचान ।
अब तक तुमको पता लगा नहिं, नभ में छिपे न भान ॥६३८॥
प्रथम तीर्थंकर आदीश्वर प्रभु, ऋषभदेव भगवान ।
जिनके नंदन भरत चक्रिवर, पगपग नवे निधान ॥ ६३९ ॥
भरत चक्रि के सूर्ययशा थे, पुत्र परम भूपाल ।
सूर्ययशा से-सूर्यवंश हो, पूर्वज सभी दयाल ॥ ६४० ॥
उन्हीं वंश में प्रगट हुए हैं, पुरी अयोध्या माय ।
पुरुषपनोता राम लखन हैं, तीन खंड के राय ॥ ६४१ ॥
सीता है रघुवर पटरानी, सुना सिया अपवाद ।
सिया सगर्भा घर से काढे, रखते कुल मर्याद ॥ ६४२ ।
महापती कुल वंश प्रदीपन, जिनके हैं ये नंद ।
बादल में रवि छिप नहिं सकता, ऐसे ये कुलचंद ॥ ६४३ ॥

तब पृथुनृप ने मदनांकुश को, निज कन्या परणाय ।
वज्रजंघ की जो थी इच्छा, होती पूर्ण सवाय ॥ ६४४ ॥
लवणांकुश ने नारद मुनि से, कहा हृदय उद्गार ।
हमें मिला दो राम लखन को, इच्छा हुई करार ॥ ६४५ ॥
पुरी अयोध्या दूर यहाँ से, कितनी कहो सुनाय ।
ऋषि कहते योजन शत उपर, साठ [illegible] ॥ ६४६ ॥
चलो मिलादें राम लखन से, पुरी अयोध्या जाय ।
किन्तु बडे वड वीर कहाते, कायर लख घबराय ॥ ६४७ ॥
कवर कहैं मिलते हैं ऐसे, कायर पुन कहाय ।
तलवारों के तेज मिटेंगे, [illegible] वीर व दिखाय ॥ ६४८ ॥
दुःख दिया निर्दोष [illegible], दे हम सजा चखाय ।
जिम माता के दर्द [illegible], पेस [illegible] सवाय ॥ ६४९ ॥
वज्रजंघ बोला कवरों [illegible] क्षत्रिये अपने स्थान ।
बदला लेंगे रामलखन [illegible] धरो धैर्य मतिमान ॥ ६५० ॥
प्रथम बढाओ ताकत अपनी, सेना शस्त्र जुटाय ।
बाद राम को मिलने से ही, शान सभी रहजाय ॥ ६५१ ॥
चलने की अब करते त्यारी, जीते देश अनेक ।
दल बादलले चले साधने, आशा मिलने एक ॥ ६५२ ॥
वज्रजंघ-पृथु राय चले हैं, सभी कवर के साथ ।
प्रथम गए लोंकाच पुरी से, था कुबेर नरनाथ ॥ ६५३ ॥

जीते भूप कुबेर क्षणिक में, गए नगर लपाक ।
करणभूप था उसको जीता, पडी सभी में धाक ॥ ६५४ ॥
विजयस्थलिका भूप भ्रातृशत, जीते उसको जीत ।
गंगानदि के पार उतरते, होता रव संगीत ॥ ६५५ ॥
गिरि कैलास उलंघन करके, उत्तर दिशि में जाय ।
नन्दणचारु देश अधिक थे, जित लिए छिन माय ॥ ६५६ ॥
सिंहलजख कुंतल को जीते, भूतलवासी देश ।
कालाम्बु अरु नदी नंदन, भीम रु शूल विशेष ॥ ६५७ ॥
गलभानल जन पद को साधा, पल में बिना प्रयास ।
सिंधुनदी तट देश साधते, रघुकुल करे प्रकाश ॥ ६५८ ॥
आर्य अनार्य सुदेश साधते, छोटे मोटे भूप ।
सभी साथ में हुए कंवरके, जिनका तेज अनूप ॥ ६५९ ॥

॥ राम से युद्ध करने को माता से आज्ञा मागना ॥

देश [illegible] साधन करके, सभी साथ भूपाल ।
आए पुंडरिक नगर मुदित हो, लवणांकुश तब चाल ॥६६०॥
लवणांकुश ने निजमाता को, नमन किया धर प्रेम ।
तेज देख निज पुत्र रत्नका, माता पाई क्षेम ॥ ६६१ ॥
माता दे आशीष पुत्रको, प्रतपो तेज दिनेश ।
दोनों भ्राताने मामा को, कहा हाल सुविशेष ॥ ६६२ ॥

दोनों रथ में गए वीर वे, अपनी हठ को ठान।
किसी तरह समझाओ भ्राता, पुत्र अभी नादान ॥ ९९२ ॥
राम लखन से युद्ध करेंगे, भया निकलेगा सार।
दोनों बाजू हानी अपनी, बात बने बेकार ॥ ९९३ ॥
समझाया मैं बहुत कवर को, जाते हिम्मत धार।
उन आगे क्या नर ताकत, जावे सुर भी हार ॥ ९९४ ॥
सुनके यों भामण्डल बोले, मिला आपसे ठीक।
समझा देता अभी जायके, आप बनो निर्भीक ॥ ९९५ ॥
बिन समझे उनकी ताकत को, खोदेंगे निज प्राण।
बहनी तुम हम मिलके चलने, काम बने आसान ॥ ९९६ ॥
भामडल सीताजी दोनों, चलते बैठ विमान।
जल्दी पहुंचे निज नदन पे, जहां युद्ध का स्थान ॥ ९९७ ॥
निज माता को नंद देखके, चरने सीस झुकाय।
माता बोली यह भामडल, मामा लग कहाय ॥ ९९८ ॥
नमन करो शिक्षा लो इनसे, होवें सबकी खैर।
सुनके दोनों नंदन नमते, मामा को उस बेर ॥ ९९९ ॥
कंठ लगाया पास बिठाते, लेते अपनी गोद।
हित की शिक्षा देते मामा, मनमें बढे प्रमोद ॥ १००० ॥
राम वीर है सिया विरांगन, महिमा अति ससार।
तुम्ही वीर के हुए वीरसुत, यह क्या किया विचार ॥१० १॥

युद्ध पिता से करो उसोमें, होय तुम्हारी हौंस ॥
जिनके आगे मरा दशानन, निकला पल में सांस ॥१००२॥
आप अब तो युद्ध भूमि में, नहीं छोड़ना ठीक।
राम लखन भी लड़ने मुजसे, आकर खडे नजीक ॥१००३॥
अब मामाजी आप स्नेह वश, हमको रहे डराय।
इसी तरह से माता ने भी, धमकी अधिक बताय ॥१००४॥
हमसे यदि समझो कम ताकत, बडे वीर हैं राम।
इसका मतलब यही निकलता, छोड़ भागें संग्राम ॥१००५॥
भामण्डल की एक न मानी, भामडल उसवार।
किया सेनदल खूब इकट्ठा, युद्ध हेतु तैयार ॥१००६॥
तुरत छिड़ा तब युद्ध विकट ही, लेय शस्त्र सब आय।
मिले वीर से वीर परस्पर, याद रहें वर्णाय ॥१००७॥
प्रलय कालवत् युद्ध करें हैं, चढ़ा खून नर अंग।
भामडल भी खडे देखते, होता कैसा जंग ॥१००८॥
लव कुश दोनों शस्त्र धारके, खड़े हुए धर जोश।
राम लखन की सेना भगती, भूले सब ही होंस ॥१००९॥
आते जब सुग्रीव विभीषण, लड़ने लव कुश साथ।
भामडल को बैठा देखा, शस्त्र नहीं कुछ हाथ ॥१०१०॥
कहते तब सुग्रीव-वीर क्यों, बैठे आप विचार।
विस्मय हमको हुआ देखके, करते बेदरकार ॥१०११॥

हमसे छिपा क्या! फटा तुम्हारा, दिल मित्रपन छोड़।
राम लखन के सेवक होके, लिया मुंह क्यों मोड़ ॥१०१२॥
बहनोई से नाता तोड़ा, कैसी हो तकरार।
कौन ? संबंधी है ये दोनों, लिया पक्ष तुम धार ॥१०१३॥
सुनके यों भामंडल बोले, मैं रघुवर का दास।
जुदा हुआ नहिं होने वाला, रखिये मत विश्वास ॥१०१४॥
तुम हमसे जहि होय भिन्नता, नहिं टूटता प्रेम।
किन्तु न्याय का पक्ष लिया मैं, पीतल संग के हेम ॥१०१५॥
खडे सामने कौन ? वीर ये, श्री रघुवर के नंद।
मात सिया के पुत्र पियारे, कुल दीपक कुलचंद ॥१०१६॥
लवणांकुश है नाम इन्हीं का, ये मेरे भाणेज।
कौन लड़े या लड़े इन्हीं से, दिव्य रूप वर तेज ॥१०१७॥
दिया सिया को कष्ट रामने, छोड़ी वन निर्दोष।
उसका बदला लेने आए, खाकर दिल में जोश ॥१०१८॥
बनो आप मध्यस्थ पक्ष तज, डालो सब हथियार।
दर्शन करलो सिया मात के, समझो इसमें सार ॥१०१९॥
करवादेंगे प्रेम परस्पर, पिता पुत्र तकरार।
ठहरें कुछ देखें आँखों से, क्या निकलेगा सार ॥१०२०॥
मिले साथ में भामडल से, अस्त्र शस्त्र दे डार।
अपनी सेना लेकर सारी, दूर हटें उसवार ॥१०२१॥

बड़े स्यान उठ योध समझत, आखिर तो नादान।
[illegible] तेरी बातें, जो आजा मैदान ॥१०५२॥
आए दोनों सिंह समर में, जाकर के अति जोश।
होता दृढ़ संग्राम परस्पर दिल में छाया रोश ॥१०५३॥
राम अनुज अरु लवणांकुश के, क्रम से सारथि जान।
कृतान्त वीर विराध वज्रजंघ, भूपति पृथु पहिचान ॥१०५४॥
साथी थाते रामलखन के, जो करते थे वार।
[illegible] सब [illegible] निकालो, चला एक नहिं कार ॥१०५५॥
राम [illegible] अरे सारथी ! लेलो शत्रु दबाय।
'[illegible] प्रभु घोड़े के शर लागे, गए अधिक घबराय' ॥१०५६॥
[illegible] रथके ढीले बंधन, खेंचे देकर जोर।
[illegible] धीरमें दिलमें, वैरी बल हैं घोर ॥१०५७॥
[illegible] होते हाथ हमारे, ऐसा कभी न होय।
[illegible] होता ये हाल हमारा, संशय मेटे कोय ॥१०५८॥
[illegible] वज्रावर्त हमारा, करता था सब काम।
[illegible] को रहा फेंके, होता मैं बदनाम ॥१०५९॥
[illegible] सु धीरे मारे, [illegible] भी हो बेकार।
[illegible] जायके, अंकुश शस्त्र उदार ॥१०६०॥
[illegible] ये शस्त्र मचाया, सवित यश हजार।
[illegible] किस कारण से, आज हुए बेकार ॥१०६१॥

उत्तर सबही शस्त्र दिए हैं, खाली जाते वार।
निर्भय आता शत्रु निकट में, चरूड़ रहा दीदार ॥१०६२॥
अशुभ कर्मका उदय हुआ क्या ! पावेंगे हम हार।
कैसे जगमें मुह बतावें, जीवन में धिक्कार ॥१०६३॥
हैं दिखने के छोटे पर ये, छोटे खोटे जान।
कैसे ! इनसे पार पड़ेगा, छोटे पर बलवान ॥१०६४॥
मुस्कलाके झट अंकुश ऊपर, चढे लखन उसवार।
हटा दिया अंकुशने झटसे, लखन वाण बेकार ॥१०६५॥
फेंका अंकुशने शर अपना, लगा लखन के आय।
मूर्छा खाकर रथ में लोटे, हा ! हा ! कार मचाय ॥१०६६॥
राम हुक्म से रथ को उलटा, ले जाते पुरमाय।
तब विराधने रथ सम्रामिक, लीना तुरत बढ़ाय ॥१०६७॥
जरा देरमें हुए सचेतन, बोले अरे विराध।
अनुचित कार्य तुरत कर डाला, आज किया अपराध ॥१०६८॥
राम लडे हैं समर भूमि में, सुत्र रथ घर ले जाय।
अभी जायके लडे समर में, अपना बल दिखलाय ॥१०६९॥
अपना रथ रण मिड उसको, लाए अंकुश पास।
निज काका को देखा अंकुश, होते चित्त हुलास ॥१०७०॥
लखन कहेरे! बचा अभी तक, अभी अभी इकबाल।
चक्र सुदर्शन के चलने से, निकट समझलो काल ॥१०७१॥

[illegible] खूब मनाया हर्ष।
तुजे मिटानेवाला जगसे, चक्र यही उत्कर्ष ॥१०७२॥
अंकुश कहता चक्र सिवा बस, रहा न कुछ भी जोर।
इसे तोडके चूरण करदूं, भूलो सभी बकोर ॥१०७३॥
मेरे सन्मुख तुम जैसे सभी, आकार मिले हजार।
क्या ताकत है जिस कीडेकी, मुजपे करदे वार ॥१०७४॥
सीधे फिर भी द्वार सिधाओ, फिर आए क्यों? लोट।
सोचा मैंने रथ फिरने पर, हो ताकत में खोट ॥१०७५॥
सुने कटुक जब बैन कवर के, आया लक्ष्मण जोश।
चक्र सुदर्शन लगे घुमाने नंनलाल धर रोष ॥१०७६॥
विद्युत सम पलकार निकलता, कडकडाट आवाज।
चक्र तभी छोडा अंकुशपे, मेघ नाद ज्यों गाज ॥१०७७॥
लवणांकुश का दल सारा ही, चक्र देख घबराय।
चक्र प्रदक्षण दे अंकुश को, तीन बार फिर जाय ॥१०७८॥
बैठा लछमण के हाथों पे, चक्र लौट उसवार।
कपोतवत् वह उठकर बैठा, अपना स्थान निहार ॥१०७९॥
पुन लखन ने चक्र चलाया, फिर आया निज पास।
गोत्र दरा का वध नहि करता, चक्र सुदर्शन खास ॥१०८०॥
पुन तीसरी वार घुमाया, देकर सारा जोर।
फिर भी आया चक्र पास में, लखा चक्र ये घोर ॥१०८१॥

देखलिया जब लवणांकुशने, पिता मिलन को श्राय ।
छोड दिए सब शस्त्र हाथ से, रहें अधिक हर्षाय ॥१११॥
भामण्डल सुग्रीव साथमें, रथपे हो असवार ।
श्राए दोनों निकट उतरते, भूमीपे उसवार ॥१११२॥
दोनों भ्राता श्राकर गिरते, राम लखन के पेर ।
तुरत उठा लषमण छातीसे, लगा लिए दो शेर ॥१११३॥
चदन शशिवल छाह जिन्होंसे, शीतल पुत्र विशेष ।
परम पियारा पुत्र कहाता, पुत्र अधिक हृदयेश ॥१११४॥
राघव वश बढाने को हैं, नंद चंद सुखकंद ।
सुतके द्वारा सकल सपदा, पुत्र से पूनमचद ॥१११५॥
घर राखन को पुत्र कहाते सुतसे परमानद ।
पुत सरीखी वस्तु नहीं जग, शन्य सभी छलछद ॥१११६॥
उठा पुत्र को कठ लगाया, हर्ष हिये न समाय ।
निज गोदीमें पुत्र बिठाया, मस्तक हाथ फिराय ॥१११७॥
नैन नीरसे सुत न्हवराते, निरखे वारंवार ।
किया शत्रुघन को तव वदन, काका करते प्यार ॥१११८॥
लखा सियाने जभी दूरसे, पिता पुत्रका रंग ।
पुन्डरिकपुर को वैठ यान मे, उडते यथा विहग ॥१११९॥
सिंह ज्यों होते पुत्र किसी के, गीदड पुत्र अनेक ।
नाम डुबानेवाले लाखों, यशवाला नर एक ॥११२०॥

भामंडल सुग्रीव मित्र हैं, पहले ज्यों अभिराम ।
नीर छीर सी प्रत निभाई, छोड पक्षका काम ॥११२१॥
देख अपूर्व सुदृश्य नगरजन, क्या ? बूढे क्या ? बाल ।
सूरत प्यारी लवणांकुश की, अनमिखनेन निहाल ॥११२२॥
सरमिंदे हो नर वे जिनने, दिया सियाको दोष ।
दत तले रखके निज अगुल, भूले अपना होश ॥११२३॥
अन्य भूप भी राज कवर को, अपना सीस भुकाय ।
सभी कुटवी मिलने श्राए, रहें प्रेम दरसाय ॥११२४॥
राम लखन जब गज पे वैठे, आगे पुत्र बिठाय ।
जय जयनादों से नभ गु जित, भट चारण गुण गाय ॥११२५॥
पुर में किया प्रवेश सभी जन, देखे नैन पसार ।
धन्य २ श्रीराम लखन युग, धन्य सु राजकवार ॥११२६॥
कारागृह से कैदी छोडे, दिया सभी को दान ।
नरनारी गोखें छज्जों में, करते ये सन्मान ॥११२७॥
अजब छटा यह देख इन्द्र भी, होता था हैरान ।
सुन्दर इन दृश्यों के सन्मुख, घटती मेरी शान ॥११२८॥
गजसे उतरे गए भवन में भरा जहां दरबार ।
उत्सवपुर में करते घर घर, सजा सभी बाजार ॥११२९॥
नोबत श्रौर नकारे बाजे, घर घर मगल माल ।
बधा रही है सभी कामनी, भर मोती की थाल ॥११३०॥
वर्षा बरस रही पेमों की, अजब अयोध्या माय ।
मृत्यू मुख से जीव बचाए, अनुकंपा उरलाय ॥११३१॥

॥सीता बुलाने के लिए सुग्रीवादिक की अर्जी॥

उसी समय सुग्रीव विभीषण, लषमण अरु हनुमान ।
अंगद आदिक बड़े बड़े नृप, बोले मिए जवान ॥११३२॥
अर्ज सुनाते श्री रघुवर को, अब तक सीतामात ।
कष्ट अधिक मनके सब दुखों, झेले अपने गात ॥११३३॥
अब क्या? हालत वर्तमान मे, इसका करो विचार ।
जैसे पछी निज बच्चों से, करती कैसा प्यार ॥११३४॥
रात दिनों वह सेवन करती, भूख सहन कर प्यास ।
चूगा देती फिर २ करके, धरे पुत्र की आश ॥११३५॥
हिरनी अपना बच्चा देखी, मनमें अति हर्षाय ।
कभी विरह हो जावे वह तो, खान पान विसराय ॥११३६॥
पशु भी प्रेम रखे निज शिशु पे, पागल सुत पे मात ।
श्राप विरह में पुत्र आश रख, अपना समय बितात॥११३७॥
सीता जैसे नद वीर वर, अन्य नजर नहि आय ।
पुत्र विरह मे अब वह क्यों कर, अपना समय विताय ॥११३८॥
पुत्र विरह में दिवस बरसे ज्यों, उनका रहा विताय ।
मिले नहीं यदि पुत्र सियाको, देगी प्राण गमाय ॥११३९॥

एक अग्नि का कुंड बना के, धरे खैर अंगार।
आ जावे तब अवधपुरी के, मिल के सब नरनार ॥११६९॥
तब रघुवर यों मुझ से कहदे, तू है शील निधान।
तो अब कूदो इसी कुंड में, पडके करलो स्नान ॥११७०॥
ऐसे तो मैं नहिं आ सकती, कभी राम के पास।
मेरे कारण लगे वंश में, दाग पाप का खास ॥११७१॥
उनको क्यों? आकर दुख देऊं, सह लूं गी मैं आप।
मेरे द्वारा सभी नगर जन, पाते हैं संताप ॥११७२॥
किए मेरे कर्मो का भोगू, नहीं किसी का दोष।
कष्ट समय में कौन किसी को, देते हैं संतोष ॥११७३॥
तब सुग्रीव कहैं सुन माता, ऐसे कहो न बोल।
सभी मानो मेरी कहनी, इसमें नहीं किलोल ॥११७४॥
भेजा मुझ को श्री रघुवर ने, बुलवाये है खास।
किया गया है कुंड आग का, रखो आप विश्वास ॥११७५॥
यों सुन सीता खुश होकर के, जाती बैठ विमान।
महिन्द्र बाग में ठहरे जाकर, भव्य मनोहर स्थान ॥११७६॥
लषमण आते खबर लेने को, नमे सिया के पैर।
अन्य भूप भी सबही आए, चढी खुशी की लेर ॥११७८॥
मिल मिल के नरनारी आए, सीता दर्शन काज।
लषमण अरज करे कर जोडी, विनय मधुर आवाज ॥११७७॥

पहले जैसा सभी आपका, राजपाट धन धाम।
हम भी चाकर सदा आपके, आप हमारे स्वाम ॥११७९॥
सीता कहती लगा हुआ है, पुरजन का अपवाद।
दूर हुए बिन कैसे आऊं, रखनी कुल मर्याद ॥११८०॥
इतने आए रघुवर चल के, करती सिया प्रणाम।
देख सिया को नैन भराए, पाए मन आराम ॥११८१॥
हे राणी! बन के दुख देखे, पाये कष्ट महान।
इधर सताया विरह दुःख मुझ, बना हृदय पाषाण ॥११८२॥
एक और भी कष्ट आपको, सहना होगा आज।
दिल में है दुख पूर्ण मुझे पर, रखना कुल की लाज ॥११८३॥
करना होगा स्नान आग में, होवोगे निर्दोष।
रावण का जो दोष आप सिर, मिटे होय संतोष ॥११८४॥
सीता कहती सभी कबूली, आग स्नान की बात।
एक बार क्या? क्रोडबार भी, करु आज साक्षात ॥११८५॥
पहले ही यदि स्नान कराते, मुझे न था इन्कार।
अब भी मैं तैयार स्नान को, खुशी खुशी भरतार ॥११८६॥
रहना सच मजबूत बात पे, मैं भी हूं मजबूत।
साहस टते सत्यशील में, सार्थक जस करतूत ॥११८७॥
सीसा ताता मुझे पिलादो, करवादो विषपान।
लोहा गोला गरम उठाऊं, देखो डाम निशान ॥११८८॥

अग्नि स्नानादिक करने में, बेशक हूं मैं त्यार।
फिर मत कहना सिया सदोषित, करलो सब इतबार ॥११८९॥
चाहे सोही धीज करालो, होगा सांच दिखाव।
नहिं है कोई सांच समाना, झूठे मुख नहिं आब ॥११९०॥
हाथ तीन सौ खाड खुदाई, लम्बा चौडा कुंड।
दोय पुरुष सम अंदर ऊंडा, डाले चन्दन झुण्ड ॥११९१॥
आग लगा के घृत को डाला, ज्वालों ज्वाल प्रजाल।
तेज न होता सहन जरा भी, किंशुक फूल सु जाल ॥११९२॥
लषमण अरु सुग्रीव तेज लख, गया हृदय घबराय।
कहन लगे हो गई धीज अब, सीता शील सवाय ॥११९३॥
क्या ताकत किसकी है जगमें?, कहे आपमें दोष।
अब कोई यदि कहेता उसके, पलमें उडते होंस ॥११९४॥
सिया कहे यदि पश्चिम प्रकटे, पूर्व दिशा तज भान।
तोभी प्रण नहिं मेरा टलता, किये आग का स्नान ॥११९५॥

॥अवधपुरी में जयभूषण मुनि को केवल ज्ञान॥

उसी समय में अवधपुरी में, बनता एक बनाव।
पुण्यवान प्राणी को मिलता, साधन बिना उपाव ॥११९६॥
गिरिवैताढ्य उत्तर श्रेणी में, हरि विक्रम था भूप।
जयभूषण था पुत्र भूपका, यौवन रूप अनूप ॥११९७॥

शील सिया का देख सभी जन, बोल जय जयमकार।
सत्यवती यह सांची सीता, सुरनर सानिध्यकार ॥१२२७॥
शक्ति शील में सदा सजीवन, व्रत में मुकुट समान।
अगनी ज्वाला सीतल होवी, सपति शिव सौपान ॥१२२८॥
शीलवान पे मंत्र न त्र नहिं, तंत्र चले किस वार।
सिंह हो जाता गीदड़ जैसा, देखे शील दिदार ॥१२२९॥
सब जनता ने जनक सुताका, संशय दिया निवार।
शील शक्ति के आगे रावण, पाया अपनी हार ॥१२३०॥
शील शक्ति ने ही लक्ष्मण का, शल्य किया था दूर।
शीलवान भगवान बताया, संपति सदा हजूर ॥१२३१॥
शील शक्ति के द्वारा ऐसे, पुत्र हुए बलवान।
किसकी ताकत लडे उन्हीं से, पाते थे अपमान ॥१२३२॥
पछताये हैं राम लखन भी, पाए सुत से हार।
धन्य धन्य श्री राघव पाए, सीता जैसी नार ॥१२३३॥
जनक पिता अरु मात विदेही, धन्य धन्य कुलवंश।
पुरजन देते धन्यवाद सब, करते सिया प्रशंस ॥१२३४॥
जय जयनाद करें सुरनभ में, सीता का गुणगान।
रावण घर ए रह के पाला, अविचल सील निधान ॥१२३५॥
गुल गुल शब्द करे सुर कोई, कोई भभा नाद।
कोई बजाते मधुर मृदंगी, जय जय रव आल्हाद ॥१२३६॥

धा धा धप मप मादल बाजे, स्वर से ताल उपंग।
कोई बंशी वीणा बजावे, शोध्दर के रस रंग ॥१२३७॥
केई राग अलाप रहे हैं, थे थें नाचे नाच।
ऐसे कौतुक करते सुरनर, सिया शील में सांच ॥१२३८॥
भूचर खेचर बड़े बडे नृप, आकर सीता पास।
क्षमा याचते सीस नमाते, किया सुवंश प्रकाश ॥१२३९॥
अभी कुंड मे से जल निकला, सागर जैसा वेग।
चारों दिशि में फैल गया है, पाते नर उद्वेग ॥१२४०॥
जलसे बहनेका लाकर, चहुँ दिशि भगते लोग।
दृढ विद्याधर नभ में ठहरे, अतुल नीर संयोग ॥१२४१॥
नीर वेग से सब घबराते, त्राहि त्राहि पुकार।
रक्षा करिये सीता माता, बहे नीर मझधार ॥१२४२॥
सीता जब दोनों हाथों से, रोका नीर प्रवाह।
जैसा था वैसा ही होता, जल का कुंड अथाह ॥१२४३॥
पुंडरिक पद्म रु पकज विधि २, करते हंस किलोल।
रत्नजडित की पक्की सोहे, सुंदर कुंड अनमोल ॥१२४४॥
नाच रहे तब नभ में नारद, करे सिया गुणगान।
धन्य धन्य हो वश सिया का, करते मिया बखान ॥१२४५॥
लवणाकुश भ्राता ने देखा, माता शील प्रभाव।
जल में तरते गए मात पे, प्रणमें माता पांव ॥१२४६॥

सिर चुंबितकर मात बिठाया, निज सुत दोनों पास।
भामंडल सुग्रीव शत्रुघन, लक्ष्मण हो हुल्लास ॥१२४७॥
भूप विभीषण आदिक आए, करे सिया गुणगान।
नमन करे सुविशेष भाव से, कर चरणामृत पान ॥१२४८॥
दोष दिया था जो नर अब तो, दे निजको धिक्कार।
क्षमा याचते चरण नमन कर, धन्य सिया ससार ॥१२४९॥
पास सिया के आए रघुवर, बोले हो मर्याद।
हाथ जोड के कहे सिया से, आज मिटा अपवाद ॥१२५०॥
बिना विचारे लोक वचन से, छोडी जंगल बीच।
आखिर दुखभी दिया आपको, काम किया मैं नीच ॥१२५१॥
सिद्ध हुए सब काम आपके, पाए मय ही भेद।
बने आप अकलंक उसीसे, मिटा हृदय का खेद ॥१२५२॥
बना मेरे से गुन्हा उमी का, क्षमा करो अपराध।
सूर्यवंश का गौरव राखा, शीतल चित्त अगाध ॥१२५३॥
सिया कहे स्वामी क्या ? कहते, ऐसी भली बात।
नहीं किसी का दोष समझती, एक कर्म उत्पात ॥१२५४॥
आप कृपा से कष्ट सभी मुज, पल में गया विलाय।
मिटा सभी अपवाद आज यह, एक सु आप पसाय ॥१२५५॥
आप नाम ले पड अगन मे, होता शीतल नीर।
रही जीवती पावक अदर, पावन श्री रघुवीर ॥१२५६॥

सीता कहती एक दिवस ही, निश्चय जाना होय।
आगे पीछे सभी जायगे, तुम हम होय विछोय ॥१२८६॥
महल जेल से मुझे दिखाते, भोग रोग की खान।
संयमका दुख सहन कियेसे, मिलता सौख्य निधान ॥१२८७॥
सभी तरह समझाया आखिर, होवे राम हतास।
हटता रग मजीठ कभी नहिं, कोटि करो प्रयास ॥१२८८॥
जव सीता ने अपने करसे, लोंच किये सिर केस।
रखे सामने श्री रघुवर के, रत्न जड़ित के वेश ॥१२८९॥
जयभूषण मुनि पास जायके, नमन किया करजोड़।
हे प्रभु ! भवसागर से तारो, तुम लग मेरी दौड़ ॥ १२९०॥
दीक्षा दीजे परम सुपावन, यह ससार असार।
मुनि कहते जो सुख हो तुमको, करो तुरत धरप्यार ॥१२९१॥
सीता जा ईशान कौन में, जेवर दिया उतार।
मुख पे बांधी आठों पटकी, मुंह पत्ती उस बार ॥१२९२॥
केवल ज्ञानी जयभूषण मुनि, दीक्षा दी सुखकार।
गुरुणी थी सुव्रता पास में, पढ़ती शास्त्र उदार ॥१२९३॥
कठिन तपस्या करती प्रतिदिन, तज अष्टादश पाप।
आत्मदशा में लीन हुई है, तज के जग सताप ॥१२९४॥

॥ सीता के दीक्षा विरह में राम का विलाप ॥

जब सीता ने केस लोंच के, रक्खे थे पति पास।
उसी समय मूर्छित हो रघुवर, भूले सब ही भास ॥१२९५॥
जब लक्ष्मण ने आकर उनके, चदन चर्चा अग।
होय सचेतन खड़े रामजी, भर्मित चित्र तरग ॥१२९६॥
कहां गई सीता मुज प्यारी, हुई दृष्टि से दूर।
भूचर खेचर भूप बताओ, सेवक सभी जरूर ॥१२९७॥
राम बात सुन सब हंसते है, क्या कहते हैं राम।
मोह मुग्ध हो पागल होते, भूले भान तमाम ॥१२९८॥
अय लक्ष्मण ! तुम नहिं सुनते हो, जो कहि मैंनेवात।
मेरी सुन सब तुम हँसते हो, किन्तु मुझे आघात ॥१२९९॥
हुए रोष में धनुष उठाया, करते लखन प्रणाम।
हम सेवक हैं सभी आपके, नहीं किसीका काम ॥१३००॥
जैसे सीता तजी आपने, पुरजन का डरलाय।
ऐसे सीता जगको तजती, जन्म मृत्यु भय पाय ॥१३०१॥
तुम सन्मुख सिर लोचन करके, जयभूषण मुनि पास।
जाकर सजम लिया सतीने, मोक्ष रूप बनवास ॥१३०२॥
जयभूषण मुनि हुए केवली, आज ज्ञान प्रकटाय।
करिये दर्शन श्री गुरुवर के, भव २ पाप पलाय ॥१३०३॥
वहां सिया साध्वी मडल में, वैठी है इसवार।
उस देवी के दर्शन करिये, शोक होय सहार ॥१३०४॥
भान हुआ कुछ चित्त विचारे, धन्य सिया अवतार।
सजम लेके आत्म सुधारा, तप जप करे उदार ॥१३०५॥
साथ सभी परिवार लेयके, आए राम नरेश।
मुनिपग वदन किया भावसे, सुना भव्य उपदेश ॥१३०६॥
हाथ जोड़ के करे प्रार्थना, विनय सुनो गुरुदेव।
भविजन तारण कारण तुम हो, नौका सम अछेव ॥१३०७॥
क्या हू ? भवि मैं मोक्ष जाऊँगा, या नहिं भविकाअश।
राम प्रश्न सुन कहे केवली, गुणमें तुमहो हस ॥१३०८॥
भव्य जीव हो निश्चय तुमतो, इसही भव शिव पाय।
संजम व्रतको धारन करके, लोगे मोक्ष सवाय ॥१३०९॥
वासुदेव प्रति वासुदेव ही, चक्रवर्ति बलदेव।
सभी भविक अवतार कहाते, सुरनर करते सेव ॥१३१०॥
सजम बिन नहिं मोक्ष होयगी, मोह कर्म बलवान।
उसी समय सयम आवेगा, हो लक्ष्मण अवसान ॥१३११॥
हे प्रभु ! लक्ष्मण से क्षण भर भी, होता मोह न दूर।
मुनि कहते हैं, पूर्व प्रेमसे, गाढ़ा प्रेम जरूर ॥१३१२॥

॥ राम लक्ष्मण सुग्रीव और रावण का पूर्व भव॥

मुनि वचनों के द्वारा अति ही, हो राघव आराम।
उसी समय लंकेश्वर पूछे, मुनिको किया प्रणाम ॥१३१३॥

आप कृपा से नरतन पाया, दुख तिर्यंच मिटाय।
पार लगाया भव सागर से, सच्चे हो गुरु राय ॥१३४४॥
बदला देने कोई वस्तु, मुझको नहीं दिखाय।
दिया हुआ ये सभी आपको, भोगो आप सवाय ॥१३४५॥
सेठ कहे मुझको नहिं इच्छा, अस्थिर जग व्यवहार।
निश्चय शरणा जैन धर्म का, भव भव में हितकार ॥१३४६॥
उपकारी का मान बढ़ाने, करते आप, समान।
दोनों ही श्रावक व्रत धारे, नव तत्वादिक जान ॥१३४७॥
पूर्ण आयुकर दोनों जन ही, स्वर्ग दूसरे जाय।
नगरी थी वैताढ्य गिरी पे, नंदावर्त कहाय ॥१३४८॥
नृप नंदीश्वर कनकप्रभा भी, राणी रूप अमंद।
पद्मरुची हो राणी नंदन, नाम सुनयनानंद ॥१३४९॥
राज भोग के जोग लिया फिर, स्वर्ग पांचवें जाय।
च्यव के वहां से पूर्व विदेह में, क्षेमा नगर कहाय ॥१३५०॥
विपुलावाहन नृप था-राणी, पद्मावति सुख कन्द।
आय स्वर्गसे जन्म लिया जहाँ, नाम दिया श्रीचंद ॥१३५१॥
राजताज को धारन करके, अभय पडह पिटवाय।
गुप्ति समाधी मुनिवर जिनसे, संजम लिया सवाय ॥१३५२॥
गए पांचवें स्वर्ग कालकर, पाए ऋध्द महान।
निकल वहां से दशरथ घर पे, हुए राम भगवान ॥१३५३॥

वृषभध्वज का जीव आनके, बना भूप सुग्रीव।
इस कारण से राम भक्त ये, करते सेव अतीव ॥१३५४॥

महा सती सीता का पूर्व भव

रहे श्रेष्ठ श्रीकान्त उन्हीं का, सुनिये हाल तमाम।
भ्रमण किया संसार दुखमय, पाया नहिं आराम ॥१३५५॥
एक सहर मृणालकंद था, वज्रकंठ नर भूप।
हेमवती राणी से होता, शंभूनाम अनूप ॥१३५६॥
वसुदत्त का था जीव वहीं भी, उसी नगर मझधार।
राज पुरोहित विजय उसी के, रत्नचूलिका नार ॥१३५७॥
जन्म पुरोहित घर पे लेता, नाम दिया श्रीभूत।
सरस्वती कन्या को व्याही, रूपरंग अद्भूत ॥१३५८॥
गुणवति नारी जब आ करके, जन्मी इसघर आय।
वेगवती दे नाम पुत्रिका, रूप रंगअधिकाय ॥१३५९॥
पढी कला चौंसठ उसने, किन्तु कर्म बलवान।
निंदक सबमें नीच कहाता, अधम उसी का स्थान ॥१३६०॥
कर के ध्यान खड़े थे, मुनिवर गुण तप तेज महान।
पुर जन आके दर्शन करते, देते थे सन्मान ॥१३६१॥
वेगवती को सहन हुआ नहिं, करती मुनि अपमान।
सबको कहने लगी नगर में, निंदा जनक बयान ॥१३६२॥

ढोंग रचा है इस साधुने, इसका नहिं इतबार।
खुद मैंने आंखों से देखा, करता है व्यभिचार ॥१३६३॥
यों सुन पुरके वासी कितने, छोडा मुनिका संग।
सारे पुरमें फैली निंदा, अनब साधुका ढंग ॥१३६४॥
मुनि सुन सोचा मुझे न हानी, किन्तु धर्म की हान।
इस दूषण को निश्चय हरना, रखना जिनमत शान ॥१३६५॥
जब तक दोष मिटे ना मेरा, रखना ध्यान अडोल।
खाना पीना छोड़ दिया सब, जिनवर धर्म अमोल ॥१३६६॥
करी देवने साय्य साधुकी, वेगवती दुख रूप।
सूझ गया सब अंग रग ही, हाल हुआ बदरूप ॥१३६७॥
सभी समझते इस दुष्टाने, झूठ दिया मुनिआल।
दुख पाने पर वेगवती भी, कहती सच्चा हाल ॥१३६८॥
झूठा दोष दियामें मुनिपे, हा! हा! मैं चंडाल।
यह तो मुनिवर सत्यशील में, निर्मल चन्द्र प्रवाल ॥१३६९॥
मुनिवर से जा माफी मांगी, मुनिवर बडे दयाल।
शंका टलती पुरवासी की, थी दुष्टा की चाल ॥१३७०॥
मिटा दोष निजका लख मुनिने, खोल दिया तबध्यान।
वेगवती पे क्रोध न लाए, दिया अभय वरदान ॥१३७१॥
श्रीभूति अरु वेगवतीने, लिया देशव्रतधार।
शुभ भावों से समकित पाके, कर्म बंध भय टार ॥१३७२॥

संजम द्वारा गए स्वर्ग में, देव रूप सुखकार।
वहां से हो फिर दशरथ नृपघर, लछमण नाम उदार ॥१४००॥
पूर्व पुण्य के भोग रहे फल, वासुदेव पद पाय।
लछमणजी के पूर्व भवों का, वर्णन कहा सुनाय ॥१४०१॥

॥ विशल्या का पूर्व भव ॥

अनंगसुन्दर जप तप करती, करती ज्ञानाभ्यास।
आखिर अणशण लिया सति ने, समझा देह विनास ॥१४०२॥
अजगर आके उसी सती को, निगल गया उसवार।
समभावों से मृत्यू पाई, सुर दूजे अवतार ॥१४०३॥
अनंगसुन्दर जीवकालकर, हुई विशल्या नार।
पूर्व प्रेम से लछमण नारी, हो अनुराग अपार ॥१४०४॥

॥ भामंडल का पूर्व भव ॥

वह गुणधर गुणवति का भाई, मर हो राजकंवार।
कुण्डलमंडित नाम उन्हीका, करे सदा उपकार ॥१४०५॥
बना लालची विषय भोग में, मिले एक अनगार।
धर्म कथा कहके समझाया, परम धर्म हितकार ॥१४०६॥
गृहस्थ धर्मको धारन कीना, मरण समय में ध्यान।
बना राजा का लोभ अधिक ही, पाया नहिं सुरथान ॥१४०७॥
कुण्डलमंडित मरके होते, भामण्डल अवतार।
जनक, पुत्र सीता के होते, भाई राज कंवार ॥१४०८॥

॥ लवणांकुश और सिद्धार्थ का पूर्वभव ॥

लवणांकुश का जिकर सुनाते, भव पूरव विस्तार।
काकंदी में वामदेव था, श्यामा उसकी नार ॥१४०९॥
•द और वसुनन्द नाम के, पुत्र होय गुणवन्त।
मास पारणे आए पुरमें, मुनिवर बड़े महंत ॥१४१०॥
दोनों भ्राता ने तब दीना, मुनि को शुद्ध आहार।
बांधा पुण्य अखूट दोयने, दान भव्य हितकार ॥१४११॥
मरके वहां से उत्तरकुरु में, लिया युगल अवतार।
प्रथम स्वर्ग में गए कालकर, भोगे सौख्य अपार ॥१४१२॥
काकंदी का रतिवर्धन नृप, सुदर्शना पटनार।
प्रथम स्वर्ग से आकर दोनों, लेते जन्म उदार ॥१४१३॥
किया सु महोत्सव तब राजा ने, घर घर मंगल माल।
हुए प्रियकर और स्वयकर, दिया नाम भूपाल ॥१४१४॥
दोनों दीक्षा लेते आखिर, छोड़ राज भंडार।
घोर तपोधान महा मुनीश्वर, क्षमा दया आगार ॥१४१५॥
नवग्रिवेग में दोनों भाई, जाते संजम पाल।
सीता सुत दो हुए वहां से, लवणांकुश दो लाल ॥१४१६॥
सुदर्शना मात थी पूर्व की, हो सिद्धार्थ सुनाम।
लवणांकुश को ज्ञान पढ़ाया, धरा प्रेम अभिराम ॥१४१७॥

॥ सीता सती को वंदन हित राम का जाना ॥

जयभूषण मुनि सभी जनों का, कहा पूर्व बृत्तांत।
सुनके सब ही हुए खुशाली, हृदय हुआ उपशांत ॥१४१८॥
डरे भव्य जन कर्म कथासे, हो सब कंपित अंग।
कितने ही ने संजम धारा, देख कर्म का ढंग ॥१४१९॥
कितने धारा गृहस्थ धर्म को, द्वादश व्रतअनुरागे।
हुए कई समदृष्टि प्राणी, जिनवाणी वैराग ॥१४२०॥
निज शक्ति अनुसार सभी ने, लिया नियम व्रत त्याग।
मिथ्या तृष्णा को भस्म करन, हित दीनी समता आग ॥१४२१॥
जयभूषण मुनि को नम करके, हुआ राम संतोष।
रघुवर आप चलके जहाँ पे, श्री सीता गुण कोष ॥१४२२॥
वहीं विनय से शिक्षा देते, किया धन्य अवतार।
मोह कर्म को दूर हटाके, लिया सुसंजम धार ॥१४२३॥
दीप बतावे कैसे रवि को, निकाल रहे उद्गार।
सरल मारना सिंह केसरी, सन्मुख हिम्मत धार ॥१४२४॥
कालकूट विष खा सकते हैं, अहि मुख में दे हाथ।
लोह चणे दांतों से चाबे, पर्वत फोड़े माथ ॥१४२५॥

इसमें इज्जत गई हमारी, जीवन हो बेकार ।
लोक कहेंगे पितु हो जैसा, हो सुतमें संस्कार ॥ ४५५॥
खबरनहिं क्या ! लाज काज हित, राघव छोड़ा राज ।
एक तुच्छ वरमाला के हित, इतना धरा मिजाज ॥१४५६॥
कैसा ! मेरा प्रेम रामपे, नीर चीर वत जान ।
किन्तु तुमने भ्रात भ्रात पे, किया द्वेष बेभान ॥१४५७॥
बड़े भ्रात की नार उसीको, कहता था में मात ।
बड़े भ्रात की वरमाला हित, तुम लड़ते साचात ॥१४५८॥
कुल मर्यादा तोड़ी तुमने, किया वशका खून ।
क्या हक था बिन पूछे पितुके बनते अफलातून ॥१४५९॥
क्षमा याचलो रघुवंशीका, यदि तुम में हो अंश ।
वरना तुमको देश निकाला, किया अपावन वश ॥१४६०॥
रामदेख यह दृश्य विचारे, सूर्यवंश दरम्यान ।
प्रेम अखंडित रहा परस्पर, अब आगे अवसान ॥१४६१॥
समय देख तब कहते रघुवर, श्रय लक्ष्मण वरवीर ।
किया निरर्थक क्रोध आजये, होकर के गंभीर ॥ ४६२॥
बालक बातों पे नहिं तुमको, देना था कुछ ध्यान ।
अभी दूध के दांत न सूखे, कहां इन्हों में ज्ञान ॥१४६३।
जो कुछ आया बोल दिया वह, नहिं चिंता का ख्याल।
बच्चों को तो प्रेम भाव से, समझाना हर हाल ॥१४६४॥

सुनके लड़को ने रघुवर की, वाणी सुधा समान ।
निजाकृत माफी तभी मांगली, छोड़ दिया अभिमान ॥१४६५॥
हटा दिलों का द्वेष सभी से, खुशी २ तब छाय ।
आए सब मिल पुरी अयोध्या, मंगल रंग बढ़ाय ॥१४६६॥
लक्ष्मण के सुत सब ही दिल में, गए अधिक शरमाय ।
दीक्षा लेना हृदय विचारा, जग अस्थिर दुखदाय ॥१४६७॥
मुनि महाबल से संजम लेते, पितु आज्ञा को पाय ।
शुद्ध पाल के तप जप संजम, दीने कर्म मिटाय ॥१४६८॥
बहुत धूम से लवणांकुश का ब्याह किया उसवार ।
सदा रहैं आनन्द रंग में, होता जय जयकार ॥१४६९॥

॥ भामंडल की मृत्यु ॥

एक समय नृप भामंडलजी, बैठे गोख मझार ।
हृदय बिचारे पूर्व जन्म में, बांधा पुण्य अपार ॥१४७०॥
भोग रहा हूँ उसी पुण्य को, खूटे आखिर कार ।
कुछ भी पुण्य उपार्जन करना, तरतन पाया सार ॥१४७१॥
गिरि वैताढ्य दोनों श्रेणी का, मिला मुझे सब राज ।
कई रानियां परणी मैंने, भोग लिया सुख साज ॥१४७२॥
लाभ इसीसे क्या ! परभव में, खड़ा सीसपे काल ।
कुछ भी सुकृत कार्य साधके, करे धर्म की पाल ॥१४७३॥

इतना दिल में सोच रहे थे, होनहार बलवान ।
पड़ी सीस पे बिजली आकर, निकल गए झट प्राण ॥१४७४॥
भद्रिकता से गए देवकुरु, युगल पणे अवतार ।
पहले चेता वही सयाना, नहिं हो आखिरकार ॥१४७५॥

॥ हनुमान का संसार त्याग ॥

एक दिवस हनुमान सिधाए, केली करने काज ।
साथ रानियां लेकर जाते, मेरु गिरि सिरताज ॥१४७६॥
रंग रेल में समय बिताया, गए बाद निज स्थान ।
लखा सूर्य अस्ताचल जाते तेज छिपा हो म्लान ॥१४७७॥
सहसा जाग्रत हुई भावना, यही रूप संसार ।
आदि अन्त अरु मध्य समय में भिन्न तेज आकार ॥१४७८॥
छिप जावेगा तेज हीन हो, यह संसार अनंत ।
ऐसे में भी छिप जाऊंगा, पूर्ण आयु के अंत ॥१४७९॥
मेरे जैसे हुए अनंते, गए जन्म सब हार ।
जिमने तप जप संजम साधा, वही हुए भव पार ॥१४८०॥
जग जीवों को शत्रु मान के, किए अनेकों जंग ।
निर्दोषित के प्राण लिए हैं छीकर लालच भंग ॥१४८१॥
अष्ट कर्म वैरी को जीते, वही परम बलवान ।
चक्रवर्ति भी बिना धर्म के, जाते नर्क स्थान ॥१४८२॥

चमक उठ तन कंपित होते, गए भान निज भूल।
इतने आकर नौकर सारे, बात सुनी प्रतिकूल ॥१५१०॥
रुदन मचाया ऊंचे स्वर से, आए लछमण पास।
नैनः नीर गिराकर बोले, हुए हम सब हास ॥१५११॥
महा प्रलय मम पड़ा सीस पे, आज अचानक कष्ट।
सभी तरह से हुए निराश्रित, जीवन सारा भ्रष्ट ॥१५१२॥
हाय हाय सिरताज हमारे, दगा दिया है राम।
स्वर्ग सिधार ईश हमारे, हा हा काल हराम ॥१५१३॥
लछमण कहते क्या रे ? झूठे, करते आज सवाल।
मुख से जो अपशब्द कहा तो, लूंगा जीभ निकाल ॥१५१४॥
देखा जाकर सचमुच रघुवर, पड़ा कलेवर खास।
राणी राजदरबार सब मिल के, रोते चित्त उदास ॥१५१५॥
लछमण पूछे मरे रामचन्द्र ?, मेरे प्राण समान।
कहा भृत्य न स्वामी रघुवर, छोड़ दिए हैं प्राण ॥१५१६॥
बस इतना ही सुना लखन के, प्राण पखेरू जाय।
घर पर मानिक गिरे सिंहासन, परभव गए सिधाय ॥१५१७॥
सोना हीरों पे अवलम्बित, लगा सीस तल धाय।
खुलती दोनों आँखें रहती, एक प्रभा में जाय ॥१५१८॥
लखन मृत्यु को जाना सुरने, करते पश्चाताप।
किया हास्य वश होता अनरथ, लिया सीसपे पाप ॥१५१९॥

प्राण लिए लछमण के हमने, लगा कलेजे घाव।
इसी पाप का दुख हा आगे, होगा हमे महान ॥१५२०॥
कहा इन्द्र ने उससे जादा, इनमें प्रेम सवाय।
घर के दिल में दुख विकट अति, देव स्वर्ग में जाय ॥१५२१॥
मचा अयोध्या नगरी अंदर, हा हा कार कराल।
सभी राणियाँ अरु माताए, रोती हाल विहाल ॥१५२२॥
अधिकारी अरु सभी प्रजाजन, रोते जार बिजार।
सुना राम जब दौड़े आए, बोले वचन कुठार ॥१५२३॥
सभी हुए क्यों पागल तुम तो, रहते झूठ उचार।
मंगल में अपशब्द सुनाते, क्यों ? जाती मतिमार ॥१५२४॥
कौन बताता मेरा भाई, लछमण मृत्यु पाय।
अभी जीभ मे उसकी काढ़, यमघर दू पहुँचाय ॥१५२५॥
जीवित मेरा भाई यह तो, पड़ा सुमूर्छा खाय।
राजवैद्य को बुलवाते हैं, अभी शुद्ध हो जाय ॥१५२६॥
सिंहासन पे सुला दिया है, बैठे रघुवर पास।
बुला जोतषी गिणवा देते हैं, मीन मेख सब रास ॥१५२७॥
मंत्र यन्त्रवादी भी आए, वैद्य बड़े विद्वान।
मरे लखन यह शब्द कहे तो, हरो उसी के प्राण ॥१५२८॥
राम हाल लख सवजन डरते, कहे न सच्चा हाल।
असाध्य रोगी सभी बता के, चलते अपनी चाल ॥१५२९॥

मूर्छित होके गिरे राम तब, करे सचेतन बाद।
गले लगाया लछमण भ्राता, बोले हो आल्हाद ॥१५३०॥
भाई ! क्यों मुजसे तू रूठा, अपना कहो विचार।
कौन ! बिमारी लगी अगमैं, जिनसे हुए बिमार ॥१५३१॥
शक्ति लगाई थी रावणने, जब लंका के माथ।
वही बिमारी अब क्या ? आई दुश्मन, शक्ति लगाय ॥१५३ ॥
हृदय विदारक दृश्य देखके, होते सभी अधीर।
शत्रुघन सुग्रीव विभीषण, आए रघुवर तीर ॥१५३३॥
धीरज देते हे अब भगवन् ! लखन गए परलोक।
तन संस्कार करो जल्दीसे, मत करिये अब शोक ॥१५३४॥
लखन विरहसे सबके दिलमें, पहुँचा अति आघात।
महिल पुराना होनेपर से, गिरजाती हैं छात ॥१५३५॥
खुदी धैर्यधर देखो परको, आवतो शांति बंधाय।
तुरत जलाओ काया गधो, देखो मोह मिटाय ॥१५३६॥
लगा तीरसे वचन रामको, बोले तेज जबान।
तुमको आता खूब बोलना, देख लिया अब छान ॥१५३७॥
मेरा प्यारा लछमण भ्राता गिरता मूर्छा खाय।
कोई तुम्हारे मरे होंयगे, देखो उन्हें जलाय ॥१५३८॥
उठ चलो ! बैठो मत सारे, अती दाई बीलाय।
बिन मंगल मय शब्द बोलते, लाजे नहि मनमाय ॥१५३९॥

जब सुग्रीव विभीषण आदिक हुए वीर तैयार।
तभी शत्रुघन अवरज्ञण हित, रखे गये प्रतिहार ॥१२६८॥
पुण्यवान के लिए सदा ही, बने सहायक आय।
देव जटायु आसन कंपा, देखा ज्ञान लगाय ॥१२६९॥
बदला देने कारण आया, जहाँ युद्ध का स्थान।
वेक्रिय फौज बनाय शत्रु के, दल में किया प्रयाण ॥१२७०॥
सेना सारी भगी युद्ध से, गया सुंद घबराय।
पड़ा चरणों में आय राम के, नम्र वचन दरसाय ॥१२७१॥
शमित हो संजम को धारे, भेटे गुरु अति वेग।
जो थे योद्धे स्थान सिधाए, मिटा नगर उद्वेग ॥१२७२॥

॥लक्ष्मण विरह में राम को देवों का समझाना॥

राम इधर लखमण तट आए, धरा सीस पे हाथ।
बोले प्रेम दसा में एसा, सुनते क्यों नहिं भ्रात ॥१२७३॥
सूते तुमतो मौन धार के, या मूर्छागत पाय।
सारा बिगड़ा काम उधर से, बैरी रहें दबाय ॥१२७४॥
देव जटायु ने जब देखा, रघुवर को बे भान।
मेरे ये पूरण उपकारी, समझाना दे ज्ञान ॥१२७५॥
पत्थर पर धर कमल रोपता, खारा खात लगाय।
सूका तरु को जल से सींचे, क्योंकि फूल फल पाय ॥१२७६॥
खारी भूमि बीज डालता, [illegible]
जल छिटकाता खात डालता, "तैल लेन के हेत ॥१२७७॥
घृत के कारण मथे नीर को, देखा यह रघुवीर।
कहें राम तब अरे? तुम्हारी, "फूटगई तकदीर ॥१२७८॥
दिखने में तो चतुर दिखाते, पर मूरख सिरदार।
कमल उपलपे क्या 'उग सकता, सोचो समझ विचार, ॥१२७९॥
कभी रेत से तैल निकलता, 'किया 'बाल का ख्याल।
खारी धरती बीज डालते, बेतुक तेरी चाल ॥१२८०॥
पत्थर की गायों के द्वारा, मिले कभी ना दूध।
ऐसे तुमको फल नहिं होगा, करते काम विरुद्ध ॥१२८१॥
नीर मथन से घृत क्या निकले, होते तुम बे भान।
कौन गुरु से शिक्षा पाई, जोना एसा ज्ञान ॥१२८२॥
देव जटायु बोलो तब तो, क्या? सब निष्फल जाय।
तो फिर लक्ष्मण मरा हुआ ये, कैसे जिन्दा थाय ॥१२८३॥
कहे राम! तू बिना बुद्धि का, बोल रहा बेकार।
मुख से खोटा शब्द निकाले, गई अकल क्यों मार ॥१२८४॥
दुष्ट चला जा? दूर अभी तू, वरना मृत्यु पाय।
मुझको तू समझाने आया, मेरा जिगर जलाय ॥१२८५॥
सच है मूर्खों को समझाते, ज्ञान गांठ का जाय।
ज्ञानी को कुछ ज्ञान दिये से, ज्ञान अधिक वह पाय॥१२८६॥
नहीं समझते राम जरा भी, अजब प्रेम का ख्याल ॥१२८७॥
खुद आया रघुवर समझाने, धरा पुरुष का वेष।
मृतक त्रिया को कंधे धरके, तेल लगाता केस ॥१२८८॥
ऐसे ही बातें कर उससे, देता वस्त्र उढ़ाय।
दृश्य देख तब रघुवर हँसते, यह भी मूर्ख सिवाय ॥१२८९॥
अरे मूर्ख! इस मरी हुई से, करता निरर्थक प्यार।
कभी नहीं ये जी सकती है, कर इसका संस्कार ॥१२९०॥
बिन मंगलमय वचन आप क्यों, कहते हो इसवार।
कभी न मरती यह तो जीवित, प्यारी मेरी नार ॥१२९१॥
जीवित हो क्या? कभी मरी भी, अधिक प्राणसे होय।
तीन काल में कभी न बनता, देखो ज्ञान बिलोय ॥१२९२॥
देव कहे पर को समझाने, कुशल बहुत जगमाय।
जैसा कहते वैसा करते, बिरला नर दरसाय ॥१२९३॥
पांव तले की आग न देखे, देखे जलत पहाड़।
निज छिद्रों को लखे न-परके, देखे दृष्टि फाड़ ॥१२९४॥
अजी? तुम्हारा भ्रात अभी तक, जिंदा है लो मान।
बड़े पुरुष हो-कहते मुझको, नहिं नारी में प्राण ॥१२९५॥
पहले खुद ही सोच समझ के, देना पर को ज्ञान।
कही बात का असर अन्यपे, पड़े तुरत अ सान ॥१२९६॥

शत वर्षों तक रहें कवर पद, मडलिक पद शत तीन।
दिग् विजय चालीस वर्षतक, सौन खड स्वाधीन ॥१६२६॥
वासुदेव पद पाए लक्ष्मण, राम हुए बलदेव।
द्वादश वर्ष सहस्त्र की आयू पाए सुख स्वयेव ॥१६२७॥
गए अधो गति निज कृत योगे, किया न प्रत्याख्यान।
किया वही फल भोगे प्राणी, आगम का फरमान ॥१६२८॥
जग रचना मुनि राम निहारे, अस्थिर रुप संसार।
कर्म चक्र को भेदन साधे, तप जप विविध प्रकार ॥१६२९॥

॥ स्पन्दनपुर में राममुनि का जाना ॥

बेले बेले करे पारणा, लेते शुध्द आहार
स्पन्दनपुर नगरी मे आए, इर्यापथनिहार ॥१६३०॥
चन्द चकोरी वत पुरजन मिल, आए दर्शन काज।
नमन करे कर जोड विनय से, धन्य दर्श हो आज ॥१६३१॥
भावन भोजन भाय रहे हैं, कृपा करो मुनि राय।
इधर शहर में शोर हुआ अति, गए सर्व घबराय ॥१६३२॥
गजशाला से छुटा हुआ था, मस्त एक गजराज।
हाट उखाडे नर सहारे, करता बडा अकाज ॥१६३३॥
दौड रहे पुरवासी इत उत, बचा रहे निज जान।
मारग बध हुआ सब दिशि का, सोचे दया निधान ॥१६३४॥

लिया नहिं खाने को कुछ भी, पलट गए उस वार।
राज महिल में आप पधारे, प्रतिनदी दरबार ॥१६३५॥
इप युक्त मुनि को बहिराया, मुनिवर लिया आहार।
किया पारणा तप का मुनिवर, शुद्ध भाव समधार ॥१६३६॥
तभी देव ने शब्द सुनाया, अहो धन्य ! यह दान।
दिया पात्र में दान भूप ने, दोनों धन्य महान ॥१६३७॥
पच द्रव्य की करते वृष्टी, गाते मुनि गुणगान।
छोड नगर अटवी में आए, मुनिवर धर सज्ञान ॥१६३८॥
मन में सोचे भोजन कारण, नहिं जाना पुरमाय।
दुख पाए पुरजन ही सारे, बनता मे दुखदाय ॥१६३९॥
भोजन शुद्ध मिले वन अदर, वह लेना निर्दोष।
नहीं मिले तो यही अभिग्रह, करना तप सतोष ॥१६४०॥
काया ममता छोडी मुनिवर, धरते चित्त समाध।
कचन ककर एक समझते, गुण के कोष अगाध ॥१६४१॥
जीवन मरना चाकर ठाकर, मित्र शत्रु सम भाव।
लाभालाभ रु सुखदुख आए मन नहिं होय विभाव ॥१६४२॥
तपकर काया शोषण कीनी, फिरते जगल माय।
इधर भूप प्रतिनदी मिलता, जोग अचानक पाय ॥१६४३॥
उलट बाघ का घोडा उसपे, बैठे फिरने काज।
उस जगल में खेंचत घोडा, आय जहां मुनिराज ॥१६४४॥

नंदण पुण्य सरोवर उसमे, आकर पडा तुरग।
नही निकलता कादव मे से, हुआ भूप मान भग ॥१६४५॥
बाद सुभट आए सब चल के, घोडा लिया निकाल।
सब हित भोजन सरवर तटपे, करते होय खुशाल ॥१६४६॥
उधर राम मुनि वहां पधारे, लेने शुद्ध आहार।
भूप देख हर्षित अति होता, धन्य आज अवतार ॥१६४७॥
सन्मुख जाकर करे वदना, दिया राम को दान।
रत्न वृष्टि जब करी देवने, नभ मे कर गुणगान ॥१६४८॥
सबको मुनि उपदेश सुनाया, बारह व्रत विस्तार।
प्रतिनदी श्रावक तब बनता, साथ अन्य नरनार ॥१६४९॥

॥ राम मुनि को डिगाने (सीता का जीव) सीतेन्द्र का आना ॥

राजा अपने स्थान सिधाया, फिरते वन में राम।
घोर तपस्या करके रमते, सदा ज्ञान आराम ॥१६५०॥
एक मास दो मास तीन अरु, तप करते चहुं मास।
सूर्य सामने मुख कर रखते, सहे घाम की त्रास ॥१६५१॥
पर्यंकासन अरु उत्कटिकासन कबही भुजा पसार।
अंगुष्ठादिक दृष्टी धरते, कब ऐडी आधार ॥१६५२॥
आसन साधे सब चौरासी, तप जप करे अपार।
फिरते फिरते कोटि शिला थी, आए रघु अनगार ॥१६५३॥

सदा रहूँगी आप हुक्म में, दीजे मुज सन्तोष ।
प्यारे अमृत नयन निहारो, तज दो मनका रोष ॥१६८४॥
करती कपकी विल विल करके, सुका २ निज सीस ।
अय स्वामी उपहास करो मत, गुन्हा करो बगसीस॥१६८५॥
धर्मी होकर दया न आती, नहिं अबलापे ध्यान ।
क्यों! घबरावे प्यारो मेरी, कहदो यही जबान ॥१६८६॥
पहले जैसा प्रेम तुम्हीं पे, मत हो चित्त उदास ।
ऐसा मुख से कहदो भगवान्! देकरके विश्वास ॥१६८७॥
नाना विध से डिगा रहे हैं, सिया रूप धर देव ।
सच्चा चढ़ता रंग जिन्हों पे, रहते सदा अभेव ॥१६८८॥
सीता कथनी राघव मुनि को, किया न कुछभी दंग ।
वीतराग के ज्ञान, वचन में, रहते सदा सुरंग ॥१६८९॥
नहिं चल सकती है नकली की, असली पे करतूत ।
निर्घर्षण करने स सोना, हो असली मजबूत ॥१६९०॥
क्या? पत्थर स मनो कामना, सिद्ध पूर्ण हो जाय ।
एसे राम विरागी आगे, भोगी भोग न पाय ॥१६९१॥
सुर सीता का हावभाव यों, होता सब बेकार ।
कुछ नहिं निकला सार जरा भी, रघुवर ज्ञान करार ॥१६९२॥

॥ राम को केवल ज्ञान पाना ॥

चढ़े मुनीश्वर क्षपक श्रेणि पे, घातिक कर्म विडार ।
केवल ज्ञान रु केवल दर्शन, प्रकट हुआ उसवार ॥१६९३॥
माघ शुक्ल बारस निशि अते, पाए केवल ज्ञान ।
मघवा और सीतेन्द्र ज्ञान का, उत्सव करे महान ॥१६९४॥
पद पकज नमते रघुवर के, निज अपराध क्षमाय ।
वार वार सीतेन्द्र राम गुण, गावे हर्ष मनाय ॥१६९५॥

॥ लक्ष्मण और रावण के भविष्य के भवों का पूछना ॥

सोवन पकज आसन बैठे, केवल ज्ञानी राम ।
प्रश्न करे सीतेन्द्र जोड़कर, मन में हो अभिराम ॥१६९६॥
हे प्रभु! तुमने ज्ञान प्रकट कर, वीतराग हो देव ।
जन्म मरण बन्धन से छूटे, सुख पाए अछेव ॥१६९७॥
मेरे भव कितने अब बाकी छूटे जग जजाल ।
रावण लक्ष्मण शबुक का भी, कहिये हाल दयाल ॥१६९८॥
आप बिना शसय यह सारा, देवे कौन निवार ।
ज्ञाता लोका लोक द्रव्य के, सब प्राणी हितकार ॥१६९९॥
केवल ज्ञानी सब प्राणी हित, दिया भव्य उपदेश ।
जीव अनादी चारों गति में, पाया विध २ क्लेश ॥१७००॥
रागादिक बन्धन में जकड़े, जग प्राणी बेभान ।
विष मिश्रित यह भोग रोग है, विपत क्लेश की खान ॥१७०१॥
धर्म नियम से डरता प्राणी, करे बड़ा अन्याय ।
क्रोध मान माया में फँस के, नीच जाति में जाय ॥१७०२॥
रावण, लक्ष्मण, शबुक तीनों, गए अधम गति माय ।
पक प्रभा मे पैदा होते, पूर्व वैर प्रकटाय ॥१७०३॥
तीनों आपस में लड़ते हैं, किया वही फल पाय ।
रावण, लक्ष्मण निकल वहा से, मनुज लोकमें आय ॥१७०४॥
नृप सुनद के त्रिया रोहणी, विजयपुरी में आय ।
दोनों भाई रूप बनेंगे, नर भव उत्तम पाय ॥१७०५॥
नाम सुदर्शन लक्ष्मण का हो, रावण का जिन दास ।
गृही धर्म पालन कर लेंगे, पहले स्वर्ग निवास ॥१७०६॥
दोनों फिर विजया नगरी में, लेंगे नर भव पाय ।
युगल पणे हरिवास क्षेत्र मे, होंगे युगल सवाय ॥१७०७॥
विजयापुर 'सुकुमारव तं' नृप' लक्ष्मीवति जसनार ।
जयप्रभ ने जयकान्त नाम से, सुत होंगे श्रयकार ॥१७०८॥
दोनों सजम पाल वहाँ से, छट्टे स्वर्ग सिधाय ।
उसी समय सीतेन्द्र तुम्हीं तो, पावोगे नर काय ॥१७०९॥
इसी भरत में चक्रवति हो, सर्व रत्न मति नाम ।
दोनों सुरवे छट्टे स्वर से, तुम सुत हो अभिराम ॥१७१०॥
रावण "इन्द्रायुद्ध" नाम से, सर्व कला विद्वान ।
"मेघरथ" नामक पुत्र दूसरा, लक्ष्मण जीव पिछान ॥१७११॥

आप हमें सुख देना चाहो, किन्तु घड़े दुख घोर ।
किए कर्म फल हम भोगेंगे, मिटे न यत्न किरोर ॥१७४१॥
प्रभु ! तुम अपने स्थान सिधाओ, छोड़ सभी यह फन्द ।
हमने सोचा कष्ट मिटेगा, किन्तु हुआ दुख द्वंद ॥१७४२॥
कमी रखी नहिं दया करन मे, पूर्ण किया उपकार ।
नहिं भूलें अहसान आपका, जैन धर्म आधार ॥१७४३॥
तब सुरपति चल दिए वहां से, आए भ्राता पास ।
भामण्डल थे युगल इन्होंको, दिया ज्ञान सुविकाश ॥१७४४॥
रावण लछमण शंबुक तीनों, रहैं नर्क के द्वार ।
स्वर्ग बारवें सिया सुखों में, सुर सीतेन्द्र उदार ॥१७४५॥

॥ राम मुनि का निर्वाण ॥

केवल ज्ञानी राम मुनीश्वर, करते धर्म प्रचार ।
भव्य जनो को भव से तारे, परमशांति रसधार ॥१७४६॥
केवल ज्ञानी रह राम प्रभु, पूर्ण वर्ष पच्चीस ।
हजार पन्द्रह वर्ष आयु सब, पाए राम मुनीश ॥१७४७॥
लगे हुए थे काल अनादी, कर्म बडे बलवन्त ।
तप जप करके सभी तोड़ते, राम हुए अरिहत ॥१७४८॥
अष्ट कर्म तज हुए अयोगी, निश्चल मन वच काय ।
अज अविनाशी अक्षय अविचल, मोक्षनगर में जाय ॥१७४९॥

जन्म जरा अरु मरण मिटाके, अजर अमर अविकार ।
तीन लोक के ऊपर बैठे, होकर विन आकार ॥१७५०॥
ऐसे सिद्ध सु राम-मुनीश्वर, प्रणमूं वारंवार ।
प्रतिपल गुण गाऊं सिद्धों का, सफल होय अवतार ॥१७५१॥
रात दिवस महिनत कर मैंने गुण गाया श्रीराम ।
भविजन सुनके हर्ष लहेगा, पावेगा आराम ॥१७५२॥
अल्प बुद्धि अनुसार रास ये, रचा भाव संक्षेप ।
सार गहेगा पंडित गुणिजन, मूर्ख लहैं विक्षेप ॥१७५३॥
भाषा भाव काव्य की रचना, रची पूर्ण सुविचार ।
रही अशुद्धी वेभानों से, लेंगे सुज्ञ सुधार ॥१७५४॥

॥ अन्तिम उपसंहार ।

इसी सर्पणी काल हुए हैं, तीर्थंकर चौबीस ।
ऋषभदेव से महावीर तक, रक्षक धर्म जगीश ॥१७५५॥
वीर प्रभु के शासन में हो, बडे बडे अनगार ।
जैन धर्म की विजय पताका फैलाई ससार ॥१७५६॥
जब जड़ पूजक अधिक बने थे, था हिंसा का ख्याल ।
उसी समय में वे होते है, पैदा जन प्रतिपाल ॥१७५७॥
जड पूजक अरु हिंसा नाशक, होते लोंका शाह ।
चेतन पूजक हमें बनाया, सत्य बताके राह ॥१७५८॥

जैन धर्म की रक्षा के हित, पुन लिया अवतार ।
विक्रम सतरह तीन साल मे, जनमें जग हितकार ॥१७५९॥
चेतन जड़ का भेद बताया, धर्मदास अनगार ।
शिष्य निन्याणू जिनके होते, करते धर्म प्रचार ॥१७६०॥
अणशण शिष्य किया था, जब ही धारा नगरी माय ।
तोड़ दिया संथारा उनने, आप विराजे जाय ॥१७६१॥
आठ दिनों का अनशण करके, स्वर्ग दूसरे जाय ।
चरम शरीरी हो शिव लेंगे, पाहुड सिध्द सुनाय ॥१७६२॥
आप पाटपे रामचन्द्रमुनि, भूपति गुरु कहलाय ।
माणिक मुनि जसराज अनुक्रम, मयाचन्द मुनिराय ॥१७६३॥
छोटे मोटे अमर मुनीश्वर, केशव जैनाचार्य ।
मोखमसिंह थे महत्प्रतापी किये कई सत्कार्य ॥१७६४॥
हुए हिंदुमल शिष्य जिन्हों के, मुनि गिरधारीलाल ।
गिरधारी के परम प्रतापी, शिष्य पूज्य नन्दलाल ॥१७६५॥
यह मेरे गुरुदेव दयालु, खाचरोद अवतार ।
गुणीसे गुणीस साल में, जन्म लिया सुखकार ॥ ७६६।
गुणी से चालीस साल में, गुरु गिरधारी पास ।
संजम लेके श्रेष्ट क्रिया धर, तप जप ज्ञानाभ्यास ॥१७६७॥
साल गुन्यासी रत्नपुरी में, किया आप संथार ।
माधव मुनिको पाट देयके, जाते स्वर्ग सिधार ॥१७६८॥